कक्षा 11 के लिए इतिहास की पाठ्यपुस्तक

© NCERT not to be republished

11091

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

11091 – विश्व इतिहास के कुछ विषय
कक्षा 11 के लिए पाठ्यपुस्तक

ISBN 81-7450-587-3

प्रथम संस्करण
जून 2006 ज्येष्ठ 1928

पुनर्मुद्रण
अप्रैल 2007 चैत्र 1929
दिसंबर 2007 अग्रहायण 1929
मई 2009 वैसाख 1931
जनवरी 2010 माघ 1931
जून 2011 ज्येष्ठ 1933
फरवरी 2013 माघ 1934
नवंबर 2013 कार्तिक 1935
जनवरी 2014 पौष 1935
दिसंबर 2014 पौष 1936
फरवरी 2016 माघ 1937
मार्च 2017 फाल्गुन 1938
फरवरी 2018 माघ 1939
जनवरी 2019 पौष 1940
दिसंबर 2019 अग्रहायण 1941
दिसंबर 2021 अग्रहायण 1943

PD 25T RSP

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2006

₹ 180.00

एन.सी.ई.आर.टी. वॉटरमार्क 80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा अम्बर प्रेस, प्रा. लि., 143ए-143-बी, पहिया आजमपुर, काकोरी, लखनऊ (उ.प्र.) द्वारा मुद्रित।

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन सी ई आर टी के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 फोन : 011-26562708

108ए 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III, इस्टेज
बेंगलुरु 560 085 फोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 फोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगांव
गुवाहाटी 781021 फोन : 0361-2674869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग	:	*अनूप कुमार राजपूत*
मुख्य संपादक	:	*श्वेता उप्पल*
मुख्य उत्पादन अधिकारी	:	*अरुण चितकारा*
मुख्य व्यापार प्रबंधक	:	*विपिन दिवान*
संपादक	:	*नरेश यादव*
उत्पादन सहायक	:	*ओम प्रकाश*

आवरण एवं सज्जा
आर्ट क्रिएशन्स, नयी दिल्ली

चित्रांकन
के. वर्गीज़

© NCERT not to be republished

आमुख

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) सुझाती है कि बच्चों के स्कूली जीवन को बाहर के जीवन से जोड़ा जाना चाहिए। यह सिद्धांत किताबी ज्ञान की उस विरासत के विपरीत है जिसके प्रभाववश हमारी व्यवस्था आज तक स्कूल और घर के बीच अंतराल बनाए हुए है। नयी राष्ट्रीय पाठ्यचर्या पर आधारित पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें इस बुनियादी विचार पर अमल करने का प्रयास हैं। इस प्रयास में हर विषय को एक मज़बूत दीवार से घेर देने और जानकारी को रटा देने की प्रवृत्ति का विरोध शामिल है। आशा है कि ये कदम हमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में वर्णित बाल-केंद्रित व्यवस्था की दिशा में काफ़ी दूर तक ले जाएँगे।

इस प्रयत्न की सफलता अब इस बात पर निर्भर है कि स्कूलों के प्राचार्य और अध्यापक बच्चों को कल्पनाशील गतिविधियों और सवालों की मदद से सीखने और अपने अनुभव पर विचार करने का अवसर देते हैं। हमें यह मानना होगा कि यदि जगह, समय और आज़ादी दी जाए तो बच्चे बड़ों द्वारा सौंपी गई सूचना-सामग्री से जुड़कर और जूझकर नये ज्ञान का सृजन करते हैं। शिक्षा के विविध साधनों व स्रोतों की अनदेखी किए जाने का प्रमुख कारण पाठ्यपुस्तक को परीक्षा का एकमात्र आधार बनाने की प्रवृत्ति है। सर्जना और पहल को विकसित करने के लिए ज़रूरी है कि हम बच्चों को सीखने की प्रक्रिया में पूरा भागीदार मानें और बनाएँ, उन्हें ज्ञान की निर्धारित खुराक का ग्राहक मानना छोड़ दें।

ये उद्देश्य स्कूल की दैनिक ज़िंदगी और कार्यशैली में काफ़ी फेरबदल की माँग करते हैं। दैनिक समय-सारणी में लचीलापन उतना ही ज़रूरी है जितना वार्षिक कैलेण्डर के अमल में चुस्ती, जिससे शिक्षण के लिए नियत दिनों की संख्या हकीकत बन सके। शिक्षण और मूल्यांकन की विधियाँ भी इस बात को तय करेंगी कि यह पाठ्यपुस्तक स्कूल में बच्चों के जीवन को मानसिक दबाव तथा बोरियत की जगह खुशी का अनुभव बनाने में कितनी प्रभावी सिद्ध होती है। बोझ की समस्या से निपटने के लिए पाठ्यक्रम निर्माताओं ने विभिन्न चरणों में ज्ञान का पुनर्निर्धारण करते समय बच्चों के मनोविज्ञान एवं अध्यापन के लिए उपलब्ध समय का ध्यान रखने की पहले से अधिक सचेत कोशिश की है। इस कोशिश को और गहराने के यत्न में यह पाठ्यपुस्तक सोच-विचार और विस्मय, छोटे समूहों में बातचीत एवं बहस और हाथ से की जाने वाली गतिविधियों को प्राथमिकता देती है।

एन.सी.ई.आर.टी. इस पुस्तक की रचना के लिए बनाई गई पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति के परिश्रम के लिए कृतज्ञता व्यक्त करती है। परिषद् सामाजिक विज्ञान सलाहकार समूह के *अध्यक्ष*, प्रोफ़ेसर हरि वासुदेवन, इतिहास पाठ्यपुस्तक समिति के *मुख्य सलाहकार*, प्रोफ़ेसर नीलाद्रि भट्टाचार्य एवं *सलाहकार*, प्रोफ़ेसर नारायणी गुप्ता की विशेष आभारी है। इस पाठ्यपुस्तक के निर्माण में कई शिक्षकों ने योगदान दिया;

© NCERT not to be republished

इस योगदान को संभव बनाने के लिए हम उनके प्राचार्यों के आभारी हैं। हम उन सभी संस्थाओं और संगठनों के प्रति कृतज्ञ हैं जिन्होंने अपने संसाधनों, सामग्री और सहयोगियों की मदद लेने में हमें उदारतापूर्वक सहयोग दिया। हम माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा प्रोफ़ेसर मृणाल मीरी एवं प्रोफ़ेसर जी.पी. देशपांडे की अध्यक्षता में गठित निगरानी समिति (मॉनिटरिंग कमेटी) के सदस्यों को अपना मूल्यवान समय और सहयोग देने के लिए धन्यवाद देते हैं। व्यवस्थागत सुधारों और अपने प्रकाशनों में निरंतर निखार लाने के प्रति समर्पित एन.सी.ई.आर.टी. टिप्पणियों एवं सुझावों का स्वागत करेगी जिनसे भावी संशोधनों में मदद ली जा सके।

निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान
और प्रशिक्षण परिषद्

नयी दिल्ली
20 दिसंबर 2005

© NCERT not to be republished

विश्व इतिहास का अध्ययन

आप सोच रहे होंगे कि एक ही वर्ष के अंदर विश्व इतिहास का अध्ययन कैसे संभव है? आखिर, विश्व के विभिन्न देशों में इतना कुछ हुआ और प्रत्येक देश के बारे में इतना कुछ लिखा जा चुका है। इतने विस्तृत व असीम संग्रह से कुछ विषयों को ही हम अध्ययन के लिए कैसे चुन सकते हैं?

ये जायज़ सवाल हैं। विश्व इतिहास पर किसी पुस्तक को पढ़ने से पहले हमें इन प्रश्नों का उत्तर जानना चाहिए। किसी भी पाठ्यक्रम से यह स्पष्ट होना चाहिए कि उसकी रचना किस प्रकार हुई है। इसी तरह से एक किताब से यह साफ़ होना चाहिए कि उसके क्या उद्देश्य हैं।

हमें यह याद रखना चाहिए कि इतिहास के अध्ययन अथवा लेखन में इतिहासकार सदैव तरह-तरह के चयन करता है। कई दशकों पहले ई.एच. कार ने इसी बात को अपनी उत्कृष्ट पुस्तक *इतिहास क्या है* में उठाया है। किसी पुराने अभिलेखागार में दस्तावेज़ों के ढेरों की जाँच-पड़ताल कर इतिहासकार उन तथ्यों को नोट करता है जो उसे महत्त्वपूर्ण जान पड़ते हैं। वह अन्य जगहों के अभिलेखागारों से प्रमाण एकत्रित करता है और विभिन्न प्रमाणों व तथ्यों में अंतर्संबंध स्थापित करने का प्रयास करता है। न तो वह उन सभी चीज़ों को उतार सकता है जिसे उसने पढ़ा है और न ही वह हर प्रमाण का प्रयोग कर सकता है। जो प्रमाण उसे महत्त्वपूर्ण नहीं लगते उन्हें वह छोड़ देता है। बाद में कोई अन्य इतिहासकार उन्हीं स्रोतों को नए प्रश्नों के साथ पढ़ता है। नए इतिहासकार को अब कुछ ऐसे प्रमाण मिलते हैं जिन्हें पहले अनदेखा कर दिया गया था। वे इन प्रमाणों की व्याख्या करती हैं, नए अंतर्संबंध कायम करती है और इस तरह से इतिहास की एक नयी किताब लिख डालती हैं।

चयन की यह प्रक्रिया इतिहास लेखन में अंतर्निहित रही है। इसलिए इतिहास पढ़ते समय यह देखना आवश्यक है कि इतिहासकार कैसी घटनाओं के बारे में लिख रहा है तथा कैसे उनकी व्याख्या कर रहा है। हमें इतिहासकार के प्रमुख तर्क और उसकी सोच के ढाँचे को जानना जरूरी है जिसके जरिए वे किन्हीं विशेष घटनाओं को समझता है।

हाल तक हम जो इतिहास पढ़ते आए हैं आमतौर पर वह आधुनिक पश्चिम के उदय की कहानी रही है। यह कहानी निरंतर प्रगति और विकास की थी: विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, बाज़ार व व्यापार, तर्क तथा तर्कणावाद, आज़ादी और स्वतंत्रता के विस्तार की। अक्सर किन्हीं विशेष घटनाओं का इतिहास पश्चिम की विजयी यात्रा की बड़ी कहानी का ही हिस्सा था। समस्त विश्व में साम्राज्यवादी प्रभुत्व अतीत की इसी अवधारणा पर आधारित था। पश्चिम अपने को इस प्रगति का अग्रदूत मानता था। वह यह मानता था कि विश्व को सभ्य बनाना, सुधार करना व करवाना, विभिन्न देशों के मूल निवासियों को शिक्षित करना, व्यापार व बाज़ारों का विस्तार करना उसकी ख़ास ज़िम्मेवारी है।

क्या आज हमें इस समझ के बारे में प्रश्न नहीं उठाने चाहिए? ऐसा करने के लिए हमें विश्व इतिहास को फिर से देखना होगा। कई महाद्वीपों और लम्बे ऐतिहासिक कालों का सफर करते हुए हमें यह सोचना होगा कि विश्व इतिहास को नए तरीके से देखा जा सकता है। इस यात्रा में *विश्व इतिहास के कुछ विषय* आपकी मदद करेगी।

ऐसा यह तीन तरीकों से करेगी।

सबसे पहले यह पुस्तक विकास और प्रगति की महान कहानियों के पीछे छुपे ज़्यादा 'अँधेरे' इतिहासों से आपका परिचय कराएगी। आप देखेंगे कि कैसे पंद्रहवीं, सोलहवीं शताब्दियों में दक्षिण अमरीका में अन्वेषकों और व्यापारियों के आगमन ने केवल पश्चिमी वाणिज्य और संस्कृति के लिए अपने द्वार ही नहीं खोले बल्कि इससे वहाँ विभिन्न तरह की बीमारियाँ फैलीं, सभ्यता का विनाश हुआ और आबादियों का खात्मा हो गया (विषय 8)। बाद में उत्तरी अमरीका व ऑस्ट्रेलिया में गोरों के बसने का परिणाम केवल प्रगति नहीं (विषय 10) रहा। इन स्थानों में आधुनिक पूँजीवादी विकास के इतिहास के पीछे मूल निवासियों के विस्थापन व जन-संहार की भयानक कहानियाँ हैं।

फिर जब आप अनुभाग दो में राज्यों व साम्राज्यों के निर्माण के बारे में पढ़ेंगे तो पाएँगे कि वह कहानी केवल रोम (विषय 3) यानि कि यूरोप की नहीं है बल्कि मध्य इस्लामिक राज्यों (विषय 4) एवं मंगोलों के क्षेत्रों की (विषय 5) भी है। इन अध्यायों से आपको पता चलेगा कि इन जगहों पर समाज व राजनीतिक व्यवस्था अलग ढंग से संगठित थी।

यह पुस्तक अनुभाग चार में आधुनिकीकरण के विभिन्न रास्तों के बारे में भी आपको बताएगी। आप जानते होंगे कि औद्योगीकरण सबसे पहले ब्रिटेन में हुआ। एक ज़माने में यह माना जाता था कि अन्य देशों ने विभिन्न तरीकों से ब्रिटिश मॉडल का ही अनुकरण किया। इसलिए अन्य देशों में औद्योगीकरण से जुड़े विकास को ब्रिटिश मॉडल के हिसाब से ही परखा जाता रहा। ऐसा तर्क फिर से पश्चिम को विश्व केंद्र के रूप में देखता है। लेकिन आज हम यह जानते हैं कि सारी रचनात्मकता पश्चिम से ही नहीं आई। दूसरी ओर यह कहना भी उचित नहीं होगा कि विश्व घटनाओं पर पश्चिम का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, या फिर प्रत्येक देश के इतिहास को अलग-थलग कर देखना चाहिए, या फिर हमें विकास की देशज जड़ों का ही परीक्षण करना चाहिए। ऐसा परिप्रेक्ष्य सीमित होगा और यह एक तरह की संकीर्णता पैदा करेगा। इसकी जगह हमें यह जानना आवश्यक है कि विभिन्न देशों में लोग अपनी दुनिया बनाने के लिए रचनात्मक तरीकों से काम करते रहे हैं और इन क्रियाकलापों का प्रभाव अन्य देशों और यूरोप सहित अन्य महाद्वीपों पर पड़ा है। विषय सात में आप देखेंगे कि पुनर्जागरण युगीन यूरोप की सांस्कृतिक गतिविधियों पर दुनिया के अन्य देशों में होने वाली घटनाओं का भी बहुत प्रभाव पड़ा।

इस पुस्तक में आपकी यात्रा आरंभिक मानव समाज (विषय 1) तथा आरंभिक नगरों (विषय 2) के विकास से शुरू होगी। आप फिर देखेंगे कि दुनिया के तीन अलग हिस्सों में कैसे बड़े राज्य-साम्राज्य विकसित हुए और इनको कैसे संगठित किया गया (अनुभाग दो)। अगले अनुभाग में आप देखेंगे कि कैसे नौवीं व पंद्रहवीं शताब्दियों के बीच यूरोपीय समाज व संस्कृति में बदलाव आया और, दक्षिणी अमरीका के लोगों के लिए यूरोपीय विस्तार का क्या अर्थ (अनुभाग तीन) था। अंततः आप आधुनिक विश्व के जटिल निर्माण का इतिहास पढ़ेंगे (अनुभाग चार)। आपको ये सभी अध्याय इन विषयों के विवादों से परिचित करवाएँगे ताकि आप समझ सकें कि इतिहासकार पुराने मुद्दों पर कैसे निरंतर पुनर्विचार करते रहते हैं।

प्रत्येक अनुभाग एक परिचय व कालरेखा से शुरू होता है। परीक्षा के लिए इन तिथिक्रमों को याद रखना ज़रूरी नहीं है। इनके द्वारा यह बताया गया है कि एक खास समय पर दुनिया के विभिन्न हिस्सों में क्या हो रहा था। इनसे आपको विभिन्न जगहों के सापेक्षिक इतिहास को जानने में मदद मिलेगी।

कालरेखाएँ बनाना एक कठिन काम है। किसी भी कालरेखा में हम किन तिथियों को शामिल करते हैं? इस पर हमेशा इतिहासकार एकमत नहीं रहे हैं। वास्तव में अगर आप एक ही काल से संबंधित विभिन्न पुस्तकों में दिए गए तिथिक्रमों की तुलना करें तो आप शायद पाएँगे कि उन सभी के मुख्य मुद्दे भिन्न हैं। इसलिए हमें प्रत्येक तिथिक्रम को आलोचनात्मक ढंग से पढ़ना चाहिए। हमें यह देखना चाहिए कि कोई भी तिथिक्रम हमें क्या बताता है और क्या नहीं बताता है। कालरेखाएँ विशिष्ट रूप से इतिहास की रूपरेखा निर्धारित कर देती हैं।

इस वर्ष आप दक्षिण एशिया के इतिहास के बारे में नहीं पढ़ रहे हैं। अगले वर्ष की पुस्तक भारतीय इतिहास से जुड़े विषयों पर होगी। इन वर्षों (कक्षा 11 व 12) में आप विश्व इतिहास की निर्णायक घटनाओं और प्रक्रियाओं के बारे में ही नहीं बल्कि ये भी जानेंगे कि इतिहासकार अतीत के बारे में अपनी समझ कैसे बनाते हैं? आप देखेंगे कि वे किन स्रोतों का प्रयोग करते हैं और उन्हें कैसे समझते हैं। आप यह भी जानेंगे कि ऐतिहासिक ज्ञान विवादों व पुनर्व्याख्याओं के द्वारा कैसे बनता है।

नीलाद्रि भट्टाचार्य
मुख्य सलाहकार, इतिहास

© NCERT not to be republished

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

अध्यक्ष, सामाजिक विज्ञान पाठ्यपुस्तक सलाहकार समिति

हरि वासुदेवन, *प्रोफ़ेसर,* इतिहास विभाग, कलकत्ता विश्वविद्यालय, कोलकाता

मुख्य सलाहकार

नीलाद्रि भट्टाचार्य, *प्रोफ़ेसर,* ऐतिहासिक अध्ययन केंद्र, समाज विज्ञान संस्थान, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली

सलाहकार

नारायणी गुप्ता (*अवकाशप्राप्त प्रोफ़ेसर*), इतिहास विभाग, जामिया मिलिया इस्लामिया, नयी दिल्ली (विषय 10)

सदस्य

अरूप बनर्जी, *प्रोफ़ेसर,* इतिहास विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली (विषय 9)
अनिल सेठी, *प्रोफ़ेसर,* सामाजिक विज्ञान शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली
चित्रा श्रीनिवासन, *वरिष्ठ अध्यापिका,* सरदार पटेल विद्यालय, नयी दिल्ली
जयरस वाणाजी, *विजिटिंग प्रोफ़ेसर,* जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली (विषय 3)
नजफ़ हैदर, *एसोसिएट प्रोफ़ेसर,* ऐतिहासिक अध्ययन केंद्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली (विषय 4)
बीबा सोब्ती, *वरिष्ठ अध्यापिका,* मॉडर्न स्कूल, नयी दिल्ली
ब्रिज तंखा, *प्रोफ़ेसर,* पूर्व एशियाई अध्ययन विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली (विषय 11)
भास्कर चक्रवर्ती, *प्रोफ़ेसर,* इतिहास विभाग, कलकत्ता विश्वविद्यालय, कोलकाता (विषय 7)
रजत दत्त, *प्रोफ़ेसर,* ऐतिहासिक अध्ययन केंद्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली (विषय 6)
रीतू सिंह, *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर,* सामाजिक विज्ञान शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली
लक्ष्मी सुब्रमण्यम, *प्रोफ़ेसर,* पूर्व एशियाई अध्ययन केंद्र, कोलकाता (विषय 8)
सुनील कुमार, *एसोसिएट प्रोफ़ेसर,* इतिहास विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली (विषय 5)
सुप्रिया वर्मा, *एसोसिएट प्रोफ़ेसर,* इतिहास विभाग, हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद (विषय 1)
शीरीन रत्नागर (*अवकाशप्राप्त प्रोफ़ेसर*), इतिहास अध्ययन केंद्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली (विषय 2)

हिंदी अनुवाद

अनिल सेठी, *प्रोफ़ेसर,* सामाजिक विज्ञान शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली
परशुराम शर्मा, *भूतपूर्व निदेशक* (राजभाषा), भारत सरकार
प्रत्यूष कुमार मंडल, *एसोसिएट प्रोफ़ेसर,* सामाजिक विज्ञान शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली
राजेन्द्र प्रसाद तिवारी (*अवकाशप्राप्त अनुसंधान अधिकारी*), इतिहास एवं पुरातत्त्व, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग, नयी दिल्ली
रीतू सिंह, *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर,* सामाजिक विज्ञान शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली
संजीव कुमार, हिंदी विभाग, देशबंधु कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
सीमा एस. ओझा, *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर,* सामाजिक विज्ञान शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

सदस्य-समन्वयक

प्रत्यूष कुमार मंडल, *प्रोफ़ेसर,* सामाजिक विज्ञान शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

© NCERT not to be republished

आभार

इस पुस्तक के निर्माण में अनेक लोगों ने उसके अध्यायों को पढ़कर, चित्र एवं लेखन सामग्री प्रदान कर, उसकी बनावट और सज्जा की कल्पना करने में और उसके अनुवाद और कॉपी संपादन में सहयोग दिया है।

कुमकुम रॉय ने इस पुस्तक के बनने की प्रक्रिया में अनेक रूपों में मदद की है। निहारिका गुप्ता ने महत्वपूर्ण योगदान दिया और साहित्यिक संदर्भ बताए। पुस्तक के विशिष्ट अध्यायों पर अपनी टिप्पणियों के लिए हम एलन माएने, डॉन ओ कॉनर, जया मेनन, पार्थो दत्ता, पीटर मेयर और फिलिप ओलडनबर्ग के आभारी हैं। हम प्रीति गुप्ता दीवान, बजरंग बिहारी तिवारी, शिखा सेठी, संजय शर्मा, अरुणा बेरी, योगेन्द्र दत्त और उमेश के भी आभारी हैं जिन्होंने हिंदी पाण्डुलिपि के पुनरावलोकन में सहयोग दिया। कुसुम बाँठिया को हम विशेष रूप से धन्यवाद देना चाहते हैं जिन्होंने अनुवाद से जुड़ी अनेक नाजुक समस्याओं को पल में हल किया।

इस पुस्तक के मानचित्रों के निर्माण में सहायता करने के लिए हम देविका सेठी के आभारी हैं।

इस पुस्तक के निर्माण में अखिला यैचुरी, अनीष विनायक, दीपाश्री बॉल, निहारिका गुप्ता, पल्लवी राघवन व पार्थ शील के योगदान के लिए हम उन्हें विशेष रूप से धन्यवाद देना चाहते हैं।

पाठ्यपुस्तक के वर्तमान संस्करण में 'कोरिया की कहानी' शीर्षक से एक खंड जोड़ा गया है। इसके मूल लेख एवं चित्रों के लिए हम सेंटर फ़ॉर इंटरनेशनल अफ़ेयर्स, दि एकेडमी ऑफ़ कोरियन स्टडीज़, सिओल, रिपब्लिक ऑफ़ कोरिया के ली वार बोम, प्रोफ़ेसर ऑफ़ पॉलीटिक्स, और चो यंग जुन, प्रोफ़ेसर ऑफ़ इकोनॉमिक्स के प्रति आभार व्यक्त करते हैं। इसके अतिरिक्त, इस खण्ड का हिंदी में अनुवाद करने के लिए हम डॉ. नीरजा समाजदार, एसोसिएट प्रोफ़ेसर, सेंटर फ़ॉर कोरियन स्टडीज़, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली के भी आभारी हैं।

परिषद् की ओर से *डी.टी.पी. ऑपरेटर* अरविंद शर्मा, विजय कुमार तथा *कॉपी एडिटर* विजय कुमार शर्मा, विभूति नाथ झा तथा *प्रूफ रीडर* सीमा यादव ने अपना पूर्ण योगदान दिया। इतने कम समय में काम पूरा कर देने और पूरी परियोजना में इतनी दिलचस्पी लेने के लिए हम इन सभी के प्रति आभार व्यक्त करते हैं।

चित्रों के लिए आभार

विलियम ए. टर्नबॉग, रॉबर्ट जरमेन, लिन किलगोर, हैरी नेलसन, *अंडरस्टैडिंग फिज़िकल ऐंथ्रोपोलॉजी एंड आर्किओलॉजी*, वैड्स्वर्थ/थॉमसन लर्निंग, बेलमॉन्ट, 2002 (पृष्ठ 1,9,11,19 और 28 के चित्रों के लिए)

जे. बोर्डमैन, जे. ग्रिफिन, ओ. मर्रे, *ऑक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑफ दि क्लासिकल वर्ल्ड,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1991 (पृष्ठ 61, 63, 66 और 69 के चित्रों के लिए)

बारबारा ब्रेंड, *इस्लामिक आर्ट,* ब्रिटिश म्यूजियम प्रेस, 1991 (पृष्ठ 80 और 96 के चित्रों के लिए)

बर्नार्ड लेविस, *इस्लाम*, टेम्स एंड हडसन, 1992 (पृष्ठ 79, 91, 92 और 97 के चित्रों के लिए)

एम. हट्सटाइन और पी. डेलियस (संपादित), *इस्लाम: आर्ट एंड आर्किटेक्चर,* कोनमैन, 2000 (पृष्ठ 90, 95, 100, 101, 121 के चित्रों के लिए)

पी. गे एवं टाइम-लाइफ पुस्तकों के संपादक, *एज ऑफ एनलाइटेनमेंट,* एम्स्टरडैम, 1985 (पृष्ठ 186 व 187 के चित्रों के लिए)

पी.बी. एब्री, *दि केम्ब्रिज इलस्ट्रेटेड हिस्ट्री ऑफ चाइना,* केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1996 (पृष्ठ 244 के चित्रों के लिए)

जोनाथन डी. स्पेंस, *दि सर्च फॉर मॉडर्न चाइना,* सेंचुरी हचिन्सन, 1990 (पृष्ठ 247, 250 और 252 के चित्रों के लिए)

जे. कोलटन व टाइम-लाइफ पुस्तकों के संपादक, *ट्वेन्टीएथ सेंचुरी*, एम्स्टरडैम, 1985 (पृष्ठ 186 व 187 के चित्रों के लिए)

लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस, प्रिंट्स एवं फोटोग्राफ्स प्रभाग, वॉशिंगटन डी.सी. (पृष्ठ 224, 139 के चित्रों के लिए)

नेशनल जिओग्राफिक, दिसंबर 1996, फरवरी 1997 (पृष्ठ 108, 110, 113, 116, 121 के चित्रों के लिए)

विषय सूची

आमुख ____ *iii*

प्रस्तावना ____ *v*

अनुभाग एक – प्रारंभिक समाज

भूमिका ____ 2

कालक्रम एक – (6 लाख वर्ष पूर्व से 1 ई.पू.) ____ 4

विषय 1: समय की शुरुआत से ____ 8

विषय 2: लेखन कला और शहरी जीवन ____ 29

अनुभाग दो – साम्राज्य

भूमिका ____ 50

कालक्रम दो – (लगभग 100 ई.पू. से 1300 ईसवी) ____ 54

विषय 3: तीन महाद्वीपों में फैला हुआ साम्राज्य ____ 58

विषय 4: इस्लाम का उदय और विस्तार–लगभग 570-1200 ई. ____ 77

विषय 5: यायावर साम्राज्य ____ 104

अनुभाग तीन – बदलती परंपराएँ

भूमिका ____ 124

कालक्रम तीन – (लगभग 1300-1700) ____ 128

विषय 6: तीन वर्ग ____ 132

विषय 7: बदलती हुई सांस्कृतिक परंपराएँ ____ 152

विषय 8: संस्कृतियों का टकराव ____ 168

अनुभाग चार – आधुनिकीकरण की ओर

भूमिका ____ 186

कालक्रम चार – (लगभग 1700-2000) ____ 189

विषय 9: औद्योगिक क्रांति ____ 196

विषय 10: मूल निवासियों का विस्थापन ____ 213

विषय 11: आधुनिकीकरण के रास्ते ____ 231

निष्कर्ष ____ 260

© NCERT not to be republished

© NCERT not to be republished

विषय 2

लेखन कला और शहरी जीवन

11091CH02

शहरी जीवन की शुरुआत मेसोपोटामिया में हुई थी। फ़रात (Euphrates) और दज़ला (Tigris) नदियों के बीच स्थित यह प्रदेश आजकल इराक गणराज्य का हिस्सा है। मेसोपोटामिया की सभ्यता अपनी संपन्नता, शहरी जीवन, विशाल एवं समृद्ध साहित्य, गणित और खगोलविद्या के लिए प्रसिद्ध है। मेसोपोटामिया की लेखन-प्रणाली और उसका साहित्य पूर्वी भूमध्यसागरीय प्रदेशों और उत्तरी सीरिया तथा तुर्की में 2000 ई.पू. के बाद फैला, जिसके फलस्वरूप उस समस्त क्षेत्र के राज्यों के बीच आपस में, यहाँ तक कि मिस्र के फ़राओ (Pharaoh) के साथ भी मेसोपोटामिया की भाषा और लिपि में लिखा-पढ़ी होने लगी। यहाँ हम शहरी जीवन और लेखन के बीच के संबंधों की खोज करने का प्रयत्न करेंगे और फिर यह जानना चाहेंगे कि लेखन की सतत परंपरा से क्या-क्या प्रतिफल प्राप्त हुए।*

अभिलिखित इतिहास के आरंभिक काल में, इस प्रदेश को मुख्यतः इसके शहरीकृत दक्षिणी भाग को (नीचे विवरण देखें) सुमेर (Sumer) और अक्कद (Akkad) कहा जाता था। 2000 ई.पू. के बाद जब बेबीलोन एक महत्त्वपूर्ण शहर बन गया तब दक्षिणी क्षेत्र को बेबीलोनिया कहा जाने लगा। लगभग 1100 ई.पू. से, जब असीरियाइयों ने उत्तर में अपना राज्य स्थापित कर लिया, तब उस क्षेत्र को असीरिया (Assyria) कहा जाने लगा। उस प्रदेश की प्रथम ज्ञात भाषा सुमेरियन यानी सुमेरी थी। धीरे-धीरे 2400 ई.पू. के आसपास जब अक्कदी भाषी लोग यहाँ आ गए तब अक्कदी ने सुमेरी भाषा का स्थान ले लिया। अक्कदी भाषा सिकंदर के समय (336-323 ई.पू.) तक कुछ क्षेत्रीय परिवर्तनों के साथ फलती-फूलती रही। 1400 ई.पू. से धीरे-धीरे अरामाइक (Aramaic) भाषा का भी प्रवेश शुरू हुआ। यह भाषा हिब्रू से मिलती-जुलती थी और 1000 ई.पू. के बाद व्यापक रूप से बोली जाने लगी थी। यह आज भी इराक के कुछ भागों में बोली जाती है।

*मेसोपोटामिया नाम यूनानी भाषा के दो शब्दों *मेसोस* (Mesos) यानी मध्य और *पोटैमोस* (Potamos) यानी नदी से मिलकर बना है। इसलिए 'मेसोपोटामिया शब्द दज़ला फ़रात नदियों के बीच की ऊपजाऊ धरती को इंगित करता है।

मेसोपोटामिया में पुरातत्त्वीय खोजों की शुरुआत 1840 के दशक में हुई। वहाँ एक या दो स्थलों पर (जैसे उरुक और मारी में, जिन पर आगे चर्चा करेंगे) उत्खनन कार्य कई दशकों तक चलता रहा। (भारत में किसी भी स्थल पर इतने लंबे अरसे तक खुदाई की कोई परियोजना नहीं चली।) इन खुदाइयों के फलस्वरूप आज हम इतिहास के स्रोतों के रूप में सैकड़ों की संख्या में इमारतों, मूर्तियों, आभूषणों, कब्रों, औज़ारों और मुद्राओं का ही नहीं बल्कि हज़ारों की संख्या में लिखित दस्तावेज़ों का भी अध्ययन कर सकते हैं।

यूरोपवासियों के लिए मेसोपोटामिया इसलिए महत्त्वपूर्ण था क्योंकि बाईबल के प्रथम भाग 'ओल्ड टेस्टामेंट' में इसका उल्लेख कई संदर्भों में किया गया है। उदाहरण के लिए, ओल्ड टेस्टामेंट की 'बुक ऑफ जेनेसिस' (Book of Genesis) में 'शिमार' (shimar) का उल्लेख है जिसका तात्पर्य अर्थात् सुमेर ईंटों से बने शहरों की भूमि से है। यूरोप के यात्री और विद्वज्जन मेसोपोटामिया को एक तरह से अपने पूर्वजों की भूमि मानते थे, और जब इस क्षेत्र में पुरातत्त्वीय खोज की शुरुआत हुई तो ओल्ड टेस्टामेंट के अक्षरशः सत्य को सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया।

उन्नीसवीं सदी के मध्य से, मेसोपोटामिया के अतीत को खोजे जाने के उत्साह में कभी कोई कमी नहीं आई। सन 1873 में एक ब्रिटिश सामाचार-पत्र ने ब्रिटिश म्यूज़ियम द्वारा

© NCERT not to be republished

बाईबल के अनुसार यह जलप्लावन पृथ्वी पर संपूर्ण जीवन को नष्ट करने वाला था। किंतु परमेश्वर ने जलप्लावन के बाद भी जीवन को पृथ्वी पर सुरक्षित रखने के लिए नोआ (Naoh) नाम के एक मनुष्य को चुना। नोआ ने एक बहुत विशाल नाव बनायी और उसमें सभी जीव-जंतुओं का एक-एक जोड़ा रख लिया और जब जलप्लावन हुआ तो बाकी सब कुछ नष्ट हो गया पर नाव में रखे सभी जोड़े सुरक्षित बच गए। ऐसी ही एक कहानी मेसोपोटामिया के परंपरागत साहित्य में भी मिलती है; इस कहानी के मुख्य पात्र को 'ज़िउसूद्र' (Ziusudra) या 'उतनापिष्टिम' (Utnapishtim) कहा जाता था।

प्रारंभ किए गए खोज अभियान का खर्च उठाया जिसके अंतर्गत मेसोपोटामिया में एक ऐसी पट्टिका (Tablet) की खोज की जानी थी जिसपर बाईबल में उल्लिखित जलप्लावन (Flood) की कहानी का अंकन था।

1960 के दशक तक यह समझा जाता था कि ओल्ड टेस्टामेंट की कहानियाँ अक्षरश: सही नहीं हैं लेकिन ये इतिहास में हुए महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों के अतीत को अपने ढंग से अभिव्यक्त करती हैं। धीरे-धीरे, पुरातात्त्विक तकनीकें अधिकाधिक उन्नत और परिष्कृत होती गईं। इसके अलावा भिन्न-भिन्न पहलुओं पर ध्यान दिया जाने लगा, यहाँ तक कि आम लोगों के जीवन की भी परिकल्पना की जाने लगी। बाईबल की कहानियों की अक्षरश: सच्चाई को प्रमाणित करने का कार्य गौण हो गया। आगे के अनुभागों में हम जिन बातों पर चर्चा करेंगे उनमें से अधिकांश इन परवर्ती अध्ययनों पर आधारित हैं।

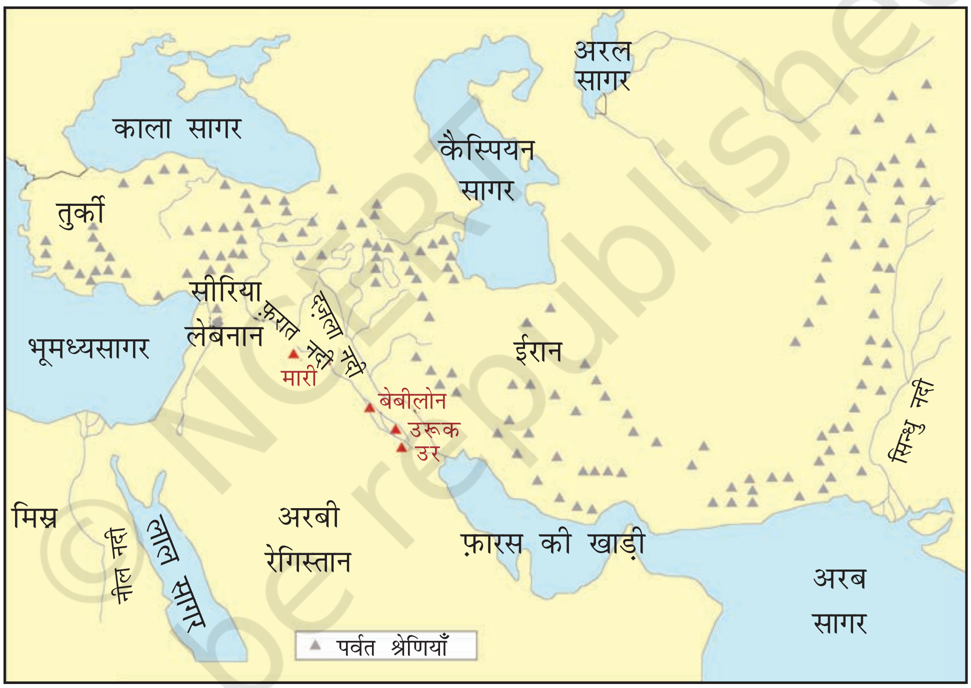

मानचित्र 1 : पश्चिम एशिया।

© NCERT not to be republished

क्रियाकलाप 1

जलप्लावन के बारे में अनेक समाजों में अपनी-अपनी पुराण-कथाएँ प्रचलित हैं। ये कुछ ऐसे तरीके हैं जो इतिहास में हुए महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों की यादों को अमिट रखते हुए अभिव्यक्त करते हैं। इनके बारे में कुछ और जानकारी का पता लगाएँ और यह बताएँ कि जलप्लावन से पहले और उसके बाद का जनजीवन कैसा रहा होगा।

मेसोपोटामिया और उसका भूगोल

इराक भौगोलिक विवधता का देश है। इसके पूर्वोत्तर भाग में हरे-भरे, ऊँचे-नीचे मैदान हैं जो धीरे-धीरे वृक्षाच्छादित पर्वत-शृंखला के रूप में फैलते गए हैं। साथ ही यहाँ स्वच्छ झरने तथा जंगली फूल हैं। यहाँ अच्छी फ़सल के लिए पर्याप्त वर्षा हो जाती है। यहाँ 7000 से 6000 ई.पू. के बीच खेती शुरू हो गई थी। उत्तर में ऊँची भूमि है जहाँ 'स्टेपी'-घास के मैदान हैं, यहाँ पशुपालन खेती की तुलना में आजीविका का अधिक अच्छा साधन है। सर्दियों की वर्षा के बाद, भेड़-बकरियाँ यहाँ उगने वाली छोटी-छोटी झाड़ियों और घास से अपना भरण-पोषण करती हैं। पूर्व में दज़ला की सहायक नदियाँ ईरान के पहाड़ी प्रदेशों में जाने के लिए परिवहन का अच्छा साधन हैं। दक्षिणी भाग एक रेगिस्तान है और यही वह स्थान है जहाँ सबसे पहले नगरों

और लेखन–प्रणाली का प्रादुर्भाव हुआ (नीचे देखिए)। इन रेगिस्तानों में शहरों के लिए भरण–पोषण का साधन बन सकने की क्षमता थी। क्योंकि फ़रात और दज़ला नाम की नदियाँ उत्तरी पहाड़ों से निकलकर अपने साथ उपजाऊ बारीक मिट्टी लाती रही हैं। जब इन नदियों में बाढ़ आती है अथवा जब इनके पानी को सिंचाई के लिए खेतों में ले जाया जाता है तब यह उपजाऊ मिट्टी वहाँ जमा हो जाती है।

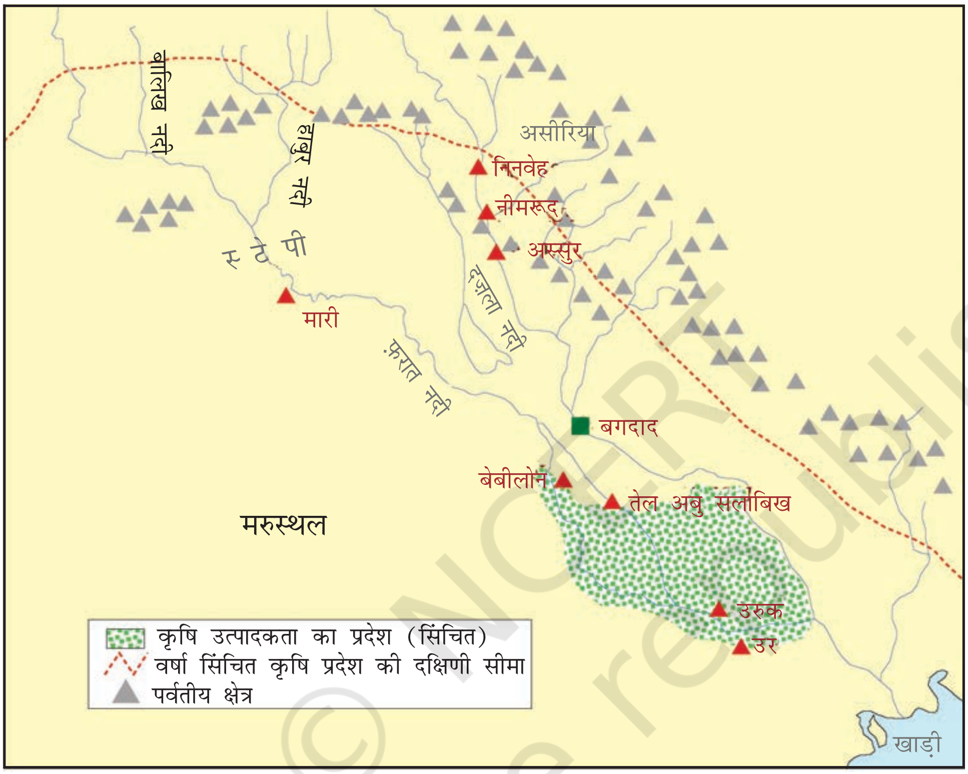

मानचित्र 2: मेसोपोटामिया– पर्वत, स्टेपी, रेगिस्तान, दक्षिण का सिंचित क्षेत्र।

फ़रात नदी रेगिस्तान में प्रवेश करने के बाद कई धाराओं में बँटकर बहने लगती है। कभी–कभी इन धाराओं में बाढ़ आ जाती है और पुराने जमाने में ये धाराएँ सिंचाई की नहरों का काम देती थीं। इनसे आवश्यकता पड़ने पर गेहूँ, जौ और मटर या मसूर के खेतों की सिंचाई की जाती थी। रोम साम्राज्य (विषय 3) सहित सभी पुरानी व्यवस्थाओं में दक्षिणी मेसोपोटामिया की खेती सबसे ज़्यादा उपज देने वाली हुआ करती थी। हालांकि वहाँ फ़सल उपजाने के लिए आवश्यक वर्षा की कुछ कमी रहती थी।

खेती के अलावा भेड़–बकरियाँ स्टेपी घास के मैदानों, पूर्वोत्तरी मैदानों और पहाड़ों के ढालों पर पाली जाती थीं (ये उपजाऊ स्थान बाढ़ की नदियों से काफी ऊँचाई पर स्थित थे), जिनसे भारी मात्रा में मांस, दूध और ऊन आदि वस्तुएँ मिलती थीं। इसके अलावा, नदियों में मछलियों की कोई कमी नहीं थी और गर्मियों में खजूर के पेड़ खूब फल (पिंड खजूर) देते थे। लेकिन हमें यह सोचने की गलती नहीं करनी चाहिए कि शहरों का विकास केवल ग्रामीण समृद्धि के बल पर ही हुआ था। इस विकास के अन्य कारकों के विषय में हम बारी–बारी से चर्चा करेंगे, लेकिन पहले हमें शहरी जीवन के बारे में स्पष्ट जानकारी लेनी चाहिए।

© NCERT not to be republished

मेसोपोटामिया के प्राचीनतम नगरों का निर्माण कांस्य युग यानी लगभग 3000 ई.पू. में शुरू हो गया था। काँसा, ताँबे और राँगे के मिश्रण से बनता है। काँसे के इस्तेमाल का मतलब है कि ये धातुएँ दूर-दूर से मंगाई जाती थीं। बढ़ई का सही काम करने, मनकों में छेद करने, पत्थर की मुद्राएँ उकेरने, फर्नीचर में जड़ने, सीपियाँ काटने आदि कामों के लिए धातु के औज़ारों की जरूरत पड़ती थी। मेसोपोटामियाई हथियार भी काँसे के ही होते थे; उदाहरण के लिए, भालों की नोकें काँस्य की बनी होती थीं जिन्हें हम पृष्ठ 38 पर देख सकते हैं।

शहरीकरण का महत्त्व

शहर और नगर बड़ी संख्या में लोगों के रहने के ही स्थान नहीं होते थे। जब किसी अर्थव्यवस्था में खाद्य उत्पादन के अतिरिक्त अन्य आर्थिक गतिविधियाँ विकसित होने लगती है तब किसी एक स्थान पर जनसंख्या का घनत्व बढ़ जाता है। इसके फलस्वरूप कस्बे बसने लगते हैं। ऐसी परिस्थिति में लोगों का कस्बों में इकट्ठे रहना उनके लिए फायदेमंद सिद्ध होता है। विशेषत: इसलिए क्योंकि शहरी अर्थव्यवस्थाओं में खाद्य उत्पादन के अलावा व्यापार, उत्पादन और तरह-तरह की सेवाओं की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। नगर के लोग आत्मनिर्भर नहीं रहते और उन्हें नगर या गाँव के अन्य लोगों द्वारा उत्पन्न वस्तुओं या दी जाने वाली सेवाओं के लिए उन पर आश्रित होना पड़ता है। उनमें आपस में बराबर लेन-देन होता रहता है। उदाहरण के लिए, एक पत्थर की मुद्रा बनाने वाले को पत्थर उकेरने के लिए काँसे के औज़ारों की जरूरत पड़ती है; वह स्वयं ऐसे औज़ार नहीं बना सकता और वह यह भी नहीं जानता कि मुद्राओं के लिए आवश्यक रंगीन पत्थर वह कहाँ से प्राप्त करे। उसकी विशेषज्ञता तो सिर्फ नक्काशी यानी पत्थर उकेरने तक ही सीमित होती है, वह व्यापार करना नहीं जानता। काँसे के औज़ार बनाने वाला भी धातु-ताँबा या राँगा (टिन) लाने के लिए खुद बाहर नहीं जाता। साथ ही, उसे ईंधन के लिए हरदम लकड़ी के कोयले की ज़रूरत रहती है। इस प्रकार श्रम-विभाजन (Division of Labour) शहरी-जीवन की विशेषता है।

इसके अलावा, शहरी अर्थव्यवस्था में एक सामाजिक संगठन का होना भी जरूरी है। शहरी विनिर्माताओं के लिए ईंधन, धातु, विभिन्न प्रकार के पत्थर, लकड़ी आदि जरूरी चीज़ें भिन्न-भिन्न जगहों से आती हैं जिनके लिए संगठित व्यापार और भंडारण की भी आवश्यकता होती है। शहरों में अनाज और अन्य खाद्य-पदार्थ गाँवों से आते हैं और उनके संग्रह तथा वितरण के लिए व्यवस्था करनी होती है। इसके अलावा और भी अनेक प्रकार के क्रियाकलापों में तालमेल बैठाना पड़ता है: मुद्रा काटने वालों को केवल पत्थर ही नहीं, उन्हें तराशने के लिए औज़ार और बर्तन भी चाहिए। जाहिर है कि ऐसी प्रणाली में कुछ लोग आदेश देते हैं और दूसरे उनका पालन करते हैं। इसके अलावा, शहरी अर्थव्यवस्था को अपना हिसाब-किताब लिखित रूप में रखना होता है।

वार्का शीर्ष

3000 ई.पू. उरुक नगर में स्त्री का यह सिर एक सफ़ेद संगमरमर को तराशकर बनाया गया था। इसकी आँखों और भौंहों में क्रमश: नीले लाजवर्द (Lapis lazuli) तथा सफ़ेद सीपी और काले डामर (Bitumen) की जड़ाई की गई होगी। सिर के ऊपर एक खाँचा बना हुआ है जो शायद गहना पहनने के लिए बनाया गया था। यह मूर्तिकला का एक विश्व-प्रसिद्ध नमूना है, इसके मुख, ठोड़ी और गालों की सुकोमल-सुंदर बनावट के लिए इसकी प्रशंसा की जाती है। यह एक ऐसे कठोर पत्थर में तराशा गया है जिसे काफी अधिक दूरी से लाना पड़ा होगा।

पत्थर लाने से लेकर इस मूर्ति के निर्माण में और किन विशेषज्ञों का योगदान रहा होगा। उनकी सूची बनाइए।

क्रियाकलाप 2

क्या शहरी जीवन धातुओं के इस्तेमाल के बिना संभव होता? इस विषय पर चर्चा कीजिए।

शहरों में माल की आवाजाही

मेसोपोटामिया के खाद्य-संसाधन चाहे कितने भी समृद्ध रहे हों, उसके यहाँ खनिज़-संसाधनों का अभाव था। दक्षिण के अधिकांश भागों में औज़ार, मोहरें (मुद्राएँ) और आभूषण बनाने के लिए पत्थरों की कमी थी। इराकी खजूर और पोपलार के पेड़ों की लकड़ी, गाड़ियाँ, गाड़ियों के पहिए या नावें बनाने के लिए कोई खास अच्छी नहीं थी; और औज़ार, पात्र, या गहने बनाने के लिए कोई धातु वहाँ उपलब्ध नहीं थी। इसलिए हमारे विचार से प्राचीन काल के मेसोपोटामियाई लोग संभवतः लकड़ी, ताँबा, राँगा, चाँदी, सोना, सीपी और विभिन्न प्रकार के पत्थरों को तुर्की और ईरान अथवा खाड़ी-पार के देशों से मंगाते थे जिसके लिए वे अपना कपड़ा और कृषि-जन्य उत्पाद काफी मात्रा में उन्हें निर्यात करते थे। इन देशों के पास खनिज संसाधनों की कोई कमी नहीं थी, मगर वहाँ खेती करने की बहुत कम गुंजाइश थी। इन वस्तुओं का नियमित रूप से आदान-प्रदान तभी संभव होता जबकि इसके लिए कोई सामाजिक संगठन हो जो विदेशी अभियानों और विनिमयों को निर्देशित करने में सक्षम हो। दक्षिणी मेसोपोटामिया के लोगों ने ऐसे संगठन स्थापित करने की शुरुआत की।

शिल्प, व्यापार और सेवाओं के अलावा, कुशल परिवहन व्यवस्था भी शहरी विकास के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है। भारवाही पशुओं की पीठ पर रखकर या बैलगाड़ियों में डालकर शहरों में अनाज या काठ कोयला लाना-ले जाना बहुत कठिन होता है क्योंकि उसमें बहुत ज़्यादा समय लगता है और पशुओं के चारे आदि पर भी काफी खर्च आता है। शहरी अर्थव्यवस्था इसका बोझ उठाने के लिए सक्षम नहीं होती। इसलिए परिवहन का सबसे सस्ता तरीका सर्वत्र जलमार्ग ही होता है। अनाज के बोरों से लदी हुई नावें या बजरे, नदी की धारा अथवा हवा के वेग से चलते हैं, जिसमें कोई खर्चा नहीं लगता, जबकि जानवरों से माल की ढुलाई की जाए तो उन्हें चारा खिलाना पड़ता है। पुराने मेसोपोटामिया की नहरें और प्राकृतिक जलधाराएँ छोटी-बड़ी बस्तियों के बीच माल के परिवहन का अच्छा मार्ग थीं। और आगे इसी अध्याय में मारी नगर का जो विवरण दिया गया है उसे पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाएगा कि फ़रात नदी उन दिनों व्यापार के लिए 'विश्व-मार्ग' के रूप में कितनी अधिक महत्त्वपूर्ण थी।

चिकनी मिट्टी की पट्टिकाएँ: लगभग 3200 ई.पू.
प्रत्येक पट्टिका की ऊँचाई 3.5 से.मी. या उससे कम है। इन पट्टिकाओं पर बने संकेत-चित्र (बैल मछली, अनाज और नाव) है।

लेखन कला का विकास

सभी समाजों के पास अपनी एक भाषा होती है जिसमें उच्चरित ध्वनियाँ अपना अर्थ प्रकट करती हैं। इसे मौखिक या शाब्दिक भावाभिव्यक्ति कहते हैं। लिखना, मौखिक भावाभिव्यक्ति से उतना अलग नहीं है जितना हम अकसर समझ बैठते हैं। जब लेखन या लिपि के बारे में बात की जाती है तो उसका अर्थ है उच्चरित ध्वनियाँ, जो दृश्य संकेतों या चिह्नों के रूप में प्रस्तुत की जाती हैं।

मेसोपोटामिया में जो पहली पट्टिकाएँ (Tablet) पाई गई हैं वे लगभग 3200 ई.पू. की हैं। उनमें चित्र जैसे चिह्न और संख्याएँ दी गई हैं। वहाँ बैलों, मछलियों और रोटियों आदि की लगभग 5000 सूचियाँ मिली हैं, जो वहाँ के दक्षिणी शहर उरुक के मंदिरों में आने वाली और वहाँ से बाहर जाने वाली चीज़ों की होंगी। स्पष्टतः, लेखन कार्य तभी शुरू हुआ जब समाज को अपने लेन-देन का स्थायी हिसाब रखने की ज़रूरत पड़ी क्योंकि शहरी जीवन में लेन-देन अलग-अलग समय पर होते थे, उन्हें करने वाले भी कई लोग होते थे और सौदा भी कई प्रकार के माल के बारे में होता था।

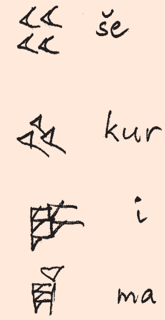

कीलाकार अक्षर संकेत

मेसोपोटामिया के लोग मिट्टी की पट्टिकाओं पर लिखा करते थे। लिपिक चिकनी मिट्टी को गीला करता था और फिर उसको गूंध कर और थापकर एक ऐसे आकार की पट्टी का रूप दे

एक चिकनी मिट्टी की पट्टिका जो दोनों ओर कीलाक्षरों में लिखी हुई है। यह एक गणितीय अभ्यास है। पट्टिका के अग्रभाग में सबसे ऊपर एक त्रिभुज और उसके आर-पार कुछ रेखाएँ अंकित हैं। आप देखेंगे कि अक्षर मिट्टी में दबाकर अंकित किए गए हैं।

देता था जिसे वह आसानी से अपने एक हाथ में पकड़ सके। वह सावधानीपूर्वक उसकी सतहों को चिकना बना लेता था फिर सरकंडे की तीली की तीखी नोक से वह उसकी नम चिकनी सतह पर कीलाकार चिह्न (cuneiform*) बना देता था। जब ये पट्टिकाएँ धूप में सूख जाती थीं तो पक्की हो जाती थीं और वे मिट्टी के बर्तनों जैसी ही मज़बूत हो जाती थीं। जब उन पर लिखा हुआ कोई हिसाब, जैसे धातु के टुकड़े सौंपने का हिसाब असंगत या गैर-ज़रूरी हो जाता तो उस पट्टिका को फेंक दिया जाता था। ऐसी पट्टी जब एक बार सूख जाती थी तो उस पर कोई नया चिह्न या अक्षर नहीं लिखा जा सकता था। इस प्रकार प्रत्येक सौदे के लिए चाहे वह कितना ही छोटा हो, एक अलग पट्टिका की जरूरत होती थी। इसीलिए मेसोपोटामिया के खुदाई स्थलों पर सैकड़ों पट्टिकाएँ मिली हैं। और इस स्रोत-संपदा के कारण ही आज हम मेसोपोटामिया के बारे में इतना कुछ जानते हैं।

क्यूनीफ़ार्म* (कीलाकार) लातिनी शब्द *क्यूनियस* जिसका अर्थ 'खूँटी' और *फ़ोर्मा* जिसका अर्थ 'आकार' है, से बना है।

लगभग 2600 ई.पू. के आसपास वर्ण कीलाकार हो गए और भाषा सुमेरियन थी। अब लेखन का इस्तेमाल हिसाब-किताब रखने के लिए ही नहीं, बल्कि शब्द-कोश बनाने, भूमि के हस्तांतरण को कानूनी मान्यता प्रदान करने, राजाओं के कार्यों का वर्णन करने और कानून में उन परिवर्तनों को उद्‌घोषित करने के लिए किया जाने लगा जो देश की आम जनता के लिए बनाए जाते थे। मेसोपोटामिया की सबसे पुरानी ज्ञात भाषा सुमेरियन का स्थान, 2400 ई.पू. के बाद, धीरे-धीरे अक्कदी भाषा ने ले लिया। अक्कदी भाषा में कीलाकार लेखन का रिवाज ईसवी सन् की पहली शताब्दी तक अर्थात् 2000 से अधिक वर्षों तक चलता रहा।

लेखन प्रणाली

जिस ध्वनि के लिए कीलाक्षर या कीलाकार चिह्न का प्रयोग किया जाता था वह एक अकेला व्यंजन या स्वर नहीं होता था (जैसे अंग्रेजी वर्णमाला में m या a) लेकिन अक्षर (Syllables) होते थे (जैसे अंग्रेजी में -put-, या -la- या -in-)। इस प्रकार, मेसोपोटामिया के लिपिक को सैकड़ों चिह्न सीखने पड़ते थे और उसे गीली पट्टी पर उसके सूखने से पहले ही लिखना होता

था। लेखन कार्य के लिए बड़ी कुशलता की आवश्यकता होती थी, इसलिए लिखने का काम अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता था। इस प्रकार, किसी भाषा-विशेष की ध्वनियों को एक दृश्य रूप में प्रस्तुत करना एक महान बौद्धिक उपलब्धि माना जाता था।

साक्षरता

मेसोपोटामिया के बहुत कम लोग पढ़-लिख सकते थे। न केवल प्रतीकों या चिह्नों की संख्या सैकड़ों में थी, बल्कि ये कहीं अधिक पेचीदा थे (पृष्ठ 33 पर दिए गए चित्र को देखिए।) अगर राजा स्वयं पढ़ सकता था तो वह यह चाहता था कि प्रशस्तिपूर्ण अभिलेखों में उन तथ्यों का उल्लेख अवश्य किया जाए। अधिकतर लिखावट बोलने के तरीके को दर्शाती थी।

एक अधिकारी द्वारा राजा को लिखा गया पत्र उसे पढ़कर सुनाया जाता था, इसलिए उसकी शुरुआत इस तरह की जाती थी:

"मेरे 'अमुक' मालिक को..... उनका 'अमुक' सेवक निवेदन करता है.... मुझे सौंपे गए काम को मैंने पूरा कर दिया है.....।"

सृष्टि के बारे में लिखे गए एक लंबे पौराणिक काव्य के अंत में यह लिखा गया है:

"इन काव्य पंक्तियों को सदा याद रखा जाए और बड़े-बूढ़े लोग इन्हें छोटों को पढ़ाएँ;
बुद्धिमान और विद्वान लोग इन पर चर्चा करें;
पिता इन्हें अपने पुत्रों के लिए बार-बार दोहराएँ;
(यहाँ तक कि) ग्वालों के कान भी इन पंक्तियों को सुनने के लिए सदा खुले रहें।"

लेखन का प्रयोग

शहरी जीवन, व्यापार और लेखन कला के बीच के संबंधों को उरुक के एक प्राचीन शासक एनमर्कर (Enmerkar) के बारे में लिखे गए एक सुमेरियन महाकाव्य में स्पष्ट किया गया है। मेसोपोटामिया की परंपरागत कथाओं के अनुसार, उरुक एक अत्यंत सुंदर शहर था जिसे अक्सर केवल 'शहर' कहकर ही पुकारा जाता था।

सुमेर के व्यापार की पहली घटना को एनमर्कर के साथ जोड़ा जाता है। उस महाकाव्य में कहा गया है कि उन दिनों व्यापार क्या होता है, यह कोई नहीं जानता था। एनमर्कर अपने शहर के एक सुंदर मंदिर को सजाने के लिए लाजवर्द और अन्य बहुमूल्य रत्न तथा धातुएँ मंगाना चाहता था। इस काम के लिए उसने अपना एक दूत अरट्टा (Aratta) नाम के एक सुदूर देश के शासक के पास भेजा। "दूत ने राजा के आदेश का पालन किया। रात में वह चाँद-तारों की रोशनी और उनसे सूचित दिशा के अनुसार और दिन में सूरज के बताए मार्ग पर आगे बढ़ता गया। वह रास्ते में आने वाले ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों को लाँघने के लिए ऊपर चढ़ता और उतरता रहा। जब वह पहाड़ पर था तो पहाड़ की तलहटी में रहने वाले 'सूसा' (Susa) नगर के लोगों ने उसे छोटे चूहों* की तरह नमस्कार किया। उसने पाँच पर्वतमालाएँ, छः पर्वतमालाएँ और फिर सात पर्वतमालाएँ पार की ......।"

दूत अरट्टा के मुखिया से लाजवर्द या चाँदी नहीं ला पाया और उसे बारम्बार लंबी यात्राओं के उपरान्त खाली हाथ ही लौटना पड़ा। इसके बावजूद कि वह अरट्टा के मुखिया से चाँदी प्राप्त करने के लिए उसको उरुक के राजा की ओर से तरह-तरह की धमकियाँ और आश्वासन देता रहा। अंत में दूत इतना चकरा गया कि अपनी बात को सही तरह से व्यक्त ही नहीं कर पाया और उसने एनमर्कर के संदेशों को घालमेल कर दिया। तब, "राजा एनमर्कर ने अपने हाथ से चिकनी मिट्टी की पट्टिका बनाई और उस पर शब्द लिख दिए। उन दिनों, मिट्टी पर शब्द लिखने का रिवाज़ नहीं था।"

*(कवि के कहने का तात्पर्य यह था कि जब दूत एक बार ऊँचे पहाड़ पर चढ़ गया तो नीचे घाटी में सभी चीज़ें उसे बहुत छोटी लगीं।)

जब लिखी हुई पट्टिका दूत ने अरट्टा के शासक के हाथों में दी, "तो उसने उसकी जाँच की। उच्चरित शब्द कील* यानी कीलाकार शब्द थे। उसे देखते ही उसकी त्योरियाँ चढ़ गईं। उसने पट्टिका पर नज़र गड़ाए रखी।"

इस घटना को शाब्दिक रूप से सत्य नहीं माना जाना चाहिए; लेकिन इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मेसोपोटामिया की विचारधारा के अनुसार सर्वप्रथम राजा ने ही व्यापार और लेखन की व्यवस्था की थी। यह काव्य हमें यह भी बताता है कि लेखन कार्य सूचना इकट्ठी करने और दूर-दूर भेजने का साधन तो था ही, साथ ही उससे मेसोपोटामिया की शहरी संस्कृति की उत्कृष्टता की भी झलक मिलती है।

दक्षिणी मेसोपोटामिया का शहरीकरण–मंदिर और राजा

5000 ई.पू. से दक्षिणी मेसोपोटामिया में बस्तियों का विकास होने लगा था। इन बस्तियों में से कुछ ने प्राचीन शहरों का रूप ले लिया। ये शहर कई तरह के थे। पहले वे जो मंदिरों के चारों ओर विकसित हुए; दूसरे जो व्यापार के केंद्रों के रूप में विकसित हुए; और शेष शाही शहर थे। इनमें से पहली दो श्रेणियों के शहरों पर यहाँ चर्चा की जाएगी।

बाहर से आकर बसने वाले लोगों ने (उनके मूल स्थान का पता नहीं) अपने गाँवों में कुछ चुने हुए स्थानों या मंदिरों को बनाना या उनका पुनर्निर्माण करना शुरू किया। सबसे पहला ज्ञात मंदिर एक छोटा-सा देवालय था जो कच्ची ईंटों का बना हुआ था। मंदिर विभिन्न प्रकार के देवी-देवताओं के निवास स्थान थे, जैसे उर जो चंद्र देवता था और इन्नाना जो प्रेम व युद्ध की देवी थी। ये मंदिर ईंटों से बनाए जाते थे और समय के साथ बड़े होते गए। क्योंकि उनके खुले आँगनों के चारों ओर कई कमरे बने होते थे। कुछ प्रारंभिक मंदिर साधारण घरों से अलग किस्म के नहीं होते थे– क्योंकि मंदिर भी किसी देवता का घर ही होता था। लेकिन मंदिरों की बाहरी दीवारें कुछ खास अंतरालों के बाद भीतर और बाहर की ओर मुड़ी हुई होती थीं; यही मंदिरों की विशेषता थी। साधारण घरों की दीवारें ऐसी नहीं होती थीं।

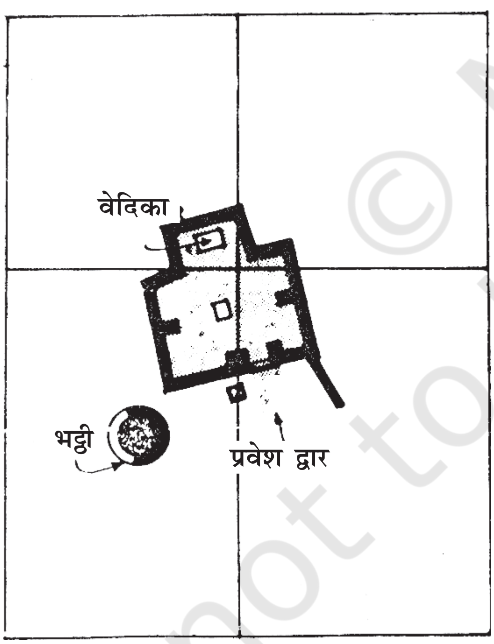

दक्षिणी मेसोपोटामिया का सबसे प्राचीन ज्ञात मंदिर- लगभग 5000 ई.पू. (नक्शा)।

देवता पूजा का केंद्र-बिंदु होता था। लोग देवी-देवता के लिए अन्न, दही, मछली लाते थे (पुराने जमाने के कुछ मंदिरों के फ़र्शों पर मछली की हड्डियों की परतें जमी हुई मिली हैं।) आराध्य देव सैद्धांतिक रूप से खेतों, मत्स्य क्षेत्रों और स्थानीय लोगों के पशुधन का स्वामी माना जाता था। समय आने पर उपज को उत्पादित वस्तुओं में बदलने की प्रक्रिया (जैसे तेल निकालना, अनाज पीसना, कातना और ऊनी कपड़ों को बुनना आदि) यहीं की जाती थी। घर-परिवार से ऊपर के स्तर के व्यवस्थापक, व्यापारियों के नियोक्ता, अन्न, हल जोतने वाले पशुओं, रोटी, जौ की शराब, मछली आदि के आवंटन और वितरण के लिखित अभिलेखों के पालक के रूप में मंदिर ने धीरे-धीरे अपने क्रियाकलाप बढ़ा लिए और मुख्य शहरी संस्था का रूप ले लिया। लेकिन अन्य दूसरे कारक भी इस व्यवस्था में विद्यमान थे।

ज़मीन में प्राकृतिक उपजाऊपन होने के बावजूद कृषि कई बार संकटों से घिर जाती थी। फ़रात नदी की प्राकृतिक धाराओं में किसी वर्ष तो बहुत ज़्यादा पानी बह आता था और फ़सलों को डुबा देता था और कभी-कभी ये धाराएँ अपना रास्ता बदल लेती थीं, जिससे खेत सूखे रह जाते थे। जैसा कि पुरातत्त्वीय अभिलेखों से पता चलता है, मेसोपोटामिया के इतिहास में गाँव समय-समय पर पुन: स्थापित किए जाते रहे हैं। इन प्राकृतिक विपदाओं के अलावा, कई बार मानव-निर्मित समस्याएँ भी आ खड़ी होती थीं। जो लोग इन धाराओं के ऊपरी इलाकों में रहते थे, वे अपने पास की जलधारा से इतना

लगभग 3000 ई.पू. में निर्मित एक मंदिर जिसका खुला हुआ आँगन और बाहरी-भीतरी मुख भाग (उत्खनित रूप में) चित्र में दिखाया गया है।

ज़्यादा पानी अपने खेतों में ले लेते थे कि धारा के नीचे की ओर बसे हुए गाँवों को पानी ही नहीं मिलता था। ये लोग अपने हिस्से की सरणी में से गाद (मिट्टी) नहीं निकालते थे, जिससे बहाव रुक जाता था और नीचे वालों को पानी नहीं मिलता था। इसलिए मेसोपोटामिया के तत्कालीन देहातों में ज़मीन और पानी के लिए बार-बार झगड़े हुआ करते थे।

जब किसी क्षेत्र में लंबे समय तक लड़ाई चलती थी तो जो मुखिया लड़ाई जीतते थे वे अपने साथियों एवं अनुयायियों को लूट का माल बाँटकर खुश कर देते थे तथा हारे हुए समूहों में से लोगों को बंदी बनाकर अपने साथ ले जाते थे, जिन्हें वे अपने चौकीदार या नौकर बना लेते थे। इस प्रकार, वे अपना प्रभाव और अनुयायियों की संख्या बढ़ा लेते थे। किंतु, युद्ध में विजयी होने वाले ये नेता लोग स्थायी रूप से समुदाय के मुखिया नहीं बने रहते थे; आज हैं तो कल चले जाते थे। लेकिन बाद में एक ऐसा समय आया जब इन नेताओं ने समुदाय के कल्याण पर अधिक ध्यान देना शुरू कर दिया और उसके फलस्वरूप नयी-नयी संस्थाएँ और परिपाटियाँ स्थापित हो गईं। इस समय के विजेता मुखियाओं ने कीमती भेंटों को देवताओं पर अर्पित करना शुरू कर दिया जिससे कि समुदाय के मंदिरों की सुंदरता बढ़ गई। उन्होंने लोगों को उत्कृष्ट पत्थरों और धातुओं को लाने के लिए भेजा, जो देवता और समुदाय को लाभ पहुँचा सकें तथा मंदिर की धन-संपदा के वितरण का और मंदिरों में आने-जाने वाली वस्तुओं का हिसाब-किताब रखकर प्रभावी तरीके से संचालन कर सकें। जैसा कि एनमर्कर से जुड़ी कविताएँ व्यक्त करती हैं कि इस व्यवस्था ने राजा को ऊँचा स्थान दिलाया तथा समुदाय पर उसका पूर्ण नियंत्रण स्थापित किया।

हम पारस्परिक हितों को सुदृढ़ करने वाले विकास के एक ऐसे दौर की कल्पना कर सकते हैं, जिसमें मुखिया लोगों ने ग्रामीणों को अपने पास बसने के लिए प्रोत्साहित किया, जिससे कि वे आवश्यकता पड़ने पर तुरंत अपनी सेना इकट्ठी कर सकें। इसके अलावा, लोग एक-दूसरे के आस-पास रहने से स्वयं को अधिक सुरक्षित महसूस कर सकें। उरुक, जो उन दिनों सबसे पुराने मंदिर-नगरों में से एक था, से हमें सशस्त्र वीरों और उनसे हताहत हुए शत्रुओं के चित्र मिलते हैं; और सावधानीपूर्वक किए गए पुरातत्त्वीय सर्वेक्षणों से पता चला है कि 3000 ई.पू. के आसपास जब उरुक नगर का 250 हैक्टेयर भूमि में विस्तार हुआ तो उसके कारण दर्जनों छोटे-छोटे गाँव उजड़ गए और बड़ी संख्या में आबादी का विस्थापन हुआ। उसका यह विस्तार शताब्दियों बाद फले-फूले मोहनजोदड़ो नगर से दो गुना था। यह भी उल्लेखनीय तथ्य है कि उरुक नगर

© NCERT not to be republished

ऊपर–एक काले पत्थर पर उत्कीर्णित शिलापट्ट (स्टेल)* पर दाढ़ी वाले व्यक्ति का दोहरा चित्र दिया गया है। उसके बालों और सिर पर बंधी हुई पट्टी, कमर पट्टी और लंबे अंगरखे के निचले हिस्से (स्कर्ट) को देखिए। नीचे के दृश्य में उसे एक शेर पर अपने बड़े धनुष-बाण से आक्रमण करते हुए दिखाया गया है। ऊपर के दृश्य में, यह वीर उस उग्र शेर को आखिर अपने भाले से मार गिराता है। (लगभग 3200 ई.पू.)

*स्टेल, पत्थर के ऐसे शिलापट्ट होते हैं जिन पर अभिलेख उत्कीर्ण किये जाते हैं।

की रक्षा के लिए उसके चारों ओर काफी पहले ही एक सुदृढ़ प्राचीर बना दी गई थी। उरुक नगर 4200 ई.पू. से 400 ईसवी तक बराबर अपने अस्तित्व में बना रहा, और उस दौरान 2800 ई.पू. के आसपास वह बढ़कर 400 हैक्टेयर में फैल गया।

युद्धबंदियों ओर स्थानीय लोगों को अनिवार्य रूप से मंदिर का अथवा प्रत्यक्ष रूप से शासक का काम करना पड़ता था। कृषिकर भले ही न देना पड़े, पर काम करना अनिवार्य था। जिन्हें काम पर लगाया जाता था उन्हें काम के बदले अनाज दिया जाता था। सैकड़ों ऐसी राशन-सूचियाँ मिली हैं जिनमें काम करने वाले लोगों के नामों के आगे उन्हें दिए जाने वाले अनाज, कपड़े और तेल आदि की मात्रा लिखी गई है। एक अनुमान के अनुसार, इन मंदिरों में से एक मंदिर को बनाने के लिए 1500 आदमियों ने पाँच साल तक प्रतिदिन 10 घंटे काम किया था।

शासक के हुक्म से आम लोग पत्थर खोदने, धातु-खनिज लाने, मिट्टी से ईंटें तैयार करने और मंदिर में लगाने, और सुदूर देशों में जाकर मंदिर के लिए उपयुक्त सामान लाने के कामों में जुटे रहते थे। इसकी वजह से 3000 ई.पू. के आसपास उरुक में खूब तकनीकी प्रगति भी हुई। अनेक प्रकार के शिल्पों के लिए काँसे के औज़ारों का प्रयोग होता था। वास्तुविदों ने ईंटों के स्तंभों को बनाना सीख लिया था क्योंकि उन दिनों बड़े-बड़े कमरों की छतों के बोझ को सँभालने के लिए शहतीर बनाने हेतु उपयुक्त लकड़ी नहीं मिलती थी।

सैकड़ों लोगों को चिकनी मिट्टी के शंकु (कोन) बनाने और पकाने के काम में लगाया जाता था। इन शंकुओं को भिन्न-भिन्न रंगों में रँगकर मंदिरों की दीवारों में लगाया जाता था जिससे वे दीवारें विभिन्न रंगों से सुशोभित हो जाती थीं। मूर्तिकला के क्षेत्र में भी उच्चकोटि की सफलता प्राप्त की गई; इस कला के सुंदर नमूने आसानी से उपलब्ध होने वाली चिकनी मिट्टी की अपेक्षा अधिकतर आयातित पत्थरों से तैयार किए जाते थे। तभी प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भी एक युगांतरकारी परिवर्तन आया जो शहरी अर्थव्यवस्था के लिए अत्यंत उपयुक्त साबित हुआ और वह था: कुम्हार के चाक का निर्माण। आगे चलकर इस चाक से कुम्हार की कार्यशाला में एक साथ बड़े पैमाने पर दर्जनों एक जैसे बर्तन आसानी से बनाए जाने लगे।

एक बेलनाकार मुद्रा की छाप, लगभग 3200 ई.पू.। इस छाप में अंकित दाढ़ी वाले सशस्त्र खड़े व्यक्ति और ऊपर काले पत्थर पर अंकित वीर का उत्कीर्णित शिलापट्ट या स्टेल, दोनों में पोशाक और केश-शैली एक जैसी है। चित्र में तीन युद्धबंदी दिखाए गए हैं जिनके हाथ बंधे हुए हैं और चौथा व्यक्ति विजयी योद्धा से हाथ फैलाकर दया की भीख माँग रहा है।*

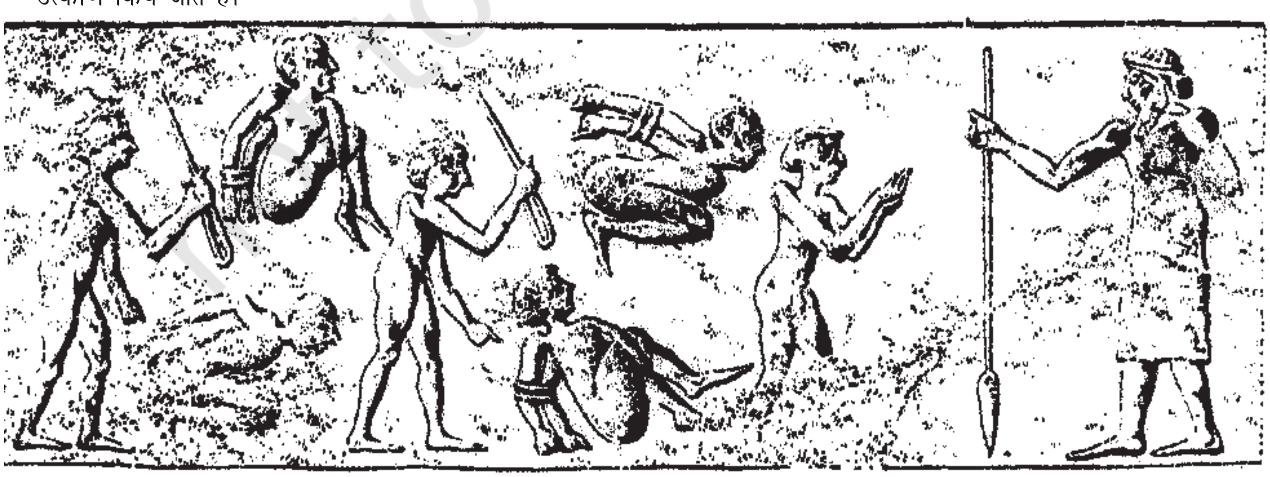

मोहर : एक शहरी शिल्प-कृति

भारत में, प्राचीन काल में पत्थर की मोहरें होती थीं जिनपर चिह्न अंकित किए गए होते थे। लेकिन मेसोपोटामिया में, पहली सहस्राब्दी ई.पू. के अंत तक पत्थर की बेलनाकार मोहरें, जो बीच में आर-पार छिदी होती थीं, एक तीली लगाकर गीली मिट्टी के ऊपर घुमाई जाती थीं और इस प्रकार उनसे लगातार चित्र बनता जाता था। वे अत्यंत कुशल कारीगरों द्वारा उकेरी जाती थीं और कभी-कभी उनमें ऐसे लेख होते थे; जैसे- मालिक का नाम, उसके इष्टदेव का नाम और उसकी अपनी पदीय स्थिति, आदि। किसी कपड़े की गठरी या बर्तन के मुँह को चिकनी मिट्टी से लीप-पोतकर उसपर वह मोहर घुमाई जाती थी जिससे उसमें अंकित लिखावट मिट्टी की सतह पर छप जाती थी; इससे उस गठरी या बर्तन में रखी वस्तुओं को मोहर लगाकर सुरक्षित किया जा सकता था। जब इस मोहर को मिट्टी की बनी पट्टिका पर लिखे पत्र पर घुमाया जाता था तो वह मोहर उस पत्र की प्रामाणिकता की प्रतीक बन जाती थी। इस प्रकार मुद्रा सार्वजनिक जीवन में नगरवासी की भूमिका को दर्शाती थी।

पाँच पुरानी बेलनाकार मोहरें और उनके छापे।
प्रत्येक की छाप का विवरण दें। क्या उन पर कीलाकार लिपि अंकित है?

शहरी जीवन

ऊपर के विवरण से पता चलता है कि नगरों की सामाजिक व्यवस्था में एक उच्च या संभ्रांत वर्ग का प्रादुर्भाव हो चुका था। धन-दौलत का ज़्यादातर हिस्सा समाज के एक छोटे से वर्ग में केंद्रित था। इस बात की पुष्टि इस तथ्य से होती है कि बहुमूल्य चीज़ें (आभूषण, सोने के पात्र, सफेद सीपियाँ और लाजवर्द जड़े हुए लकड़ी के वाद्य यंत्र, सोने के सजावटी खंजर, आदि) विशाल मात्रा में उर में राजाओं और रानियों की कुछ कब्रों या समाधियों में उनके साथ दफ़नाई गई मिली हैं। लेकिन आम आदमी की स्थिति क्या थी?

कानूनी दस्तावेज़ों (विवाह, उत्तराधिकार आदि के मामलों से संबंधित) से पता चलता है कि मेसोपोटामिया के समाज में एकल परिवार* (Nuclear family) को ही आदर्श माना जाता था हालांकि एक शादीशुदा बेटा और उसका परिवार अक्सर अपने माता-पिता के साथ ही रहा करते थे। पिता परिवार का मुखिया होता था। हमें विवाह की प्रक्रिया या विधि के बारे में कुछ जानकारी मिली है। विवाह करने की इच्छा के बारे में घोषणा की जाती थी और वधू के माता-पिता उसके विवाह के लिए अपनी सहमति देते थे। उसके बाद वर पक्ष के लोग वधू को कुछ उपहार देते

*एकल परिवार में एक पुरुष, उसकी पत्नी और बच्चे शामिल होते हैं।

थे। जब विवाह की रस्म पूरी हो जाती थी, तब दोनों पक्षों की ओर से उपहारों का आदान-प्रदान किया जाता था और वे एकसाथ बैठकर भोजन करते थे और फिर मंदिर में जाकर भेंट चढ़ाते थे। जब नववधू को उसकी सास लेने आती थी, तब वधू को उसके पिता द्वारा उसकी दाय का हिस्सा दे दिया जाता था। पिता का घर, पशुधन, खेत आदि उसके पुत्रों को मिलते थे।

आइए, अब उर नगर का अवलोकन करें। यह उन नगरों में से एक था जहाँ सबसे पहले खुदाई की गई थी। उर, मेसोपोटामिया का एक ऐसा नगर था जिसके साधारण घरों की खुदाई 1930 के दशक में सुव्यवस्थित ढंग से की गई। उसमें टेढ़ी-मेढ़ी व संकरी गलियाँ पाई गईं जिससे यह पता चलता है कि पहिए वाली गाड़ियाँ वहाँ के अनेक घरों तक नहीं पहुँच सकती थीं। अनाज के बोरे और ईंधन के गट्ठे संभवत: गधे पर लादकर घर तक लाए जाते थे। पतली व घुमावदार गलियों तथा घरों के भू-खंडों का एक जैसा आकार न होने से यह निष्कर्ष निकलता है कि नगर-नियोजन की पद्धति का अभाव था। वहाँ गलियों के किनारे जल-निकासी के लिए उस तरह की नालियाँ नहीं थीं, जैसी कि उसके समकालीन नगर मोहनजोदड़ो में पाई गई हैं। बल्कि जल-निकासी की नालियाँ और मिट्टी की नलिकाएँ उर नगर के घरों के भीतरी आँगन में पाई गई हैं, जिससे यह समझा जाता है कि घरों की छतों का ढलान भीतर की ओर होता था और वर्षा का पानी निकास नालियों के माध्यम से भीतरी आँगनों में बने हुए हौज़ों* में ले जाया जाता था। शायद यह इसलिए किया गया था कि एक साथ तेज़ वर्षा आने पर घर के बाहर की कच्ची गलियाँ बुरी तरह कीचड़ से न भर जाएँ।

*हौज़ ज़मीन में एक ऐसा ढका हुआ गड्ढा होता है जिसमें पानी और मल जाता है।

उर नगर का एक रिहायशी इलाका, लगभग 2000 ई.पू.। क्या आप चित्र में टेढ़ी-मेढ़ी गलियों के अलावा, दो या तीन बंद गलियाँ भी खोज सकते हैं?

फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि लोग अपने घर का सारा कूड़ा-कचरा बुहारकर गलियों में डाल देते थे, जहाँ वह आने-जाने वाले लोगों के पैरों के नीचे आता रहता था। इस प्रकार बाहर कूड़ा डालते रहने से गलियों की सतहें ऊँची उठ जाती थीं जिसके कारण कुछ समय बाद घरों की दहलीज़ों को भी ऊँचा उठाना पड़ता था ताकि वर्षा के बाद कीचड़ बह कर घरों के भीतर न आ सके। कमरों के अंदर रोशनी खिड़कियों से नहीं, बल्कि उन दरवाज़ों से होकर आती थी जो आँगन में खुला करते थे। इससे घरों के परिवारों में गोपनीयता (privacy) भी बनी रहती थी। घरों के बारे में कई तरह के अंधविश्वास प्रचलित थे, जिनके विषय में उर में पाई गई शकुन-अपशकुन संबंधी बातें पट्टिकाओं पर लिखी मिली हैं; जैसे- घर की देहली ऊँची उठी हुई हो तो वह धन-दौलत लाती है; सामने का दरवाज़ा अगर किसी दूसरे के घर की ओर न खुले तो वह सौभाग्य प्रदान करता है; लेकिन अगर घर का लकड़ी का मुख्य दरवाज़ा (भीतर की ओर न खुलकर) बाहर की ओर खुले तो पत्नी अपने पति के लिए यंत्रणा का कारण बनेगी।

उर में नगरवासियों के लिए एक कब्रिस्तान था, जिसमें शासकों तथा जन-साधारण की समाधियाँ पाई गईं; लेकिन कुछ लोग साधारण घरों के फ़र्शों के नीचे भी दफ़नाए हुए पाए गए थे।

पशुचारक क्षेत्र में एक व्यापारिक नगर

2000 ई.पू. के बाद मारी नगर शाही राजधानी के रूप में खूब फला-फूला। आपने देखा होगा (मानचित्र 2 में) कि मारी नगर दक्षिण के उस मैदानी भाग में स्थित नहीं है जहाँ खेती की पैदावार भरपूर होती थी, बल्कि वह फ़रात नदी की उर्ध्वधारा पर स्थित है। मानचित्र 3 में विभिन्न रंगों का प्रयोग करके यह दर्शाया गया है कि इस ऊपरी क्षेत्र में खेती और पशुपालन साथ-साथ चलते थे। मारी राज्य में वैसे तो किसान और पशुचारक दोनों ही तरह के लोग होते थे, लेकिन उस प्रदेश का अधिकांश भाग भेड़-बकरी चराने के लिए ही काम में लिया जाता था।

मानचित्र 3: मारी नगर की स्थिति।

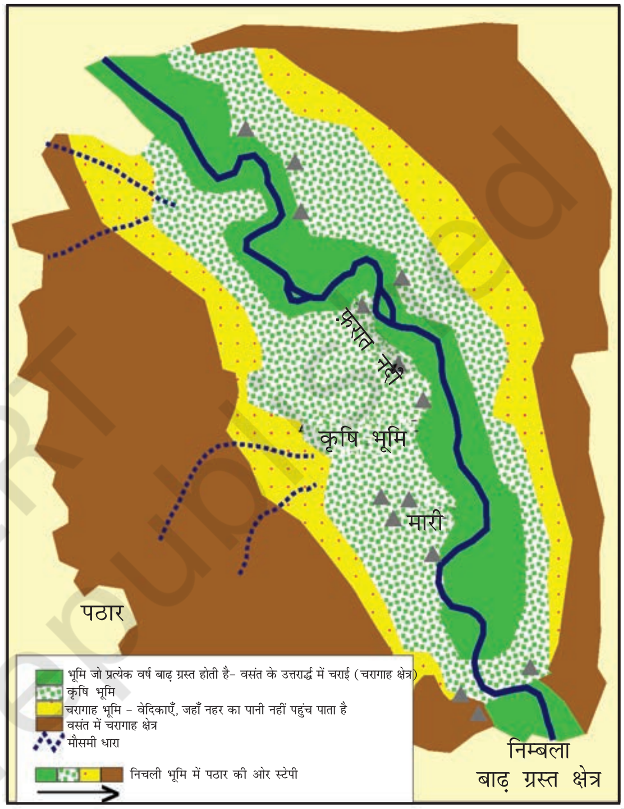

पशुचारकों को जब अनाज, धातु के औज़ारों आदि की जरूरत पड़ती थी तब वे अपने पशुओं तथा उनके पनीर, चमड़ा तथा मांस आदि के बदले ये चीज़ें प्राप्त करते थे। बाड़े में रखे जाने वाले पशुओं के गोबर से बनी खाद भी किसानों के लिए बहुत उपयोगी होती थी। फिर भी, किसानों तथा गड़रियों के बीच कई बार झगड़े हो जाते थे। गड़रिये कई बार अपनी भेड़-बकरियों को पानी पिलाने के लिए बोए हुए खेतों से गुज़ार कर ले जाते थे जिससे किसान की फसल को नुकसान पहुँचता था। ये गड़रिये खानाबदोश होते थे और कई बार किसानों के गाँवों पर हमला बोलकर उनका इकट्ठा किया माल लूट लेते थे। दूसरी तरफ, कई बार ऐसा भी होता था कि बस्तियों में रहने वाले लोग भी इन पशुचारकों का रास्ता रोक देते थे और उन्हें अपने पशुओं को नदी-नहर तक नहीं ले जाने देते थे।

मेसोपोटामिया के इतिहास पर नज़र डालें तो पता चलेगा कि वहाँ के कृषि से समृद्ध हुए मुख्य भूमि प्रदेश में यायावर समुदायों के झुंड के झुंड पश्चिमी मरुस्थल से आते रहते थे। ये गड़रिये गर्मियों में अपने साथ इस उपजाऊ क्षेत्र के बोए हुए खेतों में अपनी भेड़-बकरियाँ ले आते थे। ये समूह गड़रिये, फसल काटने वाले मज़दूरों अथवा भाड़े के सैनिकों के रूप में आते थे और समृद्ध होकर यहीं बस जाते थे। उनमें से कुछ ने तो अपना खुद का शासन स्थापित करने की भी शक्ति प्राप्त कर ली थी। ये खानाबदोश लोग अक्कदी, एमोराइट, असीरियाई और आर्मीनियन जाति के थे। (आगे विषय 5 में इन पशुचारक समाजों के शासकों के बारे में कुछ अधिक जानकारी दी गई है।) मारी के राजा एमोराइट समुदाय के थे। उनकी पोशाक वहाँ के मूल निवासियों से भिन्न होती थी और उन्होंने मेसोपोटामिया के देवी-देवताओं का आदर ही नहीं किया बल्कि स्टेपी क्षेत्र के देवता डैगन (Dagan) के लिए मारी नगर में एक मंदिर भी बनवाया। इस प्रकार, मेसोपोटामिया का समाज और वहाँ की संस्कृति भिन्न-भिन्न समुदायों के लोगों और संस्कृतियों के लिए खुली थी और संभवत: विभिन्न जातियों तथा समुदायों के लोगों के परस्पर मिश्रण से ही वहाँ की सभ्यता में जीवन-शक्ति उत्पन्न हो गई।

एक योद्धा अपने हाथों में एक लंबा भाला और एक खपच्ची की ढाल पकड़े हुए है। एमोराइट लोगों की एक खास किस्म की पोशाक देखिए जो (पृष्ठ 38 पर दिखाई गई) सुमेरियन योद्धा की पोशाक से भिन्न होती थी। यह चित्र एक सीपी पर उकेरा गया था, लगभग 2600 ई.पू.।

मारी में ज़िमरीलिम का राजमहल (1810-1760 ई.पू.)

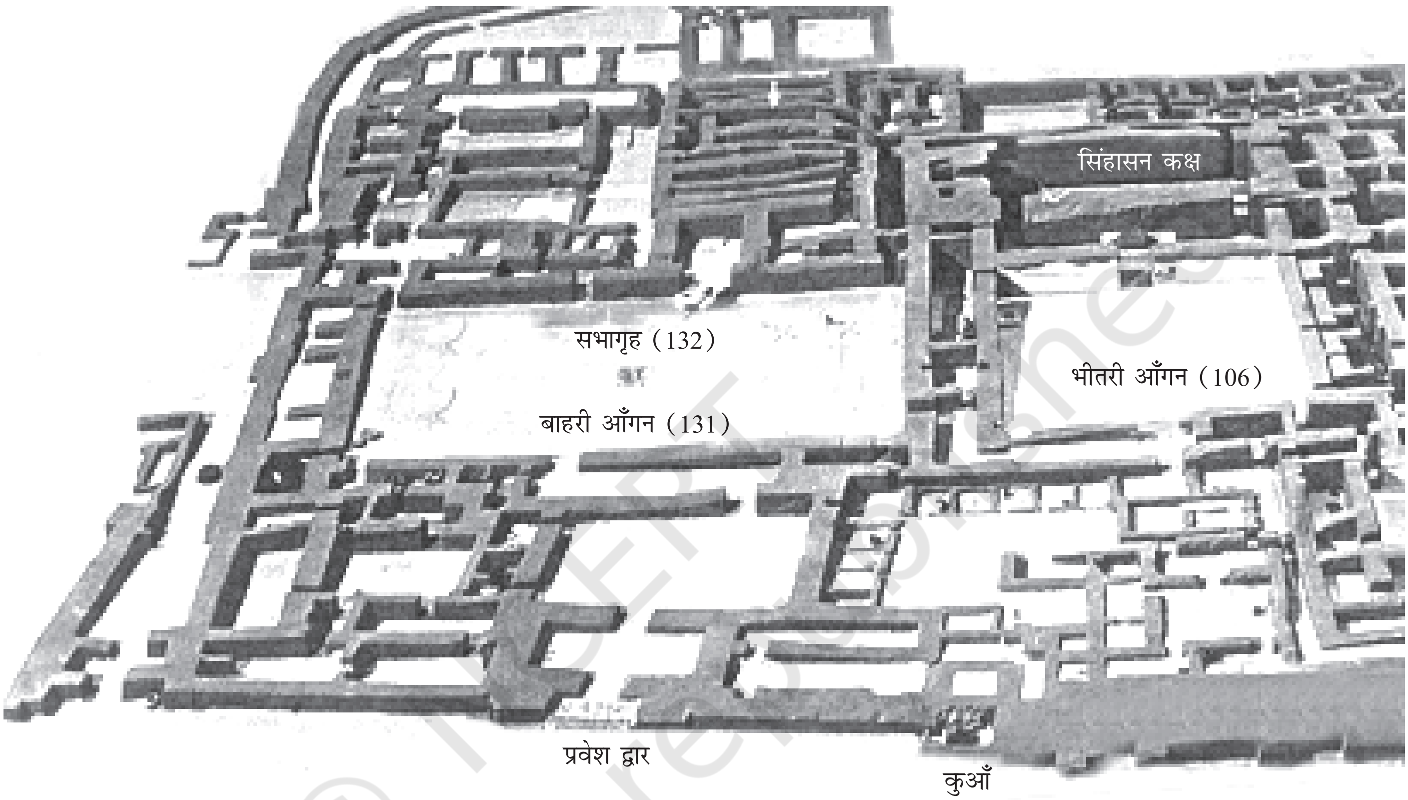

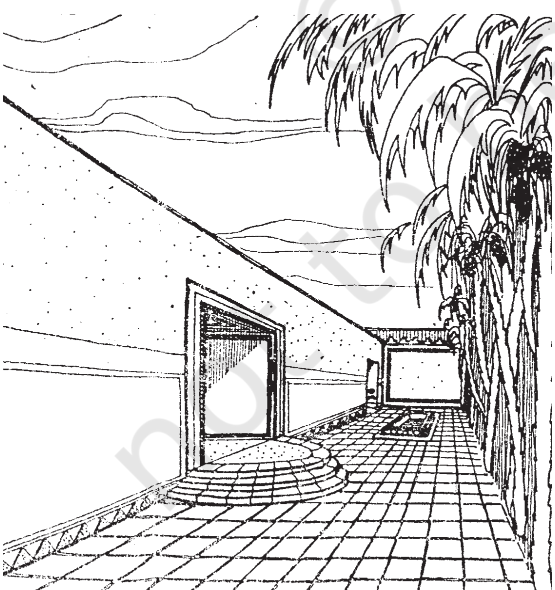
प्राँगण (131)

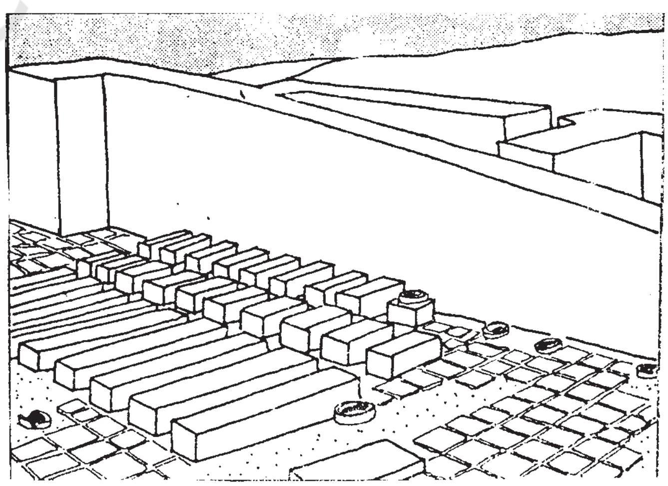
लिपिक कार्यालय, बेंचो और मिट्टीदानों के साथ, मिट्टीदानों में पट्टिकाएँ रखी जाती थीं।

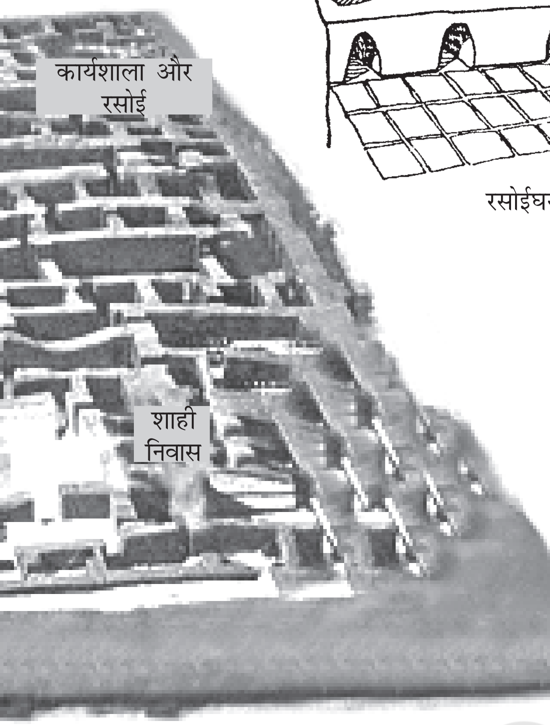

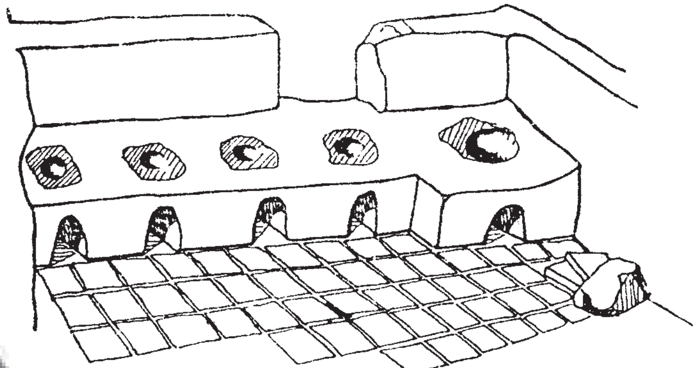

रसोईघर

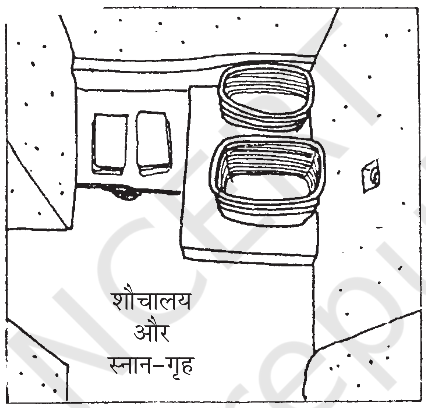

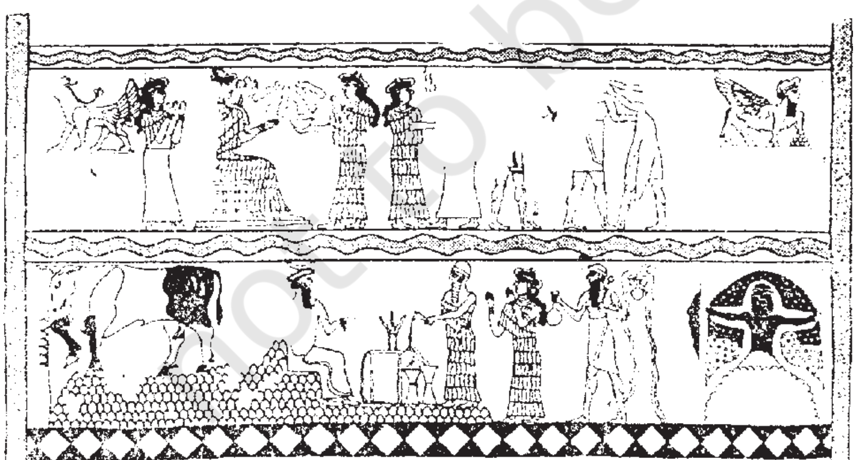

132 दीवार पर की गई चित्रकारी

ज़िमरीलिम का मारी स्थित राजमहल (1810-1760 ई.पू.)

मारी का विशाल राजमहल वहाँ के शाही परिवार का निवास स्थान तो था ही, साथ ही वह प्रशासन और उत्पादन, विशेष रूप से कीमती धातुओं के आभूषणों के निर्माण का मुख्य केंद्र भी था। अपने समय में वह इतना अधिक प्रसिद्ध था कि उसे देखने के लिए ही उत्तरी सीरिया का एक छोटा राजा आया; वह अपने साथ मारी के राजा ज़िमरीलिम के नाम उसके एक अन्य राजा का परिचय पत्र लेकर वहाँ आया था। दैनिक सूचियों से पता चलता है कि राजा के भोजन की मेज पर हर रोज भारी मात्रा में खाद्य पदार्थ पेश किए जाते थे–आटा, रोटी, मांस, मछली, फल, मदिरा और बीयर। वह संभवतः अपने अन्य साथियों के साथ सफ़ेद पत्थर जड़े आँगन (106) में बैठकर बाकायदा भोजन करता था। नक्शा देखने से आपको पता चलेगा कि राजमहल का सिर्फ़ एक ही प्रवेश द्वार था जो उत्तर की ओर बना हुआ था। उसके विशाल, खुले प्राँगण (जैसे 131) सुंदर पत्थरों से जड़े हुए थे। राजा विदेशी अतिथियों और अपने प्रमुख लोगों से कमरा-132 में मिलता था जहाँ के भित्ति-चित्रों को देखकर आगंतुक लोग हतप्रभ रह जाते थे। राजमहल 2.4 हैक्टेयर के क्षेत्र में स्थित एक अत्यंत विशाल भवन था जिसमें 260 कक्ष बने हुए थे।

क्रियाकलाप 3

चित्र में प्रवेश द्वार से भीतरी आँगन तक के मार्ग का पता लगाइए। आप क्या सोचते हैं कि भंडारगृह में क्या रखा जाता होगा? रसोईघर की पहचान कैसे की जा सकती है?

© NCERT not to be republished

किंतु, मारी के राजाओं को सदा सतर्क एवं सावधान रहना पड़ता था; विभिन्न जन-जातियों के चरवाहों को राज्य में चलने-फिरने की इजाज़त तो थी, परन्तु उन पर कड़ी नज़र रखी जाती थी। राजाओं तथा उनके पदाधिकारियों के बीच हुए पत्र-व्यवहार में अक्सर इन पशुचारकों की गतिविधियों और शिविरों का उल्लेख किया गया है। एक बार एक पदाधिकारी ने राजा को लिखा था कि उसने रात को बार-बार आग से किए गए ऐसे संकेतों को देखा है जो एक शिविर से दूसरे शिविर को भेजे गए थे और उसे संदेह है कि कहीं किसी छापे या हमले की योजना तो नहीं बनाई जा रही है।

मारी नगर एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण व्यापारिक स्थल पर स्थित था जहाँ से होकर लकड़ी, ताँबा, राँगा, तेल, मदिरा और अन्य कई किस्मों का माल नावों के जरिए फ़रात नदी के रास्ते दक्षिण और तुर्की, सीरिया और लेबनान के ऊँचे इलाकों के बीच लाया-ले जाया जाता था। मारी नगर व्यापार के बल पर समृद्ध हुए शहरी केंद्र का एक अच्छा उदाहरण है। दक्षिणी नगरों को घिसाई-पिसाई के पत्थर, चक्कियाँ, लकड़ी और शराब तथा तेल के पीपे ले जाने वाले जलपोत मारी में रुका करते थे, मारी के अधिकारी जलपोत पर जाया करते थे, उस पर लदे हुए सामान की जाँच करते थे (एक नदी में 300 मदिरा के पीपे रखे जा सकते थे।) और उसे आगे बढ़ने की इजाज़त देने से पहले उसमें लदे माल की कीमत का लगभग 10 प्रतिशत प्रभार वसूल करते थे। जौ एक विशेष किस्म की नौकाओं में आता था। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कुछ पट्टिकाओं में साइप्रस के द्वीप 'अलाशिया' (Alashiya) से आने वाले ताँबे का उल्लेख मिला है, यह द्वीप उन दिनों ताँबे तथा टिन के व्यापार के लिए मशहूर था। परंतु यहाँ राँगे का भी व्यापार होता था। क्योंकि काँसा, औज़ार और हथियार बनाने के लिए एक मुख्य औद्योगिक सामग्री था, इसलिए इसके व्यापार का बहुत महत्त्व था। इस प्रकार, यद्यपि मारी राज्य सैनिक दृष्टि से उतना सबल नहीं था, परंतु व्यापार और समृद्धि के मामले में वह अद्वितीय था।

मेसोपोटामिया के नगरों की खुदाई

आज, मेसोपोटामिया के पुरास्थलों के उत्खनक पहले के उत्खनकों की तुलना में बहुत अधिक कुशल हैं, उनके कार्य की यथार्थता एवं परिशुद्धता और अभिलेखन का स्तर बहुत ऊँचा है। इसलिए अब उस तरह के बड़े-बड़े इलाकों की खुदाई नहीं की जाती जैसी उर नगर में की गई थी। इसके अलावा, बहुत कम पुरातत्त्वविदों के पास ही इतनी बड़ी धनराशि होती है कि वे एक साथ खनकों के बड़े दल को खुदाई के काम पर लगा सकें। इस प्रकार जानकारी प्राप्त करने का तरीका बदल गया है।

इस संबंध में 'अबू सलाबिख' (Abu Salabikh) नाम के एक छोटे कस्बे का उदाहरण लें। यह कस्बा 2500 ई. पू. में लगभग 10 हैक्टेयर ज़मीन पर बसा हुआ था और इसकी आबादी 10,000 से कम थी। इसकी दीवारों की रूपरेखा की ऊपरी सतहों को सर्वप्रथम खरोंचकर निकाला गया। इस प्रक्रिया में टीले की ऊपरी सतह को किसी बेलचे, फावड़े या अन्य औज़ार के धारदार चौड़े सिरे से कुछ मिलीमीटर तक खरोंचा जाता है। नीचे की मिट्टी तब भी कुछ नम पाई गई और पुरातत्त्वविदों ने भिन्न-भिन्न रंगों, उसकी बनावट तथा ईंटों की दीवारों की स्थिति तथा गड्ढों और अन्य विशेषताओं का पता लगा लिया। जिन थोड़े-से घरों की खोज की गई उन्हें खोद कर निकाला गया। पुरातत्त्वविदों ने पौधों और पशुओं के अवशेषों को प्राप्त करने के लिए टनों मिट्टी की छानबीन की। इसके चलते उन्होंने पौधों और पशुओं की अनेक प्रजातियों का पता लगाया। उन्हें बड़ी मात्रा में जली हुई मछलियों की हड्डियाँ भी मिलीं जो बुहार कर बाहर गलियों में डाल दी गई थीं। वहाँ गोबर के उपलों के जले हुए ईंधन में से निकले हुए पौधों के बीज और रेशे मिले थे; इससे इस स्थान पर रसोईघर होने का पता चला। घरों में रहने के कमरे कौन-से थे, यह जानने के संकेत बहुत कम मिले हैं। वहाँ की गलियों में सूअरों के छोटे बच्चों के दाँत पाए गए हैं, जिन्हें देखकर पुरातत्त्वविदों ने यह निष्कर्ष निकाला कि अन्य किसी भी मेसोपोटामियाई नगर की तरह यहाँ भी सूअर छुट्टे घूमा करते थे। वस्तुत: एक घर में तो आँगन के नीचे, जहाँ किसी मृतक को दफनाया गया था, सूअर की कुछ हड्डियों के अवशेष मिले हैं जिससे प्रतीत होता है कि व्यक्ति के मरणोपरांत जीवन में खाने के लिए सूअर का कुछ मांस रखा गया था। पुरातत्त्वविदों ने कमरों के फ़र्श का बारीकी से अध्ययन यह जानने के लिए किया कि घर के कौन-से कमरों पर पोपलार (एक लंबा पतला पेड़) के लट्ठों, खजूर की पत्तियों और घासफूस की छतें थीं और कौन-से कमरे बिना किसी छत के खुले आकाश के नीचे थे।

मेसोपोटामिया संस्कृति में शहरों का महत्त्व

मेसोपोटामिया वासी शहरी जीवन को महत्त्व देते थे जहाँ अनेक समुदायों और संस्कृतियों के लोग साथ-साथ रहा करते थे। युद्ध में शहरों के नष्ट हो जाने के बाद वे अपने काव्यों के जरिए उन्हें याद किया करते थे।

मेसोपोटामिया के लोगों को अपने नगरों पर कितना अधिक गर्व था इस बात का सबसे अधिक मर्मस्पर्शी वर्णन हमें गिल्गेमिश (Gilgamesh) महाकाव्य के अंत में मिलता है। यह काव्य 12 पट्टिकाओं पर लिखा गया था। ऐसा कहा जाता है कि गिल्गेमिश ने एनमर्कर के कुछ समय बाद उरुक नगर पर शासन किया था। वह एक महान योद्धा था जिसने दूर-दूर तक के प्रदेशों को अपने अधीन कर लिया था, लेकिन उसे उस समय गहरा झटका लगा जब उसका वीर मित्र अचानक मर गया। इससे दु:खी होकर वह अमरत्व की खोज में निकल पड़ा। उसने सागरों-महासागरों को पार किया, और दुनियाभर का चक्कर लगाया। मगर उसे अपने साहसिक कार्य में सफलता नहीं मिली। हारकर गिल्गेमिश अपने नगर उरुक लौट आया। वहाँ जब वह अपने आपको सांत्वना देने के लिए शहर की चहारदीवारी के पास आगे-पीछे चहलकदमी कर रहा था तभी उसकी नज़र उन पकी ईंटों पर पड़ी जिनसे उसकी नींव डाली गई थी। वह भावविभोर हो उठा। इस प्रकार उरुक नगर की विशाल प्राचीर पर आकर उस महाकाव्य की लंबी वीरतापूर्ण और साहस भरी कथा का अंत हो गया। यहाँ गिल्गेमिश, एक जनजातीय योद्धा की तरह यह नहीं कहता कि उसका अंत निश्चित है पर उसके पुत्र तो जीवित रहेंगे और इस नगर का आनंद लेंगे। इस प्रकार उसे अपने नगर में ही सांत्वना मिलती है जिसे उसकी प्यारी प्रजा ने बनाया था।

लेखन कला की देन

हालांकि मर्मस्पर्शी कहानियों-किस्सों और तरह-तरह के वर्णन को तो मौखिक रूप से एक-दूसरों को सुनाते हुए जीवित रखा जा सकता है, पर विज्ञान को जीवित रखने के लिए लिखित दस्तावेज़ों और किताबों की ज़रूरत पड़ती है ताकि विद्वानों की आगे आने वाली पीढ़ियाँ उन्हें पढ़ सकें। संभवत: मेसोपोटामिया की दुनिया को सबसे बड़ी देन है उसकी कालगणना और गणित की विद्वत्तापूर्ण परंपरा है।

1800 ई.पू. के आसपास की कुछ पट्टिकाएँ मिली हैं जिनमें गुणा और भाग की तालिकाएँ, वर्ग तथा वर्गमूल और चक्रवृद्धि ब्याज की सारणियाँ दी गई हैं। उनमें 2 का वर्गमूल यह दिया गया है:

$$1 + 24/60 + 51/60^2 + 10/60^3$$

अगर आप इसे हल करें तो इसका उत्तर 1.41421296 होगा जो इसके सही उत्तर 1.41421356 से थोड़ा-सा ही भिन्न है। उस समय के विद्यार्थियों को इस प्रकार के सवाल हल करने होते थे: अगर एक खेत का क्षेत्रफल इतना-इतना है और वह एक अंगुल गहरे पानी में डूबा हुआ है तो संपूर्ण पानी का आयतन बताओ।

पृथ्वी के चारों ओर चंद्रमा की परिक्रमा के अनुसार एक पूरे वर्ष का 12 महीनों में विभाजन, एक महीने का 4 हफ्तों में विभाजन, एक दिन का 24 घंटों में और एक घंटे का 60 मिनट में विभाजन-यह सब जो आज हमारी रोज़मर्रा की ज़िंदगी का अचेतन हिस्सा है, मेसोपोटामियावासियों से ही हमें मिला है। समय का उपर्युक्त विभाजन सिकंदर के उत्तराधिकारियों ने अपनाया, वहाँ से वह रोम और फिर इस्लाम की दुनिया को मिला और फिर मध्ययुगीन यूरोप में पहुँचा (यह सब कैसे हुआ विषय 7 में देखिए)।

जब कभी सूर्य और चंद्र ग्रहण होते थे तो वर्ष, मास और दिन के अनुसार उनके घटित होने का हिसाब रखा जाता था। इसी प्रकार रात को आकाश में तारों और तारामंडल की स्थिति पर बराबर नज़र रखते हुए उनका हिसाब रखा जाता था।

मेसोपोटामियावासियों की इन महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों में से एक भी उपलब्धि संभव नहीं होती यदि लेखन की कला और विद्यालयों जैसी उन संस्थाओं का अभाव होता जहाँ विद्यार्थीगण पुरानी लिखित पट्टिकाओं को पढ़ते और उनकी नकल करते थे और जहाँ कुछ छात्रों को साधारण प्रशासन का हिसाब-किताब रखने वाले लेखाकार न बनाकर, ऐसा प्रतिभासंपन्न व्यक्ति बनाया जाता था जो अपने पूर्वजों की बौद्धिक उपलब्धियों को आगे बढ़ा सकें।

यह सोचना गलत होगा कि मेसोपोटामिया के शहरी लोग आधुनिक तौर-तरीकों से परिचित नहीं थे। अंत में, हमें उन दो प्रकार के प्रारंभिक प्रयत्नों का अवलोकन करना चाहिए जिनके द्वारा अतीत के प्रलेखों एवं परंपराओं को खोजने और सुरक्षित रखने की कोशिश की गई थी।

एक पुराकालीन पुस्तकालय

लौहयुग में, उत्तरी प्रदेशों के असीरियाई लोगों ने एक साम्राज्य की स्थापना की जो 720 से 610 ई.पू. तक अपनी उन्नति के शिखर पर रहा। यह साम्राज्य मिस्र तक फैला हुआ था। राज्य की अर्थव्यवस्था उन दिनों लूटमार की हो गई थी क्योंकि अधीनस्थ प्रजाजनों को दबाकर उनसे खाद्य-सामग्री, पशु, धातु तथा शिल्प की वस्तुओं के रूप में बेगार और नज़राना जबरदस्ती लिया जाता था।

बड़े-बड़े असीरियाई शासक जो बाहर से आकर बसे थे, दक्षिणी क्षेत्र बेबीलोनिया को उच्च संस्कृति का केंद्र मानते थे। उनमें से आखिरी राजा असुरबनिपाल (Assurbanipal, 668-627 ई.पू.) ने उत्तर में स्थित अपनी राजधानी निनवै (Nineveh) में एक पुस्तकालय की स्थापना की। उसने इतिहास, महाकाव्य, शकुन साहित्य, ज्योतिष विद्या, स्तुतियों और कविताओं की पट्टिकाओं को इकट्ठा करने का बहुत प्रयत्न किया और उसमें सफल रहा। उसने अपने लिपिकों को दक्षिण में पुरानी पट्टिकाओं का पता लगाने के लिए भेजा। क्योंकि दक्षिण में लिपिकों को विद्यालयों में पढ़ना-लिखना सिखाया जाता था, जहाँ उन्हें दर्जनों की संख्या में पट्टिकाओं की नकलें तैयार करनी होती थीं। बेबीलोनिया में ऐसे भी नगर थे जो पट्टिकाओं के विशाल संग्रह तैयार किए जाने और प्राप्त करने के लिए मशहूर थे। हालांकि लगभग 1800 ई.पू. के बाद सुमेरियन भाषा बोली जानी बंद हो गई थी, लेकिन विद्यालयों में वह शब्दावलियों, संकेत-सूचियों, द्विभाषी (सुमेरी और अक्कदी) पट्टिकाओं आदि के माध्यम से अब भी पढ़ाई जाती थी। इसलिए 650 ई.पू. में भी, 2000 ई.पू. तक पुरानी कीलाकार अक्षरों में लिखी पट्टिकाएँ पढ़ी और समझी जा सकती थीं– और असुरबनिपाल के आदमी यह जानते थे कि पुरानी पट्टिकाओं और उनकी प्रतिकृतियों को कहाँ खोजा और प्राप्त किया जा सकता है।

गिल्गेमिश के महाकाव्य जैसी महत्त्वपूर्ण पट्टिकाओं की प्रतियाँ तैयार की गईं। प्रतियाँ तैयार करने वाले उनमें अपना नाम और तिथि लिखते थे। कुछ पट्टिकाओं के अंत में असुरबनिपाल का उल्लेख भी मिलता है:

"मैं असुरबनिपाल, ब्रह्मांड का सम्राट, असीरिया का शासक जिसे देवताओं ने विशाल बुद्धि प्रदान की है, जिसने विद्वानों के पांडित्य के गूढ़ ज्ञान को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की। मैंने देवताओं के बुद्धि-विवेक को पट्टिकाओं पर लिखा है..... और मैंने पट्टिकाओं की जाँच की और उन्हें संगृहीत किया। मैंने उन्हें निनवै स्थित अपने इष्टदेव नाबू के मंदिर के पुस्तकालय में भविष्य में उपयोग के लिए रख दिया — अपने जीवन के लिए, अपनी आत्मा के कल्याण के लिए और अपने शाही सिंहासन की नींव को मजबूत बनाए रखने के लिए...।"

इससे भी महत्त्वपूर्ण काम था इन पट्टिकाओं की सूची तैयार करने का। इसके लिए एक टोकरी-भर पट्टिकाओं को मिट्टी के लेबल से इस प्रकार अंकित किया गया: "असंख्य पट्टिकाएँ भूत-प्रेत निवारण विषय पर, 'अमुक' व्यक्ति द्वारा लिखी गईं।" असुरबनिपाल के पुस्तकालय में कुल मिलाकर 1000 मूलग्रंथ थे और लगभग 30,000 पट्टिकाएँ थीं जिन्हें विषयानुसार वर्गीकृत किया गया था।

not to be republished © NCERT

और, एक आरंभिक पुरातत्त्ववेता

दक्षिणी कछार के एक शूरवीर नैबोपोलास्सर (Nabopolassar) ने बेबीलोनिया को 625 ई.पू. में असीरियाई आधिपत्य से मुक्त कराया। उसके उत्तराधिकारियों ने अपने राज्यक्षेत्र का विस्तार किया और बेबीलोन में भवन-निर्माण की परियोजनाएँ पूरी कीं। उस समय से लेकर 539 ई.पू. में ईरान के एकेमेनिड लोगों (Achaemenids) द्वारा विजित होने के बाद और 331 ई.पू. में सिकंदर से पराजित होने तक बेबीलोन दुनिया का एक प्रमुख नगर बना रहा। इसका क्षेत्रफल 850 हैक्टेयर से अधिक था, इसकी चहारदीवारी तिहरी थी, इसमें बड़े-बड़े राजमहल और मंदिर मौजूद थे, एक ज़िगुरात (Ziggurat) यानी सीढ़ीदार मीनार थी और नगर के मुख्य अनुष्ठान केंद्र तक शोभायात्रा के लिए एक विस्तृत मार्ग बना हुआ था। इसके व्यापारिक घराने दूर-दूर तक अपना कारोबार करते थे और इसके गणितज्ञों तथा खगोलविदों ने अनेक नयी खोजें की थीं।

नैबोनिडस (Nabonidus) स्वतंत्र बेबीलोन का अंतिम शासक था। उसने लिखा है कि उर के नगर-देवता ने उसे सपने में दर्शन दिए और उसे सुदूर दक्षिण के उस पुरातन नगर का कार्यभार सँभालने के लिए एक महिला पुरोहित (Priestess) को नियुक्त करने का आदेश दिया। उसने लिखा, "चूँकि बहुत लंबे समय से उच्च महिला पुरोहित का प्रतिष्ठान भुला दिया गया था, उसके विशिष्ट लक्षणों को कहीं नहीं बताया गया है, मैंने दिन-पर-दिन उसके बारे में सोचा.."

वह आगे कहता है कि उसे एक बहुत पुराने राजा (जिसका शासनकाल हम आज 1150 ई.पू. के आसपास मानते हैं) का पट्टलेख (Stele) मिला और उस पर उसने महिला पुरोहित की आकृति अंकित देखी। उसने उसके आभूषणों और वेशभूषा को ध्यानपूर्वक देखा। फिर उसने अपनी पुत्री को वैसी ही वेशभूषा से सुसज्जित कर महिला पुरोहित के रूप में प्रतिष्ठित किया।

एक अन्य अवसर पर, नैबोनिडस के आदमी उसके पास एक टूटी हुई मूर्ति लाए जिसपर अक्कद के राजा सारगोन (Sargon) का नाम खुदा था। (आज हम जानते हैं कि उस राजा ने 2370 ई.पू. के आसपास शासन किया था।) नैबोनिडस और निस्संदेह अनेक बुद्धिजीवियों ने भी प्राचीन काल के इस महान राजा के बारे में सुन रखा था। नैबोनिडस ने यह महसूस किया कि उसे उस मूर्ति की मरम्मत करानी चाहिए। वह लिखता है, "देवताओं के प्रति भक्ति और राजा के प्रति अपनी निष्ठा के कारण, मैंने कुशल शिल्पियों को बुलाया और उसका खंडित सिर बदलवा दिया।"

क्रियाकलाप 4

आप ऐसा क्यों सोचते हैं कि असुरबनिपाल और नैबोनिडस ने मेसोपोटामिया की प्राचीन परंपराओं की कद्र की?

© NCERT not to be republished

काल-रेखा	
लगभग 7000-6000 ई.पू.	उत्तरी मेसोपोटामिया के मैदानों में खेती की शुरुआत
लगभग 5000 ई.पू.	दक्षिणी मेसोपोटामिया में सबसे पुराने मंदिरों का बनना
लगभग 3200 ई.पू.	मेसोपोटामिया में लेखन-कार्य की शुरुआत
लगभग 3000 ई.पू.	उरुक का एक विशाल नगर के रूप में विकास : कांसे के औज़ारों के इस्तेमाल में बढ़ोतरी
लगभग 2700-2500 ई.पू.	आरंभिक राजाओं का शासनकाल जिनमें गिल्गेमिश जैसे पौराणिक राजा भी शामिल हैं।
लगभग 2600 ई.पू.	कीलाकार लिपि का विकास
लगभग 2400 ई.पू.	सुमेरियन के स्थान पर अक्कदी भाषा का प्रयोग
2370 ई.पू.	सारगोन, अक्कद सम्राट
लगभग 2000 ई.पू.	सीरिया, तुर्की और मिस्र तक कीलाकार लिपि का प्रसार; महत्त्वपूर्ण शहरी केन्द्रों के रूप में मारी और बेबीलोन का उद्भव
लगभग 1800 ई.पू.	गणितीय मूलपाठों की रचना; अब सुमेरियन बोलचाल की भाषा नहीं रही
लगभग 1100 ई.पू.	असीरियाई राज्य की स्थापना
लगभग 1000 ई.पू.	लोहे का प्रयोग
720-610 ई.पू.	असीरियाई साम्राज्य
668-627 ई.पू.	असुरबनिपाल का शासन
331 ई.पू.	सिकंदर ने बेबीलोन को जीत लिया
लगभग पहली शताब्दी (ईसवी)	अक्कदी भाषा और कीलाकार लिपि प्रयोग में रहीं
1850	कीलाकार लिपि के अक्षरों को पहचाना व पढ़ा गया

अभ्यास

संक्षेप में उत्तर दीजिए

1. आप यह कैसे कह सकते हैं कि प्राकृतिक उर्वरता तथा खाद्य उत्पादन के उच्च स्तर ही आरंभ में शहरीकरण के कारण थे?
2. आपके विचार से निम्नलिखित में से कौन-सी आवश्यक दशाएँ थीं जिनकी वजह से प्रारंभ में शहरीकरण हुआ था और निम्नलिखित में से कौन-कौन सी बातें शहरों के विकास के फलस्वरूप उत्पन्न हुईं?
   (क)अत्यंत उत्पादक खेती, (ख) जल-परिवहन, (ग) धातु और पत्थर की कमी, (घ) श्रम विभाजन, (ङ) मुद्राओं का प्रयोग, (च) राजाओं की सैन्य-शक्ति जिसने श्रम को अनिवार्य बना दिया।
3. यह कहना क्यों सही होगा कि खानाबदोश पशुचारक निश्चित रूप से शहरी जीवन के लिए खतरा थे?
4. आप ऐसा क्यों सोचते हैं कि पुराने मंदिर बहुत कुछ घर जैसे ही होंगे?

संक्षेप में निबंध लिखिए

5. शहरी जीवन शुरू होने के बाद कौन-कौन सी नयी संस्थाएँ अस्तित्व में आईं? आपके विचार से उनमें से कौन-सी संस्थाएँ राजा की पहल पर निर्भर थीं।
6. किन पुरानी कहानियों से हमें मेसोपोटामिया की सभ्यता की झलक मिलती है?

© NCERT not to be republished

दो

साम्राज्य

तीन महाद्वीपों में फैला हुआ साम्राज्य

इस्लाम का उदय और विस्तार–लगभग 570–1200 ई.

यायावर साम्राज्य

साम्राज्य

मेसोपोटामिया में साम्राज्य स्थापित होने के दो सहस्राब्दी बाद तक उस क्षेत्र तथा उसके पूर्व और पश्चिम में साम्राज्य निर्माण के विविध प्रयत्न होते रहे।

छठी शती ई. तक ईरानियों ने असीरिया के साम्राज्य के अधिकांश भाग पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया था। स्थलमार्गों के साथ-साथ भूमध्यसागरीय तटवर्ती क्षेत्रों में व्यापारिक संबंधों का विकास हुआ।

इन परिवर्तनों के फलस्वरूप व्यापार में सुधार हुआ और इस वजह से पूर्वी भूमध्यसागरीय क्षेत्र में यूनानी नगर तथा उनकी बस्तियों को लाभ हुआ। उन्हें काला सागर के उत्तर में रहने वाले यायावर लोगों के साथ घनिष्ठ व्यापारिक संपर्क से भी बहुत फ़ायदा हुआ। यूनान में अधिकांश समय तक एथेंस और स्पार्टा के नगर-राज्य नागरिक जीवन के केंद्र बने रहे। चतुर्थ शती ई. के उत्तरार्ध में यूनानी राज्यों में मेसीडोन राज्य के राजा सिकंदर ने कई सैन्य अभियान किए और उत्तरी अफ़्रीका, पश्चिमी एशिया व ईरान तथा भारत में व्यास तक के क्षेत्र को जीत लिया। उसके सैनिकों ने और आगे पूर्व में जाने से मना कर दिया। सिकंदर का सैन्य दल पीछे मुड़ गया, यद्यपि कई यूनानी इस क्षेत्र में ही रह गए।

सिकंदर के नियंत्रण में इस पूरे क्षेत्र में यूनानियों और स्थानीय लोगों में आदर्शों और सांस्कृतिक परंपराओं का आदान-प्रदान हो रहा था। पूरे क्षेत्र का यूनानीकरण हो गया जिसे अंग्रेज़ी में हेलेनाइज़ेशन कहा जाता है क्योंकि यूनानियों को हेलेनीज़ कहते थे। यूनानी भाषा इस क्षेत्र की एक जानी-पहचानी भाषा बन गई। लेकिन सिकंदर के साम्राज्य की यह राजनीतिक एकता उसकी मृत्यु के तुरंत बाद विघटित हो गई। हालाँकि इसके तीन शताब्दी बाद तक यूनानी संस्कृति इस क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण बनी रही। इस क्षेत्र के इतिहास में यह काल प्राय: यूनानी काल के नाम से जाना जाता है। लेकिन यह मान्यता यूनानी विश्वासों व विचारों की तरह ही अन्य महत्त्वपूर्ण (संभवत: इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण) संस्कृतियों (मुख्य रूप से ईरान के पुराने साम्राज्य से संबंधित ईरानी संस्कृति) की महत्ता को अस्वीकार कर देती है।

इसके बाद के भावी इतिहास के महत्त्वपूर्ण पहलुओं के बारे में इस अनुभाग में पता चलेगा। सिकंदर के साम्राज्य के विघटन के फलस्वरूप हुई राजनीतिक कलह का लाभ उठाते हुए रोम के मध्य इतालवी नगर राज्य के छोटे किंतु सुसंगठित सैन्य बल ने दूसरी शती ई. से उत्तरी अफ़्रीका और पूर्वी भूमध्यसागर पर नियंत्रण कर लिया। उस समय रोम एक गणतंत्र था। यद्यपि वहाँ की सरकार निर्वाचन की एक जटिल व्यवस्था पर आधारित थी लेकिन राजनीतिक संस्थाएँ जन्म और धन-संपदा को कुछ महत्त्व देती थीं। यहाँ का समाज दासता से भी लाभान्वित था। रोम की सैन्य शक्ति ने एक समय सिकंदर के साम्राज्य का भाग रहे राज्यों के बीच व्यापार हेतु तंत्र स्थापित

किया। प्रथम शती ई. के मध्य उच्च कुल में जन्मे सैन्य नायक जूलियस सीज़र के अधीन 'रोम साम्राज्य' वर्तमान ब्रिटेन और जर्मनी तक फैल गया।

लातिनी (जो रोम में बोली जाती थी) साम्राज्य की मुख्य भाषा थी। हालाँकि पूर्व में रहने वाले कई लोग यूनानी भाषा का ही प्रयोग करते रहे। रोम के लोगों में यूनानी संस्कृति के प्रति गहरा आदर-भाव था। प्रथम शती ई.पू. के अंतिम भाग में साम्राज्य के राजनैतिक ढाँचे में परिवर्तन हुए। चतुर्थ शती ई. में सम्राट कॉन्स्टैनटाइन के ईसाई बनने के बाद इस साम्राज्य का काफ़ी हद तक ईसाईकरण हो गया।

शासन को सुचारू ढंग से चलाने के लिए चौथी शती ई. में रोम साम्राज्य को पूर्वी और पश्चिमी दो हिस्सों में बाँट दिया गया। लेकिन पश्चिम में सीमावर्ती क्षेत्रों (गोथ, विसीगोथ, वैंडल व अन्य) की जनजातियों तथा रोम के बीच स्थित व्यवस्थाएँ बिगड़ने लगीं। ये व्यवस्थाएँ व्यापार, सैन्य-भर्ती तथा बसने से जुड़ी थीं और जनजातियों ने रोम प्रशासन पर अपने आक्रमणों में वृद्धि कर दी। ये मतभेद बढ़ते गए और साम्राज्य के आंतरिक मतभेदों में जुड़ गए। फलतः पाँचवीं शती ई. आते-आते पश्चिम का यह साम्राज्य नष्ट हो गया। पूर्व के साम्राज्य की सीमा के अंतर्गत ही जनजातियों ने अपने-अपने राज्य स्थापित कर लिए। ईसाई चर्च से प्रोत्साहन पाकर नौवीं शती ई. में ऐसे ही कुछ राज्यों को मिलाकर पवित्र रोमन साम्राज्य की स्थापना की गई। पवित्र रोमन साम्राज्य ने पुराने रोमन साम्राज्य के साथ निरंतरता का दावा किया।

कोरिंथ के यूनानी नगर के भग्नावशेष।

सातवीं शती ई. और पंद्रहवीं शती ई. के बीच पूर्वी रोमन साम्राज्य (कुंस्तुनतुनिया केंद्रित) की अधिकांश भूमि पर अरब साम्राज्य ने अधिकार कर लिया। दमिश्क में केंद्रित इस अरब साम्राज्य को पैगम्बर मुहम्मद (जिन्होंने नवीं शती ई. में इस्लाम धर्म की स्थापना की) के अनुयायियों या इनके उत्तराधिकारियों (जिन्होंने आरंभ में बगदाद में शासन किया) द्वारा स्थापित किया गया था। इस इलाके की यूनानी व इस्लामी परंपराओं के बीच करीबी आदान-प्रदान था। इस क्षेत्र के व्यापारिक तंत्र और समृद्धि ने उत्तर के पशुचारी लोगों (विभिन्न तुर्की जनजातियों) को आकर्षित किया। इन्होंने प्राय: इस क्षेत्र के शहरों पर आक्रमण किए और इन पर अपना नियंत्रण कर लिया। इस क्षेत्र पर आक्रमण का प्रयास करने वाले अंतिम लोगों में मंगोल थे। चंगेज़ ख़ान और उसके उत्तराधिकारियों के अधीन मंगोलों ने तेरहवीं शताब्दी में पश्चिम एशिया, यूरोप, मध्य एशिया और चीन में प्रवेश किया।

साम्राज्य बनाने और बनाए रखने के ये सारे प्रयास पूरे क्षेत्र में फैले हुए व्यापारिक तंत्र के संसाधन पर नियंत्रण की चाह से प्रेरित थे ताकि उन्हें उस क्षेत्र के भारत या चीन जैसे देशों से स्थापित संबंधों से फायदा हो सके। सभी साम्राज्यों ने व्यापार को स्थिरता प्रदान करने के लिए प्रशासनिक व्यवस्था विकसित करने का प्रयास किया। उन्होंने विभिन्न तरीकों के सैन्य संगठन का भी प्रयास किया। किसी भी साम्राज्य की उपलब्धियों की महत्ता प्राय: उनके उत्तराधिकारियों द्वारा ग्रहण की जाती थी। कुछ समय बाद इस क्षेत्र में बोली और लिखी जाने वाली कई भाषाओं में चार भाषाएँ- फ़ारसी, यूनानी, लातिनी और अरबी महत्त्वपूर्ण हो गईं।

ये साम्राज्य बहुत स्थिर नहीं थे। इसकी एक वजह यह थी कि वे विभिन्न क्षेत्रों के संसाधनों को लेकर आपस में लड़ते-झगड़ते रहते थे। ऐसा इन साम्राज्यों और उत्तर के पशुचारी लोगों के संबंधों में आ गए संकट के कारण भी था। इन पशुचारी लोगों से इन साम्राज्यों को व्यापार में तो

दमिश्क की इस महान मस्जिद का निर्माण 714 में पूरा हुआ।

© NCERT not to be republished

समर्थन मिलता ही था साथ ही उनकी सेनाओं और उत्पादों के लिए उन्हें श्रम भी इनसे मिलता था। यह महत्त्वपूर्ण बात है कि सभी साम्राज्य नगर-केंद्रित नहीं थे। चंगेज़ ख़ान और उसके उत्तराधिकारियों द्वारा शासित मंगोल साम्राज्य इस बात का अच्छा उदाहरण है कि पशुचारी लोगों द्वारा भी सफलतापूर्वक एक लंबे समय तक साम्राज्य को कायम रखा जा सकता है।

ऐसे धर्म जो अलग-अलग भाषाएँ बोलने वाले विभिन्न नृजातीय उत्पत्ति के लोगों को आकर्षित कर सकते थे, विशाल साम्राज्य निर्माण की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण थे। यह ईसाई धर्म (जो प्रथम शती ई. के आरंभिक काल में फ़िलिस्तीन में उदित हुआ) और इस्लाम धर्म (जो सातवीं शती ई. में उद्भूत हुआ) के विषय में भी सत्य था।

© NCERT not to be republished

कालक्रम दो

(लगभग 100 ईसा पूर्व से 1300 ईसवी)

इस कालक्रम के केंद्र बिंदु राज्य और साम्राज्य हैं। इनमें से कुछ, जैसे कि रोमन साम्राज्य, बहुत बड़े थे और तीन महाद्वीपों में फैले हुए थे। इस समय प्रमुख धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराएँ विकसित हुईं और बौद्धिक गतिविधियों से जुड़ी संस्थाओं का उदय हुआ। पुस्तकें लिखी गईं और विचार महाद्वीपों के आर-पार फैलने लगे। कई ऐसी वस्तुएँ जो आज हमारे दैनिक जीवन का हिस्सा हैं, इस काल में पहली बार प्रयोग में आईं।

© NCERT not to be republished

तिथि	अफ़्रीका	यूरोप
100-50 ई.पू.	समुद्री मार्गों द्वारा दक्षिण-पूर्वी एशिया से केले पूर्वी अफ़्रीका लाए गए	स्पार्टेकस 100,000 गुलामों का नेतृत्व करते हैं।
50-1	क्लियोपेट्रा, मिस्र की रानी (51–30 ई.पू.)	रोम मे कोलस्सम का निर्माण (73 ई.पू.)
1-50 ईसवी		
50-100		
100-150	सिकंदरिया के नायक ने भाप पर चलाने वाली मशीन बनायी	रोमन साम्राज्य अपने शिखर पर*
150-200	सिकंदरिया के टॉलेमी ने भूगोल पर एक पुस्तक लिखी	
200-250		
250-300		
300-350	एक्सम* (Axum) (330) में ईसाई धर्म की शुरुआत	कॉन्स्टैनटाइन सम्राट बनते हैं और कुंस्तुनतुनिया नगर की स्थापना करते हैं
350-400		रोमन साम्राज्य का पूर्व और पश्चिम दो बराबर भागों में विभाजन
400-450	यूरोप के वैंडल लोगों द्वारा उत्तर अफ़्रीका में राज्य की स्थापना (429)	उत्तर और मध्य यूरोप के कबीलों का रोमन साम्राज्य पर आक्रमण
450-500		गॉल (फ्रांस) के क्लोविस का ईसाई धर्म को अपनाना (496)
500-550		इटली में संट बेंडिक्ट द्वारा एक मठ की स्थापना (526), इंग्लैंड में संट ऑगस्टीन द्वारा ईसाई धर्म की शुरुआत (596), ग्रैगो महान (590) द्वारा रोमन कैथोलिक चर्च की नींव रखना
550-600		
600-650	कुछ मुसलमानों का अबीसीनिया (615) से प्रवास *(हिजरा)*	
650-700	अरबी मुसलमान की मिस्र के दक्षिण में स्थित नूबिआ से संधि (652)	बेडे द्वारा *अंग्रेजी चर्च और व्यक्तियों का इतिहास* लिखा गया
700-750		
750-800		
800-850	घाना में राज्य का उदय	शार्लमेन, फ्रेंकों के राजा को पवित्र रोमन सम्राट की उपाधि (800)
850-900		केव और नोवगोर्ड में प्रथम रूसी राज्यों की स्थापना
900-950		पश्चिम यूरोप पर समुद्री दस्युओं के आक्रमण
950-1000		
1000-50		इटली में सेलेरेनो में मेडिकल स्कूल की स्थापना (1030)
1050-1100	अलमोरविद राज्य (1056-1147) का घाना से दक्षिण स्पेन तक विस्तार	नॉरमंडी के विलियम का इंग्लैण्ड पर आक्रमण और फिर शासक बनना (1066); प्रथम धर्मयुद्ध की घोषणा (1095)
1100-50	जिम्बाब्वे का स्वर्ण और ताँबे की शिल्पकृतियों के उत्पादन और लंबी दूरी के व्यापार के केंद्र के रूप में उदय (1120-1450)	
1150-1200		नोर्ते दम, कथीड्रल के निर्माण कार्य का आरंभ (1163)
1200-50	इथियोपिया में ईसाई चर्चों की स्थापना (1200), पश्चिम अफ़्रीका माली राज्य में टिंबकटू एक शिक्षा के केंद्र के रूप में	संवेदना और सादगी पर बल देते हुए असीसी के संट फ्रांसिस द्वारा एक मठ संगठन की स्थापना (1209); मैग्नाकार्टा पर हस्ताक्षर करने वाले राजा के विरुद्ध इंग्लैण्ड के लॉर्डस का विद्रोह, राजा कानून के अनुसार शासन करने को सहमत
1250-1300		आस्ट्रिया में 1918 तक राज्य करने वाले हेप्सबर्ग वंश की स्थापना

© NCERT not to be republished

तिथि	एशिया	दक्षिणी एशिया
100-50 ई.पू.	चीन में हान साम्राज्य, एशिया से यूरोप तक रेशम मार्ग का विकास	शक और बाख्त्री यूनानियों द्वारा उत्तर-पश्चिम में राज्यों की स्थापना; दक्कन में सातवाहनों का उदय
50-1		दक्षिण एशिया, दक्षिण-पूर्व, पूर्व एशिया और यूरोप में बढ़ता व्यापार
1-50 ईसवी	रोम साम्राज्य के एक प्रांत जूडिया में ईसा, अरब पर रोमन आक्रमण (24)	
50-100		उत्तर पश्चिम और मध्य एशिया में कुषाण राज्य की स्थापना
100-150	चीन में कागज़ का आविष्कार (118); प्रथम भूकंप-लेखी का निर्माण (132)	
150-200		
200-250	हान साम्राज्य का अंत (221); फ्रांस में ससानियों का राज्य (226)	
250-300	राजमहल में चाय, चीन (262), चुंबकीय कुतुबनुमा का प्रयोग, चीन (270)	
300-350	चीनियों द्वारा घुड़सवारी* करते वक्त रकाब का प्रयोग	गुप्त वंश* की स्थापना (320)
350-400		फा-शियन की चीन से भारत की यात्रा (399)
400-450		आर्यभट्ट, खगोलज्ञ और गणितज्ञ
450-500		
500-550		
550-600	जापान में बौद्ध धर्म का आगमन (594); चीन में अनाज के आवागमन के लिए 34 वर्षों में 5,000,000 श्रमिकों की मदद से ग्रैंड कैनाल का निर्माण (584-618)	एहोल और बादामी में चालुक्य मंदिरों का निर्माण
600-650	चीन में तांग वंश (618); हजरत मोहम्मद का मदीना की ओर प्रस्थान, हिजरी युग का आरंभ (622); ससानी साम्राज्य का पतन (642)	जुआंग जांग का चीन से भारत की ओर प्रस्थान, नालंदा का शिक्षा के एक महत्त्वपूर्ण केंद्र के रूप में उदय
650-700	उमय्या ख़िलाफ़त (661-750)	
700-750	उमय्या की एक शाखा द्वारा स्पेन पर विजय, चीन में तांग वंश की स्थापना	अरबों की सिंध पर विजय (712)
750-800	अब्बासी खिलाफ़त की स्थापना और बग़दाद का एक मुख्य सांस्कृतिक और वाणिज्यिक केंद्र बनना	
800-850	कम्बोडिया में खमेर राज्य की स्थापना (802)	
850-900	प्रथम मुद्रित पुस्तक, चीन (868)	
900-950		
950-1000	चीन में कागज़ी मुद्रा का प्रयोग	
1000-50	इब्न सिना; एक फ़ारसी डॉक्टर चिकित्सा के ऊपर एक पुस्तक लिखता है जिसका अनुसरण सदियों तक किया जाता है	महमूद गज़नी का उत्तर-पश्चिम पर आक्रमण; अलबरूनी का भारत आगमन, तंजौर में राजराजेश्वर मंदिर का निर्माण
1050-1100	अल्प अरसालान द्वारा तुर्की साम्राज्य की स्थापना (1075)	
1100-50	चीन में आतिशबाज़ी के प्रदर्शन का पहला लिखित विवरण	कल्हण द्वारा *राजतरंगिणी* की रचना
1150-1200	कंबोडिया का अंकोर साम्राज्य अपनी चरम सीमा पर (1180), अंकोर वाट में मंदिर प्राँगण	
1200-50	चंगेज़ खान द्वारा सत्ता को दृढ़ करना (1206)	दिल्ली सल्तनत की स्थापना (1206)
1250-1300	चंगेज़ खान का पोता, कुबलई खान चीन का सम्राट बनते हैं	अमीर खुसरो (1253-1325) ने कविता और संगीत* के नये रूपों की शुरुआत की; कोणार्क का सूर्य मंदिर

© NCERT not to be republished

तिथि	अमरीका	आस्ट्रेलिया/प्रशांत द्वीप
100-50 ई.पू.		
50-1		
1-50 ईसवी		
50-100		
100-150		
150-200		
200-250		
250-300		
300-350	मेक्सिको में टीयोटीहुकान (Teotihuacan) नगर-राज्य की स्थापना, माया के आनुष्ठानिक केंद्र*, खगोल शास्त्र का विकास, चित्रमय लिपि*	
350-400		
400-450		
450-500		
500-550		
550-600		
600-650		
650-700		
700-750		
750-800		
800-850		
850-900		
900-950		
950-1000	उत्तर अमरीका में प्रथम नगर का निर्माण (लगभग 990)	पोलीनेशिया के मोरी मार्ग निर्देशक द्वारा न्यूज़ीलैंड की खोज
1000-50		
1050-1100		पोलीनेशिया के द्वीपों में शकरकंद की पैदावार (मूलत: दक्षिण अमरीका में)
1100-1150		
1150-1200		
1200-50		
1250-1300		

क्रियाकलाप

ऐसी पाँच घटनाएँ/प्रक्रियाएँ बताइए जिनमें लोगों का विभिन्न क्षेत्रों/महाद्वीपों के आर-पार आवागमन रहा। इन घटनाओं/प्रक्रियाओं का अपने समय में क्या महत्त्व था?

© NCERT not to be republished

विषय

3

तीन महाद्वीपों में फैला हुआ साम्राज्य

11091CH03

रोम साम्राज्य दूर-दूर तक फैला हुआ था। इसके विशाल राज्य क्षेत्र में आज का अधिकांश यूरोप और उर्वर अर्द्धचंद्राकार क्षेत्र (Fertile Crescent) यानी पश्चिमी एशिया तथा उत्तरी अफ़्रीका का बहुत बड़ा हिस्सा शामिल था। इस अध्याय में हम यह देखने का प्रयत्न करेंगे कि इस साम्राज्य का गठन कैसे हुआ; किन-किन राजनीतिक ताकतों ने इसके भाग्य को बनाया- सँवारा और इस साम्राज्य के लोग किन-किन सामाजिक समूहों में विभाजित थे। आप देखेंगे कि यह साम्राज्य अनेक स्थानीय संस्कृतियों तथा भाषाओं के वैभव से संपन्न था। वहाँ स्त्रियों की कानूनी स्थिति काफ़ी सुदृढ़ थी, वैसी स्थिति आज के अनेक देशों में भी देखने को नहीं मिलती है। लेकिन वहाँ की अर्थव्यवस्था बहुत कुछ दास-श्रम के बल पर चलती थी जिस वजह से जनता का अच्छा-खासा भाग स्वतंत्रता से वंचित रह जाता था। पाँचवीं शताब्दी और उसके बाद के समय से पश्चिम में साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया लेकिन अपने पूर्वी आधे भाग में अखंड और अत्यंत समृद्ध बना रहा। अगले अध्याय में आप खिलाफ़त के बारे में पढ़ेंगे। खिलाफ़त इसी समृद्धि की नींव पर स्थापित हुआ और उसने इसकी शहरी तथा धार्मिक परंपराओं को विरासत में प्राप्त किया।

रोम के इतिहासकारों के पास स्रोत-सामग्री का विशाल भंडार है। इस संपूर्ण स्रोत-सामग्री को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है: (क) पाठ्य सामग्री; (ख) प्रलेख या दस्तावेज़ और (ग) भौतिक अवशेष। पाठ्य स्रोतों में शामिल हैं: समकालीन व्यक्तियों द्वारा लिखा गया उस काल का इतिहास (जिसे 'वर्ष-वृत्तांत' (Annals) कहा जाता था क्योंकि ये वृत्तांत प्रतिवर्ष लिखे जाते थे), पत्र, व्याख्यान, प्रवचन, कानून, आदि। दस्तावेज़ी स्रोत मुख्य रूप से उत्कीर्ण अभिलेखों या पैपाइरस पेड़ के पत्तों आदि पर लिखी गई पांडुलिपियों के रूप में मिलते हैं। उत्कीर्ण अभिलेख आमतौर पर पत्थर की शिलाओं पर खोदे जाते थे, इसलिए वे नष्ट नहीं हुए और बहुत बड़ी मात्रा में यूनानी और लातिनी में पाए गए हैं। पैपाइरस एक सरकंडा जैसा पौधा था जो मिस्र में नील नदी के किनारे उगा करता था और उसी से लेखन सामग्री तैयार की जाती थी। रोज़मर्रा की ज़िंदगी में उसका व्यापक इस्तेमाल किया जाता था। हज़ारों की संख्या में संविदापत्र, लेख, संवादपत्र और सरकारी दस्तावेज़ आज भी 'पैपाइरस' पत्र पर लिखे हुए पाए गए हैं और पैपाइरोलोजिस्ट यानी पैपाइरस शास्त्री कहे जाने वाले विद्वानों द्वारा प्रकाशित किए गए हैं। भौतिक अवशेषों में अनेक प्रकार की चीज़ें शामिल हैं जो मुख्य रूप से पुरातत्त्वविदों को (खुदाई और क्षेत्र सर्वेक्षण आदि के जरिए) अपनी खोज में मिलती हैं; जैसे - इमारतें, स्मारक और अन्य प्रकार की संरचनाएँ, मिट्टी के बर्तन, सिक्के, पच्चीकारी का सामान, यहाँ तक कि संपूर्ण भू-दृश्य (जैसे, हवाई छायांकन द्वारा प्राप्त)। इनमें से प्रत्येक स्रोत हमें अतीत के बारे में एक प्रकार की ही जानकारी देते हैं। इन जानकारियों को मिलाकर देखना अत्यंत उपयोगी हो सकता है। लेकिन कितनी अच्छी तरह से इतिहासकार इन स्रोतों के तथ्यों में अंतर्संबंध बनाता है यह उसकी कुशलता पर निर्भर करता है।

पैपाइरस पत्र

© NCERT not to be republished

ईसा मसीह के जन्म से लेकर सातवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में 630 के दशक तक की अवधि में अधिकांश यूरोप, उत्तरी अफ़्रीका और मध्य-पूर्व तक के विशाल क्षेत्र में दो सशक्त साम्राज्यों का शासन था। ये दो साम्राज्य रोम और ईरान के थे। रोम तथा ईरान के लोग आपस में प्रतिद्वंद्वी थे और अपने इतिहास के अधिकांश काल में वे आपस में लड़ते रहे। उनके साम्राज्य एक-दूसरे के बिलकुल पास थे, उन्हें भूमि की एक संकरी पट्टी जिसके किनारे फ़रात नदी बहा करती थी, अलग करती थी। इस अध्याय में हम रोम के साम्राज्य के बारे में पढ़ेंगे, मगर कहीं-कहीं प्रसंगवश रोम के प्रतिद्वंदी ईरान का भी उल्लेख करते रहेंगे।

यदि आप नीचे दिए गए मानचित्र पर नज़र डालें तो देखेंगे कि यूरोप और अफ़्रीका के महाद्वीप एक समुद्र द्वारा एक-दूसरे को अलग किए हुए हैं जो पश्चिम में स्पेन से लेकर पूर्व में सीरिया तक फैला हुआ है। इस समुद्र को भूमध्यसागर कहा गया है और यह उन दिनों रोम साम्राज्य का हृदय था। रोम का भूमध्यसागर और उत्तर तथा दक्षिण की दोनों दिशाओं में सागर के आसपास स्थित सभी प्रदेशों पर प्रभुत्व था। उत्तर में साम्राज्य की सीमा का निर्धारण दो महान नदियों राइन और डैन्यूब से होता था और दक्षिणी सीमा सहारा नामक अति विस्तृत रेगिस्तान से बनती थी। इस प्रकार

मानचित्र 1: यूरोप और उत्तरी अफ़्रीका।

इस अत्यंत विस्तृत क्षेत्र में रोम साम्राज्य फैला हुआ था। दूसरी ओर, कैस्पियन सागर के दक्षिण से पूर्वी अरब तक का समूचा इलाका और कभी-कभी अफ़गानिस्तान के कुछ हिस्से भी ईरान के नियंत्रण में थे। इन दो महान शक्तियों ने दुनिया के उस अधिकांश भाग को आपस में बाँट रखा था जिसे चीनी लोग *ता-चिन* (बृहत्तर चीन या मोटे तौर पर पश्चिम) कहा करते थे।

© NCERT not to be republished

साम्राज्य का आरंभिक काल

रोमन साम्राज्य को मोटे तौर पर दो चरणों में बाँटा जा सकता है, जिन्हें 'पूर्ववर्ती' और 'परवर्ती' चरण कह सकते हैं। इन दोनों चरणों के बीच तीसरी शताब्दी का समय आता है जो उन्हें दो ऐतिहासिक भागों में विभाजित करता है। दूसरे शब्दों में कहें तो तीसरी शताब्दी के मुख्य भाग तक की संपूर्ण अवधि को 'पूर्ववर्ती साम्राज्य' और उसके बाद की अवधि को 'परवर्ती साम्राज्य' कहा जा सकता है।

दो महाशक्तियों तथा उनसे संबंधित साम्राज्यों में एक बड़ा अंतर यह था कि रोमन साम्राज्य सांस्कृतिक दृष्टि से ईरान की तुलना में कहीं अधिक विविधतापूर्ण था। इस अवधि के दौरान पार्थियाई तथा बाद में ससानी राजवंशों ने ईरान पर शासन किया, जिन लोगों पर शासन हुआ उनमें अधिकतर ईरानी थे। इसके विपरीत, रोमन साम्राज्य ऐसे क्षेत्रों तथा संस्कृतियों का एक मिलाजुला रूप था जो कि मुख्यत: सरकार की एक साझी प्रणाली द्वारा एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए थे। साम्राज्य में अनेक भाषाएँ बोली जाती थीं लेकिन प्रशासन के प्रयोजन हेतु लातिनी तथा यूनानी भाषाओं का ही प्रयोग होता था। पूर्वी भाग के उच्चतर वर्ग यूनानी भाषा और पश्चिम भाग के लोग लातिनी भाषा बोलते और लिखते थे और इन दोनों भाषाओं के बीच की सीमा रेखा भूमध्यसागर को चीरती हुई उस पार अफ़्रीकी प्रांत त्रिपोलितानिया (जो कि लातिनी-भाषी था) और सायरेनाएका (यूनानी भाषी) के बीच से जाती थी। जो लोग साम्राज्य में रहते थे वे सभी एकमात्र, शासक यानी सम्राट की ही प्रजा थे, चाहे वे कहीं भी रहते हों और कोई भी भाषा बोलते हों।

प्रथम सम्राट, ऑगस्टस ने 27 ई.पू. में जो राज्य स्थापित किया था उसे 'प्रिंसिपेट' कहा जाता था। यद्यपि ऑगस्टस एकछत्र शासक और सत्ता का वास्तविक स्रोत था तथापि इस कल्पना को जीवित रखा गया कि वह केवल एक 'प्रमुख नागरिक' (लातिनी भाषा में *प्रिंसेप्स*) था, निरंकुश शासक नहीं था। ऐसा 'सैनेट' को सम्मान प्रदान करने के लिए किया गया था; सैनेट वह निकाय था जिसने उन दिनों में जब रोम एक 'रिपब्लिक' यानी गणतंत्र* था, सत्ता पर अपना नियंत्रण रखा था। रोम में सैनेट नामक संस्था का अस्तित्व कई शताब्दियों तक रहा था। वह एक ऐसी संस्था थी जिसमें कुलीन एवं अभिजात वर्गों यानी मुख्यत: रोम के धनी परिवारों का प्रतिनिधित्व था। लेकिन आगे चलकर उसमें इतालवी मूल के ज़मींदारों को भी शामिल कर लिया गया था। रोम के इतिहास की अधिकांश पुस्तकें जो आज यूनानी तथा लातिनी में ज़्यादातर लिखी मिलती हैं इन्हीं लोगों द्वारा लिखी गई थीं। इन पुस्तकों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि सम्राटों की परख इस बात से की जाती थी कि वे सैनेट के प्रति किस तरह का व्यवहार रखते थे। सबसे बुरे सम्राट वे माने जाते थे जो सैनेट के सदस्यों के प्रति शत्रुतापूर्ण व्यवहार करते थे और उनको शक की नज़र से देखते थे या फिर उनके साथ क्रूरता व हिंसा करते थे। कई सैनेटर गणतंत्र-युग में लौटने के लिए तरसते थे, किन्तु अधिकतर सैनेटरों को यह अहसास जरूर हो गया कि यह असंभव था।

सम्राट और सैनेट के बाद साम्राज्यिक शासन की एक अन्य प्रमुख संस्था सेना थी। फ़ारस के साम्राज्य में तो बलात्** भर्ती वाली सेना थी लेकिन रोम की सेना एक व्यावसायिक सेना थी जिसमें प्रत्येक सैनिक को वेतन दिया जाता था और न्यूनतम 25 वर्ष तक सेवा करनी पड़ती थी। एक वेतनभोगी सेना का होना निस्संदेह रोमन साम्राज्य की अपनी एक ख़ास विशेषता थी। सेना साम्राज्य में सबसे बड़ा एकल संगठित निकाय थी (जिसमें चौथी शताब्दी तक 6,00,000 सैनिक थे) और उसके पास निश्चित रूप से सम्राटों का भाग्य निर्धारित करने की शक्ति थी। सैनिक बेहतर वेतन

*इस साम्राज्य में *'गणतंत्र' (रिपब्लिक) एक ऐसी शासन व्यवस्था थी जिसमें वास्तविक सत्ता 'सैनेट' नामक निकाय में निहित थी। सैनेट में धनवान परिवारों के एक छोटे से समूह का बोलबाला रहता था जिन्हें अभिजात कहा जा सकता है। व्यावहारिक तौर पर, गणतंत्र अभिजात वर्ग की सरकार का शासन 'सैनेट' नामक संस्था के माध्यम से चलाता था। गणतंत्र 509 ई.पू. से 27 ई.पू. तक चला लेकिन 27 ई.पू. में जूलियस सीज़र के दत्तक पुत्र तथा उत्तराधिकारी ऑक्टेवियन ने उसका तख़्ता पलट दिया और सत्ता अपने हाथ में ले ली और ऑगस्टस नाम से रोम का सम्राट बन बैठा। सैनेट की सदस्यता जीवन-भर चलती थी और उसके लिए जन्म की अपेक्षा धन और पद-प्रतिष्ठा को अधिक महत्त्व दिया जाता था।

**बलात् भर्ती वाली सेना वह होती है जिसमें कुछ वर्गों या समूहों के वयस्क पुरुषों को अनिवार्य रूप से सैनिक सेवा करनी पड़ती है।

© NCERT not to be republished

और सेवा-शर्तों के लिए लगातार आंदोलन करते रहते थे। यदि सैनिक अपने सेनापतियों और यहाँ तक कि सम्राट द्वारा निराश महसूस करते थे तो ये आंदोलन प्राय: सैनिक विद्रोहों का रूप ले लेते थे। यह भी ध्यान रहे कि रोम सेना की जो तस्वीर हमारे सामने पेश की गई है वह उन इतिहासकारों द्वारा तैयार की गई थी जो सैनेट के प्रति सहानुभूति रखते थे। सैनेट सेना से घृणा करती थी और उससे डरती थी, क्योंकि वह प्राय: अप्रत्याशित हिंसा का स्रोत थी, विशेष रूप से तीसरी शताब्दी की तनावपूर्ण परिस्थितियों में जब सरकार को अपने बढ़ते हुए सैन्य खर्चों को पूरा करने के लिए भारी कर लगाने पड़े थे।

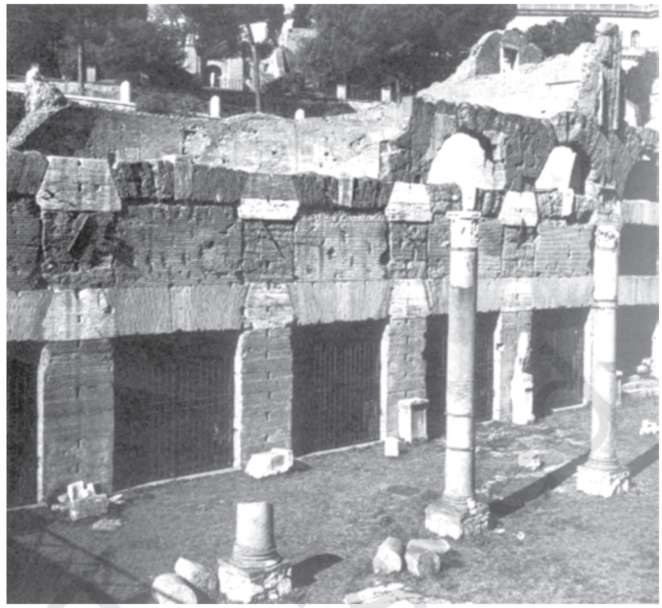

रोम के फोरम जूलियम की दुकानें। पुराने रोमन फोरम के विस्तार के लिए 51 ई. पू. के बाद स्तम्भों वाले इस चौक (पिआज़ा) को बनाया गया।

संक्षेप में, सम्राट, अभिजात वर्ग और सेना साम्राज्य के राजनीतिक इतिहास में तीन मुख्य 'खिलाड़ी' थे। अलग-अलग सम्राटों की सफलता इस बात पर निर्भर करती थी कि वे सेना पर कितना नियंत्रण रख पाते हैं और जब सेनाएँ विभाजित हो जाती थीं तो इसका परिणाम सामान्यत: गृहयुद्ध* होता था। एक ऐसे वर्ष (69 ईस्वी) को छोड़कर, जब एक के बाद एक कुल मिलाकर, चार सम्राट गद्दी पर बैठे, पहली दो शताब्दियों में कोई गृहयुद्ध नहीं हुआ और अपेक्षाकृत शांति बनी रही। सिंहासन यथासंभव पारिवारिक वंशक्रम पर आधारित था। पिता का राज्य पुत्र को मिलता था, चाहे यह नैसर्गिक हो अथवा ग्रहण किया हुआ उत्तराधिकारी दत्तक, और सेना भी इस सिद्धांत को पूरी तरह से मानती थी। उदाहरणार्थ, टिबेरियस (Tiberious) (14-37 ईस्वी), जो रोम सम्राटों की लंबी कतारों में दूसरा था प्रिंसिपेट की स्थापना करने वाले ऑगस्टस का अपना पुत्र नहीं था, किन्तु सत्ता का सहज परिवर्तन सुनिश्चित करने के लिए ऑगस्टस ने उसे गोद ले लिया था।

प्रथम दो शताब्दियों में अन्य देशों के साथ युद्ध भी बहुत कम हुए। ऑगस्टस से टिबेरियस द्वारा प्राप्त किया गया साम्राज्य पहले ही इतना लंबा-चौड़ा था कि इसमें और अधिक विस्तार करना अनावश्यक प्रतीत होता था। वास्तव में ऑगस्टस का शासन काल *शांति* के लिए याद किया जाता है, क्योंकि इस शांति का आगमन दशकों तक चले आंतरिक संघर्ष और सदियों की सैनिक विजय के पश्चात हुआ था। साम्राज्य के प्रारंभिक विस्तार में एकमात्र अभियान सम्राट त्राजान ने 113-17 ईस्वी में चलाया जिसके द्वारा उसने फ़रात नदी के पार के क्षेत्रों पर निरर्थक कब्जा कर लिया था; लेकिन उसके उत्तराधिकारियों ने उन इलाकों को छोड़ दिया।

*गृहयुद्ध दूसरे देशों से संघर्ष के ठीक विपरीत अपने ही देश में सत्ता हासिल करने के लिए किया गया सशस्त्र संघर्ष है।

सम्राट त्राजान का स्वप्न – भारत की विजय?

'तत्पश्चात् भयंकर भूकंप से पीड़ित एंटिऑक में सर्दियों के बाद (115/16), 116 में त्राजान फ़रात नदी के रास्ते आगे की ओर बढ़ता हुआ पार्थियन की राजधानी टेसीफ़ून तक चला गया और फिर वहाँ फ़ारस की खाड़ी के सिरे पर पहुँच गया । (इतिहासकार) कैसियस डियो (Cassius Dio) के अनुसार वहाँ पर वह भारत की ओर जाने वाले किसी वाणिज्यिक पोत को लालायित नज़रों से देख रहा था और चाह रहा था कि काश वह सिकंदर जैसा जवान होता।'

– स्रोत: फरगस मिल्लर, दि रोमन नीयर ईस्ट

निकटवर्ती पूर्व
रोमन साम्राज्य के भूमध्य सागरीय क्षेत्र में रहने वाले लोगों की दृष्टि से निकटवर्ती पूर्व का मतलब था भूमध्यसागर के बिलकुल पूर्व का इलाका; मुख्य रूप से सीरिया, फ़िलिस्तीन और मेसोपोटामिया के प्रांत जो रोमन साम्राज्य के हिस्से थे और मोटे तौर पर आसपास के क्षेत्र, जैसे अरब।

*ये स्थानीय राज्य थे जो रोम के 'आश्रित' थे। रोम को भरोसा था कि ये शासक अपनी सेनाओं का प्रयोग रोम के समर्थन में करेंगे और बदले में रोम ने उनका अलग अस्तित्व स्वीकार कर लिया।

इस काल की एक विशेष उपलब्धि यह रही कि रोमन साम्राज्य के प्रत्यक्ष शासन का क्रमिक रूप से काफी विस्तार हुआ। इसके लिए अनेक आश्रित राज्यों को रोम के प्रांतीय राज्य-क्षेत्र में मिला लिया गया। निकटवर्ती पूर्व ऐसे राज्यों* से भरा पड़ा था लेकिन दूसरी शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों तक जो राज्य फ़रात नदी के पश्चिम में (रोम राज्य क्षेत्र की ओर) पड़ते थे उन्हें भी रोम द्वारा हड़प लिया गया। प्रासंगिक तौर पर यह उल्लेखनीय है कि ये राज्य अत्यंत समृद्ध थे; उदाहरण के लिए, हेरॉड के राज्य से प्रतिवर्ष 54 लाख दीनारियस (1,25,000 कि.ग्रा. सोने) के बराबर आमदनी होती थी! *दीनारियस* रोम का एक चाँदी का सिक्का होता था जिसमें लगभग 4.5 ग्राम विशुद्ध चाँदी होती थी।

वास्तव में, इटली के सिवाय, जिसे उन शताब्दियों में प्रांत नहीं माना जाता था, साम्राज्य के सभी क्षेत्र प्रांतों में बँटे हुए थे और उनसे कर वसूला जाता था। दूसरी शताब्दी में जब रोम अपने चरमोत्कर्ष पर था, रोमन साम्राज्य स्कॉटलैंड से आर्मेनिया की सीमाओं तक और सहारा से फ़रात और कभी-कभी उससे भी आगे तक फैला हुआ था। यह सच है कि उन दिनों शासन व्यवस्था को चलाने के लिए उनकी सहायतार्थ आज-जैसी कोई सरकार नहीं थी। तो फिर यह प्रश्न उठता है कि सम्राटों के लिए इतने लंबे-चौड़े और तरह-तरह के इलाकों पर नियंत्रण रख पाना कैसे संभव हुआ जिनकी आबादी दूसरी शताब्दी के मध्य में लगभग 6 करोड़ तक पहुँच गई थी? इस प्रश्न का उत्तर साम्राज्य के *शहरीकरण* में खोजा जा सकता है।

संपूर्ण साम्राज्य में दूर-दूर तक अनेक नगर स्थापित किए गए थे जिनके माध्यम से समस्त साम्राज्य पर नियंत्रण रखा जाता था। भूमध्यसागर के तटों पर स्थापित बड़े शहरी केंद्र (कार्थेज, सिकंदरिया तथा एंटिऑक इनमें सबसे बड़े थे) साम्राज्यिक प्रणाली के मूल आधार थे। इन्हीं *शहरों* के माध्यम से 'सरकार' प्रांतीय ग्रामीण क्षेत्रों पर कर लगाने में सफल हो पाती थी, जिनसे साम्राज्य को अधिकांश धन-संपदा प्राप्त होती थी। इसका अर्थ यह हुआ कि स्थानीय उच्च वर्ग रोमन साम्राज्य को कर वसूली और अपने क्षेत्रों के प्रशासन के कार्य में सक्रिय सहायता देते थे। इटली और अन्य प्रांतों के बीच सत्ता का आकस्मिक अंतरण वास्तव में, रोम के राजनीतिक इतिहास का एक अत्यंत रोचक पहलू रहा है। दूसरी और तीसरी शताब्दियों के दौरान, अधिकतर प्रशासक तथा सैनिक अफ़सर इन्हीं उच्च *प्रांतीय* वर्गों में से होते थे। इस प्रकार उनका एक नया संभ्रांत वर्ग बन गया जो कि सैनेट के सदस्यों की तुलना में कहीं अधिक शक्तिशाली था क्योंकि उसे सम्राटों का समर्थन प्राप्त था। जैसे-जैसे यह नया समूह उभर कर सामने आया, सम्राट गैलीनस (253-68) ने सैनेटरों को सैनिक कमान से *हटा कर* इस नए वर्ग के उदय को सुदृढ़ बना दिया। ऐसा कहा जाता है कि गैलीनस ने सैनेटरों को सेना में सेवा करने अथवा इस तक पहुँच रखने पर पाबंदी लगा दी थी ताकि साम्राज्य का नियंत्रण उनके हाथों में न जाने पाए।

नाइम्स के पास पान दु गार्ड, फ़्रांस, प्रथम सदी ई. रोम के इंजीनियरों ने तीन महाद्वीपों के पार पानी ले जाने के लिए विशाल जलसेतुओं (Aqueducts) का निर्माण किया।

संक्षेप में, पहली शताब्दी के बाद वाले वर्षों में और दूसरी शताब्दी के दौरान तथा तीसरी शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में सेना तथा प्रशासन में अधिकाधिक लोग प्रांतों से लिए जाने लगे क्योंकि इन क्षेत्रों के लोगों को भी नागरिकता मिल चुकी थी जो पहले इटली तक ही सीमित

थी। सैनेट पर कम से कम तीसरी शताब्दी तक इतालवी मूल के लोगों का प्रभुत्व बना रहा, लेकिन बाद में प्रांतों से लिए गए सैनेटर बहुसंख्यक हो गए। इन प्रवृत्तियों से यह पता चलता है कि साम्राज्य में, राजनीतिक तथा आर्थिक दोनों ही दृष्टियों से, इटली का पतन हो चला था और भूमध्य सागर के अपेक्षाकृत अधिक समृद्ध और शहरीकृत भागों, जैसे स्पेन के दक्षिणी हिस्सों, अफ़्रीकी और पूर्वी भागों में नए संभ्रांत वर्गों का उदय हो रहा था। रोम के संदर्भ में नगर एक ऐसा शहरी केंद्र था, जिसके अपने दंडनायक (मजिस्ट्रेट), नगर परिषद (सिटी काउंसिल) और अपना एक सुनिश्चित राज्य-क्षेत्र था जिसमें उसके अधिकार-क्षेत्र में आने वाले कई ग्राम शामिल थे। इस प्रकार किसी भी शहर के अधिकार-क्षेत्र में कोई दूसरा शहर नहीं हो सकता था, किन्तु उसके तहत कई गाँव लगभग हमेशा ही होते थे। आमतौर पर शाही अनुकम्पा (अथवा नाराज़गी) के कारण गाँवों का दर्जा बढ़ा कर उन्हें शहरों का दर्जा और शहरों को गाँवों का दर्जा दिया जा सकता था। किसी शहर में रहने का लाभ यही था कि खाने की कमी और अकाल के दिनों में भी इसमें ग्रामीण इलाकों की तुलना में बेहतर सुविधाएँ प्राप्त होने की संभावना रहती थी।

क्रियाकलाप 1

रोमन साम्राज्य के राजनीतिक इतिहास में कौन तीन मुख्य 'खिलाड़ी' थे? प्रत्येक के बारे में एक-दो पंक्तियाँ लिखिए। रोमन सम्राट अपने इतने बड़े साम्राज्य पर शासन कैसे कर लेता था? इसके लिए किसका सहयोग महत्त्वपूर्ण था?

डॉक्टर गैलेन के अनुसार रोमन शहरों का ग्रामीण क्षेत्रों के साथ बर्ताव

कई प्रांतों में लगातार कई वर्षों से पड़ रहे अकाल ने साधारण से साधारण बुद्धिवाले आदमी को भी यह बता दिया कि लोगों में कुपोषण के कारण बीमारियाँ हो रही हैं। शहर में रहने वाले लोगों का फ़सल कटाई के शीघ्र बाद अगले पूरे वर्ष के लिए पर्याप्त मात्रा में खाद्यान्न अपने भंडारों में भर लेना एक रिवाज था। सारा गेहूँ, जौ, सेम तथा मसूर और दालों का काफी बड़ा हिस्सा शहरियों द्वारा ले जाने के बाद भी कई प्रकार की दालें किसानों के लिए बची रह गई थीं। सर्दियों के लिए जो कुछ भी बचा था, उसे खा-पीकर खत्म कर देने के पश्चात् देहाती लोगों को वसंत ऋतु में अस्वास्थ्यकर खाद्यों पर निर्भर रहना पड़ा; उन्होंने पेड़ों की टहनियाँ, छालें, जड़ें, झाड़ियाँ, अखाद्य पेड़-पौधे और पत्ते खाकर किसी तरह अपने प्राणों को बचाए रखा।

– गैलेन, ऑन गुड एण्ड बैड डाइट

सार्वजनिक स्नान-गृह रोम के शहरी-जीवन की एक ख़ास विशेषता थी (जब एक ईरानी शासक ने ऐसे स्नान-गृहों को ईरान में शुरू करने का प्रयत्न किया तो उसे वहाँ के पुरोहित वर्ग के क्रोध का सामना करना पड़ा! जल एक पवित्र वस्तु थी और सार्वजनिक-स्नान में उन्हें, जल का अपवित्रीकरण दिखता था)। शहरी लोगों को उच्च-स्तर के मनोरंजन उपलब्ध थे। उदाहरणार्थ, एक कैलेंडर से हमें पता चलता है कि एक वर्ष में कम से कम 176 दिन वहाँ कोई-न-कोई मनोरंजक कार्यक्रम या प्रदर्शन (Spectacula) अवश्य होता था!

रोमन छावनी, विन्दोनिसा (Vindonissa,आधुनिक स्विट्ज़रलैंड में) में एक रंगशाला, प्रथम शती ई.। इसका प्रयोग सैन्य क़वायद और सैनिकों के मनोरंजन के आयोजन हेतु किया जाता था।

© NCERT not to be republished

तीसरी-शताब्दी का संकट

यदि पहली और दूसरी शताब्दियाँ कुल मिला कर शांति, समृद्धि तथा आर्थिक विस्तार की प्रतीक थीं, तो तीसरी शताब्दी आंतरिक तनाव के पहले बड़े संकेत लेकर सामने आई। 230 के दशक से साम्राज्य ने स्वयं को कई मोर्चों पर जूझता पाया। ईरान में, 225 ईस्वी में अपेक्षाकृत एक अधिक आक्रामक वंश उभर कर सामने आया (इस वंश के लोग स्वयं को 'ससानी' कहते थे) और केवल 15 वर्षों के भीतर यह तेज़ी से फ़रात की दिशा में फैल गया। तीन भाषाओं में खुदे एक प्रसिद्ध शिलालेख में, ईरान के शासक शापुर प्रथम ने दावा किया था कि उसने 60,000 रोमन सेना का सफ़ाया कर दिया है और रोम साम्राज्य की पूर्वी राजधानी एंटिऑक पर कब्ज़ा भी कर लिया है। इस बीच, कई जर्मन मूल की जनजातियों, अथवा राज्य समुदायों (जिनमें से प्रमुख एलमन्नाइ, फ्रैंक और गोथ थे) ने राइन तथा डैन्यूब नदी की सीमाओं की ओर बढ़ना शुरू कर दिया; और 233 से 280 तक की समूची अवधि में उन प्रांतों की पूरी सीमा पर बार-बार आक्रमण हुए जो काला सागर से लेकर आल्पस और दक्षिणी जर्मनी तक फैले हुए थे। रोमवासियों को डैन्यूब से आगे का क्षेत्र छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा, जबकि इस काल के सम्राट उन लोगों के विरुद्ध लगातार युद्ध करते रहे, जिन्हें रोमवासी 'विदेशी बर्बर' (Barbarian) कहा करते थे। तीसरी शताब्दी में थोड़े-थोड़े अंतर से अनेक सम्राट (47 वर्षों में 25 सम्राट) सत्तासीन हुए जो इस तथ्य का स्पष्ट सूचक है कि इस अवधि में साम्राज्य को बेहद तनाव की स्थिति से गुज़रना पड़ा।

लिंग, साक्षरता, संस्कृति

रोमन समाज की अपेक्षाकृत अधिक आधुनिक विशेषताओं में से एक विशेषता यह थी कि उन दिनों 'एकल' परिवार (Nuclear family) का व्यापक रूप से चलन था। वयस्क पुत्र अपने पिता के परिवारों के साथ नहीं रहते थे और वयस्क भाई बहुत कम साझे परिवार में रहते थे। दूसरी ओर, दासों को परिवार में सम्मिलित किया जाता था क्योंकि रोमवासियों के लिए परिवार की यही अवधारणा थी। सामान्यत: गणतंत्र के परवर्तीकाल (प्रथम शती ई. पू.) तक विवाह का रूप ऐसा था कि पत्नी अपने पति को अपनी संपत्ति हस्तांतरित नहीं किया करती थी किंतु अपने पैतृक परिवार में वह अपने पूरे अधिकार बनाए रखती थी। महिला का दहेज वैवाहिक अवधि के दौरान उसके पति के पास चला जाता था, किन्तु महिला अपने पिता की मुख्य उत्तराधिकारी बनी रहती थी और अपने पिता की मृत्यु होने पर उसकी संपत्ति की स्वतंत्र मालिक बन जाती थी। इस प्रकार, रोम की महिलाओं को संपत्ति के स्वामित्व व संचालन में व्यापक कानूनी अधिकार प्राप्त थे। दूसरे शब्दों में, कानून के अनुसार पति-पत्नी को संयुक्त रूप से एक वित्तीय हस्ती नहीं बल्कि अलग-अलग दो वित्तीय हस्तियाँ माना जाता था और पत्नी को पूर्ण वैधिक स्वतंत्रता प्राप्त थी। तलाक देना अपेक्षाकृत आसान था और इसके लिए पति अथवा पत्नी द्वारा केवल विवाह-भंग करने के इरादे की सूचना देना ही काफी था। दूसरी ओर, पुरुष 28-29, 30-32 की आयु में विवाह करते थे, जबकि लड़कियों की शादी 16-18 व 22-23 साल की आयु में की जाती थी। इसलिए पति और पत्नी के बीच आयु का अंतराल बना रहता था। इससे असमानता को कुछ बढ़ावा मिला होगा। विवाह आम-तौर पर परिवार द्वारा नियोजित होते थे और इसमें कोई संदेह नहीं कि महिलाओं पर उनके पति अक्सर हावी रहते थे। महान कैथोलिक बिशप ऑगस्टीन* जिन्होंने अपना अधिकांश जीवन उत्तरी अफ़्रीका में बिताया था, ने लिखा है कि उनकी माता की उनके पिता द्वारा नियमित रूप से पिटाई की जाती थी और जिस छोटे से नगर में वे बड़े हुए वहाँ की अधिकतर पत्नियाँ इसी तरह की पिटाई से अपने शरीर पर लगी खरोंचें दिखाती रहती थीं! अंतत:, पिताओं का अपने बच्चों पर अत्यधिक कानूनी नियंत्रण होता था—कभी-कभी तो दिल दहलाने वाली सीमा तक; उदाहरणार्थ, अवांछित बच्चों के मामले

*सेंट ऑगस्टीन (354-430) 396 से उत्तरी अफ़्रीका के हिप्पो नामक नगर के बिशप थे। चर्च के बौद्धिक इतिहास में उनका उच्चतम स्थान था। बिशप लोग ईसाई समुदाय में अत्यंत महत्त्वपूर्ण व्यक्ति माने जाते थे और अक्सर वे बहुत शक्तिशाली होते थे।

में उन्हें ज़िंदा रखने या मार डालने तक का कानूनी अधिकार प्राप्त था। ऐसी जानकारी मिलती है कि कभी-कभी पिता शिशुओं को मारने के लिए उन्हें ठंड में छोड़ देते थे।

साक्षरता की स्थिति क्या थी? यह निश्चित है कि कामचलाऊ साक्षरता* की दरें साम्राज्य के विभिन्न भागों में काफी अलग-अलग थीं। उदाहरणार्थ, पोम्पेई नगर में, जो 79 ईस्वी में ज्वालामुखी फटने से दफ़न हो गया था, इस बात का ठोस प्रमाण मिलता है कि वहाँ कामचलाऊ साक्षरता व्यापक रूप में विद्यमान थी। पोम्पेई की मुख्य गलियों की दीवारों पर अंकित विज्ञापन और समूचे शहर में अभिरेखण (Graffiti) पाए गए हैं।

*पढ़ने और लिखने का दैनिक प्रयोग, प्रायः छोटे-मोटे संदर्भों में।

इनमें से एक सर्वाधिक मज़ाकिया विज्ञापन जो पोम्पेई की दीवार पर लगा है, कहता है : दीवार, तुम धन्य हो, अपने ऊपर इतनी उबाऊ लिखावट का बोझ ढोते हुए भी तुम बरकरार खड़ी हो, भरभराकर गिरी नहीं।

इसके विपरीत, मिस्र में आज भी सैकड़ों 'पैपाइरस' बचे हुए हैं जिन पर अत्यधिक औपचारिक-दस्तावेज़, जैसे कि संविदा-पत्र आदि लिखे हुए हैं। ये दस्तावेज़ आमतौर पर व्यावसायिक लिपिकों द्वारा लिखे जाते थे। ये दस्तावेज़ अक्सर हमें यह बताते हैं कि अमुक व्यक्ति 'क' अथवा 'ख' पढ़ या लिख नहीं सकता। किन्तु यहाँ भी साक्षरता निश्चित रूप से कुछ वर्गों के लोगों में अपेक्षाकृत अधिक व्यापक थी, जैसे कि सैनिकों, फौजी अफ़सरों और सम्पदा-प्रबंधकों में।

रोमन साम्राज्य में सांस्कृतिक विविधता कई रूपों एवं स्तरों पर दिखाई देती है, जैसे, धार्मिक सम्प्रदायों तथा स्थानीय देवी-देवताओं की भरपूर विविधता; बोलचाल की अनेक भाषाएँ; वेशभूषा की विविध शैलियाँ; तरह-तरह के भोजन; सामाजिक संगठनों के रूप (जनजातीय और अन्य); यहाँ तक कि उनकी बस्तियों के अनेक रूप। अरामाइक निकटवर्ती पूर्व (कम से कम फ़रात के पश्चिम में) का प्रमुख भाषा-समूह था, मिस्र में कॉप्टिक, उत्तरी अफ़्रीका में प्यूनिक तथा बरबर (Berber) और स्पेन तथा उत्तर-पश्चिमी में कैल्टिक भाषा बोली जाती थी। परन्तु इनमें बहुत सी भाषाई संस्कृतियाँ पूर्णतः मौखिक थीं, वे कम से कम तब तक मौखिक रहीं जब तक उनके लिए एक लिपि का आविष्कार नहीं किया गया। उदाहरणार्थ, अर्मिनियाई भाषा का लिखना भी

एडेसा में पच्चीकारी (दूसरी शती ई.)। सीरिया के इस अभिलेख से पता चलता है कि यहाँ जो लोग दिखाए गए हैं वे राजा अबगर की पत्नी तथा परिवार के सदस्य हैं।

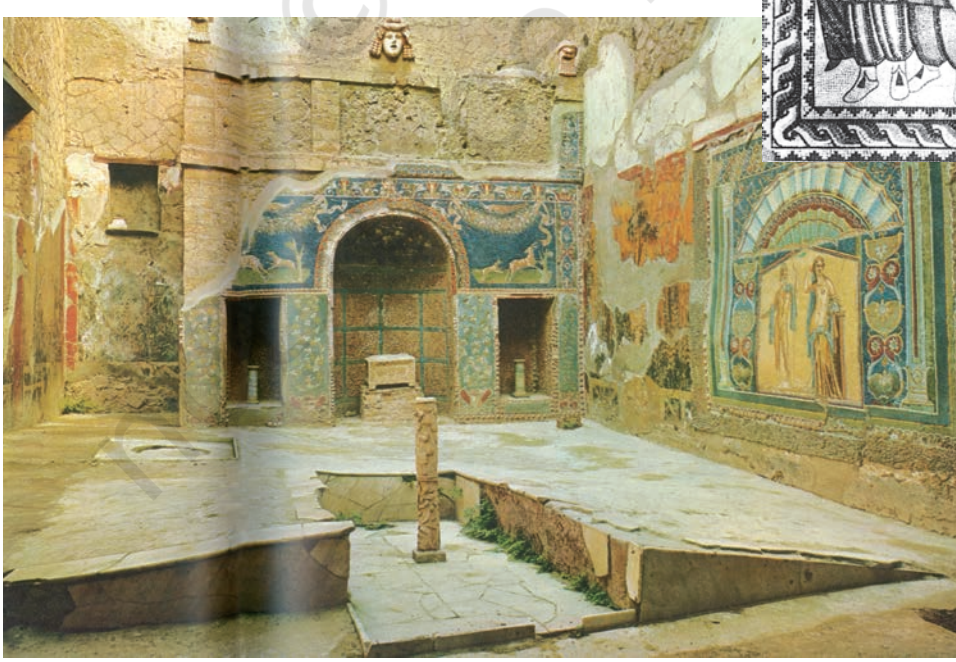

पोम्पेई: एक मदिरा व्यापारी का भोजन कक्ष। कमरे की दीवारों पर मिथक पशु बनाए गए हैं।

क्रियाकलाप 2

रोमन साम्राज्य में स्त्रियाँ कहाँ तक आत्मनिर्भर थीं? रोमन-परिवार की स्थिति की तुलना आज के भारतीय-परिवार की स्थिति से करो।

बहुत देर बाद पाँचवीं शताब्दी में शुरू हुआ, हालांकि तीसरी शताब्दी के मध्य तक बाइबिल का कॉप्टिक भाषा में अनुवाद हो चुका था। कई स्थानों पर, लातिनी भाषा के प्रसार ने उन भाषाओं के लिखित रूप का स्थान ग्रहण कर लिया जिनका पहले से ही व्यापक प्रसार था। ऐसा विशेष रूप से केल्टिक भाषा के साथ हुआ जिसका लिखा जाना प्रथम शताब्दी के पश्चात बंद ही हो गया।

आर्थिक विस्तार

साम्राज्य में बंदरगाहों, खानों, खदानों, ईंट-भट्ठों, जैतून के तेल की फैक्टरियों आदि की संख्या काफी अधिक थी, जिनसे उसका आर्थिक आधारभूत ढाँचा काफी मज़बूत था। गेहूँ, अंगूरी शराब तथा जैतून का तेल मुख्य व्यापारिक मदें थीं जिनका अधिक मात्रा में उपयोग होता था और ये मुख्यत: स्पेन, गैलिक प्रांतों, उत्तरी अफ़्रीका, मिस्र तथा अपेक्षाकृत कम मात्रा में इटली से आती थीं, जहाँ इन फसलों के लिए सर्वोत्तम स्थितियाँ उपलब्ध थीं। शराब, जैतून का तेल तथा अन्य तरल पदार्थों की ढुलाई ऐसे मटकों या कंटेनरों में होती थी जिन्हें "एम्फ़ोरा (Amphora) कहते थे। इन मटकों के टूटे हुए टुकड़े बहुत बड़ी संख्या में अभी भी मौजूद हैं। (उल्लेखनीय है कि रोम में मोंटी टेस्टैकियो (Monte Testaccio) स्थल पर ऐसे 5 करोड़ से अधिक मटकों के अवशेष पाए गए हैं!) पुरातत्त्वविद इन टुकड़ों को ठीक से जोड़कर इन कंटेनरों को फिर से सही *रूप* देने और यह पता लगाने में सफल हुए हैं कि उनमें *क्या-क्या* ले जाया जाता था। इसके अलावा, प्राप्त वस्तुओं की मिट्टी का भूमध्य सागरीय क्षेत्रों में उपलब्ध चिकनी मिट्टी के नमूनों के साथ मिलान करके पुरातत्त्वविज्ञानी हमें उनके *निर्माण स्थल* के बारे में जानकारी देने में सफल हुए हैं। इस प्रकार, हम अब कुछ विश्वास के साथ, एक उदाहरण के रूप में कह सकते हैं कि स्पेन में जैतून का तेल निकालने का उद्यम 140-160 ईस्वी के वर्षों में अपने चरमोत्कर्ष पर था। उन दिनों स्पेन में उत्पादित जैतून का तेल मुख्य रूप से ऐसे कंटेनरों में ले जाया जाता था जिन्हें 'ड्रेसल-20' कहते थे। इसका यह नाम हेनरिक ड्रेसल नामक पुरातत्त्वविद के नाम पर आधारित है जिसने इस किस्म के कंटेनरों का रूप सुनिश्चित किया था। ड्रेसल-20 नामक कंटेनरों के अवशेष भूमध्यसागरीय क्षेत्र में अनेक उत्खनन-स्थलों पर पाए गए हैं जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि स्पेन के जैतून के तेल का व्यापक प्रसार था। ऐसे साक्ष्य (भिन्न-भिन्न प्रकार के एम्फ़ोरा पात्रों के अवशेषों और उनके

फ़्रांस के दक्षिणी तट के पास पोतभंग (पहली शती ई.)। ये एम्फ़ोरा इतालवी हैं जिन पर फोंडी झील के निकट के उत्पादक की मुहर लगी हुई है।

मिलने के स्थानों) के बल पर पुरातत्त्वविद यह बता सके हैं कि स्पेन के जैतून के तेल के उत्पादक अपने इतालवी प्रतिद्वंद्वियों से तेल का बाज़ार छीनने में सफल हुए। ऐसा तभी संभव हुआ होगा जब स्पेन के उत्पादकों ने अपेक्षाकृत कम कीमतों पर बेहतर गुणवत्ता वाला तेल बेचा होगा। दूसरे शब्दों में, भिन्न-भिन्न प्रदेशों के ज़मींदार एवं उत्पादक अलग-अलग वस्तुओं का बाज़ार हथियाने के लिए आपस में प्रतिस्पर्धा करते रहते थे। बाद में उत्तरी अफ़्रीका के उत्पादकों ने स्पेन के जैतून के तेल के उत्पादकों जैसा महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया और तीसरी तथा चौथी शताब्दियों के अधिकांश भाग में इनका उस क्षेत्र में बोलबाला रहा। फिर 425 ईस्वी के बाद पूर्व ने उत्तरी अफ़्रीका के प्रभुत्व को तोड़ दिया: परिवर्ती पाँचवीं शताब्दी और छठी शताब्दी में एगियन, दक्षिणी एशिया-माइनर (तुर्की), सीरिया और फ़िलिस्तीनी व्यापारी अंगूरी शराब तथा जैतून-तेल के प्रमुख निर्यातक बन गए जबकि भूमध्यसागर के बाज़ारों में अफ़्रीका से आने वाले कंटेनरों में अचानक कमी हो गई। इन प्रमुख गतिविधियों के साथ-साथ अलग-अलग प्रदेशों की समृद्धि उनकी वस्तुओं की गुणवत्ता और उनके उत्पादन तथा परिवहन की क्षमता के अनुसार अधिक या कम होती गई।

क्रियाकलाप 3

मिट्टी के बर्तनों के अवशेषों पर काम करने वाले पुरातत्त्वविद बहुत-कुछ जासूसों की तरह होते हैं क्यों? स्पष्ट करो। एम्फ़ोरा हमें रोम काल के भूमध्यसागरीय क्षेत्र के आर्थिक जनजीवन के बारे में क्या बताते हैं?

साम्राज्य के अंतर्गत ऐसे बहुत से क्षेत्र आते थे जो अपनी असाधारण उर्वरता के कारण बहुत प्रसिद्ध थे; जैसे - इटली में कैम्पैनिया, सिसिली, मिस्र में फैय्यूम, गैलिली, बाइजैकियम (ट्यूनीसिया), दक्षिणी गॉल (जिसे गैलिया नार्बोनेंसिस कहते थे) तथा बाएटिका (दक्षिणी स्पेन)। स्ट्रैबो तथा प्लिनी जैसे लेखकों के अनुसार ये सभी प्रदेश साम्राज्य के घनी आबादी वाले और सबसे धनी भागों में से कुछ थे। सबसे बढ़िया किस्म की अंगूरी शराब कैम्पैनिया से आती थी। सिसिली और बाइजैकियम रोम को भारी मात्रा में गेहूँ का निर्यात करते थे। गैलिली में गहन खेती की जाती थी ("इतिहासकार जोसिफ़स ने लिखा है : प्रदेशवासियों ने ज़मीन के एक-एक इंच टुकड़े पर खेती कर रखी है") और स्पेन का जैतून का तेल स्पेन के दक्षिण में गुआडलक्विविर नदी के किनारों के साथ-साथ बसी अनेक जमींदारियों (फंडी) से आता था।

दूसरी ओर, रोम क्षेत्र के अनेक बड़े-बड़े हिस्से बहुत कम उन्नत अवस्था में थे। उदाहरणार्थ, नुमीडिया (आधुनिक अल्जीरिया) के देहाती क्षेत्रों में ऋतु-प्रवास* (Transhumance) व्यापक पैमाने पर होता था। चरवाहे तथा अर्ध-यायावर अपने साथ में अवन (oven) आकार की झोंपड़ियाँ (जिन्हें *मैपालिया* कहते थे) उठाए इधर-उधर घूमते-फिरते रहते थे। लेकिन जब उत्तरी-अफ़्रीका में रोमन जागीरों का विस्तार हुआ तो वहाँ चरागाहों की संख्या में भारी कमी आई और खानाबदोश चरवाहों की आवाजाही पहले से अधिक नियंत्रित हो गई। स्पेन में भी, उत्तरी क्षेत्र बहुत कम विकसित था और इसमें अधिकतर केल्टिक-भाषी किसानों की आबादी थी, जो पहाड़ियों की चोटियों पर बसे गाँवों में रहते थे। इन गाँवों को कैस्टेला (Castella) कहा जाता था। जब हम, रोम साम्राज्य के बारे में सोचने-समझने का प्रयास करें तो हमें इन असमानताओं को कभी नहीं भूलना चाहिए।

*ऋतु-प्रवास से तात्पर्य है ऊँचे पहाड़ी क्षेत्रों और नीचे के मैदानी इलाकों में भेड़-बकरियों तथा अन्य जानवरों को चराने के लिए चरागाहों की खोज में ग्वालों तथा चरवाहों का मौसम के अनुसार वार्षिक आवागमन।

हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि हम यह न मान बैठें कि यह एक 'प्राचीन' दुनिया थी, इसलिए उस समय के लोगों का सांस्कृतिक तथा आर्थिक जीवन आदिम या पिछड़ा हुआ था। लेकिन स्थिति इसके कुछ विपरीत थी। भूमध्यसागर के आसपास पानी की शक्ति का तरह-तरह से इस्तेमाल किया जाता था। इस काल में जल-शक्ति से मिलें चलाने की प्रौद्योगिकी में ख़ासी प्रगति हुई। स्पेन की सोने और चाँदी की खानों में जल-शक्ति से खुदाई की जाती थी और पहली तथा दूसरी शताब्दियों में बड़े भारी औद्योगिक पैमाने पर इन खानों से खनिज निकाले जाते थे। उस समय उत्पादकता का स्तर इतना ऊँचा था कि उन्नीसवीं शताब्दी तक यानी कि लगभग 1700 वर्ष बाद भी ऐसे उत्पादन के स्तर देखने को नहीं मिलते। उस समय सुगठित वाणिज्यिक और

not to be republished © NCERT

बैंकिंग-व्यवस्था थी और धन का व्यापक रूप से प्रयोग होता था। इन सभी बातों से यह संकेत मिलता है कि हममें रोम की समुन्नत अर्थव्यवस्था को कम आँकने की प्रवृत्ति कितनी अधिक है। अब दास-प्रथा और श्रम-संबंधी मुद्दों पर भी विचार कर लेना प्रासंगिक होगा।

श्रमिकों पर नियंत्रण

भूमध्यसागर और निकटवर्ती पूर्व (पश्चिमी एशिया) दोनों ही क्षेत्रों में दासता की जड़ें बहुत गहरी थीं और चौथी शताब्दी में ईसाई धर्म ने राज्य-धर्म बनने के बाद भी इस गुलामी की प्रथा को कोई गंभीर चुनौती नहीं दी। इसका अर्थ यह नहीं है कि रोम की अर्थव्यवस्था में अधिकांश श्रम, दासों द्वारा ही किया जाता था। तथापि यह बात गणतंत्रीय काल में इटली के मामले में सही हो सकती है। (जहाँ ऑगस्टस के शासनकाल में इटली की कुल 75 लाख की आबादी में 30 लाख दास थे), किन्तु समग्र साम्राज्य में ऐसी स्थिति नहीं थी। उन दिनों दासों को पूँजी-निवेश की दृष्टि से देखा जाता था। कम से कम रोम के एक लेखक ने तो ज़मींदारों को ऐसे संदर्भों में उन गुलामों का इस्तेमाल न करने की सलाह दी, जहाँ फ़सल की कटाई के लिए उनकी बहुत बड़ी संख्या में आवश्यकता हो अथवा जहाँ स्वास्थ्य को, मलेरिया जैसी बीमारियों से नुकसान पहुँच सकता हो। ऐसे विचार दासों के प्रति सहानुभूति पर नहीं बल्कि हिसाब-किताब पर आधारित थे। एक ओर जहाँ उच्च वर्ग के लोग दासों के प्रति प्रायः क्रूरतापूर्ण व्यवहार करते थे, वहीं दूसरी ओर साधारण लोग उनके प्रति कहीं अधिक सहानुभूति रख सकते थे। नीरो के शासन काल में घटी एक प्रसिद्ध घटना के बारे में देखिए एक इतिहासकार क्या कहता है (हाशिये पर बॉक्स में)।

दासों के प्रति व्यवहार

कुछ ही समय बाद शहर के शासक ल्यूसियस पेडेनियस सेकंडस का उसके एक दास ने कत्ल कर दिया। कत्ल के पश्चात, पुराने रिवाज के अनुसार यह आवश्यक था कि एक ही छत के नीचे रहने वाले प्रत्येक दास को फाँसी दे दी जाए। परन्तु बहुत से निर्दोष लोगों को बचाने के लिए भीड़ एकत्र हो गई और दंगे शुरू हो गए। सैनेट भवन को घेर लिया गया हालांकि सैनेट भवन में अत्यधिक कठोरता का विरोध किया जा रहा था। परंतु अधिकांश सदस्यों ने परिवर्तन किए जाने का विरोध किया। जो सैनेटर फाँसी देने के पक्ष में थे, उनकी बात मानी गई। परन्तु पत्थर और जलती हुई मशालें लिए भारी भीड़ ने इस आदेश को कार्यान्वित किए जाने से रोका। नीरो ने अभिलेख द्वारा इन लोगों को फटकार लगाई, उन सारे मार्गों पर सेना लगा दी गई जहाँ सैनिकों के साथ दोषियों को फाँसी पर चढ़ाने के लिए ले जाया जा रहा था।

– टैसिटस (55-117), आरंभिक साम्राज्य का इतिहासकार।

जब पहली शताब्दी में शांति स्थापित होने के साथ लड़ाई झगड़े कम हो गए तो दासों की आपूर्ति में कमी आने लगी और दास-श्रम का प्रयोग करने वालों को दास प्रजनन* (Slave Breeding) अथवा वेतनभोगी मज़दूरों जैसे विकल्पों का सहारा लेना पड़ा। वेतनभोगी मज़दूर सस्ते तो पड़ते ही थे, उन्हें आसानी से छोड़ा और रखा जा सकता था। वास्तव में, रोम में सरकारी निर्माण-कार्यों पर, स्पष्ट रूप से मुक्त श्रमिकों का व्यापक प्रयोग किया जाता था क्योंकि दास-श्रम का बहुतायत प्रयोग बहुत मँहगा पड़ता था। भाड़े के मज़दूरों के विपरीत, गुलाम श्रमिकों को वर्ष भर रखने के लिए भोजन देना पड़ता था और उनके अन्य खर्चे भी उठाने पड़ते थे, जिससे इन गुलाम श्रमिकों को रखने की लागत बढ़ जाती थी। इसीलिए संभवतः बाद की अवधि में कृषि-क्षेत्र में अधिक संख्या में गुलाम मज़दूर नहीं रहे, कम-से-कम पूर्वी प्रदेशों में तो ऐसा ही हुआ। दूसरी ओर, इन दासों और मुक्त व्यक्तियों (अर्थात ऐसे दास जिन्हें उनके मालिकों ने मुक्त कर दिया था) को व्यापार-प्रबंधकों के रूप में व्यापक रूप से नियुक्त किया जाने लगा, यहाँ स्पष्टतः उनकी अधिक संख्या में आवश्यकता नहीं थी। मालिक अक्सर अपने गुलामों अथवा मुक्त हुए गुलामों को अपनी ओर से व्यापार चलाने के लिए पूँजी यहाँ तक कि पूरा का पूरा कारोबार सौंप देते थे।

रोमन कृषि-विषयक लेखकों ने श्रम-प्रबंधन की ओर बहुत ध्यान दिया। दक्षिणी स्पेन से आए, पहली शताब्दी के लेखक, कोलूमेल्ला (Columella) ने सिफ़ारिश की थी कि ज़मींदारों को अपनी ज़रूरत से दुगुनी संख्या में उपकरणों तथा औज़ारों का सुरक्षित भंडार रखना चाहिए ताकि उत्पादन लगातार होता रहे, 'क्योंकि दास संबंधी श्रम-समय की हानि ऐसी मदों की लागत से

*दास प्रजनन गुलामों की संख्या बढ़ाने की एक ऐसी प्रथा थी जिसके अंतर्गत दासियों और उनके साथ मर्दों को अधिकाधिक बच्चे पैदा करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था; उनके बच्चे भी आगे चलकर दास ही बनते थे।

सामने के पृष्ठ पर: आरंभिक तीसरी शती ई. चर्चल, अल्जीरिया की पच्चीकारी। यहाँ कृषि के दृश्य: ऊपर- बीज बोना व हल चलाना। नीचे- अंगूर के बागानों में काम करना।

© NCERT not to be republished

अधिक बैठती है।' नियोक्ताओं की यह आम धारणा थी कि निरीक्षण यानी देखभाल के बिना कभी भी कोई काम ठीक से नहीं करवाया जा सकता। इसलिए मुक्त तथा दास, दोनों प्रकार के श्रमिकों के लिए निरीक्षण सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू था। निरीक्षण को सरल बनाने के लिए, कामगारों को कभी-कभी छोटे दलों में विभाजित कर दिया जाता था। कोलूमेल्ला ने दस-दस श्रमिकों के समूह बनाने की सिफ़ारिश की थी और यह दावा किया कि इन छोटे समूहों में यह बताना अपेक्षाकृत आसान होता है कि उनमें से कौन काम कर रहा है और कौन कामचोरी। इससे पता चलता है कि उन दिनों श्रम-प्रबंधन पर विस्तार से विचार किया जाता था। वरिष्ठ प्लिनी एक प्रसिद्ध प्रकृति विज्ञान के लेखक ने दास समूहों के प्रयोग की यह कहकर निंदा की कि यह उत्पादन आयोजित करने का सबसे खराब तरीका है क्योंकि इस प्रकार अलग-अलग समूह में काम करने वाले दासों को आमतौर पर पैरों में जंजीर डालकर एक-साथ रखा जाता था।

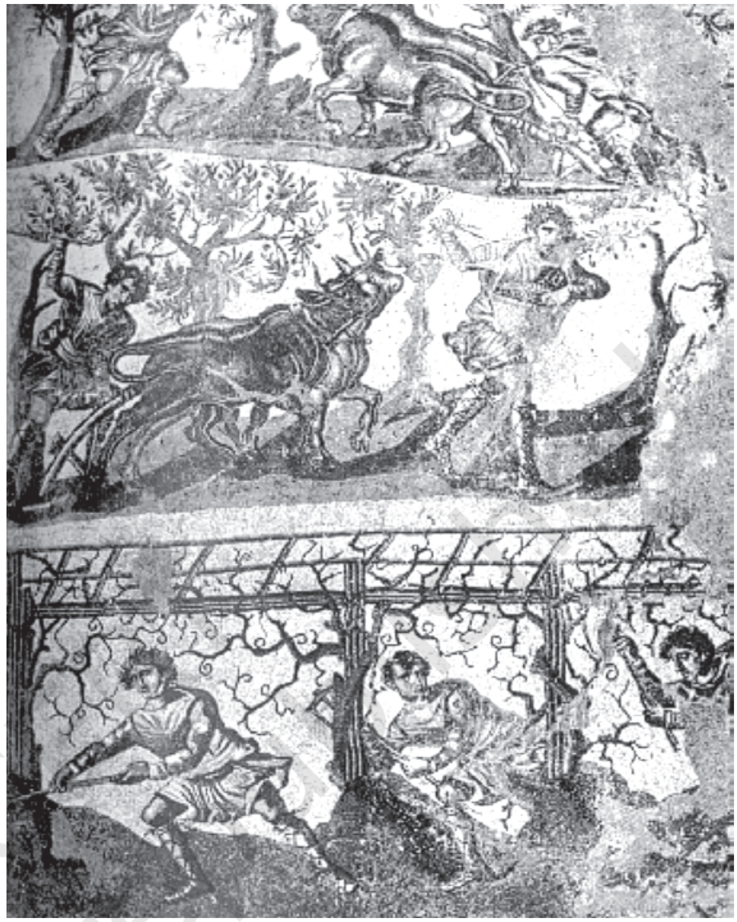

ऐसे तरीके कठोर और क्रूर प्रतीत होते हैं, लेकिन हमें यह याद रखना चाहिए कि आज विश्व में अधिकांश फैक्ट्रियाँ श्रम नियंत्रण के कुछ ऐसे ही सिद्धांत लागू करती हैं। वास्तव में, रोमन साम्राज्य में कुछ औद्योगिक प्रतिष्ठानों ने तो इससे भी अधिक कड़े नियंत्रण लागू कर रखे थे। वरिष्ठ प्लिनी ने सिकंदरिया की फ्रैंकिन्सेंस* (Frankincense) यानी सुगंधित राल (Resin) की फैक्ट्रियों के हालात का वर्णन किया है, जहाँ उनके अनुसार कितना ही कड़ा निरीक्षण रखो, पर्याप्त प्रतीत नहीं होता था: "कामगारों के ऐप्रनों पर एक सील लगा दी जाती है, उन्हें अपने सिर पर एक गहरी जाली वाला मास्क या नेट पहनना पड़ता है और उन्हें फैक्ट्री से बाहर जाने के लिए अपने सभी कपड़े उतारने पड़ते हैं।" कृषि श्रमिक अवश्य ही थके-थके से रहते होंगे और उन्हें नापसंद किया जाता होगा क्योंकि तीसरी शताब्दी के एक राज्यादेश में मिस्र के किसानों द्वारा अपने गाँव छोड़कर जाने का उल्लेख है जिसमें यह कहा गया है कि वे इसलिए गाँव छोड़कर जा रहे थे ताकि उन्हें खेती के काम में न लगना पड़े। संभवत: यही बात अधिकांश फैक्ट्रियों और कारखानों पर लागू होती थी। 398 के एक कानून में यह कहा गया है कि कामगारों को दागा जाता था ताकि यदि वे भागने और छिपने का प्रयत्न करें तो उन्हें पहचाना जा सके। कई निजी मालिक कामगारों के साथ ऋण-संविदा के रूप में करार कर लेते थे ताकि वे यह दावा कर सकें कि उनके कर्मचारी उनके कर्ज़दार हैं, और इस प्रकार वे अपने कामगारों पर कड़ा नियंत्रण रखते थे। दूसरी शताब्दी की प्रारंभिक अवधि का एक लेखक हमें बताता है: "हज़ारों श्रमिक गुलामी में काम करने के लिए आत्मसमर्पण करते हैं, *हालांकि वे मुक्त हैं।*" दूसरे शब्दों में, बहुत-से गरीब परिवारों ने तो जीवित रहने के लिए ही ऋणबद्धता स्वीकार कर ली थी। हाल ही में खोजे गए ऑगस्टीन के पत्रों में से एक पत्र से हमें यह जानकारी मिलती है कि कभी-कभी माता-पिता अपने बच्चों को 25 वर्ष के लिए बेच कर बंधुआ मज़दूर बना देते थे। ऑगस्टीन ने एक बार अपने एक वकील मित्र से पूछा कि पिता की मृत्यु हो जाने पर क्या

*फ्रैंकिन्सेंस- एक यूरोपीय नाम जो वास्तव में सुगंधित राल है। इसका प्रयोग धूप-अगरबत्ती और इत्र बनाने के लिए किया जाता था। इसे बोसवेलिया के पेड़ से प्राप्त किया जाता था। इस पेड़ के तने में बड़ा छेद कर इसके रस को बहने दिया जाता था और रस सूखने पर राल प्राप्त किया जाता था। फ्रैंकिन्सेंस की सबसे उत्कृष्ट किस्म की राल अरब प्रायद्वीप से आती थी।

इन बच्चों को आज़ाद किया जा सकता था। ग्रामीण ऋण-ग्रस्तता और भी अधिक व्यापक थी। इस कर्ज़दारी का एक उदाहरण इस घटना से मिलता है कि 66 ईस्वी के ज़बरदस्त यहूदी विद्रोह* में क्रांतिकारियों ने जनता का समर्थन प्राप्त करने के लिए साहूकारों के ऋणपत्र (बांड) नष्ट कर डाले।

*यह विद्रोह जूडेया (Judaea) में रोम शासन के विरुद्ध हुआ था जिसे रोमवासियों ने 'यहूदी-युद्ध' कही जाने वाली लड़ाई में क्रूरतापूर्वक दबा दिया था।

फिर भी, हमें इस संबंध में सही स्थिति समझने के लिए पर्याप्त सावधानी बरतनी चाहिए और सीधे इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँच जाना चाहिए कि अधिकतर श्रमिकों पर इन तरीकों से दबाव डाला जाता था। पाँचवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में सम्राट ऐनस्टैसियस ने ऊँची मज़दूरियाँ देकर और समूचे पूर्वी क्षेत्र से श्रमिकों को आकर्षित करके तीन सप्ताह से भी कम समय में पूर्वी सीमांत क्षेत्र में दारा शहर का निर्माण किया था। कुछ दस्तावेज़ों ('पैपाइरी' पैपाइरस का बहुवचन) से हम यह अनुमान भी लगा सकते हैं कि छठी शताब्दी तक भूमध्यसागरीय क्षेत्र में, विशेषकर पूर्वी भाग में, वेतनभोगी श्रमिक कितने अधिक फैल गए थे।

क्रियाकलाप 4

इस अध्याय में तीन ऐसे लेखकों का उल्लेख किया गया है जिनकी रचनाओं का प्रयोग यह बताने के लिए किया गया है कि रोम के लोग अपने कामगारों के साथ कैसा बर्ताव करते थे। क्या आप उनके नाम बता सकते हैं? उस अनुभाग को स्वयं फिर से पढ़िए और उन दो तरीकों का वर्णन कीजिए जिनकी सहायता से रोम के लोग अपने श्रमिकों पर नियंत्रण रखते थे।

सामाजिक श्रेणियाँ

आइए अब हम और अधिक ब्योरे न देकर साम्राज्य की सामाजिक संरचनाओं की जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न करें। इतिहासकार टैसिटस ने *प्रारंभिक* साम्राज्य के प्रमुख सामाजिक समूहों का वर्णन इस प्रकार किया है: सैनेटर (*पैट्रेस,* शाब्दिक अर्थ: पिता); अश्वारोही* वर्ग के प्रमुख सदस्य; जनता का सम्माननीय वर्ग, जिनका संबंध महान घरानों से था; फूहड़ निम्नतर वर्ग यानी कमीनकारू (प्लेबूस सोर्डिडा), जो उनके अनुसार, सर्कस और थिएटर तमाशे देखने के आदी थे; और अंततः दास। तीसरी शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में सैनेट की सदस्य संख्या लगभग 1,000 थी और कुल सैनेटरों में लगभग आधे सैनेटर अभी भी इतालवी परिवारों के थे। साम्राज्य के *परवर्ती* काल में, जो चौथी शताब्दी के प्रारंभिक भाग में कॉन्स्टैनटाइन प्रथम के शासन काल से आरंभ हुआ, टैसिटस द्वारा उल्लिखित पहले दो समूह (सैनेटर और नाइट या अश्वारोही**) एकीकृत होकर एक विस्तृत अभिजात वर्ग (Aristocracy) बन चुके थे। और इनके कुल परिवारों में से कम से कम आधे परिवार अफ़्रीकी अथवा पूर्वी मूल के थे। यह "परवर्ती रोमन" अभिजात वर्ग अत्यधिक धनवान था किन्तु कई तरीकों से यह विशुद्ध सैनिक संभ्रांत वर्ग से कम शक्तिशाली था, जिनकी पृष्ठभूमि अधिकतर अभिजात वर्गीय नहीं थीं। 'मध्यम' वर्गों में अब नौकरशाही और सेना की सेवा से जुड़े आम लोग शामिल थे, किन्तु इसमें अपेक्षाकृत अधिक समृद्ध सौदागर और किसान भी शामिल थे जिनमें बहुत-से लोग पूर्वी प्रांतों के निवासी थे। टैसिटस ने इस सम्माननीय मध्यम वर्ग का महान सीनेट गृहों के आश्रितों (clients) के रूप में वर्णन किया है। मुख्य रूप से सरकारी सेवा और राज्य पर निर्भरता ही इन मध्यम वर्गीय परिवारों का भरण-पोषण करती थी। उनसे नीचे भारी संख्या में निम्नतर वर्गों का एक विशाल समूह था, जिन्हें सामूहिक रूप से *ह्यूमिलिओरिस* यानी "निम्नतर वर्ग" कहा जाता था। इनमें ग्रामीण श्रमिक शामिल थे जिनमें बहुत से लोग स्थायी रूप से बड़ी जागीर में नियोजित थे; औद्योगिक और खनन प्रतिष्ठानों के कामगार; प्रवासी कामगार जो अनाज तथा जैतून की फ़सल कटाई और निर्माण उद्योग के लिए अधिकांश श्रम की पूर्ति करते थे; स्व-नियोजित शिल्पकार जो, ऐसा बताया जाता था, कि मज़दूरी पाने वाले श्रमिकों की तुलना में बेहतर खाते-पीते थे; बहुत बड़ी संख्या में कभी-कभी काम करने वाले श्रमिक, विशेषकर बड़े शहरों में, और वस्तुतः हज़ारों गुलाम जो विशेष रूप से पूरे पश्चिमी साम्राज्य में पाए जाते थे।

**अश्वारोही (इक्वाइट्स) या नाइट वर्ग परंपरागत रूप से दूसरा सबसे अधिक शक्तिशाली और धनवान समूह था। मूल रूप से वे ऐसे परिवार थे जिनकी संपत्ति उन्हें घुड़सेना में भर्ती होने की औपचारिक योग्यता प्रदान करती थी; इसीलिए इन्हें इक्वाइट्स कहा जाता था। सैनेटरों की तरह अधिकतर नाइट ज़मींदार होते थे लेकिन सैनेटरों के विपरीत उनमें से कई लोग जहाज़ों के मालिक, व्यापारी और साहूकार (बैंकर) भी होते थे, यानी वे व्यापारिक क्रियाकलापों में संलग्न रहते थे।

पाँचवीं शताब्दी के प्रारंभिक काल के एक इतिहासकार ओलिंपिओडोरस (Olympiodorus) ने, जो एक राजदूत भी था, लिखा है कि रोम नगर में रहने वाले कुलीन परिवारों को उनकी संपदाओं से वार्षिक आय 4000 पाउंड सोने के बराबर होती थी; इसमें वह उपज शामिल नहीं थी जिसका उपभोग वे सीधे कर लेते थे!

परवर्ती साम्राज्य में प्रथम तीन शताब्दियों से प्रचलित चाँदी-आधारित मौद्रिक प्रणाली समाप्त हो गई क्योंकि स्पेन को खानों से चाँदी मिलनी बंद हो गयी थी और सरकार के पास चाँदी की मुद्रा के प्रचलन के लिए पर्याप्त चाँदी नहीं रह गई थी। कांस्टैनटाइन ने सोने पर आधारित नयी मौद्रिक-प्रणाली स्थापित की और परवर्ती समूचे पुराकाल में इन मुद्राओं का भारी मात्रा में प्रचलन रहा।

रोम साम्राज्य के परवर्ती काल में, वहाँ की नौकरशाही के उच्च तथा मध्य वर्ग अपेक्षाकृत बहुत धनी थे क्योंकि उन्हें अपना वेतन सोने के रूप में मिलता था और वे अपनी आमदनी का बहुत बड़ा हिस्सा ज़मीन जैसी परिसंपत्तियाँ खरीदने में लगाते थे। इसके अतिरिक्त साम्राज्य में भ्रष्टाचार बहुत फैला हुआ था, विशेष रूप से न्याय-प्रणाली और सैन्य आपूर्तियों के प्रशासन में। उच्च अधिकारी और गवर्नर लूट-खसोट और लालच के लिए कुख्यात हो गए। लेकिन सरकार ने इस प्रकार के भ्रष्टाचारों को रोकने के लिए बारम्बार हस्तक्षेप किया। इस संबंध में हमें पता ही इसलिए चलता है कि सरकार द्वारा अनेक कानून बनाए गए; साथ ही इतिहासविदों तथा अन्य बुद्धिजीवियों ने ऐसे भ्रष्ट कारनामों की खुलकर निंदा की। आलोचना का यह तत्व अभिजात्य एवं श्रेण्य जगत की एक उल्लेखनीय विशेषता है। रोमन राज्य तानाशाही पर आधारित था। वहाँ असहमति या आलोचना को कभी-कभार ही बर्दाश्त किया जाता था। आमतौर पर सरकार विरोध का उत्तर, हिंसात्मक कार्रवाई से देती थी (विशेष रूप से पूर्वी भाग के शहरों में जहाँ लोग अक्सर निडर होकर सम्राटों का मज़ाक उड़ाया करते थे।) तथापि चौथी शताब्दी तक आते-आते रोमन कानून की एक प्रबल परंपरा का उद्भव हो चुका था और उसने सर्वाधिक भयंकर सम्राटों पर भी अंकुश लगाने का काम किया था। सम्राट लोग अपनी मनमानी नहीं कर सकते थे और नागरिक अधिकारों की रक्षा के लिए कानून का सक्रिय रूप से प्रयोग किया जाता था। इसीलिए चौथी शताब्दी के अंतिम दशकों में ऐम्ब्रोस जैसे शक्तिशाली बिशपों के लिए यह संभव हो पाया कि यदि सम्राट आम जनता के प्रति अत्यधिक कठोर या दमनकारी हो जाएँ तो ये बिशप भी उतनी ही अधिक शक्ति से उनका मुकाबला करें।

रोमन अभिजात वर्ग की आमदनियाँ पाँचवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में

रोम के ऊँचे घरानों में से प्रत्येक के पास अपने आप में वह सब कुछ मौजूद था जो एक मध्यम आकार के शहर में हो सकता है। एक घुड़दौड़ का मैदान (हिप्पोड्रोम), अनेक मंच-मंदिर, फव्वारे और विभिन्न प्रकार के स्नानागार... बहुत से रोमन परिवारों को अपनी संपत्ति से प्रतिवर्ष 4,000 पाउंड सोने की आय प्राप्त होती थी, जिसमें अनाज, शराब और अन्य उपज शामिल नहीं थीं; इन उपजों को बेचने पर सोने में प्राप्त आय के एक-तिहाई के बराबर आमदनी हो सकती थी। रोम में द्वितीय श्रेणी के परिवारों की आय 1000 अथवा 1500 पाउंड सोना थी।

– थेब्स का ओलिंपिओडोरस

परवर्ती पुराकाल

इस अध्याय के अंत में हम रोमन साम्राज्य की अंतिम शताब्दियों में उसके सांस्कृतिक परिवर्तनों पर दृष्टिपात करेंगे। 'परवर्ती पुराकाल' शब्द का प्रयोग रोम साम्राज्य के उद्भव, विकास और पतन के इतिहास की उस अंतिम दिलचस्प अवधि का वर्णन करने के लिए किया जाता है जो मोटे तौर पर चौथी से सातवीं शताब्दी तक फैली हुई थी। यहाँ तक कि चौथी शताब्दी स्वयं भी अनेक सांस्कृतिक और आर्थिक हलचलों से परिपूर्ण थी। सांस्कृतिक स्तर पर, इस अवधि में लोगों के धार्मिक जीवन में अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए, जिनमें से एक था सम्राट कॉन्स्टैनटाइन द्वारा ईसाई धर्म को राजधर्म बना लेने का निर्णय, और दूसरा था सातवीं शताब्दी में इस्लाम का उदय। लेकिन राज्य के ढाँचे में भी उतने ही महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। ये परिवर्तन सम्राट डायोक्लीशियन (284-305) के समय से प्रारंभ हुए।

सम्राट डायोक्लीशियन ने देखा कि साम्राज्य का विस्तार बहुत ज्यादा हो चुका है और उसके अनेक प्रदेशों का सामरिक या आर्थिक दृष्टि से कोई महत्त्व नहीं है इसलिए उसने उन हिस्सों को छोड़कर साम्राज्य को थोड़ा छोटा बना लिया। उसने साम्राज्य की सीमाओं पर क़िले बनवाए, प्रांतों का पुनर्गठन किया और असैनिक कार्यों को सैनिक कार्यों से अलग कर दिया; साथ ही उसने सेनापतियों (Duces) को अधिक स्वायत्तता प्रदान कर दी, जिससे ये सैन्य अधिकारी अधिक शक्तिशाली समूह के रूप में उभर आए।

© NCERT not to be republished

सम्राट कॉन्स्टैनटाइन, 313 ई. की एक विशाल मूर्ति का हिस्सा।

कॉन्स्टैनटाइन ने इनमें से कुछ परिवर्तनों को पुख़्ता बनाया और अपनी ओर से भी कुछ परिवर्तन किए। उसके द्वारा मुख्य रूप से मौद्रिक क्षेत्र में कुछ नए परिवर्तन किए गए। उसने *सॉलिडस* (Solidus) नाम का एक नया सिक्का चलाया जो 4.5 ग्राम शुद्ध सोने का बना हुआ था। यह सिक्का रोम साम्राज्य समाप्त होने के बाद भी चलता रहा। ये सॉलिडस सिक्के बहुत बड़े पैमाने पर ढाले जाते थे और लाखों-करोड़ों की संख्या में चलन में थे। कॉन्स्टैनटाइन का एक अन्य नवाचार था एक दूसरी राजधानी कुंस्तुनतुनिया (Constantinople) का निर्माण (जहाँ तुर्की में आजकल इस्तांबुल नगर बसा हुआ है पहले इसे बाइज़ेंटाइन कहा जाता था)। यह नयी राजधानी तीन ओर समुद्र से घिरी हुई थी। चूंकि नयी राजधानी के लिए नयी सैनेट की जरूरत थी इसलिए चौथी शताब्दी में शासक वर्गों का बड़ी तेज़ी से विस्तार हुआ। मौद्रिक स्थायित्व और बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण आर्थिक विकास में तेज़ी आई। पुरातत्त्वीय अभिलेखों से पता चलता है कि औद्योगिक प्रतिष्ठानों सहित ग्रामीण उद्योग-धंधों में व्यापार के विकास में पर्याप्त मात्रा में पूँजी लगाई गई। इनमें तेल की मिलें और शीशे के कारखाने, पेंच की प्रेसें तथा तरह-तरह की पानी की मिलें जैसी नयी प्रौद्योगिकियाँ महत्वपूर्ण हैं। धन का अच्छा खासा निवेश पूर्व के देशों के साथ लम्बी दूरी के व्यापार में किया गया जिससे ऐसे व्यापार का पुनरुस्थान हुआ।

इन सभी के फलस्वरूप शहरी संपदा एवं समृद्धि में अत्यधिक वृद्धि हुई, जिससे स्थापत्य कला के नए-नए रूप विकसित हुए और भोग-विलास के साधनों में भरपूर तेज़ी आई। शासन करने वाले कुलीन पहले से कहीं अधिक धन-संपन्न और शक्तिशाली हो गए। मिस्र में परवर्ती शताब्दियों के पैपाइरस पौधे के पत्तों पर लिखे हुए सैकड़ों दस्तावेज़ मिले हैं, जिनसे यह पता चलता है कि तत्कालीन समाज अपेक्षाकृत अधिक खुशहाल था, जहाँ मुद्रा का व्यापक रूप से इस्तेमाल होता था और ग्रामीण संपदाएँ भारी मात्रा में सोने के रूप में लाभ कमाती थीं। उदाहरण के लिए, छठी शताब्दी के दौरान जस्टीनियन के शासनकाल में अकेला मिस्र प्रतिवर्ष 25 लाख सॉलिडस (लगभग 35,000 पाउंड सोना) से अधिक धनराशि करों के रूप में देता था। निस्संदेह, पश्चिमी एशिया के बड़े-बड़े ग्रामीण इलाके पाँचवीं और छठी शताब्दियों में (आज बीसवीं शताब्दी की तुलना में भी) अधिक विकसित और घने बसे हुए थे! इसी सामाजिक पृष्ठभूमि के आधार पर इस अवधि में आगे चलकर अनेक सांस्कृतिक परिवर्तन हुए।

यूनान और रोमवासियों की पारंपरिक धार्मिक संस्कृति बहुदेववादी थी। ये लोग अनेक पंथों एवं उपासना पद्धतियों में विश्वास रखते थे और जूपिटर, जूनो, मिनर्वा और मॉर्स जैसे अनेक रोमन इतालवी देवों और यूनानी तथा पूर्वी देवी-देवताओं की पूजा किया करते थे, जिसके लिए उन्होंने साम्राज्य भर में हज़ारों मंदिर, मठ और देवालय बना रखे थे। ये बहुदेववादी स्वयं को किसी एक नाम से नहीं पुकारते थे। रोमन साम्राज्य का एक अन्य बड़ा धर्म यहूदी धर्म (Judaism) था। लेकिन यहूदी धर्म भी 'एकाश्म*' (Monolith) यानी विविधताहीन नहीं था, अर्थात् परवर्ती पुराकाल के यहूदी धर्म में अनेक विविधताएँ मौजूद थीं। अतः चौथी या पाँचवीं शताब्दियों में साम्राज्य का 'ईसाईकरण'** एक क्रमिक एवं जटिल प्रक्रिया के रूप में हुआ। बहुदेववाद (Polytheism) विशेष रूप से पश्चिमी प्रांतों में आसानी से तुरंत गायब नहीं हुआ, हालांकि ईसाई

*एकाश्म- इसका तात्पर्य एक बड़ी चट्टान का टुकड़ा होता है, परंतु इसका प्रयोग यहाँ पर मानव इकाइयों के लिए किया गया है। जब हम कहते हैं कि समाज अथवा संस्कृति एकाश्म है तो उसका अर्थ है कि उसमें विविधता की कमी है और उनमें आंतरिक एकरूपता है।

**ईसाईकरण उस प्रक्रिया को कहते हैं जिसके द्वारा ईसाई धर्म भिन्न-भिन्न जन-समूहों के बीच फैलाया गया और वहाँ का प्रमुख धर्म बना दिया गया।

धर्मप्रचारक वहाँ प्रचलित बहुदेववादी मत-मतांतरों तथा धार्मिक रीति-रिवाज़ों का लगातार विरोध करते रहे और ईसाई जनसाधारण की तुलना में बहुदेववाद की निंदा करते रहे। चौथी शताब्दी में भिन्न-भिन्न धार्मिक समुदायों के बीच की *सीमाएँ* इतनी कठोर एवं गहरी नहीं थीं जितनी कि आगे चलकर हो गईं, ऐसा शक्तिशाली बिशपों की कोशिशों के कारण हुआ, जिन्होंने अपने अनुयायियों को कड़ाई से धार्मिक विश्वासों तथा रीति-रिवाजों का पालन करने का पाठ पढ़ाया।

जनता में आम खुशहाली, खासतौर पर, पूर्वी भागों में अधिक फैली जहाँ आबादी छठी सदी के मुख्य भाग तक बढ़ती रही थी, हालांकि वहाँ प्लेग की महामारी का प्रकोप हो चुका था जिसके कारण 540 के दशक में लगभग संपूर्ण भूमध्यसागरीय प्रदेश प्रभावित हो गया था। इसके विपरीत, पश्चिम में साम्राज्य राजनीतिक दृष्टि से विखंडित हो गया क्योंकि उत्तर से आने वाले जर्मन मूल के समूहों (गोथ, वैंडल, लोंबार्ड आदि) ने सभी बड़े प्रांतों को अपने कब्ज़े में ले लिया था और अपने-अपने राज्य स्थापित कर लिए थे जिन्हें 'रोमोत्तर' (Post-Roman) राज्य कहा जा सकता है। इनमें से सबसे महत्त्वपूर्ण राज्य थे : स्पेन में विसिगोथों (Visigoths) का राज्य (जिसे अरबों ने 711 से 720 के बीच नष्ट कर दिया); गॉल में फ्रैंकों का राज्य (लगभग 511-687) और इटली में लोंबार्डों का राज्य (568-774)। ये राज्य एक भिन्न किस्म की दुनिया की शुरुआत के पूर्व संकेत थे जिस दुनिया को आमतौर पर मध्यकालीन (Medieval) कहा जाता है। पूर्वी भाग में, जहाँ साम्राज्य संयुक्त बना रहा, जस्टीनियन का शासनकाल समृद्धि और शाही महत्त्वाकांक्षा के उच्च स्तर का द्योतक था। जस्टीनियन ने (533 में) अफ़्रीका को वैंडलों (Vandals) के कब्ज़े से छुड़ा लिया और इटली को ऑस्ट्रोगोथों से लेकर वापस उस पर अधिकार कर लिया। इससे देश तहस-नहस हो गया और लौंबार्ड (Lombard) के आक्रमण के लिए रास्ता तैयार हो गया। सातवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों तक आते-आते रोम और ईरान के बीच लड़ाई फिर छिड़ गई। ससानी शासकों (जो तीसरी शताब्दी से ईरान पर शासन कर रहे थे) ने मिस्र सहित सभी विशाल पूर्वी

79 ई. में बना कोलोसियम जहाँ तलवारिये (तलवार चलाने में निपुण योद्धा) जंगली जानवरों का मुकाबला करते थे। यहाँ एक साथ 60,000 दर्शक बैठ सकते थे।

प्रांतों में बड़े पैमाने पर आक्रमण कर दिया। बाइज़ेंटियम (अब रोम साम्राज्य को ज़्यादातर इसी नाम से जाना जाता था) ने 620 के दशक में इन प्रांतों पर फिर से अपना कब्ज़ा कर लिया, लेकिन उसके कुछ ही वर्ष बाद उसे दक्षिण-पूर्व की ओर से एक बहुत ज़ोरदार अंतिम धक्का लगा जिसे वह सहन नहीं कर सका।

अरब प्रदेश से शुरू होने वाले इस्लाम के विस्तार को 'प्राचीन विश्व इतिहास की सबसे बड़ी राजनीतिक क्रांति' कहा जाता है। 642 तक, जब पैगम्बर मुहम्मद की मृत्यु को मुश्किल से 10 साल हुए थे, पूर्वी रोमन और ससानी दोनों राज्यों के बड़े-बड़े भाग भीषण युद्ध के बाद अरबों के कब्ज़े में आ गए। किंतु, हमें यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि उभरते हुए इस्लामी राज्य की जीतें, जो एक शताब्दी बाद अंततः स्पेन, सिंध और मध्य एशिया तक फैल गईं, अरब जनजातियों को ही पराजित करने से हुईं। अरब से शुरू होकर ये जीतें सीरियाई रेगिस्तान तथा इराक की सरहदों तक पहुँचीं, जिसके पश्चात् मुस्लिम सेनाएँ और दूर-दूर तक गईं। जैसाकि हम अगले विषय चार में देखेंगे, अरब प्रायद्वीप और वहाँ रहने वाली अनेक जनजातियों के एकीकरण के कारण ही इस्लाम धर्म का क्षेत्रीय विस्तार हुआ।

मानचित्र 2: पश्चिम एशिया।

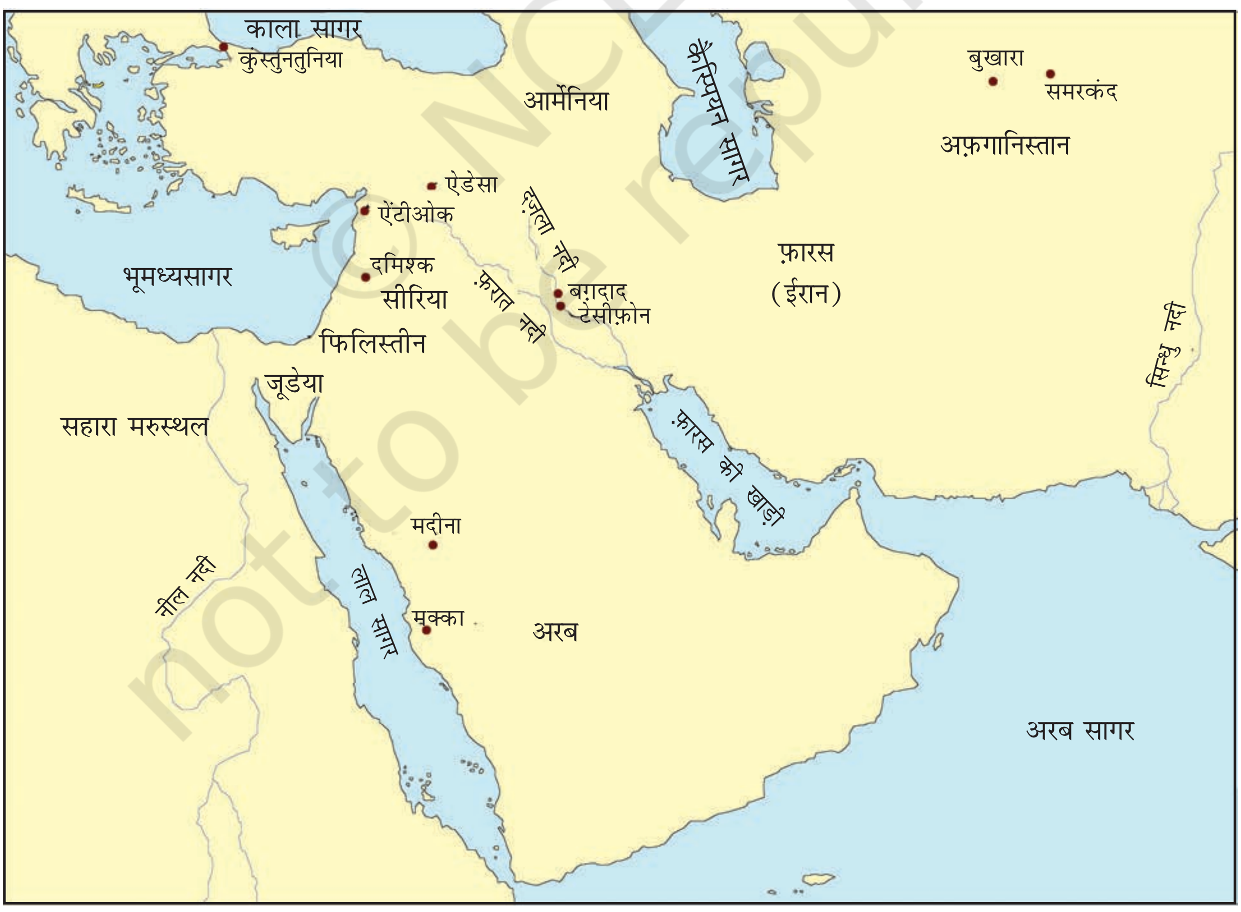

© NCERT not to be republished

शासक

27 ई.पू.–14 ईस्वी
ऑगस्टस, प्रथम रोम सम्राट

14-37
टिबेरियस

98-117
त्राजान

117-38
हैड्रियन

193-211
सेप्टिमियस सेवेरस

241-72
ईरान में शापुर प्रथम का शासन

253-68
गैलीनस

284-305
टेट्रार्की (चतुस्तंत्र)
डायोक्लीशियन
मुख्य शासक

312-37
कॉन्स्टैनटाइन

309-79 ईरान में शापुर द्वितीय का शासन

408-50
थियोडोसियस द्वितीय (प्रसिद्ध 'थियोडोसियस कोड' का संकलन कर्ता)

490-518
अनैस्टैसियस

527-65
जस्टीनियन

531-79 ईरान में खुसरो प्रथम का शासन

610-41
हेराक्लियस

घटनाएँ	
27 ई.पू.	ऑक्टेवियन द्वारा स्थापित 'प्रिंसिपेट', वह अब अपने आपको ऑगस्टस कहने लगा था
लगभग 24-79	वरिष्ठ प्लिनी का जीवन; विसूवियस नामक ज्वालामुखी के फटने से उसकी मृत्यु; विसूवियस ने रोमन नगर पोम्पेई को भी अपने लावे में दफ़न कर लिया था
66-70	विशाल यहूदी विद्रोह और रोमन सेनाओं का जेरूसलम पर कब्ज़ा
लगभग 115	त्राजान की पूर्व में विजयों के बाद, रोमन साम्राज्य का अधिकतम विस्तार
212	साम्राज्य के सभी मुक्त निवासियों को रोमन नागरिक का दर्ज़ा दे दिया गया
224	ईरान में नया वंश स्थापित, जिसे उनके पूर्वज ससान के नाम पर ससानी कहा गया
250 का दशक	फ़ारसवासियों ने फ़रात के पश्चिम में स्थित रोमन प्रदेशों पर आक्रमण किया
258	कार्थेज़ के साइप्रसवासी बिशप को मृत्युदंड
260 का दशक	गैलीनस ने फिर से सेना संगठित की
273	पामाएरा का कारवाँ नगर रोमवासियों द्वारा नष्ट किया गया
297	डायोक्लीशियन ने 100 प्रांतों में साम्राज्य का पुनर्गठन किया
लगभग 310	कॉन्स्टैनटाइन ने सोने का नया सिक्का (सॉलिडस) चलाया
312	कॉन्स्टैनटाइन ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया
324	कॉन्स्टैनटाइन अब साम्राज्य का एकमात्र शासक बन गया। उसने कुंस्तुनतुनिया नगर की स्थापना की
354-430	हिप्पो के बिशप ऑगस्टीन का जीवन-काल
378	गोथ लोगों ने ऐड्रियॅनोपल में रोमन सेनाओं को करारी मात दी
391	सिकंदरिया में सेरपियम (सेरापिस के मंदिर) नष्ट किए गए
410	विसिगोथों ने रोम का विध्वंस कर दिया
428	वैंडल लोगों ने अफ़्रीका के प्रदेश पर कब्ज़ा कर लिया
434-53	अट्टिला नामक हूण का साम्राज्य
493	ऑस्ट्रोगोथों ने इटली में राज्य स्थापित किया
533-50	जस्टीनियन द्वारा अफ़्रीका और इटली को मुक्त करा लेना
541-70	ब्यूबोनिक प्लेग का प्रकोप
568	लौंबार्ड लोगों ने इटली पर आक्रमण किया
लगभग 570	पैगम्बर मुहम्मद का जन्म
614-19	फ़ारस के शासक खुसरो द्वितीय ने पूर्वी रोम प्रदेशों पर आक्रमण करके उन पर कब्ज़ा कर लिया
622	पैगम्बर मुहम्मद और उनके साथी मक्का छोड़कर मदीना चले गए
633-42	अरब विजयों का पहला और महत्त्वपूर्ण चरण; मुस्लिम सेनाओं ने सीरिया, फिलिस्तीन, मिस्र, इराक और ईरान के कुछ हिस्सों पर कब्ज़ा कर लिया
661-750	सीरिया में उमय्या वंश
698	अरबों ने कार्थेज़ को जीत लिया
711	स्पेन पर अरबों का आक्रमण

© NCERT not to be republished

रैवेना की पच्चीकारी (547 ई.), इसमें सम्राट जस्टीनियम को दिखया गया है।

अभ्यास

संक्षेप में उत्तर दीजिए

1. यदि आप रोम साम्राज्य में रहे होते तो कहाँ रहना पसंद करते – नगरों में या ग्रामीण क्षेत्र में? कारण बताइये।
2. इस अध्याय में उल्लिखित कुछ छोटे शहरों, बड़े नगरों, समुद्रों और प्रांतों की सूची बनाइये और उन्हें नक्शों पर खोजने की कोशिश कीजिए। क्या आप अपने द्वारा बनाई गई सूची में संकलित किन्हीं तीन विषयों के बारे में कुछ कह सकते हैं?
3. कल्पना कीजिए कि आप रोम की एक गृहिणी हैं जो घर की ज़रूरत की वस्तुओं की खरीदारी की सूची बना रही हैं। अपनी सूची में आप कौन सी वस्तुएँ शामिल करेंगी?
4. आपको क्या लगता है कि रोमन सरकार ने चाँदी में मुद्रा को ढालना क्यों बंद किया होगा और वह सिक्कों के उत्पादन के लिए कौन-सी धातु का उपयोग करने लगे?

संक्षेप में निबंध लिखिए

5. अगर सम्राट त्राजान भारत पर विजय प्राप्त करने में वास्तव में सफल रहे होते और रोमवासियों का इस देश पर अनेक सदियों तक कब्ज़ा रहा होता, तो क्या आप सोचते हैं कि भारत वर्तमान समय के देश से किस प्रकार भिन्न होता?
6. अध्याय को ध्यानपूर्वक पढ़कर उसमें से रोमन समाज और अर्थव्यवस्था को आपकी दृष्टि में आधुनिक दर्शाने वाले आधारभूत अभिलक्षण चुनिए।

© NCERT not to be republished

विषय

4

इस्लाम का उदय और विस्तार– लगभग 570–1200 ई.

11091CH04

आज जबकि हम इक्कीसवीं शताब्दी में प्रवेश कर चुके हैं, संसार के समस्त भागों में रहने वाले मुसलमानों की संख्या एक अरब से अधिक है। वे भिन्न-भिन्न राष्ट्रों के नागरिक हैं, अलग-अलग भाषाएँ बोलते हैं, और उनका पहनावा भी अलग-अलग किस्म का है। वे जिन तरीकों से मुसलमान बने वे भी भिन्न-भिन्न प्रकार के थे, और वे परिस्थितियाँ भी भिन्न-भिन्न थीं, जिनके कारण वे अपने-अपने रास्तों पर चले गए। फिर भी, मुस्लिम समाजों की जड़ें एक अधिक एकीकृत अतीत में समाहित हैं, जिसका प्रारंभ लगभग 1400 वर्ष पहले अरब प्रायद्वीप में हुआ था। हम इस अध्याय में इस्लाम के उदय और मिस्र से अफ़गानिस्तान तक के विशाल क्षेत्र में, उसके विस्तार के बारे में पढ़ने जा रहे हैं। 600 से 1200 तक की अवधि में यह इलाका इस्लामी सभ्यता का मूल क्षेत्र था। इन शताब्दियों में, इस्लामी समाज में अनेक प्रकार के राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रतिरूप दिखते हैं। इस्लामी शब्द का प्रयोग यहाँ केवल उसके धार्मिक अर्थों में नहीं, बल्कि उस समूचे समाज और संस्कृति के लिए भी किया गया है, जो ऐतिहासिक दृष्टि से इस्लाम से संबद्ध रही है। इस समाज में जो कुछ भी घटित हो रहा था उसका उद्‌भव सीधे धर्म से नहीं हुआ था, बल्कि इसका उद्‌भव एक ऐसे समाज में हुआ था, जिसमें मुसलमानों को और उनके धर्म को सामाजिक रूप से प्रमुखता प्राप्त थी। ग़ैर-मुसलमान भले ही कुछ गौण सही लेकिन हमेशा इस समाज के अभिन्न भाग रहे, जैसे कि ईसाई प्रदेशों में यहूदी थे।

ऊपर दिए गए इस्लामी क्षेत्रों के सन् 600 से 1200 तक के इतिहास के बारे में हमारी समझ इतिवृत्तों अथवा *तवारीख़* पर (जिसमें घटनाओं का वृत्तांत कालक्रम के अनुसार दिया जाता है) और अर्ध-ऐतिहासिक कृतियों पर आधारित है, जैसे जीवन-चरित *(सिरा)*, पैगम्बर के कथनों और कृत्यों के अभिलेख *(हदीथ)* और क़ुरान के बारे में टीकाएँ *(तफ़सीर)*। इन कृतियों का निर्माण जिस सामग्री से किया गया था, वह प्रत्यक्षदर्शी वृत्तांतों *(अख़बार)* का बहुत बड़ा संग्रह था, ये वृत्तांत विशेष कालावधि में मौखिक रूप से बताकर अथवा कागज़ पर लिखित रूप में लोगों तक पहुँचे। ऐसी प्रत्येक सूचना *(ख़बर)* की प्रामाणिकता की जाँच एक आलोचनात्मक तरीके से की जाती थी, जिसमें सूचना भेजने *(इस्नाद)* की शृंखला का पता लगाया जाता था और वर्णनकर्ता की विश्वसनीयता स्थापित की जाती थी। यद्यपि यह तरीका नितांत दोषरहित नहीं था, लेकिन मध्यकालीन मुस्लिम लेखक सूचना का चयन करने और अपने सूचनादाताओं के अभिप्राय को समझने के मामले में विश्व के अन्य भागों के अपने समकालीन लोगों की अपेक्षा अधिक सतर्क थे। विवादास्पद मुद्दों के मामले में, उन्होंने अपने स्रोतों से ज्ञात एक ही घटना के विभिन्न रूपांतरण प्रस्तुत किए, और उन्हें परखने का कार्य अपने पाठकों के लिए छोड़ दिया। उनके अपने समय के आस-पास की घटनाओं के बारे में उनका वर्णन अधिक सुनियोजित और विश्लेषणात्मक है और उसे अख़बारों का संग्रह-मात्र ही नहीं कहा जा सकता। अधिकतर ऐतिहासिक और अर्ध-ऐतिहासिक रचनाएँ अरबी भाषा में हैं। इनमें सर्वोत्तम कृति तबरी (Tabari) (923 में निधन) की *तारीख़* है, जिसका 38 खंडों में अंग्रेज़ी में अनुवाद किया गया है। फ़ारसी

© NCERT not to be republished

में इतिवृत्त संख्या की दृष्टि से बहुत कम हैं, लेकिन उनमें ईरान और मध्य एशिया के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई है। सीरियाक (अरामेइक* की एक बोली) में लिखे ईसाई वृत्तांत ग्रंथ और भी कम हैं, लेकिन उनसे प्रारंभिक इस्लाम के इतिहास पर महत्त्वपूर्ण रोशनी पड़ती है। इतिवृत्तों के अलावा, हमें कानूनी पुस्तकें, भूगोल, यात्रा-वृत्तांत और साहित्यिक रचनाएँ जैसे कहानियाँ और कविताएँ प्राप्त होती हैं।

*अरामेइक, हिब्रू और अरबी से संबंधित भाषा है। अशोक के अभिलेखों में भी इसका प्रयोग किया गया है।

दस्तावेज़ी साक्ष्य (लेखों के खंडित अंश, जैसे सरकारी आदेश अथवा निजी पत्राचार) इतिहास-लेखन के लिए सर्वाधिक बहुमूल्य हैं, क्योंकि इनमें पूर्व चिंतन कर घटनाओं और व्यक्तियों का उल्लेख नहीं होता। लगभग समूचा साक्ष्य यूनानी और अरबी पैपाइरस (जो प्रशासनिक इतिहास के लिए बढ़िया है) और गेनिज़ा अभिलेखों से प्राप्त होता है। कुछ साक्ष्य पुरातत्वीय (उजड़े महलों में की गई खुदाई), मुद्राशास्त्रीय (सिक्कों का अध्ययन) और पुरालेखीय (शिलालेखों का अध्ययन) स्रोतों से उभर कर सामने आते हैं। ये आर्थिक इतिहास, कला इतिहास, नामों और तारीखों के प्रमाणीकरण के लिए बहुमूल्य हैं।

सही मायने में इस्लाम के इतिहास ग्रंथ लिखे जाने का कार्य उन्नीसवीं शताब्दी में जर्मनी और नीदरलैंड के विश्वविद्यालयों के प्रोफ़ेसरों द्वारा शुरू किया गया। मध्य पूर्व और उत्तरी अफ़्रीका में औपनिवेशिक हितों से फ्रांसीसी और ब्रिटिश शोधकर्ताओं को भी इस्लाम का अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहन मिला। ईसाई पादरियों ने इस्लाम के इतिहास की ओर बारीकी से ध्यान दिया और कुछ अच्छी पुस्तकें लिखीं, हालाँकि उनकी दिलचस्पी मुख्यतः इस्लाम की तुलना ईसाई धर्म से करने में रही। ये विद्वान, जिन्हें प्राच्यविद् कहा जाता है, अरबी और फ़ारसी के ज्ञान के लिए और मूल ग्रंथों के आलोचनात्मक विश्लेषण के लिए प्रसिद्ध हैं। इग्नाज़ गोल्डज़िहर (Ignaz Goldziher) हंगरी के एक यहूदी थे, जिन्होंने काहिरा के इस्लामी कॉलेज (अल-अज़हर) में अध्ययन किया और जर्मन भाषा में इस्लामी कानून और धर्मविज्ञान के बारे में नयी राह दिखाने वाली पुस्तकें लिखीं। इस्लाम के बीसवीं शताब्दी के इतिहासकारों ने अधिकतर प्राच्यविदों की रुचियों और उनके तरीकों का ही अनुसरण किया है। उन्होंने नए विषयों को शामिल करके इस्लाम के इतिहास के दायरे का विस्तार किया है, और अर्थशास्त्र, मानव-विज्ञान और सांख्यिकी जैसे संबद्ध विषयों का इस्तेमाल करके प्राच्य अध्ययन के बहुत-से पहलुओं का परिष्करण किया है। इस्लाम का इतिहास-लेखन इस बात का एक अच्छा उदाहरण है कि इतिहास के आधुनिक तरीकों का इस्तेमाल करके धर्म का अध्ययन किस प्रकार किया जा सकता है, ऐसे लोगों द्वारा जो स्वयं अध्ययन करने वाले धर्म के अनुयायी न हों।

अरब में इस्लाम का उदय– धर्म-निष्ठा, समुदाय और राजनीति

सन् 612-632 में पैगम्बर मुहम्मद ने एक ईश्वर, अल्लाह की पूजा करने का और आस्तिकों *(उम्मा)* के एक ही समाज की सदस्यता का प्रचार किया। यह इस्लाम का मूल था। पैगम्बर मुहम्मद सौदागर थे और भाषा तथा संस्कृति की दृष्टि से अरबी थे। छठी शताब्दी की अरब संस्कृति अधिकांशतः अरब प्रायद्वीप और दक्षिणी सीरिया और मेसोपोटामिया के क्षेत्रों तक सीमित थी।

अरब लोग कबीलों** में बँटे हुए थे। प्रत्येक कबीले का नेतृत्व एक शेख द्वारा किया जाता था, जो कुछ हद तक पारिवारिक संबंधों के आधार पर, लेकिन ज़्यादातर व्यक्तिगत साहस, बुद्धिमत्ता और उदारता *(मुरव्वा)* के आधार पर चुना जाता था। प्रत्येक कबीले के अपने स्वयं के देवी-देवता होते थे, जो बुतों *(सनम)* के रूप में देवालयों में पूजे जाते थे। बहुत-से अरबी कबीले खानाबदोश

**इस संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि कबीले रक्त-संबंधों (वास्तविक या काल्पनिक) पर संगठित समाज होते थे। अरबी कबीले वंशों से बने हुए होते थे अथवा बड़े परिवारों के समूह होते थे। ग़ैर-रिश्तेदार वंशों का, गढ़े हुए वंशक्रम के आधार पर इस आशा के साथ आपस में विलय होता था कि नया कबीला शक्तिशाली होगा। ग़ैर-अरब व्यक्ति (मवाली) कबीलों के प्रमुखों के संरक्षण से सदस्य बन जाते थे। लेकिन इस्लाम में धर्मांतरण के बाद भी मवालियों के साथ अरब मुसलमानों द्वारा समानता का व्यवहार नहीं किया जाता था और उन्हें अलग मस्जिदों में इबादत करनी पड़ती थी।

© NCERT not to be republished

(बद्‌दू यानी बेदूइन) होते थे, जो खाद्य (मुख्यत: खजूर) और अपने ऊँटों के लिए चारे की तलाश में रेगिस्तान में सूखे क्षेत्रों से हरे-भरे क्षेत्रों *(नखलिस्तानों)* की ओर जाते रहते थे। कुछ शहरों में बस गए थे और व्यापार अथवा खेती का काम करने लगे थे। पैगम्बर मुहम्मद का अपना कबीला, क़ुरैश, मक्का में रहता था और उसका वहाँ के मुख्य धर्मस्थल पर नियंत्रण था। इस स्थल का ढाँचा घनाकार था और उसे 'काबा' कहा जाता था, जिसमें बुत रखे हुए थे। मक्का के बाहर के कबीले भी काबा को पवित्र मानते थे, वे इस में अपने भी बुत रखते थे और हर वर्ष इस इबादतगाह की धार्मिक यात्रा *(हज)* करते थे। मक्का यमन और सीरिया के बीच के व्यापारी मार्गों के एक चौराहे पर स्थित था, जिससे शहर का महत्त्व और बढ़ गया था (मानचित्र 1)। काबा को एक ऐसी पवित्र जगह *(हरम)* माना जाता था, जहाँ हिंसा वर्जित थी और सभी दर्शनार्थियों को सुरक्षा प्रदान की जाती थी। तीर्थ-यात्रा और व्यापार ने खानाबदोश और बसे हुए कबीलों को एक दूसरे के साथ बातचीत करने और अपने विश्वासों और रीति-रिवाजों को आपस में बाँटने का मौका दिया। हालांकि बहुदेववादी अरबों को अल्लाह कहे जाने वाले परमात्मा की धारणा के बारे में अस्पष्ट सी ही जानकारी थी (संभवत: उनके बीच रहने वाले यहूदी और ईसाई क़बीलों के प्रभाव के कारण), लेकिन मूर्तियों और इबादतगाहों के साथ उनका लगाव सीधा और मज़बूत था।

तेरहवीं शताब्दी की पुस्तक 'अजायबुल मख़लूक़ात' से लिया गया चित्र जिसमें चित्रकार ने महादूत जिबरील की परिकल्पना की है। यह कहा जाता है कि जिबरील पैगम्बर मुहम्मद के लिए संदेश लाया करते थे। यह भी माना जाता है कि जो शब्द उन्होंने सबसे पहले पुकारा वह इक़रा (बयान करो) था। कुरान शब्द इक़रा से बना है। इस्लामी ब्रह्मांड विज्ञान में दूतों को सृष्टि-जीवन के तीन बौद्धिक रूपों में से एक माना जाता है। बाकी दो इनसान और जिन्न हैं।

सन् 612 के आस-पास पैगम्बर मुहम्मद ने अपने आपको खुदा का संदेशवाहक *(रसूल)* घोषित किया, जिन्हें यह प्रचार करने का आदेश दिया गया था कि केवल अल्लाह की ही इबादत यानी आराधना की जानी चाहिए। इबादत की विधियाँ बड़ी सरल थीं, जैसे दैनिक प्रार्थना *(सलात)* और नैतिक सिद्धांत, जैसे खैरात बाँटना और चोरी न करना। पैगम्बर मुहम्मद ने बताया कि उन्हें आस्तिकों *(उम्मा)* के ऐसे समाज की स्थापना करनी है, जो सामान्य धार्मिक विश्वासों के ज़रिये आपस में जुड़े हुए हों। इस समाज के लोग ईश्वर के सामने और अन्य धार्मिक समुदायों के समक्ष धर्म के अस्तित्व में अपना विश्वास *(शहादा)* प्रकट करते थे। पैगम्बर मुहम्मद के संदेश ने मक्का के उन लोगों को विशेष रूप से प्रभावित किया, जो अपने आपको व्यापार और धर्म के लाभों से वंचित महसूस करते थे और एक नयी सामुदायिक पहचान की बाट देखते थे। जो इस धर्म-सिद्धांत को स्वीकार कर लेते थे, उन्हें मुसलमान *(मुस्लिम)* कहा जाता था, उन्हें क़यामत के दिन मुक्ति और धरती पर रहते हुए समाज के संसाधनों में हिस्सा देने का आश्वासन दिया जाता था। मुसलमानों को शीघ्र ही मक्का के समृद्ध लोगों के भारी विरोध का सामना करना पड़ा, जिन्हें देवी-देवताओं का ठुकराया जाना बुरा लगा था और जिन्होंने नए धर्म को मक्का की प्रतिष्ठा और समृद्धि के लिए खतरा समझा था। सन् 622 में, पैगम्बर मुहम्मद को अपने अनुयायियों के साथ मदीना कूचकर जाने के लिए मजबूर होना पड़ा। पैगम्बर मुहम्मद की इस यात्रा *(हिजरा)* से इस्लाम के इतिहास में एक नया मोड़ आया। जिस वर्ष उनका आगमन मदीना में हुआ उस वर्ष से मुस्लिम कैलेंडर यानी हिजरी सन् की शुरुआत हुई।

© NCERT not to be republished

इस्लामी कैलेंडर

हिजरी सन् की स्थापना उमर की खिलाफत के समय की गई थी, जिसका पहला वर्ष 622 ई. में पड़ता था। हिजरी सन् की तारीख को जब अंग्रेज़ी में लिखा जाता है तो वर्ष के बाद ए.एच. लगाया जाता है। हिजरी वर्ष चन्द्र वर्ष है, जिसमें 354 दिन, 29 अथवा 30 दिनों के 12 महीने (मुहर्रम से धुल हिज्जा तक) होते हैं। प्रत्येक दिन सूर्यास्त के समय से और प्रत्येक महीना अर्धचन्द्र के दिन से शुरू होता है। हिजरी वर्ष सौर वर्ष से 11 दिन कम होता है। अतः हिजरी का कोई भी धार्मिक त्योहार, जिनमें रमज़ान के रोज़े, ईद और हज शामिल हैं, मौसम के अनुरूप नहीं होता। हिजरी कैलेंडर की तारीखों को ग्रैगोरियन कैलेंडर (जिसकी स्थापना पोप ग्रैगरी 13वें द्वारा 1582 ई. में की गई थी) की तारीखों के साथ मिलाने का कोई सरल तरीका नहीं है। इस्लामी (एच) और ग्रैगोरियन क्रिश्चियन (सी) वर्षों के बीच मोटे रूप से समानता की गणना निम्नलिखित फार्मूलों से की जा सकती है:

$$(\text{एच} \times 32/33) + 622 = \text{सी}$$

$$(\text{सी} - 622) \times 33/32 = \text{एच}$$

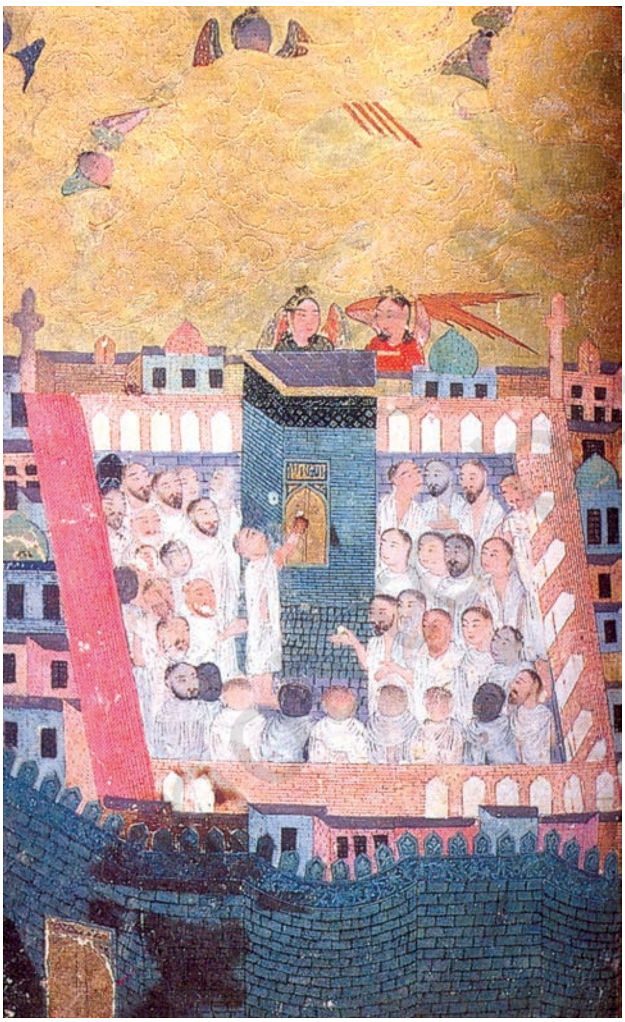

काबा में तीर्थयात्री, 15वीं शताब्दी की एक फ़ारसी हस्तलिपि से लिया गया चित्र।

किसी धर्म का जीवित रहना उस पर विश्वास करने वाले लोगों के ज़िंदा रहने पर निर्भर करता है। इन लोगों के समुदाय को आंतरिक रूप से मज़बूत बनाना और उन्हें बाहरी खतरों से बचाना जरूरी होता है। सुदृढ़ीकरण और सुरक्षा के लिए राजनैतिक संस्थाओं की आवश्यकता होती है, जैसे राज्य और सरकारें, जो या तो पीछे से विरासत में प्राप्त होती हैं या फिर बाहर से प्राप्त की जाती हैं अथवा जिनका निर्माण बिलकुल नए सिरे से करना पड़ता है। पैगम्बर मुहम्मद ने इन तीनों तरीकों से मदीना में एक राजनैतिक व्यवस्था की स्थापना की, जिसने उनके अनुयाइयों को सुरक्षा प्रदान की, जिसकी उन्हें आवश्यकता थी और इसके साथ-साथ शहर में चल रही कलह को सुलझाया। उम्मा को एक बड़े समुदाय के रूप में बदला गया, ताकि मदीना के बहुदेववादियों और यहूदियों को पैगम्बर मुहम्मद के राजनैतिक नेतृत्व के अंतर्गत लाया जा सके। पैगम्बर मुहम्मद ने कर्मकांडों (जैसे उपवास) और नैतिक सिद्धांतों को बढ़ा कर और उन्हें परिष्कृत कर धर्म को अपने अनुयायियों के लिए मज़बूत बनाया। मुस्लिम समुदाय कृषि और व्यापार से प्राप्त होने वाले राजस्व और इसके अलावा खैरात-कर *(ज़कात)* से जीवित रहा। इसके अलावा, मुसलमान मक्का के काफिलों और

निकट के नखलिस्तानों पर छापे भी मारते थे। इन छापों और धावों से मक्का के लोगों में प्रतिक्रिया हुई और मदीना के यहूदियों के साथ दरार उत्पन्न हुई। मक्का को जीत लिया गया और एक धार्मिक प्रचारक और राजनैतिक नेता के रूप में पैगम्बर मुहम्मद की प्रतिष्ठा दूर-दूर तक फैल गई। पैगम्बर मुहम्मद ने अब समुदाय की सदस्यता के लिए धर्मांतरण को एकमात्र कसौटी माना और इस बात पर बल दिया। रेगिस्तान की कठोर परिस्थितियों में, अरबों ने शक्ति और एकता को महत्त्वपूर्ण माना। पैगम्बर मुहम्मद की उपलब्धियों से प्रभावित होकर, बहुत से कबीलों, अधिकांशतः बद्दुओं, ने अपना धर्म बदलकर इस्लाम को अपना लिया और उस समाज में शामिल हो गए। पैगम्बर मुहम्मद द्वारा संरचित गठजोड़ का फैलाव समूचे अरब देश में हो गया। मदीना उभरते हुए इस्लामी राज्य की प्रशासनिक राजधानी और मक्का उसका धार्मिक केंद्र बन गया। काबा से बुतों को हटा दिया गया था, क्योंकि मुस्लिमों के लिए यह ज़रूरी था कि वे उस स्थल की ओर मुँह करके इबादत करें। पैगम्बर मुहम्मद को थोड़े ही समय में अरब प्रदेश के काफी बड़े भाग को एक नए धर्म, समुदाय और राज्य के अंतर्गत लाने में सफलता मिल गई। प्रारंभिक इस्लामी राज्य व्यवस्था काफी लंबे समय तक अरब कबीलों और कुलों का राज्य संघ बनी रही।

खलीफ़ाओं का शासन–विस्तार, गृहयुद्ध और सम्प्रदाय निर्माण

सन् 632 में पैगम्बर मुहम्मद के देहांत के बाद, कोई भी व्यक्ति वैध रूप से इस्लाम का अगला पैगम्बर होने का दावा नहीं कर सकता था। इसके परिणामस्वरूप, उनकी राजनैतिक सत्ता, उत्तराधिकार के किसी सुस्थापित सिद्धांत के अभाव में उम्मा को अंतरित कर दी गई। इससे नवाचारों के लिए अवसर उत्पन्न हुए, लेकिन इससे मुसलमानों में गहरे मतभेद भी पैदा हो गए। सबसे बड़ा नव-परिवर्तन यह हुआ कि खिलाफ़त की संस्था का निर्माण हुआ, जिसमें समुदाय का नेता *(अमीर अल-मोमिनिन)* पैगम्बर का प्रतिनिधि *(खलीफ़ा)* बन गया। पहले चार खलीफ़ाओं (632–661) ने पैगम्बर के साथ अपने गहरे और नज़दीकी संबंध के आधार पर अपनी शक्तियों का औचित्य स्थापित किया और पैगम्बर द्वारा दिए मार्ग-निर्देशों के अंतर्गत उनका कार्य जारी रखा। खिलाफ़त के दो प्रमुख उद्देश्य थे: एक तो कबीलों पर नियंत्रण कायम करना, जिनसे मिलकर उम्मा का गठन हुआ था, और दूसरा, राज्य के लिए संसाधन जुटाना।

पैगम्बर मुहम्मद के देहावसान के बाद, बहुत से कबीले इस्लामी राज्य से टूट कर अलग हो गए। कुछ कबीलों ने तो *उम्मा* के नमूने पर स्वयं अपने समाजों की स्थापना करने के लिए अपने स्वयं के पैगम्बर बना लिए। पहले खलीफ़ा अबू बकर ने अनेक अभियानों द्वारा विद्रोहों का दमन किया। दूसरे खलीफा उमर ने *उम्मा* की सत्ता के विस्तार की नीति को रूप प्रदान किया। खलीफ़ा जानता था कि उम्मा को व्यापार और करों से होने वाली मामूली आय के बल पर नहीं चलाया जा सकता। यह महसूस करते हुए कि अभियानों के रूप में मारे जाने वाले छापों से लूट की भारी धनराशि *(ग़नीमा)* प्राप्त की जा सकती है, खलीफ़ा और उसके सेनापतियों ने पश्चिम में बाइज़ेंटाइन साम्राज्य और पूर्व में ससानी साम्राज्य के इलाकों को जीतने के लिए अपने कबीलों की शक्ति जुटाई। बाइज़ेंटाइन और ससानी साम्राज्य जब अपनी शक्ति के सर्वोच्च शिखर पर थे, तो वे विशाल क्षेत्रों पर शासन करते थे और अरब में अपने राजनैतिक और वाणिज्यिक हितों को आगे बढ़ाने के लिए उनके पास बड़ी मात्रा में संसाधन थे। बाइज़ेंटाइन साम्राज्य ईसाई मत को बढ़ावा देता था और ससानी साम्राज्य ईरान के प्राचीन धर्म, ज़रतुश्त धर्म को संरक्षण प्रदान करता था। अरबों

मानचित्र 1: इस्लामी क्षेत्र।

के आक्रमण के समय, इन दो साम्राज्यों की शक्ति में धार्मिक संघर्षों और अभिजात वर्गों के विद्रोहों के कारण गिरावट आ चुकी थी। इसके कारण युद्धों और संधियों के ज़रिए उन्हें अपने अधीन लाना आसान हो गया था। तीन सफल अभियानों (637-642) में, अरबों ने सीरिया, इराक़, ईरान और मिस्र को मदीना के नियंत्रण में ला दिया। सामरिक नीति, धार्मिक जोश और विरोधियों की कमज़ोरियों ने अरबों की सफलता में योगदान दिया। तीसरे खलीफ़ा, उथमान ने अपना नियंत्रण मध्य एशिया तक बढ़ाने के लिए और अभियान चलाए। पैगम्बर मुहम्मद की मृत्यु के एक दशक के अंदर, अरब-इस्लामी राज्य ने नील और ऑक्सस के बीच के विशाल क्षेत्र को अपने नियंत्रण में ले लिया। ये इलाके आज तक मुस्लिम शासन के अंतर्गत हैं।

जीते गए सभी प्रांतों में, खलीफ़ाओं ने नया प्रशासनिक ढाँचा लागू किया, जिनके अध्यक्ष गवर्नर *(अमीर)* और कबीलों के मुखिया *(अशरफ)* थे। केंद्रीय राजकोष *(बैत अल-माल)* अपना राजस्व मुसलमानों द्वारा अदा किए जाने वाले करों से और इसके अलावा धावों से मिलने वाली लूट में अपने हिस्से से प्राप्त करता था। खलीफ़ा के सैनिक, जिनमें अधिकतर बेदुइन थे, रेगिस्तान के किनारों पर बसे शहरों, जैसे कुफ़ा और बसरा में शिविरों में रहते थे, ताकि वे अपने प्राकृतिक आवास स्थलों के निकट और खलीफ़ा की कमान के अंतर्गत बने रहें। शासक वर्ग और सैनिकों को लूट में हिस्सा मिलता था और मासिक अदायगियाँ *(अता)* प्राप्त होती थीं। ग़ैर-मुस्लिम लोगों द्वारा करों *(खराज* और *जिज़िया)* को अदा करने पर, उनका सम्पत्ति का और धार्मिक कार्यों को संपन्न करने का अधिकार बना रहता था। यहूदी और ईसाई राज्य के संरक्षित लोग *(धिम्मीस)* घोषित किए गए और अपने सामुदायिक कार्यों को करने के लिए उन्हें काफ़ी अधिक स्वायत्तता दी गई थी।

राजनैतिक विस्तार और एकीकरण का कार्य अरब कबीले सरलता से नहीं कर पाए। राजक्षेत्र के विस्तार से, संसाधनों और पदों के वितरण के बारे में पैदा हुए झगड़े उम्मा की एकता के लिए खतरा बन गए। प्रारंभिक इस्लामी राज्य के शासन में मक्का के क़ुरैश लोगों का ही बोलबाला था। तीसरा खलीफ़ा, उथमान (644–56) भी एक क़ुरैश था और उसने अधिक नियंत्रण प्राप्त करने के लिए प्रशासन को अपने ही आदमियों से भर दिया। इससे राज्य का मक्काई स्वरूप और अधिक ज़ोरदार हो गया। परिणामस्वरूप अन्य कबीलों के साथ झगड़े पैदा हो गए। इराक़ और मिस्र में तो विरोध था ही अब मदीने में भी विरोध उत्पन्न हो जाने के परिणामस्वरूप उथमान की हत्या कर दी गई। उथमान की मृत्यु के बाद अली को चौथा खलीफ़ा नियुक्त किया गया।

अली द्वारा (656–61) उन लोगों के खिलाफ़, जो मक्का के अभिजात-तंत्र का प्रतिनिधित्व करते थे, दो युद्ध लड़े जाने के बाद, मुसलमानों में दरार और गहरी हो गई। अली ने अपने आपको कुफा में स्थापित कर लिया और मुहम्मद की पत्नी, आयशा के नेतृत्व वाली सेना को 'ऊँट की लड़ाई' (657) में पराजित कर दिया। लेकिन, वह उथमान के नातेदार और सीरिया के गवर्नर मुआविया के नेतृत्व वाले गुट का दमन नहीं कर सका। अली का दूसरा युद्ध, जो सिफ्फिन (उत्तरी मेसोपोटामिया) में हुआ था, संधि के रूप में समाप्त हुआ, जिसने उसके अनुयायियों को दो धड़ों में बाँट दिया; कुछ उसके वफादार बने रहे, जबकि अन्य लोगों ने उसका साथ छोड़ दिया और वे खरजी कहलाने लगे। इसके शीघ्र बाद, एक खरजी द्वारा कुफा में एक मस्जिद में अली की हत्या कर दी गई। उसकी मृत्यु के बाद, उसके अनुयायियों ने उसके पुत्र, हुसैन और उसके वंशजों के प्रति अपनी निष्ठा प्रकट की। मुआविया ने 661 में अपने आपको अगला खलीफा घोषित कर दिया और उमय्यद वंश की स्थापना की, जो 750 तक चलता रहा।

गृह युद्धों के बाद, ऐसा प्रतीत होता था कि अरबों का आधिपत्य विखंडित हो जाएगा। इस बात के भी संकेत थे कि कबाइली विजेता अपने अधीनस्थ लोगों की परिष्कृत संस्कृति को अपना रहे थे। कुरैश कबीले के एक समृद्ध वंश उमय्यद के अधीन सुदृढ़ीकरण का दूसरा दौर आया।

उमय्यद और राजतंत्र का केंद्रीकरण

बड़े-बड़े क्षेत्रों पर विजय प्राप्त होने से मदीना में स्थापित खिलाफ़त नष्ट हो गई और उसका स्थान बढ़ते हुए सत्तावादी राजतंत्र ने ले लिया। उमय्यदों ने ऐसे बहुत से राजनीतिक उपाय किए जिनसे उम्मा के भीतर उनका नेतृत्व सुदृढ़ हो गया। पहले उमय्यद खलीफा मुआविया ने दमिश्क को अपनी राजधानी बनाया और फिर बाइज़ेंटाइन साम्राज्य की राजदरबारी रस्मों और प्रशासनिक संस्थाओं को अपना लिया। उसने वंशगत उत्तराधिकार की परंपरा भी प्रारंभ की और प्रमुख मुसलमानों को मना लिया कि वे उसके पुत्र को उसका वारिस स्वीकार करें। उसके बाद आने वाले खलीफ़ाओं ने भी ये नवीन परिवर्तन अपना लिए, जिसके फलस्वरूप उमय्यद नब्बे वर्ष तक और अब्बासी दो शताब्दियों तक सत्ता में बने रहे।

उमय्यद राज्य अब एक साम्राज्यिक शक्ति बन चुका था; अब वह सीधे इस्लाम पर आधारित नहीं था, बल्कि वह शासन-कला और सीरियाई सैनिकों की वफादारी के बल पर चल रहा था। प्रशासन में ईसाई सलाहकार और इसके अलावा ज़रतुश्त लिपिक और अधिकारी भी शामिल थे। लेकिन, इस्लाम उमय्यद शासन को वैधता प्रदान करता रहा। उमय्यद हमेशा

पथरीले टीले के ऊपर अब्द अल-मलिक द्वारा निर्मित चट्टान का गुम्बद, इस्लामी वास्तुकला का यह पहला बड़ा नमूना है। जेरूसलम नगर की मुस्लिम संस्कृति के प्रतीक रूप में इस स्मारक का निर्माण किया गया। पैगम्बर मुहम्मद की स्वर्ग की ओर की रात्रि यात्रा (मिराज) से यह स्मारक जुड़ गया। यह इसका रहस्यमय महत्त्व है।

एकता के लिए अनुरोध करते रहे और विद्रोहों को इस्लाम के नाम पर दबाते रहे। उन्होंने अपनी अरबी सामाजिक पहचान बनाए रखी। अब्द अल-मलिक और उसके उत्तराधिकारियों के शासनकाल में अरब और इस्लाम दोनों पहचानों पर मज़बूती से बल दिया जाता रहा। अब्द अल-मलिक ने जो नीतियाँ अपनाईं, उनमें अरबी को प्रशासन की भाषा के रूप में अपनाना और इस्लामी सिक्कों को जारी करना शामिल था। खिलाफत में जो सोने के दीनार और चाँदी के दिरहम चल रहे थे, वे रोमन और ईरानी सिक्कों (*दिनारियस* और *द्राख्मा*) की अनुकृतियाँ थे, जिन पर सलीब और अग्नि-वेदी के चिह्न बने होते थे और यूनानी और पहलवी (ईरान की भाषा) भाषा में लेख अंकित होते थे। इन चिह्नों को हटा दिया गया और सिक्कों पर अब अरबी भाषा में लिखा गया। अब्द अल-मलिक ने जेरूसलम में डोम ऑफ रॉक बनवाकर अरब-इस्लामी पहचान के विकास में भी एक अत्यंत प्रदर्शनीय योगदान दिया।

सिक्कों में अब्द अल-मलिक द्वारा सुधार

नीचे दिखाए गए सिक्कों से यह पता चलता है कि बाइज़ेंटाइन मुद्रा प्रणाली से अरबी-इस्लामी प्रणाली में परिवर्तन कैसे आया। दूसरे सिक्के पर दिखाया गया लंबे बालों व दाढ़ी वाला खलीफा पारंपरिक अरबी कपड़े पहने हुए है। उसके हाथ में तलवार है। उस समय के मुसलमानों की जो तस्वीरें हमें मिली हैं उनमें यह पहली है। अपने में यह ख़ास भी है क्योंकि बाद में कला व शिल्प में प्राणियों के प्रतिरूपण के प्रति विरोध होने लगा। अब्द अल-मलिक के मौद्रिक सुधार उसके राज्य-वित्त के पुनर्गठन से जुड़े हुए थे। अब्द अल-मलिक की सिक्के ढालने की प्रक्रिया इतनी सफल थी कि नीचे दिखाए गए तीसरे सिक्के के प्रारूप व वज़न के अनुसार ही कई शताब्दियों तक सिक्के ढाले जाते रहे।

बाइज़ेंटाइन का सोने का बना सॉलिडस, जिसमें सम्राट हेराक्लिअस व उसके दो पुत्रों को दिखाया गया है।

अब्द अल-मलिक द्वारा अपने नाम व रूप के साथ ढाला गया सोने का दीनार।

बदला हुआ दीनार जिस पर केवल लिखावट मिलती है। इस पर कलिमा गढ़ी हुई है। 'अल्लाह के सिवाय कोई अन्य ख़ुदा नहीं है और अल्लाह का कोई शरीक नहीं है।'

© NCERT not to be republished

अब्बासी क्रांति

मुस्लिम राजनैतिक व्यवस्था के केंद्रीकरण की सफलता के लिए उमय्यद वंश को भारी कीमत चुकानी पड़ी। *दवा* नामक एक सुनियोजित आंदोलन ने उमय्यद वंश को उखाड़ फेंका। 750 में इस वंश की जगह अब्बासियों ने ले ली जो मक्का के ही थे। अब्बासियों ने उमय्यद शासन को दुष्ट बताया और यह दावा किया कि वे पैगम्बर मुहम्मद के मूल इस्लाम की पुनर्स्थापना करेंगे। इस क्रांति से केवल वंश का ही परिवर्तन नहीं हुआ बल्कि इस्लाम के राजनैतिक ढाँचे और उसकी संस्कृति में भी बदलाव आए।

अब्बासियों का विद्रोह खुरासान (पूर्वी ईरान) के बहुत दूर स्थित क्षेत्र में प्रारंभ हुआ, जहाँ पर दमिश्क से बहुत तेज़ दौड़ने वाले घोड़े से 20 दिन में पहुँचा जा सकता था। खुरासान में अरब-ईरानियों की मिली-जुली आबादी थी, जिसे विभिन्न कारणों से एकजुट किया जा सका। यहाँ पर अरब सैनिक अधिकांशतः इराक से आए थे और वे सीरियाई लोगों के प्रभुत्व से नाराज़ थे। खुरासान के अरब नागरिक उमय्यद शासन को इसलिए नापसंद करते थे कि उन्होंने करों में रियायतें और विशेषाधिकार देने के जो वायदे किए थे, वे पूरे नहीं किए गए थे। जहाँ तक ईरानी मुसलमानों *(मवालियों)* का संबंध है, उन्हें अपनी जातीय चेतना से ग्रस्त अरबों के तिरस्कार का शिकार होना पड़ा था और वे उमय्यदों को बाहर निकालने के किसी भी अभियान में शामिल होने के इच्छुक थे।

अब्बासियों ने, जो पैगम्बर के चाचा अब्बास के वंशज थे, विभिन्न असहमत समूहों का समर्थन प्राप्त कर लिया और यह वचन देकर कि पैगम्बर के परिवार *(अहल अल-बयत)* का कोई मसीहा *(महदी)* उन्हें उमय्यदों के दमनकारी शासन से मुक्त कराएगा, सत्ता प्राप्त करने के अपने प्रयत्न को वैध ठहराया। उनकी सेना का नेतृत्व एक ईरानी गुलाम अबू मुस्लिम ने किया, जिसने अंतिम उमय्यद खलीफा, मारवान, को ज़ब नदी पर हुई लड़ाई में हराया।

अब्बासी शासन के अंतर्गत, अरबों के प्रभाव में गिरावट आई, जबकि ईरानी संस्कृति का महत्त्व बढ़ गया। अब्बासियों ने अपनी राजधानी प्राचीन ईरानी महानगर टेसीफोन के खंडहरों के निकट, बग़दाद में स्थापित की। इराक और खुरासान की अपेक्षाकृत अधिक भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए, सेना और नौकरशाही का पुनर्गठन ग़ैर-कबीलाई आधार पर किया गया। अब्बासी शासकों ने खिलाफ़त की धार्मिक स्थिति और कार्यों को मज़बूत बनाया और इस्लामी संस्थाओं और विद्वानों को संरक्षण प्रदान किया। लेकिन सरकार और साम्राज्य की ज़रूरतों ने उन्हें राज्य के केंद्रीय स्वरूप को बनाए रखने के लिए मजबूर किया। उन्होंने उमय्यदों के शानदार शाही वास्तुकला और राजदरबार के व्यापक समारोहों की परंपराओं को बराबर कायम रखा। जिस शासन को पहले इस बात पर गर्व था कि उसने राजतंत्र को समाप्त कर दिया है उसे ही राजतंत्र को फिर से स्थापित करने के लिए मजबूर होना पड़ा।

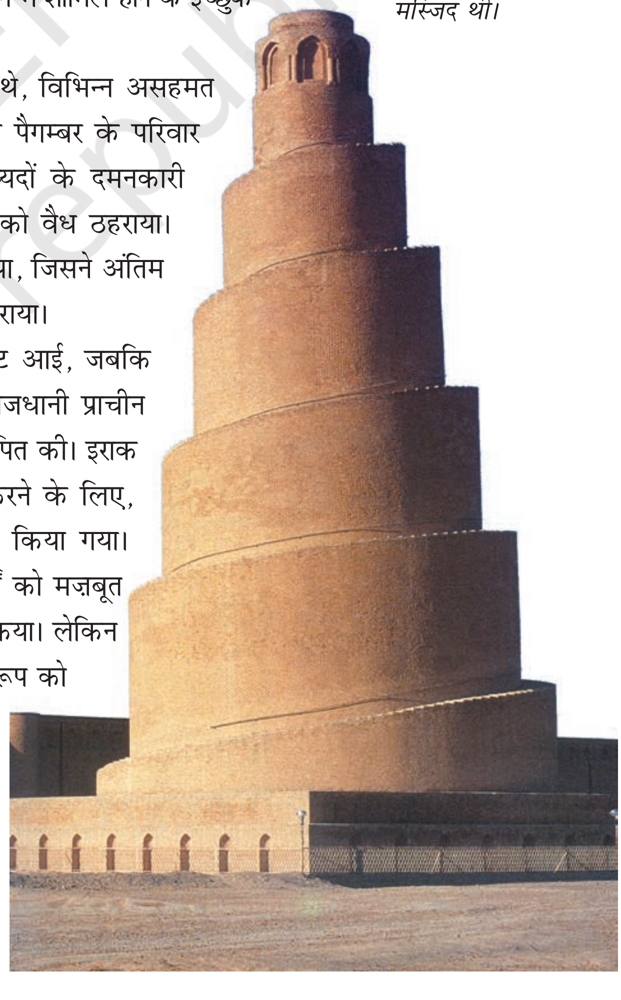

दूसरी अब्बासी राजधानी समारा की अल-मुतव्वकिल की महान मस्जिद। इसे 850 में बनाया गया। इसकी ईंट की बनी हुई मीनार 50 मीटर ऊँची है। मेसोपोटामिया की वास्तुकला की परंपराओं से प्रेरित यह कई शताब्दियों तक दुनिया की सबसे बड़ी मस्जिद थी।

क्रियाकलाप 1

खिलाफ़त की बदलती हुई राजधानियों की पहचान कीजिए। आपके अनुसार सापेक्षिक तौर पर इनमें से कौन-सी केंद्र में स्थित थी?

खिलाफ़त का विघटन और सल्तनतों का उदय

अब्बासी राज्य नौवीं शताब्दी से कमज़ोर होता गया, क्योंकि दूर के प्रांतों पर बग़दाद का नियंत्रण कम हो गया था, और इसका एक कारण यह भी था कि सेना और नौकरशाही में अरब-समर्थक और ईरान-समर्थक गुटों में आपस में झगड़ा हो गया था। सन् 810 में, खलीफ़ा हारुन अल-रशीद के पुत्रों, अमीन और मामुन के समर्थकों के बीच गृह युद्ध शुरू हो गया, जिससे गुटबन्दी और गहरी हो गई और तुर्की गुलाम अधिकारियों *(मामलुक)* का एक नया शक्ति गुट बन गया। शियाओं ने एक बार फिर सुन्नी रूढ़िवादिता के साथ सत्ता के लिए प्रतियोगिता की। बहुत से नए छोटे राजवंश उत्पन्न हो गए: खुरासान और ट्रांसोक्सियाना यानी तूरान अथवा ऑक्सस के पार वाले इलाके में ताहिरी और समानी वंश और मिस्र तथा सीरिया में तुलुनी वंश। अब्बासियों की सत्ता जल्दी ही मध्य इराक और पश्चिमी ईरान तक सीमित रह गई। सन् 945 में वह भी छिन गई, जब ईरान के कैस्पियन क्षेत्र *(डेलाम)* के बुवाही नामक शिया वंश ने बग़दाद पर कब्ज़ा कर लिया। बुवाही शासकों ने विभिन्न उपाधियाँ धारण कीं, जिनमें एक प्राचीन ईरानी पदवी शहंशाह (राजाओं का राजा) भी शामिल थी, लेकिन 'खलीफ़ा' की पदवी धारण नहीं की। उन्होंने अब्बासी खलीफ़ा को अपने सुन्नी प्रजाजनों के प्रतीकात्मक मुखिया के रूप में बनाए रखा।

खिलाफ़त को समाप्त न करने का फैसला बड़ा चतुराईपूर्ण था, क्योंकि एक अन्य शिया राजवंश, फ़ातिमी, की महत्त्वाकांक्षा थी कि वह इस्लामी जगत पर शासन करे। फ़ातिमी का संबंध शिया सम्प्रदाय के एक उप-सम्प्रदाय इस्माइली से था और उनका दावा था कि वे पैगम्बर की बेटी, फ़ातिमा, के वंशज हैं और इसलिए वे इस्लाम के एकमात्र न्यायसंगत शासक हैं। उत्तरी अफ़्रीका में अपने अड्डे से, उन्होंने 969 में मिस्र को जीता और फ़ातिमी खिलाफ़त की स्थापना की। मिस्र की पुरानी राजधानी, फ़ुस्तात की बजाय एक नए शहर, काहिरा को राजधानी बनाया गया, जिसकी स्थापना मंगल ग्रह *(मिरिख,* जिसे *अल-क़ाहिर* भी कहा जाता है) के उदय होने के दिन की गई थी। दोनों प्रतिस्पर्धी राजवंशों ने शिया प्रशासकों, कवियों और विद्वानों को आश्रय प्रदान किया।

सन् 950 से 1200 के बीच, इस्लामी समाज किसी एकल राजनीतिक व्यवस्था अथवा किसी संस्कृति की एकल भाषा *(अरबी)* से नहीं बल्कि सामान्य आर्थिक और सांस्कृतिक प्रतिरूपों से एकजुट बना रहा। राजनीतिक विभाजनों के बावजूद, एकता कायम रखने के लिए राज्य और समाज को अलग करके देखा गया और इस्लामी उच्च संस्कृति की भाषा के रूप में फ़ारसी का विकास किया गया। इस एकता के निर्माण में बौद्धिक परंपराओं के बीच संवाद की परिपक्वता की भी भूमिका थी। विद्वान, कलाकार और व्यापारी इस्लामी दुनिया के भीतर मुक्त रूप से घूमते-फिरते और आते-जाते थे और विचारों तथा तौर-तरीकों का प्रसार सुनिश्चित करते थे। इनमें से कुछ धर्मांतरण के कारण गाँवों के स्तर तक नीचे पहुँच गए थे। मुसलमानों की जनसंख्या जो उमय्यद काल और प्रारंभिक अब्बासी काल में 10 प्रतिशत से कम थी, आगे चलकर बहुत अधिक हो गई और फिर अन्य धर्मों से अलग धर्म और सांस्कृतिक प्रणाली के रूप में इस्लाम की पहचान अधिक सुस्पष्ट हो गई। इससे धर्मांतरण संभव और अर्थवान प्रतीत हुआ।

दसवीं और ग्यारहवीं शताब्दियों में तुर्की सल्तनत के उदय से अरबों और ईरानियों के साथ एक तीसरा प्रजातीय समूह जुड़ गया। तुर्क, तुर्किस्तान के मध्य एशियाई घास के मैदानों (अरल सागर के उत्तर-पूर्व में चीन की सीमाओं तक) के खानाबदोश कबाइली लोग थे, जिन्होंने धीरे-धीरे इस्लाम

को अपना लिया (देखिए विषय 5)। वे कुशल सवार और योद्धा थे और वे ग़ुलामों और सैनिकों के रूप में अब्बासी, समानी और बुवाही प्रशासनों में शामिल हो गए और अपनी वफ़ादारी तथा सैनिक योग्यताओं के कारण तरक्की करके उच्च पदों पर पहुँच गए। ग़ज़नी सल्तनत की स्थापना अल्पतिगिन (961) द्वारा की गई थी और उसे ग़ज़नी के महमूद (998-1030) द्वारा मज़बूत किया गया। बुवाहियों की तरह, ग़ज़नवी एक सैनिक वंश था, जिनके पास तुर्कों और भारतीयों जैसी पेशेवर सेना थी (मासूद का एक सेनापति भारतीय था जिसका नाम तिलक था)। लेकिन उनकी सत्ता और शक्ति का केंद्र खुरासान और अफ़ग़ानिस्तान में था और उनके लिए अब्बासी ख़लीफ़े प्रतिद्वंदी नहीं थे, बल्कि उनकी वैधता के स्रोत थे। महमूद इस बारे में सचेत था कि वह एक ग़ुलाम का बेटा है और वह खलीफ़ा से सुलतान की उपाधि प्राप्त करने के लिए बहुत इच्छुक था। खलीफ़ा शिया सत्ता के प्रति संतुलनकारी घड़े के रूप में ग़ज़नवी को, जो सुन्नी था, समर्थन देने के लिए राज़ी था।

सलजुक तुर्क समानियों और क़ाराखानियों (आगे पूर्व की ओर से आए ग़ैर-मुस्लिम तुर्क) की सेनाओं में सैनिकों के रूप में तुरान में दाखिल हो गए। उन्होंने बाद में अपने आपको दो भाइयों, तुगरिल और छागरी बेग के नेतृत्व में एक शक्तिशाली समूह के रूप में स्थापित कर लिया। ग़ज़नी के महमूद की मृत्यु के बाद की अव्यवस्था का लाभ उठाते हुए, सल्जुकों ने 1037 में खुरासान को जीत लिया और निशापुर* को अपनी पहली राजधानी बनाया। इसके बाद सल्जुकों ने अपना ध्यान पश्चिमी फारस और इराक (जहाँ बुवाहियों का शासन था) की ओर दिया और 1055 में बग़दाद को पुनः सुन्नी शासन के अधीन कर दिया। खलीफ़ा अल-क़ायम ने तुगरिल बेग को सुलतान की उपाधि प्रदान की, जो एक ऐसी कार्रवाई थी जिसने धार्मिक सत्ता को राजनीतिक सत्ता से अलग कर दिया। दोनों सल्जुक़ भाइयों ने परिवार द्वारा शासन चलाने की कबाइली धारणा के अनुसार इकट्ठे मिल कर शासन किया। भतीजा, अल्प अरसलन उसका उत्तराधिकारी बना। अल्प अरसलन के शासन के दौरान सलजुक़ साम्राज्य का विस्तार अनातोलिया (आधुनिक तुर्की) तक हो गया।

*शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण फारसी-इस्लामी केंद्र और उमर खय्याम का जन्म स्थान।

ग्यारहवीं से तेरहवीं शताब्दी तक की अवधि में यूरोपीय ईसाई और अरब राज्यों के बीच काफी अधिक लड़ाई-झगड़े हुए। इसकी चर्चा नीचे की गई है। फिर तेरहवीं शताब्दी के प्रारंभ में, मुस्लिम जगत ने अपने आपको एक बहुत बड़े विनाश के कगार पर पाया। यह मंगोलों की ओर से आने वाला खतरा था; यह सुव्यवस्थित सभ्यता पर 'खानाबदोशों' की ओर से होने वाला अंतिम किंतु सबसे अधिक निर्णायक आक्रमण था (देखिए विषय 5)।

धर्मयुद्ध

मध्यकाल के इस्लामी समाजों में, ईसाइयों को पुस्तक वाले लोग *(अहल अल-किताब)* समझा जाता था, क्योंकि उनके पास उनका अपना धर्मग्रंथ (*न्यू टेस्टामेंट* अथवा *इंजील*) था। व्यापारियों, तीर्थयात्रियों, राजदूतों और यात्रियों के रूप में मुस्लिम राज्यों में आने वाले ईसाइयों को सुरक्षा *(अमन)* प्रदान की जाती थी। इन क्षेत्रों में वे क्षेत्र भी शामिल थे, जिन पर कभी बाइज़ेंटाइन साम्राज्य का कब्ज़ा था, विशेष रूप से फिलिस्तीन की पवित्र भूमि। अरबों ने जेरूसलम को 638 में जीत लिया था, लेकिन वह ईसाइयों की कल्पना में ईसा के क्रूसारोपण और पुनरुज्जीवन के स्थान के रूप में हमेशा विद्यमान था। ईसाई यूरोप में मुस्लिम जगत की छवि के निर्माण में यह एक महत्त्वपूर्ण तत्व था।

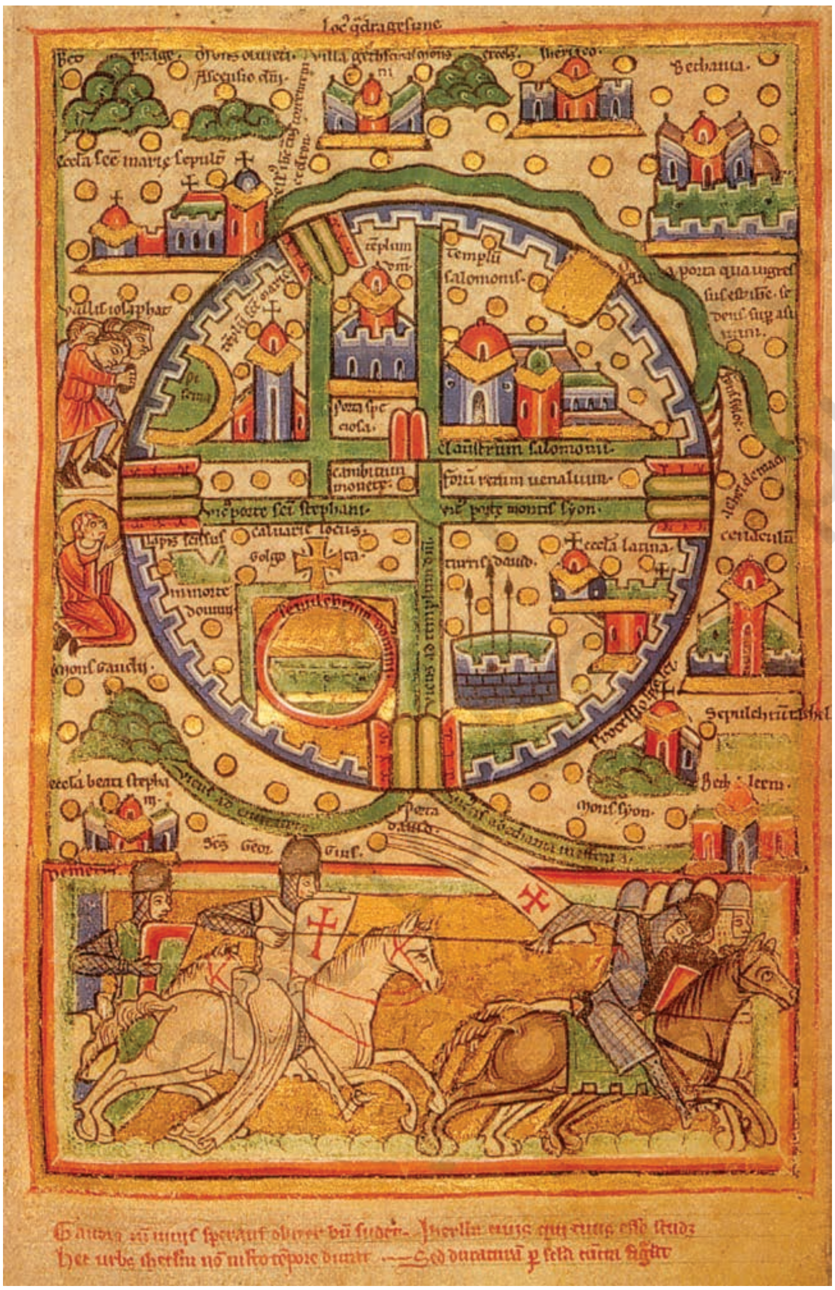

अलेप्पो एक हितित्ता असीरियाई व हेलेनिक स्थल। अरबों ने 636 में इस पर अधिकार कर लिया। अगले हज़ार वर्ष तक यह लड़ाई चलती रही। चित्र में युद्धरत धर्मयोद्धाओं को देखिए– नसूह अल-मतरकी का यात्रा वृत्तांत, 1534–36।

मुस्लिम जगत के प्रति शत्रुता ग्याहरवीं शताब्दी में और अधिक स्पष्ट हो गई। नार्मनों, हंगरीवासियों और कुछ स्लाव लोगों को ईसाई बना लिया गया था और केवल मुसलमान मुख्य शत्रु रह गए थे। ग्याहरवीं शताब्दी में पश्चिमी यूरोप के सामाजिक और आर्थिक संगठनों में भी परिवर्तन हो गया था, जिससे ईसाई जगत और इस्लामी जगत के बीच शत्रुता को बढ़ाने में योगदान मिला। पादरी और योद्धा वर्ग (पहले दो वर्ग–देखिए विषय 6) राजनीतिक स्थिरता और कृषि तथा व्यापार पर आधारित आर्थिक विकास सुनिश्चित करने के प्रयत्न कर रहे थे। प्रतिस्पर्धी सामंती राज्यों के बीच सैनिक मुठभेड़ की संभावनाओं और लूटमार पर आधारित अर्थव्यवस्था के पुनर्उदय को 'ईश्वरीय शांति' (पीस ऑफ गॉड) आंदोलन द्वारा रोका गया था। कुछ क्षेत्रों में, पूजास्थलों के निकट, चर्च के कैलेंडर में पवित्र मानी जाने वाली कुछ अवधियों और कुछ कमज़ोर सामाजिक समूहों जैसे पादरियों और आम लोगों के खिलाफ़ सभी प्रकार की सैनिक हिंसा वर्जित की गई थी। ईश्वरीय शांति आंदोलन ने सामंती समाज की आक्रमणकारी प्रवृत्तियों को ईसाई जगत से हटा कर ईश्वर के 'शत्रुओं' की ओर मोड़ दिया। इससे एक ऐसे वातावरण का निर्माण हो गया, जिसमें अविश्वासियों *(विधर्मियों)* के खिलाफ़ लड़ाई न केवल उचित अपितु प्रशंसनीय समझी जाने लगी।

1092 में बग़दाद के सलजुक़ सुलतान, मलिक शाह की मृत्यु के बाद उसके साम्राज्य का विघटन हो गया। इससे बाइज़ेंटाइन सम्राट एलेक्सियस प्रथम (Alexius I) को एशिया माइनर और उत्तरी सीरिया को फिर से हथियाने का मौका मिल गया। पोप अर्बन द्वितीय (Urban II) के लिए ईसाई धर्म की जीवट प्रवृत्ति को फिर से जीवित करने का एक अवसर था। 1095 में, पोप ने बाइज़ेंटाइन सम्राट के साथ मिलकर पुण्य देश (होली लैंड) को मुक्त कराने के लिए ईश्वर के नाम पर युद्ध के लिए

आह्वान किया। 1095 और 1291 के बीच पश्चिमी यूरोपीय ईसाइयों ने पूर्वी भूमध्यसागर *(लैवैंट)* के तटवर्ती मैदानों में मुस्लिम शहरों के खिलाफ़ युद्धों की योजना बनाई और फिर लगातार अनेक युद्ध लड़े गए। इन लड़ाइयों को बाद में 'धर्मयुद्ध'* का नाम दिया गया।

*पोप ने युद्ध लड़ने की शपथ लेने वालों को समारोहपूर्वक क्रास प्रदान करने का आदेश दिया।

प्रथम धर्मयुद्ध (1098–1099) में, फ्रांस और इटली के सैनिकों ने सीरिया में एंटीओक और जेरूसलम पर कब्ज़ा कर लिया। शहर में मुसलमानों और यहूदियों की विद्वेषपूर्ण हत्याएँ की गईं और शहर पर विजय प्राप्त कर ली गई, जिसके बारे में ईसाइयों और मुसलमानों दोनों ने काफी लिखा है। मुस्लिम लेखकों ने ईसाइयों (जिन्हें फिरंगी अथवा *इफ्रिंजी* कहा जाता था) के आगमन का उल्लेख पश्चिमी लोगों के आक्रमण के रूप में किया है। इन्होंने सीरिया–फिलिस्तीन के क्षेत्र में जल्दी ही धर्मयुद्ध द्वारा जीते गए चार राज्य स्थापित कर लिए। इन क्षेत्रों को सामूहिक रूप से 'आउटरैमर' (समुद्रपारीय भूमि) कहा जाता था और बाद के धर्मयुद्ध इसकी रक्षा और विस्तार के लिए किए गए।

आउटरैमर प्रदेश कुछ समय तक भली-भांति कायम रहा, लेकिन जब तुर्कों ने 1144 में एडेस्सा पर कब्ज़ा कर लिया तो पोप ने एक दूसरे धर्मयुद्ध (1145–1149) के लिए अपील की। एक जर्मन और फ्रांसीसी सेना ने दमिश्क पर कब्ज़ा करने की कोशिश की, लेकिन उन्हें हरा कर घर लौटने के लिए मजबूर कर दिया गया। इसके बाद आउटरैमर की शक्ति धीरे-धीरे क्षीण होती गई। धर्मयुद्ध का जोश अब खत्म हो गया और ईसाई शासकों ने विलासिता से जीना और नए-नए इलाकों के लिए लड़ाई करना शुरू कर दिया। सलाह अल-दीन *(सलादीन)* ने एक मिस्री-सीरियाई साम्राज्य स्थापित किया और ईसाइयों के विरुद्ध धर्मयुद्ध करने का आह्वान किया, और उन्हें 1187 में पराजित कर दिया। उसने पहले धर्मयुद्ध के लगभग एक शताब्दी बाद, जेरूसलम पर फिर से कब्ज़ा कर लिया। उस समय के अभिलेखों से संकेत मिलता है कि ईसाई लोगों के साथ सलाह अल-दीन का व्यवहार दयामय था, जो विशेष रूप से उस तरीके के व्यवहार के विपरीत था, जैसा पहले ईसाइयों ने मुसलमानों और यहूदियों के साथ किया था। हालांकि उसने द चर्च ऑफ दि होली सेपलकर की अभिरक्षा का काम ईसाइयों को सौंप दिया था, लेकिन बहुत-से गिरजाघरों को मस्जिदों में बदल दिया गया, और जेरूसलम एक बार फिर मुस्लिम शहर बन गया।

इस शहर के छिन जाने से, 1189 में तीसरे धर्मयुद्ध के लिए प्रोत्साहन मिला, लेकिन धर्मयुद्ध करने वाले फिलिस्तीन में कुछ तटवर्ती शहरों और ईसाई तीर्थयात्रियों के लिए जेरूसलम में मुक्त रूप से प्रवेश के सिवाय और कुछ प्राप्त नहीं कर सके। मिस्र के शासकों, मामलुकों ने अंततः 1291 में धर्मयुद्ध करने वाले सभी ईसाइयों को समूचे फिलिस्तीन से बाहर निकाल दिया। धीरे-धीरे यूरोप की इस्लाम में सैनिक दिलचस्पी समाप्त हो गई और उसका ध्यान अपने आंतरिक राजनीतिक और सांस्कृतिक विकास की ओर केंद्रित हो गया।

इन धर्मयुद्धों ने ईसाई-मुस्लिम संबंधों के दो पहलुओं पर स्थायी प्रभाव छोड़ा। इनमें से एक था, मुस्लिम राज्यों का अपने ईसाई प्रजाजनों की ओर कठोर रुख, जो लड़ाइयों की कड़वी यादों और मिली-जुली आबादी वाले इलाकों में सुरक्षा की ज़रूरतों का परिणाम था। दूसरा था, मुस्लिम सत्ता की बहाली के बाद भी पूर्व और पश्चिम के बीच व्यापार में इटली के व्यापारिक समुदायों (पीसा, जेनोआ और वैनिस का अधिक प्रभाव।)

© NCERT not to be republished

सीरिया में फ्रैंक

अपने अधीन किए गए मुस्लिम लोगों के साथ विभिन्न फ्रैंक (पश्चिमी देशों के नागरिक जो धर्मयुद्धों में विजयी हुए) अभिजातों का व्यवहार भिन्न-भिन्न प्रकार का था। शुरू के धर्मयुद्धकारी, जो सीरिया और फिलिस्तीन में बस गए थे, बाद में आने वालों की तुलना में, आमतौर पर मुस्लिम आबादी के प्रति अधिक सहिष्णु थे। बारहवीं शताब्दी के एक सीरियाई मुसलमान उसामा इब्न मुनकिथ (Usama ibn Munqidh) ने अपने संस्मरणों में अपने नए पड़ोसियों के बारे में कुछ दिलचस्प बातें कही हैं:

'फ्रैंक लोगों में कुछ लोग ऐसे हैं, जो इस देश में बस गए हैं और मुसलमानों के साथ जुड़े हुए हैं। वे नए आने वालों से बेहतर हैं, लेकिन वे नियम का अपवाद हैं और उनके आधार पर कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता।

सीरिया में स्थित धर्मयोद्धओं का एक दुर्ग। इसका निर्माण धर्मयुद्ध के दौरान हुआ। अरब नियंत्रित क्षेत्रों पर आक्रमण करने के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण आधार था। इसकी मीनारों और जलवाही सेतुओं का निर्माण बेबार नामक मामलुक सुलतान ने 1271 में करवाया।

एक उदाहरण यह है कि एक बार मैंने किसी आदमी को व्यापार के लिए एंटीओक भेजा। उस समय, चीफ थिओडोर सोफिआनोस (Chief Theodore Sophianos, एक पूर्वी ईसाई) वहाँ पर था, वह और मैं आपस में दोस्त थे। वह तब एंटीओक में हर तरह से शक्तिशाली था। एक दिन उसने मेरे आदमी से कहा "मेरे एक फ्रैंक मित्र ने मुझे आमंत्रित किया है। मेरे साथ चलो और देखो कि वे लोग किस प्रकार रहते हैं।" मेरे आदमी ने मुझे बताया, इसलिए मैं उसके साथ चला गया, और हम उन पुराने शूरवीरों में से एक शूरवीर (नाइट) के घर पहुँच गए, जो प्रथम फ्रैंक अभियान के साथ आए थे। वह अब राज्य और सेना से सेवानिवृत्त हो चुका था, और उसके पास एंटीओक में सम्पत्ति थी, जहाँ वह रहता था। उसने बहुत ही सफाई से स्वादिष्ट भोजन परोसा था।

उसने देखा कि मैं खाने में संकोच कर रहा हूँ, और तब उसने कहा, "जी भरकर खाना खाओ, क्योंकि मैं फ्रैंक खाना नहीं खाता। मेरे पास मिस्री महिलाएँ हैं जो मेरा खाना बनाती हैं और वे जो कुछ तैयार करती हैं उसके अलावा मैं और कुछ नहीं खाता। न कभी सूअर के मांस का मेरे घर के अंदर प्रवेश होता है।" इसलिए मैंने खाना खाया, लेकिन कुछ सावधानी के साथ, और तब हम वहाँ से रवाना हुए। बाद में, मैं बाज़ार से गुज़र रहा था, तब अचानक एक फ्रैंक महिला ने मुझे पकड़ लिया और अपनी भाषा में बड़बड़ाना शुरू कर दिया। मैं यह समझ नहीं पाया कि वह क्या कह रही है। फ्रैंक लोगों की भीड़ मेरे आस-पास इकट्ठी हो गई। मुझे यकीन हो गया कि मेरा अंत निकट आ गया है। तब, अचानक वही शूरवीर वहाँ आ गया और उसने उस औरत से पूछा, "तुम इस मुसलमान से क्या चाहती हो?" उसने उत्तर दिया, "इसने मेरे भाई हुरसो की हत्या की थी।" यह हुरसो अफ़ामिया का एक शूरवीर था, जिसकी हत्या हामा की सेना के किसी सिपाही द्वारा कर दी गई थी। तब उस शूरवीर ने चिल्लाकर उस महिला से कहा, "यह व्यक्ति मध्यवर्गी (बुर्जुआ) है, अर्थात् यह एक व्यापारी है। यह लड़ता-लड़ाता नहीं है। किसी भी किस्म का युद्ध नहीं करता।" वह भीड़ पर भी चिल्लाया और तब भीड़ तितर-बितर हो गई; तब उसने मेरा हाथ पकड़ा और मुझे वहाँ से ले गया। इस प्रकार उसके साथ भोजन करने का यह प्रभाव था कि उसने मुझे मृत्यु से बचा लिया।"

– किताब अल-इतिबार

अर्थव्यवस्था–कृषि, शहरीकरण और वाणिज्य

नए जीते गए क्षेत्रों में बसे हुए लोगों का प्रमुख व्यवसाय कृषि था। इस्लामी राज्य ने इसमें कोई परिवर्तन नहीं किया। ज़मीन के मालिक बड़े और छोटे किसान थे और, कहीं-कहीं राज्य था। इराक़ और ईरान में, ज़मीन काफी बड़ी इकाइयों में बँटी हुई थी, जिसकी खेती किसानों द्वारा की जाती थी। ससानी और इस्लामी कालों में संपदा स्वामी राज्य की ओर से कर एकत्र करते थे। उन इलाकों में, जो पशुचारण की स्थिति से आगे बढ़कर स्थिर कृषि व्यवस्था तक पहुँच गए थे, ज़मीन गाँव की सांझी सम्पत्ति थी। अंत में, जो भूमि-सम्पत्तियाँ इस्लामी विजय के बाद मालिकों द्वारा छोड़ दी गई थीं, वे राज्य द्वारा अपने हाथ में ले ली गई थीं और साम्राज्य के विशिष्ट वर्ग के मुसलमानों को दे दी गई थीं, विशेष रूप से खलीफ़ा के परिवार के सदस्यों को।

कृषि भूमि का सर्वोपरि नियंत्रण राज्य के हाथों में था, जो विजय का काम पूरा होने पर अपनी अधिकांश आय भू-राजस्व से प्राप्त करता था। अरबों द्वारा जीती गई भूमि पर, जो मालिकों के हाथों में रहती थी, कर *(खराज)* लगता था, जो खेती की स्थिति के अनुसार पैदावार के आधे से लेकर उसके पांचवें हिस्से के बराबर होता था। जो ज़मीन मुसलमानों की मिलकियत थी अथवा जिसमें उनके द्वारा खेती की जाती थी, उस पर उपज के दसवें हिस्से के बराबर कर लगता था। जब ग़ैर-मुसलमान कम कर देने के उद्देश्य से मुसलमान बनने लगे तो उससे राज्य की आय कम हो गई। इस कमी को पूरा करने के लिए, खलीफ़ाओं ने पहले तो धर्मांतरण को निरुत्साहित किया और बाद में कराधान की एकसमान नीति अपनाई। 10वीं शताब्दी से राज्य ने अधिकारियों को अपना वेतन भूमियों के कृषि राजस्व से, जिसे *इक्ता* (राजस्व का हिस्सा) कहा जाता था, लेने के लिए प्राधिकृत किया।

फसल की कटाई; मज़दूरों का खाना एक ट्रे पर लाया जा रहा है।
सूडो गैलन की प्रत्यौषधों की पुस्तक (Book of Antidotes) *का अरबी रूपांतर, 1199 (डा. गैलन की कहानी देखिये पृ. 63)।*

खेती में खुशहाली राजनीतिक स्थिरता साथ-साथ आई। बहुत-से क्षेत्रों में, विशेष रूप से नील घाटी में, राज्य ने सिंचाई प्रणालियों, बाँधों और नहरों के निर्माण, कुओं की खुदाई (जिनमें आमतौर पर पनचक्कियाँ अथवा *नोरिया* लगी होती थीं) के लिए सहायता दी, ये सारी चीज़ें अच्छी फ़सल के लिए ज़रूरी थीं। इस्लामी कानून में उन लोगों को कर में रियायत दी गई, जो ज़मीन को पहली बार खेती के काम में लाते थे। किसानों की पहल और राज्य के समर्थन के ज़रिए खेती-योग्य भूमि का विस्तार हुआ और प्रमुख प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों के अभाव की स्थिति में भी उत्पादकता में वृद्धि हुई। बहुत-सी नयी फ़सलों; जैसे – कपास, संतरा, केला, तरबूज़, पालक और बैंगन की खेती की गई और यूरोप को उनका निर्यात भी किया गया।

जैसे-जैसे शहरों की संख्या में तेज़ी से बढ़ोतरी हुई, वैसे ही इस्लामी सभ्यता फली-फूली। बहुत-से नए शहरों की स्थापना की गई, जिनका उद्देश्य मुख्य रूप से अरब सैनिकों *(जुंड)* को बसाना था, जो स्थानीय प्रशासन की रीढ़ थे। इस श्रेणी के फौजी शहरों में, जिन्हें *मिस्र* कहा जाता था (इजिप्ट का अरबी नाम), कुफा और बसरा इराक़ में, और फुस्तात तथा काहिरा मिस्र में थे।

© NCERT not to be republished

अब्बासी खिलाफत (800) की राजधानी के रूप में अपनी स्थापना के बाद आधी शताब्दी के अंदर बग़दाद की जनसंख्या बढ़ कर लगभग दस लाख तक पहुँच गई थी। इन शहरों के साथ-साथ दमिश्क, इस्फ़हान और समरकंद जैसे कुछ पुराने शहर थे, जिन्हें नया जीवन मिल गया था। खाद्यान्नों और शहरी विनिर्माताओं के लिए कच्ची सामग्री, जैसे कपास और चीनी के उत्पादन में वृद्धि की गई जिससे इन शहरों के आकार और इनकी जनसंख्या में बढ़ोतरी हुई। इस प्रकार संपूर्ण क्षेत्र में शहरों का एक विशाल जाल विकसित हो गया। एक शहर दूसरे शहर से जुड़ गया और परस्पर संपर्क एव कारोबार बढ़ गया।

बसरा को जाने वाली एक नाव। नाविक भारतीय है और यात्री अरबी हैं। आधुनिक काल से पहले जलमार्ग द्वारा माल और यात्रियों की ढुलाई सस्ती, तेज़ और सुरक्षित थी। ये चित्र हरिरी द्वारा रचित 12वीं शताब्दी की एक पांडुलिपि मकामात *से लिया गया।* मकामात *(सभाएँ) एक लोकप्रिय अरबी साहित्य की विधा थी, जिसमें वाचक एक चालबाज़ और उसकी शरारतों की कहानियाँ सुनाता है।*

शहर के केंद्र में दो भवन-समूह होते थे, जहाँ से सांस्कृतिक और आर्थिक शक्ति का प्रसारण होता था : उनमें एक मस्जिद *(मस्जिद अल-जामी)* होती थी जहाँ सामूहिक नमाज़ पढ़ी जाती थी। यह इतनी बड़ी होती थी कि दूर से दिखाई दे सकती थी। दूसरा भवन-समूह केंद्रीय मंडी *(सुक़)* था, जिसमें दुकानों की कतारें होती थीं, व्यापारियों के आवास *(फ़ंदुक़)* और सर्राफ़ का कार्यालय होता था। शहर प्रशासकों (जो राज्य के *आयन* अथवा नेत्र थे) और विद्वानों और व्यापारियों *(तुज्जर)* के लिए घर होते थे, जो केंद्र के निकट रहते थे। सामान्य नागरिकों और सैनिकों के रहने के क्वार्टर बाहरी घेरे में होते थे, और प्रत्येक में अपनी मस्जिद, गिरजाघर अथवा सिनेगोग (यहूदी प्रार्थनाघर), छोटी मंडी और सार्वजनिक स्नानघर *(हमाम)* और एक महत्त्वपूर्ण सभा-स्थल होता था। शहर के बाहरी इलाकों में शहरी गरीबों के मकान, देहातों से लाई जाने वाली हरी सब्ज़ियों और फलों के लिए बाज़ार, काफिलों के ठिकाने और 'अस्वच्छ' दुकानें, जैसे चमड़ा साफ करने या रँगने की दुकानें और कसाई की दुकानें होती थीं। शहर की दीवारों के बाहर कब्रिस्तान और सराय होते थे। सराय में लोग उस समय आराम कर सकते थे जब शहर के दरवाज़े बंद कर दिए गए हों। सभी शहरों का नक्शा एक जैसा नहीं होता था, इस नक्शे में परिदृश्य, राजनीतिक परंपराओं और ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर परिवर्तन किए जा सकते थे।

राजनीतिक एकीकरण और खाद्य पदार्थों और विलास-वस्तुओं की शहरी माँग ने विनिमय के दायरे का विस्तार कर दिया। भूगोल ने मुस्लिम साम्राज्य की सहायता की, जो हिंद महासागर और भूमध्यसागर के व्यापारिक क्षेत्रों के बीच फैल गया। पाँच शताब्दियों तक, अरब और ईरानी व्यापारियों का चीन, भारत और यूरोप के बीच के समुद्री व्यापार पर एकाधिकार रहा। यह व्यापार दो मुख्य रास्तों यानी लाल सागर और फारस की खाड़ी से होता था। लंबी दूरी के व्यापार के लिए उपयुक्त और उच्च मूल्य वाली वस्तुओं; जैसे – मसालों, कपड़ों, चीनी मिट्टी की चीज़ों और बारूद को भारत और चीन से लाल सागर के पत्तनों अर्थात् अदन और ऐधाब तक और फारस खाड़ी के पत्तन सिराफ और बसरा तक ज़हाज पर लाया जाता था। यहाँ से, माल को ज़मीन पर ऊँटों के काफिलों के द्वारा बग़दाद, दमिश्क और एलेप्पो के भंडारगृहों (*मखाज़िन* जो फ्रांसीसी शब्द मैगज़ीन का मूल है, जिसका अर्थ है दुकान) तक स्थानीय खपत के लिए अथवा आगे भेजने के लिए ले

© NCERT not to be republished

जाया जाता था। मक्का के रास्ते से गुज़रने वाले काफिले बड़े हो जाते थे, जब *हज* की यात्रा का समय हिंद महासागर में नौ-चालन के मौसम (*मवासिम*, जो मानसून शब्द का मूल है) के साथ पड़ता था। इन व्यापारिक मार्गों के भूमध्यसागर के सिरे पर सिकंदरिया के पत्तन से यूरोप को किए जाने वाले निर्यात को यहूदी व्यापारियों द्वारा संभाला जाता था, जिनमें से कुछ भारत से सीधे व्यापार करते थे, जैसाकि गेनिज़ा (Geniza) संग्रह में परिरक्षित उनके पत्रों से देखा जा सकता है। किंतु, चौथी शताब्दी से, व्यापार और शक्ति के केंद्र के रूप में काहिरा के उभर आने के कारण और इटली के व्यापारिक शहरों से पूर्वी माल की बढ़ती हुई माँग के कारण लाल सागर के मार्ग ने अधिक महत्त्व प्राप्त कर लिया।

क्रियाकलाप 2

बसरा में सुबह के एक दृश्य का वर्णन करो।

पूर्वी सिरे की चर्चा करें तो ईरानी व्यापारी मध्य एशियाई और चीनी वस्तुएँ, जिनमें कागज़ भी शामिल था, लाने के लिए बग़दाद से बुखारा और समरकंद *(तुरान)* होते हुए रेशम मार्ग से चीन

कागज़, गेनिज़ा अभिलेख और इतिहास

कागज़ के आविष्कार के बाद इस्लामी जगत में लिखित रचनाओं का व्यापक रूप से प्रसार होने लगा। कागज़ (लिनन से निर्मित) चीन से आया था, जहाँ कागज़ बनाने की प्रक्रिया को बहुत सावधानी से गुप्त रखा गया था। 751 में, समरकंद के मुसलमान प्रशासक ने 20,000 चीनी आक्रमणकारियों को बंदी बना लिया, जिनमें से कुछ कागज़ बनाने में बहुत निपुण थे। अगले सौ वर्षों के लिए, समरकंद का कागज़ निर्यात की एक महत्त्वपूर्ण वस्तु बन गया। चूंकि इस्लाम एकाधिकार का निषेध करता है, इसलिए कागज़ इस्लामी दुनिया के बाकी हिस्सों में बनाया जाने लगा। दसवीं शताब्दी के मध्य भाग तक इसने अधिकांशतः पैपाइरस का स्थान ले लिया था। पैपाइरस एक ऐसी लेखन सामग्री था, जिसे एक ऐसे पौधे के अंदरूनी तने से बनाया जाता था, जो नील घाटी में बहुतायत से उगता था। कागज़ की माँग बढ़ गई, और अब्द अल-लतीफ, (Abd al-Latif) जो बग़दाद से आया हुआ एक चिकित्सक था (आदर्श विद्यार्थी का चित्रण पृष्ठ 98 पर देखिए) और 1193 से 1207 तक मिस्र का निवासी था, लिखता है कि मिस्र के किसानों ने ममियों के ऊपर लपेटे गए लिनन से बने हुए आवरण प्राप्त करने के लिए कब्रों को किस तरह लूटा था, ताकि वे इन लिनन आवरणों को कागज़ के कारखानों को बेच सकें।

कागज़ की उपलब्धता के कारण सभी प्रकार के वाणिज्यिक और निजी दस्तावेज़ों को लिखना भी सुविधाजनक हो गया। 1896 में फुस्तात (पुराना काहिरा) में बेन एज़्रा के यहूदी प्रार्थना-भवन के एक सीलबंद कमरे (*गेनिज़ा*, जिसका उच्चारण *ग़निज़ा* के रूप में किया जाता है) में मध्यकाल के यहूदी दस्तावेज़ों का एक विशाल संग्रह मिला। ये दस्तावेज़ इस यहूदी प्रथा के कारण सँभाल कर रखे गए थे कि ऐसी किसी भी लिखावट को नष्ट नहीं किया जाना चाहिए, जिसमें परमेश्वर का नाम लिखा हुआ हो। गेनिज़ा में लगभग ढाई लाख पांडुलिपियाँ और उनके टुकड़े थे, जिनमें कई आठवीं शताब्दी के मध्यकाल की भी थीं। अधिकांश सामग्री दसवीं से तेरहवीं शताब्दी तक की थी, अर्थात् फातिमी, अयूबी, और प्रारंभिक मामलुक काल की थीं। इनमें व्यापारियों, परिवार के सदस्यों और दोस्तों के बीच लिखे गए पत्र, संविदा, दहेज से जुड़े वादे, बिक्री दस्तावेज़, धुलाई के कपड़ों की सूचियाँ और अन्य मामूली चीज़ें शामिल थीं। अधिकतर दस्तावेज़ यहूदी-अरबी भाषा में लिखे गए थे, जो हिब्रू अक्षरों में लिखी जाने वाली अरबी भाषा का ही रूप था, जिसका उपयोग समूचे मध्यकालीन भूमध्य सागरीय क्षेत्र में यहूदी समुदायों द्वारा आमतौर पर किया जाता था। गेनिज़ा दस्तावेज़ निजी और आर्थिक अनुभवों से भरे हुए हैं और वे भूमध्यसागरीय और इस्लामी संस्कृति की अंदरूनी जानकारी प्रस्तुत करते हैं। इन दस्तावेज़ों से यह भी पता चलता है कि मध्यकालीन इस्लामी जगत के व्यापारियों के व्यापारिक कौशल और वाणिज्यिक तकनीकें उनके यूरोपीय प्रतिपक्षियों की तुलना में बहुत अधिक उन्नत थीं। गेटिन ने गेनिज़ा अभिलेखों का प्रयोग करते हुए भूमध्यसागर का इतिहास कई संग्रहों में लिखा। गेनिज़ा के एक पत्र से प्रेरित होकर अमिताभ घोष ने अपनी पुस्तक *इन एन एंटीक लैंड* में एक भारतीय दास की कहानी प्रस्तुत की है।

© NCERT not to be republished

जाते थे। तुरान भी वाणिज्यिक तंत्र में एक महत्त्वपूर्ण कड़ी था। यह तंत्र यूरोपीय वस्तुओं, मुख्यतः फर और स्लाव गुलामों (इसी से अंग्रेज़ी 'स्लेव' शब्द बना) के व्यापार के लिए उत्तर में रूस और स्केंडीनेविया तक फैला हुआ था। इन वस्तुओं की अदायगी के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले इस्लामी सिक्के वोल्गा नदी के आसपास और बाल्टिक क्षेत्र में बड़ी संख्या में पाए गए हैं। इन बाज़ारों में तुर्क गुलाम (दास-दासियाँ) भी खलीफ़ाओं और सुलतानों के दरबारों के लिए खरीदे जाते थे।

राजकोषीय प्रणाली (राज्य की आय और उसका व्यय) और बाज़ार के लेन-देन ने इस्लामी देशों में धन के महत्त्व को बढ़ा दिया था। सोने, चाँदी और ताँबे *(फ़ुलस)* के सिक्के बनाए जाते थे और वस्तुओं और सेवाओं की अदायगी के लिए प्रायः सर्राफ़ों द्वारा सीलबंद किए गए थैलों में भेजे जाते थे। सोना अफ़्रीका (सूदान) से और चाँदी मध्य एशिया (ज़रफशन घाटी) से आती थी। कीमती धातुएँ और सिक्के यूरोप से भी आते थे, जो पूर्वी व्यापार की वस्तुओं को खरीदने के लिए यूरोप अदा करता था। धन की बढ़ती हुई माँग ने लोगों को अपने संचित भंडारों और बेकार पड़ी सम्पत्ति का उपयोग करने के लिए विवश कर दिया। उधार का कारोबार भी मुद्राओं के साथ जुड़ गया जिससे वाणिज्य गतिशील हो गया। मध्यकालीन आर्थिक जीवन में मुस्लिम जगत का सबसे बड़ा योगदान यह था कि उन्होंने अदायगी और व्यापार व्यवस्था के बढ़िया तरीकों को विकसित किया। साख-पत्रों (*सक्क*, जो अंग्रेज़ी शब्द चैक व हिंदी शब्द साख का मूल है) और हुंडियों (बिल ऑफ एक्सचेंज-*'सुफतजा'*) का उपयोग व्यापारियों, साहूकारों द्वारा धन को एक जगह से दूसरी जगह और एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को अंतरित करने के लिए किया जाता था। वाणिज्यिक पत्रों के व्यापक उपयोग से व्यापारियों को हर स्थान पर नकद मुद्रा अपने साथ ले जाने से मुक्ति मिल गई और इससे उनकी यात्राएँ भी ज़्यादा सुरक्षित हो गईं। खलीफ़ा भी वेतन अदा करने अथवा कवियों और चारणों को इनाम देने के लिए *सक्क* का इस्तेमाल करते थे।

यद्यपि व्यापारियों के लिए पारिवारिक व्यापार स्थापित करना अथवा अपने कार्यों के संचालन के लिए गुलामों को काम में लगाना एक आम रिवाज था, लेकिन *मुज़र्बा* जैसे औपचारिक व्यापारिक प्रबंध आमतौर पर किए जाते थे, जिनमें निष्क्रिय साझेदार अपनी पूँजी कारोबार के कामों में देश-विदेश पर जाने वाले सक्रिय सौदागरों को सौंप देते थे। लाभ व हानि को किए गए निर्णयों के अनुसार बाँट लिया जाता था। इस्लाम लोगों को धन कमाने से नहीं रोकता था, बशर्ते कि कुछ निषेध संबंधी नियमों का पालन किया जाए। उदाहरण के लिए, ब्याज लेन-देन *(रिबा)* गैर-कानूनी थे, हालांकि लोग बड़े चतुराईपूर्ण तरीकों *(हियाल)* से सूदखोरी करते थे, जैसे किसी खास किस्म के सिक्कों में उधार लेना और एक अन्य किस्म के सिक्कों से अदायगी करना और मुद्रा-विनिमय (हुंडी का मूल) पर कमीशन के रूप में छिपे तौर पर ब्याज खा लेना।

एक हज़ार एक रातें (अलिफ लैला व लैला) की कई कहानियों में हमें मध्यकालीन मुस्लिम समाज की तस्वीर मिलती है। इन कहानियों में नाविकों, गुलामों, सौदागरों और सर्राफों जैसे कई पात्रों का वर्णन है।

© NCERT not to be republished

विद्या और संस्कृति

जब अन्य लोगों के साथ संपर्क में आने पर मुसलमानों के धार्मिक और सामाजिक अनुभवों में गहराई आई, तो मुस्लिम समुदाय को अपने ऊपर सोच-विचार करना पड़ा और ईश्वर *(अल्लाह)* और संसार से जुड़े मुद्दों से भी जूझना पड़ा। एक मुसलमान का आदर्श आचरण सबके सामने और अकेले में कैसा होना चाहिए? सृष्टि रचना का क्या उद्देश्य है और कोई व्यक्ति यह कैसे जान सकता है कि ईश्वर उसके द्वारा पैदा किए जीवों से क्या चाहता है? कोई सृष्टि के रहस्यों को कैसे समझ सकता है? इन प्रश्नों के उत्तर विद्वान मुसलमानों से प्राप्त हुए, जिन्होंने समुदाय की सामाजिक पहचान को मज़बूत बनाने के लिए और अपनी बौद्धिक जिज्ञासा को संतुष्ट करने के लिए विभिन्न प्रकार का ज्ञान प्राप्त और संकलित किया।

धार्मिक विद्वानों *(उलमा)* के लिए क़ुरान से प्राप्त ज्ञान *(इल्म)* और पैगम्बर का आदर्श व्यवहार *(सुन्ना)* ईश्वर की इच्छा को जानने का एकमात्र तरीक़ा है और वह इस विश्व में मार्गदर्शन प्रदान करता है। मध्यकाल में उलमा अपना समय क़ुरान पर टीका *(तफ़सीर)* लिखने और मुहम्मद की प्रामाणिक उक्तियों और कार्यों को लेखबद्ध *(हदीथ)* करने में लगाते थे। कुछ उलमा ने कर्मकांडों *(इबादत)* के ज़रिए ईश्वर के साथ मुसलमानों के संबंध को नियंत्रित करने और सामाजिक कार्यों *(मुआमलात)* के ज़रिए बाकी इनसानों के साथ मुसलमानों के संबंधों को नियंत्रित करने के लिए कानून अथवा *शरीआ* (जिसका शाब्दिक अर्थ है सीधा रास्ता) तैयार करने का काम किया। इस्लामी कानून तैयार करने के लिए, विधिवेत्ताओं ने तर्क और अनुमान *(क़ियास)* का इस्तेमाल भी किया, क्योंकि क़ुरान और *हदीथ* में हर चीज़ प्रत्यक्ष नहीं थी और शहरीकरण के कारण जीवन उत्तरोत्तर जटिल बन गया था। स्रोतों के अर्थ-निर्णय और विधिशास्त्र के तरीकों के बारे में मतभेदों के कारण आठवीं और नौवीं शताब्दी में कानून की चार शाखाएँ (मज़हब) बन गईं। ये मलिकी, हनफी, शफीई और हनबली थीं, जिनमें से प्रत्येक का नाम एक प्रमुख विधि वेत्ता *(फक़ीह)* के नाम पर रखा गया था, और इनमें से अंतिम शाखा सर्वाधिक रूढ़िवादी थी। *शरीआ* ने सुन्नी समाज के भीतर सभी संभव कानूनी मुद्दों के बारे में मार्गदर्शन प्रदान किया था, हालांकि यह वाणिज्यिक अथवा दाण्डिक और संवैधानिक मुद्दों की अपेक्षा वैयक्तिक स्थिति (विवाह, तलाक और विरासत) के प्रश्नों के बारे में अधिक सुस्पष्ट था।

1233 में स्थापित मुस्तनसिरिया मदरसे का आँगन। मकतब में अपनी स्कूली शिक्षा पूरी कर चुके विद्यार्थियों के लिए यह मदरसा 'महाविद्यालय' था। मदरसे मस्जिदों से जुड़े होते थे लेकिन बड़े मदरसों की अपनी मस्जिद होती थी।

क़ुरान शरीफ़

"यदि संसार के सभी पेड़ कलम होते और समुद्र स्याही होते
और इस तरह सात समुद्र स्याही की पूर्ति करने के लिए होते,
तो भी लिखते-लिखते अल्लाह के शब्द समाप्त न होते।"

(क़ुरान, अध्याय 31, पद 27)

नौवीं शताब्दी में चर्मपत्र पर लिखे क़ुरान का एक पृष्ठ। यह सूरा 18 'अल-काफ़' (गुफा) की शुरुआत है। इसमें मूसा का उल्लेख किया गया है। इस कोणीय कूफ़ी लिपि में ध्वनियों को लाल चिह्न से दिखाया गया है ताकि उच्चारण में मदद मिले।

अरबी भाषा में रचित क़ुरान 114 अध्यायों *(सूराओं)* में विभाजित है, जिनकी लंबाई क्रमिक रूप से घटती जाती है। इस प्रकार आखिरी सूरा सबसे छोटा है। इसका अपवाद केवल पहला सूरा है, जो एक संक्षिप्त प्रार्थना (*अल-फतिहा* अथवा प्रारंभ) है। मुस्लिम परंपरा के अनुसार, क़ुरान उन संदेशों (रहस्योद्घाटन) का संग्रह है, जो खुदा ने पैगम्बर मुहम्मद को 610 और 632 के बीच की अवधि में पहले मक्का में और फिर मदीना में दिए थे। इन रहस्योद्घाटनों को संकलित करने का कार्य किसी समय 650 में पूरा किया गया था। आज जो सबसे प्राचीन संपूर्ण क़ुरान हमारे पास है, वह नौवीं शताब्दी का है। ऐसे बहुत से खंड हैं, जो इससे पुराने हैं; जो सबसे पहले के हैं, वे हैं चट्टान के गुंबद और सातवीं शताब्दी के सिक्कों पर उत्कीर्ण पद।

प्रारंभिक इस्लाम के इतिहास के लिए स्रोत सामग्री के रूप में क़ुरान के उपयोग ने कुछ समस्याएँ प्रस्तुत की हैं। पहली यह कि यह एक धर्मग्रंथ है, एक ऐसा मूल-पाठ है, जिसमें धार्मिक सत्ता निहित है। मुसलमानों का आमतौर पर यह विश्वास है कि खुदा की वाणी *(कलाम अल्लाह)* होने के कारण इसे शब्दश: समझा जाना चाहिए, हालाँकि बुद्धिवादी धर्मविज्ञानी अधिक उदार थे और उन्होंने क़ुरान की व्याख्या अधिक उदारता से की। 833 में, अब्बासी खलीफ़ा, अल-मामून ने यह मत लागू किया (विश्वास अथवा *मिहना* के मुक़द्दमे में) कि क़ुरान खुदा की वाणी की बजाय उसकी रचना है। दूसरी समस्या यह है कि क़ुरान प्राय: रूपकों में बात करता है और, ओल्ड टेस्टामेंट *(तवरित)* के विपरीत, यह घटनाओं का वर्णन नहीं करता, बल्कि केवल उनका उल्लेख करता है। इसलिए, मध्यकालीन मुस्लिम विद्वानों को पैगम्बर मुहम्मद के वचनों के अभिलेखों *(हदीथ)* की सहायता से टीकाओं की रचना करनी पड़ी थी। क़ुरान को पढ़ने-समझने के लिए कई *हदीथ* लिखे गए।

अंतिम रूप लेने से पहले, शरीआ को विभिन्न क्षेत्रों के रीति-रिवाज़ों पर आधारित कानूनों *(उर्फ़)* और राजनीतिक तथा सामाजिक व्यवस्था के बारे में राज्य के कानूनों *(सियासा शरीआ)* को ध्यान में रखते हुए समायोजित किया गया था। लेकिन देहातों के बहुत बड़े भागों में रीति-रिवाज़ों पर आधारित कानूनों ने अपनी ताकत बरकरार रखी और ज़मीन में बेटियों के उत्तराधिकार जैसे मामलों में शरीआ के पालन से बचते रहे। अधिकतर शासनों में, शासक और उसके अधिकारी राज्य की सुरक्षा के मामलों को नियमित रूप से निपटाते थे और केवल कुछ ही चुने हुए मामले *काज़ी* (न्यायाधीश) के पास भेजते थे। राज्य द्वारा प्रत्येक शहर अथवा बस्ती में नियुक्त किया गया काज़ी अक्सर *शरीआ* का कड़ाई से पालन कराने की बजाय विवाद के सम्मत हल पर पहुँच कर एक मध्यस्थ के रूप में कार्य करता था।

मध्यकालीन इस्लाम के धार्मिक विचारों वाले लोगों का एक समूह बन गया था जिन्हें सूफ़ी कहा जाता है। ये लोग तपश्चर्या *(रहबनिया)* और रहस्यवाद के ज़रिए खुदा का अधिक गहरा और अधिक वैयक्तिक ज्ञान प्राप्त करना चाहते थे। समाज जितना अधिक भौतिक पदार्थों और सुखों की ओर लालायित होता था, सूफ़ी लोग संसार का त्याग *(ज़ुह्द)* उतना अधिक करना चाहते थे और केवल खुदा पर भरोसा *(तवक्कुल)* करना चाहते थे। आठवीं और नौवीं शताब्दी में तपश्चर्या एवं वैराग्य की प्रवृत्तियाँ सर्वेश्वरवाद और प्यार के विचारों द्वारा ऊँचा उठकर रहस्यवाद *(तसव्वुफ़)* की ऊँची अवस्था पर पहुँच गईं। सर्वेश्वरवाद ईश्वर और उसकी सृष्टि के एक होने का विचार है, जिसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य की आत्मा को उसके निर्माता यानी परमात्मा के साथ मिलाना चाहिए। ईश्वर से मिलन, ईश्वर के साथ तीव्र प्रेम *(इश्क़)* के ज़रिए ही प्राप्त किया जा सकता है। इस इश्क़ का उपदेश एक महिला संत, बसरा की राबिया (मृत्यु 891 में) द्वारा अपनी शायरी में दिया गया था। बयाज़िद बिस्तामी (मृत्यु 875 में), जो एक ईरानी सूफ़ी था, पहला व्यक्ति था, जिसने अपने आपको खुदा में लीन *(फ़ना)* करने का उपदेश दिया था। सूफ़ी आनंद उत्पन्न करने और प्रेम तथा भावावेश उदीप्त करने के लिए संगीत समारोहों *(समा)* का उपयोग करते थे।

तेज़ी से नाचते हुए दरवेशों का चित्र, ईरानी पांडुलिपि, 1490। नाचने वाले चार पुरुषों में से एक ही के हाथ सही स्थिति में दिखाए गए हैं। इनमें कुछ चक्कर खाकर गिर गए हैं। उन्हें उठाकर ले जाया जा रहा है।

सूफ़ीवाद का द्वार सबके लिए खुला है, चाहे वह किसी भी धर्म, हैसियत अथवा लिंग का हो। धुलनुन मिस्री (मृत्यु 861 में), जिसकी कब्र आज भी मिस्र में पिरामिडों के निकट देखी जा सकती है, ने अब्बासी खलीफ़ा, अल-मुतवक्किल के सामने यह घोषणा की थी कि 'उसने सच्चा इस्लाम एक बूढ़ी महिला से, और सच्ची वीरता एक जल-वाहक से सीखी है।' सूफ़ीवाद ने इस्लाम को निजी अधिक, और संस्थात्मक कम बना दिया और इस प्रकार उसने लोकप्रियता प्राप्त की और रूढ़िवादी इस्लाम के समक्ष चुनौती पेश की।

इस्लामी दार्शनिकों और वैज्ञानिकों ने यूनानी दर्शन और विज्ञान के प्रभाव में ईश्वर और विश्व की एक वैकल्पिक कल्पना विकसित की। सातवीं शताब्दी के दौरान, बाइज़ेंटाइन

और ससानी साम्राज्यों में पिछली यूनानी संस्कृति के अवशेष पाए जा सकते थे, हालांकि, वे धीरे-धीरे समाप्त हो रहे थे। सिकंदरिया, सीरिया और मेसोपोटामिया के स्कूलों में, जो कभी सिकन्दर के साम्राज्य के भाग थे, अन्य विषयों के साथ-साथ यूनानी दर्शन, गणित और चिकित्सा की शिक्षा दी जाती थी। उमय्यद और अब्बासी खलीफ़ाओं ने ईसाई विद्वानों से यूनानी और सीरियाक भाषा की किताबों का अनुवाद कराया। अल-मामून के शासन में अनुवाद एक सुनियोजित क्रियाकलाप बन गया था। उसने बग़दाद में पुस्तकालय-व-विज्ञान संस्थान *(बायत अल-हिक्मा)* को, जहाँ विद्वान काम करते थे, सहायता दी थी। अरस्तु की कृतियों, यूक्लिड की *एलीमेंट्स* और टोलेमी की पुस्तक *एल्मागेस्ट* की ओर अरबी पढ़ने वाले विद्वानों का ध्यान दिलाया गया। खगोल विज्ञान, गणित और चिकित्सा के बारे में भारतीय पुस्तकों का अनुवाद भी इसी काल में अरबी में किया गया। ये रचनाएँ यूरोप में पहुँची और इनसे दर्शन-शास्त्र और विज्ञान में रुचि उत्पन्न हुई।

क्रियाकलाप 3

दाईं ओर दिए गए उद्धरण पर टिप्पणी कीजिए। क्या आज के विद्यार्थी के लिए यह प्रासंगिक होगा?

आदर्श विद्यार्थी

बारहवीं शताब्दी के बग़दाद में कानून और चिकित्सा के विषयों के विद्वान अब्द अल-लतीफ़ (Abd al-Latif) अपने आदर्श विद्यार्थी से बात कर रहे हैं:

"मेरा अनुरोध है कि आप बिना किसी की सहायता के, केवल पुस्तकों से ही, विज्ञान न सीखें, चाहे आपको समझने की अपनी योग्यता पर भरोसा हो। उन्हें प्रत्येक विषय के लिए, जिसका ज्ञान आप प्राप्त करना चाहते हों, अध्यापकों का सहारा लें, और यदि आपके अध्यापक का ज्ञान सीमित हो, तो जो कुछ वह दे सकता है उसे प्राप्त कर लें, जब तक आपको उससे योग्य अध्यापक न मिल जाए। आपको अपने अध्यापक का आदर और सम्मान अवश्य करना चाहिए। जब आप कोई पुस्तक पढ़ें, तो उसे कंठस्थ करने और उसके अर्थ पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लें। मान लो कि पुस्तक खो गई है और आप उसे छोड़ सकते हैं तब पुस्तक कंठस्थ होने पर आपका कुछ नहीं बिगड़ेगा। व्यक्ति को इतिहास की पुस्तकें पढ़नी चाहिए, जीवनियों और राष्ट्रों के अनुभवों का अध्ययन करना चाहिए। ऐसा करने से यह लगेगा कि पढ़ने वाला अपने अल्प जीवन-काल में अतीत के लोगों के साथ रह रहा है। उनके साथ उसके घनिष्ठ संबंध हैं और उनमें अच्छों और बुरों को पहचानता है। आपको अपना आचरण शुरू के मुसलमानों के आचरण के अनुरूप बनाना चाहिए। इसलिए, पैगम्बर की जीवनी को पढ़ो और उनके पद-चिह्नों पर चलो। आपको अपने स्वभाव के बारे में अच्छी राय रखने की बजाय, उस पर बारंबार अविश्वास करना चाहिए, अपना ध्यान विद्वान लोगों और उनकी कृतियों पर लगाना चाहिए, बहुत सावधानी से आगे बढ़ना चाहिए और कभी भी जल्दबाज़ी नहीं करनी चाहिए। जिस व्यक्ति ने अध्ययन का दबाव न झेला हो, वह ज्ञान के आनंद का मज़ा नहीं ले सकता। जब आपने अपना अध्ययन और चिंतन-मनन पूरा कर लिया हो, तो अपनी जीभ को अल्लाह का नाम लेने के कार्य में व्यस्त रखिए और अल्लाह का गुणगान कीजिए। यदि संसार आपकी ओर पीठ मोड़ ले, तो शिकायत न करें। यह जान लें कि ज्ञान कभी खत्म नहीं होता, वह पीछे अपनी सुगंध छोड़ जाता है, जो उसके स्वामी का पता बता देती है ज्ञान प्रकाश और कांति की किरण ज्ञानी पर चमकती रहती है और उसकी ओर संकेत करती रहती है।"

– अहमद इब्न अल क़ासिम इब्न अबी उसयबिया, *उयून अल अन्बा*

© NCERT not to be republished

नए विषयों के अध्ययन ने आलोचनात्मक जिज्ञासा को बढ़ावा दिया और इस्लामी बौद्धिक जीवन पर गहरा प्रभाव डाला। धर्म वैज्ञानिक प्रवृत्तियों वाले विद्वानों जैसे मुतज़िला के नाम से जाने गए विद्वानों के समूह ने इस्लामी विश्वासों की रक्षा के लिए यूनानी तर्क और विवेचना *(कलाम)* के तरीकों का इस्तेमाल किया। दार्शनिकों *(फलसिफा)* ने व्यापक प्रश्न प्रस्तुत किए और उनके नए उत्तर प्रदान किए। इब्न सिना (980–1037) का, जो व्यवसाय की दृष्टि से एक चिकित्सक और दार्शनिक था, यह विश्वास नहीं था कि क़यामत के दिन व्यक्ति फिर से जिंदा हो जाता था। धर्मवैज्ञानिकों ने इसका ज़ोरदार विरोध किया। चिकित्सा संबंधी उनके लेख व्यापक रूप से पढ़े जाते थे। उनकी सबसे प्रभावशाली पुस्तक *चिकित्सा के सिद्धांत (अल-क़ानून फिल तिब)* थी, जो दस लाख शब्दों वाली पांडुलिपि थी, जिसमें उस समय के औषधशास्त्रियों द्वारा बेची जाने वाली 760 औषधियों का उल्लेख किया गया है और उसके द्वारा अस्पतालों *(बीमारिस्तान)* में किए गए प्रयोगों तथा अनुभवों की जानकारी भी दी गई है। इस पुस्तक में आहार-विज्ञान (आहार के विनियमन के ज़रिए उपचार) के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है। यह बताया गया है कि जलवायु और पर्यावरण का स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है, और कुछ रोगों के संक्रामक स्वरूप की जानकारी दी गई है। इस पुस्तक का उपयोग यूरोप में एक पाठ्यपुस्तक के रूप में किया जाता था जहाँ लेखक को एविसेन्ना के नाम से जाना जाता था (देखिए विषय 7)। यह कहा जाता है कि वैज्ञानिक और कवि उमर खय्याम अपनी मृत्यु से ठीक पहले यह पुस्तक पढ़ रहे थे। उनकी सोने की दाँत-कुरेदनी इस पुस्तक के तत्वमीमांसा विषयक अध्याय के दो पृष्ठों के बीच पड़ी मिली थी।

मध्यकालीन इस्लामी समाजों में, बढ़िया भाषा और सृजनात्मक कल्पना को किसी व्यक्ति के सर्वाधिक सराहनीय गुणों में शामिल किया जाता था। ये गुण किसी भी व्यक्ति की विचार-अभिव्यक्ति को *अदब* के स्तर तक ऊँचा उठा देते थे। 'अदब' जिसका अर्थ है साहित्यिक और सांस्कृतिक परिष्कार। अदब रूपी अभिव्यक्तियों में पद्य (*नज़्म* अथवा सुव्यवस्थित विन्यास) और गद्य (*नथ्र* अथवा बिखरे हुए शब्द) शामिल थे और यह अपेक्षा की जाती थी कि उन्हें कंठस्थ कर लिया जाएगा और अवसर आने पर उनका उपयोग किया जाएगा। इस्लाम-पूर्व काल की सबसे अधिक लोकप्रिय रचना संबोधन गीत *(कसीदा)* था। अपने आश्रयदाताओं की उपलब्धियों का गुणगान करने के लिए अब्बासी काल के कवियों द्वारा इस विधा का विकास किया गया। फ़ारस मूल के कवियों ने अरबी कविता का पुन: आविष्कार किया और उसमें नयी जान फूँकी और अरबों के सांस्कृतिक आधिपत्य को चुनौती दी। अबु नुवास (मृत्यु 815 में) जो फ़ारसी मूल का था, ने इस्लाम द्वारा वर्जित आनंद मनाने के इरादे से शराब और पुरुष-प्रेम जैसे नए विषयों पर उत्कृष्ट श्रेणी की कविताओं की रचना करके नया मार्ग चुना। अबु नुवास के बाद, कवियों ने अपने अनुराग के पात्र को पुरुष के रूप में संबोधित किया, चाहे वह स्त्री हो। इसी परंपरा का अनुसरण करते हुए, सूफ़ियों ने रहस्यवादी प्रेम की मदिरा द्वारा उत्पन्न मस्ती का गुणगान किया।

जब अरबों ने ईरान पर विजय प्राप्त की, तब पहलवी, जो प्राचीन ईरान की पवित्र पुस्तकों की भाषा थी, पतन की स्थिति में थी। शीघ्र ही पहलवी का एक और रूप, जिसे नयी फारसी कहा जाता है, विकसित हुआ, जिसमें अरबी के शब्दों की संख्या बहुत अधिक थी। खुरासान और तुरान सल्तनतों की स्थापना से नयी फ़ारसी बड़ी सांस्कृतिक ऊँचाइयों पर पहुँच गई। समानी राज़दरबार के कवि, रुदकी (मृत्यु 940 में), को नयी फ़ारसी कविता का जनक माना जाता था; इस कविता में छोटे गीत-काव्य *(ग़ज़ल)* और चतुष्पदी *(रुबाई)* जैसे नए रूप शामिल थे। *रुबाई*

चार पंक्तियों वाला छंद होता है, जिसमें पहली दो पंक्तियाँ भूमिका बाँध देती हैं, तीसरी पंक्ति बढ़िया तरीके से सधी होती है, और चौथी पंक्ति मुख्य बात प्रस्तुत करती है। इसके रूप के विपरीत, *रुबाई* की विषय-वस्तु अप्रतिबंधित होती है। इसका इस्तेमाल प्रियतम अथवा प्रेयसी के सौंदर्य का बखान करने, संरक्षक की प्रशंसा करने, अथवा दार्शनिक के विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए किया जा सकता है। *रुबाई* (बहुवचन *रुबाइयात* है) उमर खय्याम के हाथों अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गई। उमर खय्याम (1048-1131) एक खगोल वैज्ञानिक और गणितज्ञ भी थे, जो विभिन्न समयों पर बुखारा, समरकंद और इस्फाहान में रहे थे।

13वीं शताब्दी की अरबी पांडुलिपि का एक लघुचित्र, जिसमें दिमना शेर (असद) से बात कर रहा है।

ग्याहरवीं शताब्दी के प्रारंभ में, गज़नी फ़ारसी साहित्यिक जीवन का केंद्र बन गया था। कवि स्वाभाविक रूप से शाही दरबारों की चमक-दमक से आकर्षित होते थे। शासकों ने भी अपनी प्रतिष्ठा को बढ़ाने के लिए कलाकारों और विद्वानों को संरक्षण देने के महत्त्व को समझ लिया था। गज़नी के महमूद ने अपने चारों ओर कवियों का एक समूह एकत्र कर लिया था, जिन्होंने काव्य-संग्रहों *(दीवानों)* और महाकाव्यों *(मथनवी)* की रचना की। इनमें सबसे अधिक प्रसिद्ध फिरदौसी (मृत्यु 1020 में) थे, जिन्हें *शाहनामा* (राजाओं का जीवनचरित) को पूरा करने में 30 वर्ष लग गए; इस पुस्तक में 50,000 पद हैं और यह इस्लामी साहित्य की एक श्रेष्ठ कृति मानी जाती है। *शाहनामा* परंपराओं और आख्यानों का संग्रह है (जिनमें सबसे अधिक लोकप्रिय आख्यान रुस्तम का है), जिसमें प्रारंभ से लेकर अरबों की विजय तक ईरान का चित्रण काव्यात्मक शैली में किया गया है। यह गज़नवी परंपरा के अनुरूप ही था कि बाद में भारत में फ़ारसी प्रशासन और संस्कृति की भाषा बन गई।

बग़दाद के एक पुस्तक-विक्रेता, इब्न नदीम (मृत्यु 895) की पुस्तक सूची *(किताब अल-फिहरिस्त)* में ऐसी बहुत-सी पुस्तकों का उल्लेख है, जो पाठकों की नैतिक शिक्षा और उनके मनोरंजन के लिए लिखी गई थीं। इनमें सबसे पुरानी पुस्तक जानवरों की कहानियों का संग्रह है, जिसका नाम *कलीला व दिमना* (दो गीदड़ों के नाम, जो उसके मुख्य पात्र थे) है। यह पुस्तक *पंचतंत्र* के पहलवी संस्करण का अरबी अनुवाद है। सबसे अधिक प्रचलित और स्थायी रचनाएँ वीर-साहसियों की कहानियाँ हैं, जैसे अल-सिकंदर और सिन्दबाद और दुखी प्रेमियों, जैसे कायस (जिसे मजनू यानि कि पागल व्यक्ति कहा जाता था) की कहानियाँ। ये कहानियाँ कई शताब्दियों में मौखिक अथवा लिखित परंपराओं के रूप में विकसित हुई हैं। *'एक हज़ार एक रातें'* (थाउजेंड एण्ड वन नाइट्स) कहानियों का एक अन्य संग्रह है। ये कहानियाँ एक ही वाचिका, शहरज़ाद द्वारा अपने पति को एक के बाद दूसरी रात को सुनाई गई थीं। ये संग्रह मूल रूप से भारतीय फ़ारसी भाषा में था और बग़दाद में इसका अनुवाद अरबी भाषा में किया गया था। बाद में मामलुक काल में काहिरा में इसमें और कहानियाँ जोड़ दी गई थीं। ये कहानियाँ विभिन्न किस्मों के मनुष्यों-उदार, मूर्ख, भोले-भाले और धूर्त मनुष्यों का चित्रण करती हैं और शिक्षा देने और मनोरंजन करने के लिए

not to be republished © NCERT

सुनाई गई थीं। बसरा के जहीज़ (मृत्यु 868 में) ने अपनी पुस्तक *किताब अल-बुखाला* (कंजूसों की पुस्तक) में कंजूसों के बारे में मन बहलाने वाले किस्से इकट्ठे किए थे और लालच का विश्लेषण किया था।

नौवीं शताब्दी से, *अदब* के दायरे का विस्तार किया गया और उसमें जीवनियों, आचार संहिताओं *(अखलाक़)*, राजकुमारों को शासनकला की शिक्षा देने वाली पुस्तकों और सबसे ऊपर, इतिहास और भूगोल को शामिल किया गया। पढ़े-लिखे मुस्लिम समाजों में इतिहास लिखने की परंपरा अच्छी तरह स्थापित थी। इतिहास की पुस्तकें विद्वानों और विद्यार्थियों द्वारा और इनके अलावा अधिक पढ़े-लिखे लोगों द्वारा पढ़ी जाती थीं। इतिहास शासकों और अधिकारियों के लिए किसी वंश की कीर्ति बढ़ाने वाले कारनामों और उपलब्धियों का अच्छा विवरण और प्रशासन की तकनीकों के उदाहरण प्रस्तुत करता था। इतिहास के दो प्रमुख ग्रंथों, बालाधुरी (मृत्यु 892 में) के *अनसब अल-अशरफ* (सामंतों की वंशावलियाँ) और ताबरी के *तारीख अल-रसूल वल मुलुक* (पैगम्बरों और राजाओं का इतिहास) में समूचे मानव इतिहास का वर्णन किया गया है, जिसमें इस्लामी काल केंद्र-बिंदु है। स्थानीय इतिहास-लेखन की परंपरा का विकास खिलाफत के विघटन के बाद हुआ। इस्लामी जगत की एकता और विविधता के अन्वेषण के लिए फ़ारसी में वंशों, नगरों और प्रदेशों के बारे में पुस्तकें लिखी गईं।

भूगोल और यात्रा वृत्तांत *(रिहला)* अदब की एक विशेष विधा बन गए। इनमें यूनानी, ईरानी और भारतीय पुस्तकों के ज्ञान और व्यापारियों तथा यात्रियों के विचारों एवं कथनों को शामिल किया गया। गणितीय भूगोल में, बसे हुए संसार को भूमध्यरेखा के समानान्तर, हमारे तीन महाद्वीपों के अनुरूप, सात किस्म की जलवायु *('क्लाइम' एकवचन इक्लिम)* में विभाजित किया गया। प्रत्येक शहर की बिलकुल सही स्थिति का निर्धारण खगोल-वैज्ञानिक तरीके से किया गया। मुकदसी (मृत्यु 1000 में) का वर्णनात्मक भूगोल (*अहसान अल-तकसीम* अथवा सर्वोत्तम विभाजन) विश्व के सभी देशों के लोगों का तुलनात्मक अध्ययन है और विदेशों के बारे में उठी जिज्ञासाओं को शांत करने वाला खज़ाना है। विश्व की संस्कृतियों की व्यापक विविधता दर्शाने के लिए मसूदी की (943 में लिखी) पुस्तक *मुरुज अल-धाहाब* (स्वर्णिम घासस्थली) में भूगोल और सामान्य इतिहास को मिला दिया गया था। अल्बरुनी की प्रसिद्ध पुस्तक *तहकीक मा लिल-हिंद* (भारत का इतिहास) ग्याहरवीं शताब्दी के एक मुस्लिम लेखक का इस्लाम की दुनिया से बाहर देखने और यह जानने का सबसे बड़ा प्रयास था कि एक अन्य सांस्कृतिक परंपरा में क्या चीज़ कीमती है।

दसवीं शताब्दी तक एक ऐसी इस्लामी दुनिया उभर आई थी, जिसे यात्री आसानी से पहचान सकते थे। धार्मिक इमारतें इस दुनिया की सबसे बड़ी बाहरी प्रतीक थीं। स्पेन से मध्य एशिया तक फैली हुई मस्जिदें, इबादतगाह और मकबरों का बुनियादी नमूना एक जैसा था –मेहराबें, गुम्बद, मीनार और खुले सहन और ये इमारतें मुसलमानों की आध्यात्मिक और व्यावहारिक ज़रूरतों को अभिव्यक्त करती थीं। इस्लाम की पहली शताब्दी में, मस्जिद ने एक विशिष्ट वास्तुशिल्पीय रूप (खंभों के सहारे वाली छत) प्राप्त कर लिया था जो प्रादेशिक विभिन्नताओं से परे था। मस्जिद में एक खुला

8वीं शताब्दी, फिलिस्तीन के खिरबत-अल-मफ़जर महल के स्नानगृह का फ़र्श। इस पर सुन्दर पच्चीकारी की गई है। कल्पना कीजिए कि इस पेड़ पर खलीफ़ा विराजमान है। नीचे दिए गए दृश्य में शांति व युद्ध का चित्रण किया गया है।

© NCERT not to be republished

इस्लामी सजावटी प्रतिभा धातु-वस्तुओं की कला में पूरी तरह प्रकट हुई। इन धातु वस्तुओं को अच्छी तरह सुरक्षित रखा गया है। 14वीं शताब्दी, सीरिया की एक मस्जिद के दीपक पर प्रसिद्ध 'प्रकाश' पद अंकित है।

'ईश्वर स्वर्ग और धरती का नूर है उसका प्रकाश दीपक (मिस्बह) वाले आले (मिश्कत) के समान है। चिराग़ शीशे के अंदर है जो चमकते हुए सितारे की तरह दिखाई देता है जो सौभाग्यशाली जैतून के वृक्ष से प्रदीप्त है जो न तो पूर्वी है और न पश्चिमी जिसका तेल हमेशा चमकता रहेगा चाहे उसे कोई अग्नि स्पर्श न करे।'

(क़ुरान, अध्याय 24, पद 35)

प्राँगण सहन होता था, जहाँ पर एक फव्वारा अथवा जलाशय बनाया जाता था और यह प्राँगण एक बड़े कमरे की ओर खुलता, जिसमें प्रार्थना करने वाले लोगों की लंबी पंक्तियों और प्रार्थना *(नमाज़)* का नेतृत्व करने वाले व्यक्ति *(इमाम)* के लिए पर्याप्त स्थान होता था। बड़े कमरे की दो विशेषताएँ थीं जो आज तक महत्त्वपूर्ण हैं: दीवार में एक मेहराब, जो मक्का *(किबला)* की दिशा का संकेत देती है और एक मंच *(मिम्बर)* जहाँ से शुक्रवार को दोपहर की नमाज़ के समय प्रवचन दिए जाते हैं। इमारत में एक मीनार जुड़ी होती है जिसका उपयोग नियत समयों पर प्रार्थना हेतु लोगों को बुलाने के लिए किया जाता है। मीनार नए धर्म के अस्तित्व का प्रतीक है। शहरों और गाँवों में लोग समय का अंदाजा पाँच दैनिक प्रार्थनाओं और साप्ताहिक प्रवचनों की सहायता से लगाते थे।

केंद्रीय प्राँगण *(इवान)* के चारों ओर निर्मित इमारतों के निर्माण का वही स्वरूप न केवल मस्जिदों और मकबरों में, बल्कि काफिलों की सरायों, अस्पतालों और महलों में भी पाया जाता था। उमय्यदों ने नखलिस्तानों में 'मरुस्थली महल' बनाए, जैसे फिलिस्तीन में खिरबत अल-मफजर और जोर्डन में क़ुसाईर अमरा, जो ठाठदार और विलासपूर्ण निवास-स्थानों और शिकार और मनोरंजन के लिए विश्राम-स्थलों के रूप में काम आते थे। महलों को, जो रोमन और ससानी वास्तुशिल्प के तरीके से बनाए गए थे, लोगों के चित्रों, प्रतिमाओं और पच्चीकारी से भव्य रूप से सजाया जाता था। अब्बासियों ने समरा में बागों और बहते हुए पानी के बीच एक नया शाही शहर बनाया जिसका ज़िक्र हारुन-अल-रशीद (Harun al-Rashid) से जुड़ी कहानियों और आख्यानों में किया जाता है। बग़दाद में अब्बासियों के विशाल महल अथवा काहिरा में फातिमियों के महल लुप्त हो गए हैं; और अब केवल साहित्यिक पुस्तकों में उनका संकेत मिलता है।

इस्लामी धार्मिक कला में प्राणियों के चित्रण की मनाही से कला के दो रूपों को बढ़ावा मिला: खुशनवीसी (*खत्ताती* अथवा सुन्दर लिखने की कला) और अरबेस्क (ज्यामितीय और वनस्पतीय डिज़ाइन)। इमारतों (वास्तुशिल्प) को सजाने के लिए आमतौर पर धार्मिक उद्धरणों का छोटे और बड़े शिलालेखों में उपयोग किया जाता था। कुरान की आठवीं और नौवीं शताब्दियों की पांडुलिपियों में खुशनवीसी की कला को सर्वोत्तम रूप में सुरक्षित रखा गया है। *किताब अल-अघानी* (गीत पुस्तक), *कलीला व दिमना* और *हरिरी की मकामात,* जैसी साहित्यिक कृतियों को लघुचित्रों से सजाया गया था। इसके अलावा, पुस्तक के सौंदर्य को बढ़ाने के लिए चित्रावली की बहुत सी किस्मों की तकनीकें शुरू की गई थीं। इमारतों और पुस्तकों के चित्रण में उद्यान की कल्पना पर आधारित पौधों और फूलों के नमूनों का उपयोग किया जाता था।

जिन इस्लामी क्षेत्रों का हमने अध्ययन किया है उनके इतिहास में मानव सभ्यता के तीन पहलू महत्त्वपूर्ण रहे हैं: धर्म, समुदाय एवं राजनीति। इन्हें हम तीन गोले मान सकते हैं। सातवीं शताब्दी में ये तीनों गोले एक-दूसरे पर इस तरह बैठे हुए थे कि वह सब एक गोला ही लगते थे। अगली पाँच शताब्दियों में ये गोले अलग-अलग हो गए। 1200 तक आते-आते इस्लाम का प्रभाव राज्य व सरकार पर न्यूनतम हो गया। इस काल में राजनीति से कई ऐसी चीज़ें जुड़ गईं जिनकी कोई धार्मिक वैधता नहीं थी (जैसे राजतंत्र की संस्था, गृहयुद्ध आदि)। लेकिन अभी भी धर्म व समुदाय के गोले एक ही थे। निजी मामलों और रीतियों में शरीया से मुस्लिम समुदाय प्रभावित था और यह बात उसकी एकता का महत्त्वपूर्ण कारण भी था। इस्लाम के धार्मिक कुलीन शासन नहीं चला रहे थे (राजनीति का गोला भिन्न था), लेकिन वे धार्मिक अस्मिता को परिभाषित कर रहे थे। धर्म व समुदाय के गोलों का अलग होना मुस्लिम समाज के क्रमिक सांसारीकरण (Secularisation) के ज़रिए ही संभव था। कुछ दार्शनिक व सूफ़ी ऐसे सांसारीकरण की सलाह देते थे। उनका सुझाव था कि नागरिक समाज को धर्म से स्वतंत्र हो जाना चाहिए और रीतियों व कर्मकांडों की जगह निजी आध्यात्मिकता को ले लेनी चाहिए।

क्रियाकलाप 4

इस अध्याय के कौन से चित्र आपको सबसे अच्छे लगे और क्यों?

595	पैगम्बर मुहम्मद की खदीजा से शादी। खदीजा मक्का में व्यापार करती थीं और धनी थीं। आगे चलकर उन्होंने इस्लाम का समर्थन किया
610-12	पैगम्बर मुहम्मद का प्रथम रहस्योद्घाटन, 612 में पहला सार्वजनिक उपदेश
621	मदीना के धर्मांतरित मुसलमानों के साथ अकाबा में पहला समझौता
622	मक्का से मदीना हिजरत (स्थानांतरण)। मदीना के अरब कबीलों (अंसर) ने मक्का से आने वाले मुहाजिरों को पनाह दी
632-61	खिलाफत के प्रारंभिक वर्ष। सीरिया, इराक, ईरान व मिस्र पर विजय; गृहयुद्ध
661-750	उमय्यद शासन; दमिश्क का राजधानी बनना
750-945	अब्बासी शासन; बग़दाद का राजधानी बनना
945	बग़दाद पर बुहाइयों का कब्ज़ा; साहित्यिक व सांस्कृतिक प्रस्फुटन
1063-92	निज़ामुल मुल्क का शासन। यह एक शक्तिशाली सल्जुक वज़ीर थे, जिन्होंने कई मदरसों की स्थापना की, जिन्हें इकट्ठे निज़ामिया कहा जाता है। निज़ामुल मुल्क की हत्या
1095-1291	धर्मयुद्ध; मुसलमानों व ईसाइयों में संपर्क
1111	प्रभावशाली ईरानी विद्वान गज़ली, जिन्होंने बुद्धिवाद का विरोध किया, की मृत्यु
1258	मंगोलों ने बग़दाद पर कब्ज़ा किया

अभ्यास

संक्षेप में उत्तर दीजिए

1. सातवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में बेदुइओं के जीवन की क्या विशेषताएँ थीं?
2. 'अब्बासी क्रांति' से आपका क्या तात्पर्य है?
3. अरबों, ईरानियों व तुर्कों द्वारा स्थापित राज्यों की बहुसंस्कृतियों के उदाहरण दीजिए?
4. यूरोप व एशिया पर धर्मयुद्धों का क्या प्रभाव पड़ा?

संक्षेप में निबंध लिखिए

5. रोमन साम्राज्य के वास्तुकलात्मक रूपों से इस्लामी वास्तुकलात्मक रूप कैसे भिन्न थे?
6. रास्ते पर पड़ने वाले नगरों का उल्लेख करते हुए समरकंद से दमिश्क तक की यात्रा का वर्णन कीजिए।

© NCERT not to be republished

विषय

5

यायावर साम्राज्य

11091CH05

यायावर साम्राज्य की अवधारणा विरोधात्मक प्रतीत हो सकती है। यह तर्क दिया जा सकता है कि यायावर लोग मूलतः घुमक्कड़ होते हैं। यह भी कहा जा सकता है कि ये सापेक्षिक तौर पर एक अविभेदित आर्थिक जीवन और प्रारंभिक राजनीतिक संगठन के साथ परिवारों के समूहों में संगठित होते हैं। दूसरी ओर 'साम्राज्य' शब्द भौतिक अवस्थितियों को दर्शाता है। 'साम्राज्य' ने जटिल सामाजिक और आर्थिक ढाँचे में स्थिरता प्रदान की और एक सुपरिष्कृत प्रशासनिक-व्यवस्था के द्वारा एक व्यापक भूभागीय प्रदेश में सुचारु रूप से शासन प्रदान किया। लेकिन कई बार समाजशास्त्रियों की परिभाषाएँ बहुत संकीर्ण व गैर-ऐतिहासिक हो जाती हैं क्योंकि वे किसी बँधे-बँधाए साँचे में उन्हें ढालते हैं। ये परिभाषाएँ तब त्रुटिपूर्ण सिद्ध होती हैं जब हम यायावर समूहों द्वारा निर्मित उनके कुछ साम्राज्य संबंधी संगठनों का अध्ययन करते हैं।

अध्याय 4 में हमने इस्लामी इलाकों में राज्य-निर्माण का अध्ययन किया जो अरब-प्रायद्वीप की बद्दू यायावर-परंपरा पर आधारित था। इस अध्याय में एक भिन्न वर्ग के यायावरों का अध्ययन किया गया है। ये हैं मध्य-एशिया के मंगोल जिन्होंने तेरहवीं और चौदहवीं शताब्दी में पारमहाद्वीपीय साम्राज्य की स्थापना चंगेज़ खान के नेतृत्व में की थी। उसका साम्राज्य यूरोप और एशिया महाद्वीप तक विस्तृत था। कृषि पर आधारित चीन की साम्राज्यिक निर्माण-व्यवस्था की तुलना में शायद मंगोलिया के यायावर लोग दीन-हीन, जटिल जीवन से दूर एक सामान्य सामाजिक और आर्थिक परिवेश में जीवन बिता रहे थे; लेकिन मध्य-एशिया के ये यायावर एक ऐसे अलग-थलग 'द्वीप' के निवासी नहीं थे जिन पर ऐतिहासिक परिवर्तनों का प्रभाव न पड़े। इन समाजों ने विशाल विश्व के अनेक देशों से संपर्क रखा, उनके ऊपर अपना प्रभाव छोड़ा और उनसे बहुत कुछ सीखा जिनके वे एक महत्वपूर्ण अंग थे।

इस अध्याय से हमें ज्ञात होता है कि मंगोलों ने चंगेज़ खान के नेतृत्व में किस प्रकार अपनी पारंपरिक सामाजिक और राजनीतिक रीति-रिवाजों को रूपांतरित कर एक भयानक सैनिक-तंत्र और शासन संचालन की प्रभावी पद्धतियों का सूत्रपात किया। मंगोलों के सामने यह चुनौती थी कि वे केवल अपनी स्टेपी परंपराओं के ज़रिए हाल ही में विजित क्षेत्रों का शासन नहीं चला सकते थे। यह इस वजह से था कि इस नए क्षेत्र में उन्हें तरह-तरह के लोगों, अर्थव्यवस्थाओं और धर्मों का सामना करना पड़ा।

अपना 'यायावर साम्राज्य' बनाने के लिए उन्हें नए कदम उठाने पड़े और समझौते भी करने पड़े। इस साम्राज्य का यूरेशिया के इतिहास पर गहरा प्रभाव पड़ा और इसने मंगोलों के समाज के चरित्र और संरचना को हमेशा के लिए बदल डाला।

स्टेपी निवासियों ने आमतौर पर अपना कोई साहित्य नहीं रचा। इसीलिए हमारे इन यायावरी समाजों का ज्ञान मुख्यतः इतिवृत्तों, यात्रा-वृत्तांतों और नगरीय साहित्यकारों के दस्तावेज़ों से

© NCERT not to be republished

प्राप्त होता है। इन लेखकों की यायावरों के जीवन-संबंधी सूचनाएँ अज्ञात और पूर्वाग्रहों से ग्रस्त हैं। मंगोलों की साम्राज्यिक सफलताओं ने अनेक विद्वानों को अपनी ओर आकर्षित किया। उनमें से कुछ ने अपने अनुभवों के यात्रावृत्तांत लिखे; अन्य मंगोल अधिपतियों के राज्याश्रय में रहे। इन व्यक्तियों की पृष्ठभूमि अलग-अलग थी। वे बौद्ध, कन्फ्यूशियसवादी, ईसाई, तुर्क और मुसलमान थे। यद्यपि इन लोगों को मंगोल रीति-रिवाजों का ज्ञान नहीं था। इनमें से अनेक ने इनके विषय में सहानुभूतिपरक विवरण और यहाँ तक कि उनकी प्रशस्तियाँ भी लिखीं। ऐसे विवरणों ने यूरेशिया के शहरों से उपजे इन निंदापूर्ण लेखों को चुनौती दी जिनमें मंगोलों को स्टेपी लुटेरा बताकर हाशिए पर डाल दिया जाता था। इस सबसे मंगोलों की तस्वीर पहले से कहीं ज़्यादा जटिल हो गई। अत: मंगोलों का इतिहास हमें ऐसे रोचक तथ्य उपलब्ध कराता है जिससे कि सामान्यतया अभ्रमणशील समाजों द्वारा जिस ढंग से यायावर समुदायों को आदिम-बर्बर* के रूप में पेश किया गया है, उस पर प्रश्नचिह्न लग जाता है?

संभवत: मंगोलों पर सबसे बहुमूल्य शोध कार्य अठाहरवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में रूसी विद्वानों ने उस काल में किया जब ज़ार शासक मध्य-एशियाई क्षेत्रों में अपनी शक्ति को सुदृढ़ कर रहे थे। ये कार्य औपनिवेशिक वातावरण में हुए जो प्राय: हमें सर्वेक्षण-टिप्पणियों के रूप में मिलते हैं। इन्हें यात्रियों, सैनिकों, व्यापारियों और पुराविदों ने तैयार किया था। प्रारंभिक बीसवीं शताब्दी में इस क्षेत्र में सोवियत-गणराज्य के विस्तार के उपरांत नवीन मार्क्सवादी इतिहास-लेखन में यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि प्रचलित उत्पादन-प्रणाली सामाजिक संबंधों की प्रकृति को निर्धारित करती है। इसने चंगेज़ खान और उभरते हुए मंगोल साम्राज्य को मानव विकास की उस संक्रमण व्यवस्था के दायरे में रखा जिसमें जनजातीय उत्पादन प्रणाली से सामंती उत्पादन प्रणाली की ओर परिवर्तन हो रहा था। ये परिवर्तन सापेक्षिक रूप से एक वर्गविहीन सामाजिक व्यवस्था से उस सामाजिक व्यवस्था की ओर हुआ जिसमें कृषक, भूस्वामी और लॉर्ड के बीच में एक विशाल अंतर पाया गया। इतिहास की ऐसी निर्धारित व्याख्या का अनुसरण करने पर भी मंगोल भाषाओं, उनके समाज और संस्कृति पर अतिउत्तम शोध बोरिस याकोवालेविच व्लाडिमीरस्टॉव (Boris Yakovlevich Vladimirtsov) जैसे अन्य विद्वानों ने किया। दूसरे अन्य विद्वान वैसिली व्लैदिमिरोविच बारटोल्ड (Vasily Vladimirovich Bartold) ने सोवियत विचारधारा का समर्थन नहीं किया। एक ऐसे समय जब स्टालिन के शासनकाल में आंचलिक राष्ट्रवाद के कारण घबराहट व्याप्त हो गई थी तब बारटोल्ड के द्वारा चंगेज़ खान और उसके वंशजों के अधीन मंगोलों का जीवन और उनकी उपलब्धियों के सकारात्मक और सहानुभूतिपरक विवरण ने उन्हें अभिवेचकों (Censors) के रोष का पात्र बना दिया। उन्होंने बारटोल्ड की रचनाओं के प्रसार पर कठोरतापूर्वक पाबंदी लगा दी और केवल 1960 के दशक में उदारवादी ख्रुश्चेव युग के दौरान और उसके उपरांत ही उनकी रचनाओं को नौ खंडों में प्रकाशित किया गया।

पारमहाद्वीपीय मंगोल साम्राज्य के विस्तार का मतलब यह भी था कि जो शोध के स्रोत विद्वानों को उपलब्ध हैं वे अनेक भाषाओं में रचे गए हैं। इनमें सबसे निर्णायक स्रोत चीनी, मंगोली, फ़ारसी और अरबी भाषा में उपलब्ध हैं पर महत्त्वपूर्ण सामग्रियाँ हमें इतालवी, लातिनी, फ्राँसीसी और रूसी-भाषा में भी मिलती हैं। अक्सर एक ही मूलग्रंथ भिन्न आशय के साथ दो अलग-अलग भाषाओं में प्रस्तुत किए गए हैं। उदाहरण के लिए चंगेज़ खान

*बर्बर (अंग्रेज़ी में बारबेरियन) शब्द यूनानी भाषा के *बारबरोस* (Barbaros) शब्द से उत्पन्न हुआ है जिसका तात्पर्य गैर-यूनानी लोगों से है जिनकी भाषा यूनानियों को बेतरतीब कोलाहल "बर-बर" के समान लगती थी। यूनानी ग्रंथों में बर्बरों को बच्चों की तरह दिखाया गया है जो सुचारु रूप से बोलने या सोचने में असमर्थ, डरपोक, स्त्रैण, विलासप्रिय, निष्ठुर, आलसी, लालची और स्वशासन चलाने में असमर्थ थे। यह रूढ़िगत, घिसी-पिटी धारणाएँ रोमवासियों के पास गईं। रोमवासियों ने बर्बर शब्द का प्रयोग जर्मन जनजातियों गॉल (Gauls) और हूण (Huns) जैसे लोगों के लिए किया। चीनियों ने स्टेपी प्रदेश के बर्बरों के लिए दूसरे शब्दों का प्रयोग किया पर उनमें से किसी भी शब्द के सकारात्मक अर्थ नहीं थे।

© NCERT not to be republished

के विषय में सबसे प्राचीन विवरण *मंगकोल-उन-न्यूतोबिअन* (Mongqol-un niuèa tobèa'an, मंगोलों के गोपनीय इतिहास) जो मंगोल और चीनी भाषा में मिलते हैं, एक-दूसरे से अलग हैं। इसी तरह मार्कोपोलो द्वारा मंगोल राजदरबार का यात्रावृत्तांत जो कि इतावली और लातिनी भाषा में उपलब्ध है वे एक दूसरे से मेल नहीं खाते। चूँकि मंगोलों ने अपने बारे में स्वयं बहुत कम साहित्य रचा और विदेशी सांस्कृतिक वातावरण में रहने वाले विद्वानों ने उनके बारे में ज़्यादातर लिखा। अतः इतिहासकारों को, उन विदेशी मूल रचनाओं में जिन वाक्यांशों का प्रयोग हुआ है, उसका मंगोल भाषा के करीबी अर्थ निकालने के लिए, वाङ्गमीमांसक (philologist) की भूमिका अदा करनी पड़ती है। ईगोर दे रखेविल्ट्स (Igor de Rachewiltz) *(मंगोलों का गोपनीय इतिहास)* और गेरहार्ड डोरफर (Gerhard Doesrfer) (जिन्होंने ऐसी मंगोल और तुर्की शब्दावलियों पर काम किया जो फ़ारसी में शामिल हो गईं) जैसे विद्वानों की रचनाएँ मध्य-एशिया के यायावरों के इतिहास को पढ़ने की कठिनाइयों को उजागर करती हैं। हम इस अध्याय में आगे चलकर देखेंगे कि चंगेज़ खान और मंगोलों के विश्वव्यापी साम्राज्य के बारे में उनकी अविश्वसनीय उपलब्धि के बावजूद उद्यमी विद्वान अनुसंधानकर्ताओं को अभी बहुत कुछ छानबीन करना बाकी है।

भूमिका

तेरहवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में यूरो-एशियाई महाद्वीप के महान साम्राज्यों ने मध्य-एशिया के स्टेपी-प्रदेश में एक नयी राजनैतिक शक्ति के अभ्युदय के एक बड़े खतरे का अनुभव किया। चंगेज़ खान (मृत्यु 1227) ने मंगोलों को संगठित किया। पर चंगेज़ खान की राजनैतिक दूरदर्शिता

मानचित्र 1: मंगोल साम्राज्य।

© NCERT not to be republished

मध्य-एशिया के स्टेपी-प्रदेश, मंगोल जातियों का एक महासंघ मात्र बनाने से कहीं अधिक दूरगामी थी। उसे ईश्वर से विश्व पर शासन करने का आदेश प्राप्त था। यद्यपि उसका अपना जीवन मंगोल जातियों पर कब्ज़ा जमाने में और साम्राज्य संलग्न क्षेत्र जैसे उत्तरी चीन, तुरान (ट्राँसओक्सिआना), अफ़गानिस्तान, पूर्वी ईरान, रूसी स्टेपी प्रदेशों के विरुद्ध युद्ध-अभियानों के नेतृत्व और प्रत्यक्ष संचालन में बीता; तथापि उसके वंशजों ने इस क्षेत्र से और आगे जाकर चंगेज़ खान के स्वप्न को सार्थक किया एवं दुनिया के सबसे विशाल साम्राज्य का निर्माण किया।

चंगेज़ खान के आदर्शों के मुताबिक उसके पोते, मोन्के (1251-60) ने फ्रांस के शासक लुई नौवें (1226-70) को यह चेतावनी दी, 'स्वर्ग में केवल एक शाश्वत आकाश है और पृथ्वी का केवल एक अधिपति, चंगेज़ खान, स्वर्ग पुत्र... जब शाश्वत स्वर्ग की शक्ति से संपूर्ण विश्व, सूर्य के उदय से लेकर अस्त होने तक, आनंदित और शांति में रहेगा, तब यह स्पष्ट होगा कि हम क्या करने जा रहे हैं। यद्यपि आपने शाश्वत स्वर्ग की आज्ञप्ति को समझ लिया है फिर भी आप इस पर विश्वास न करते हुए ध्यान नहीं देना चाहते हैं और केवल यह कह देते हैं कि, "हमारा देश दूर है, हमारे पर्वत विराट हैं और हमारे समुद्र विशाल हैं।" अगर इस विश्वास के साथ आप हमारे विरुद्ध सैन्य बल लेकर आएंगे तो हम भी जानते हैं कि हम क्या कर सकते हैं। ऐसा उस शाश्वत स्वर्ग को भी पता है जिसने कठिनाई को आसान बनाया और सुदूर को निकट ला दिया।'

ये केवल कोरी धमकियाँ ही नहीं थीं। चंगेज़ खान के एक दूसरे पोते बाटू (Batu) ने अपने 1236-1241 के अभियानों में रूस की भूमि को मास्को तक रौंद डाला और पोलैंड, हंगरी पर विजय प्राप्त कर वियना के बाहर पड़ाव डाल दिया। तेरहवीं शताब्दी तक यह लगने लगा कि शाश्वत आकाश मंगोलों के पक्ष में था। चीन के अधिकांश भाग, मध्यपूर्व एशिया और यूरोप यह मानने लगे कि चंगेज़ खान की आबाद दुनिया पर विजय 'ईश्वर का गुस्सा' है और यह कयामत के दिन की शुरुआत है।

बुखारा पर कब्ज़ा

परवर्ती तेरहवीं शताब्दी के ईरान के मंगोल शासकों के एक फ़ारसी इतिवृत्तकार जुवैनी (Juwaini) ने 1220 ई. में बुखारा की विजय का वृत्तांत दिया है। जुवैनी के कथनानुसार नगर की विजय के बाद चंगेज़ खान उत्सव मैदान में गया जहाँ पर नगर के धनी व्यापारी एकत्रित थे। उसने उन्हें संबोधित कर कहा, "अरे लोगों! तुम्हें यह ज्ञात होना चाहिए कि तुम लोगों ने अनेक पाप किए हैं और तुममें से जो अधिक सम्पन्न लोग हैं उन्होंने सबसे अधिक पाप किए हैं। अगर तुम मुझसे पूछो कि इसका मेरे पास क्या प्रमाण है तो इसके लिए मैं कहूँगा कि मैं ईश्वर का दंड हूँ। यदि तुमने पाप न किए होते तो ईश्वर ने मुझे दंड हेतु तुम्हारे पास न भेजा होता..." अब कोई व्यक्ति, बुखारा पर अधिकार होने के बाद खुरासान भाग गया था। उससे नगर के भाग्य के बारे में पूछने पर उसने उत्तर दिया, 'वे (नगर) आए, दीवारों को ध्वस्त कर दिया, जला दिया, लोगों का वध किया, लूटा और चल दिए।'

क्रियाकलाप 1

यदि यह मान लें कि जुवैनी का बुखारा पर कब्ज़े का वृत्तांत सही है, कल्पना करें कि आप बुखारा और खुरासान के निवासी हैं और ऐसा भाषण सुन रहे हैं तो उस भाषण का आपके ऊपर क्या प्रभाव पड़ेगा?

मंगोलों ने किस प्रकार अपने साम्राज्य का निर्माण किया और दूसरे 'विश्व-विजेता' सिकंदर की उपलब्धियों को बौना बना दिया? पूर्व-औद्योगिक काल में जब प्रौद्योगिकी संचार-व्यवस्था अपर्याप्त

थी तब मंगोलों ने अपने विशाल साम्राज्य के शासन और उसे नियंत्रित करने के लिए किन कौशलों का प्रयोग किया? ऐसे एक व्यक्ति जिसे अपने नैतिक और शासन के दैवी-अधिकारों के प्रति इतना आत्मविश्वास था, चंगेज़ खान ने अपने अधिकार क्षेत्र में बसे हुए विविध सामाजिक तथा धार्मिक समुदायों के साथ किस तरह संबंध रखा होगा? उसकी राजसत्ता (Imperium) के विकास में इस बहुविविधता (plurality) का क्या हुआ? जो भी हो मंगोलों तथा चंगेज़ खान की सामाजिक और राजनीतिक पृष्ठभूमि को बेहतर ढंग से समझने के लिए ये उचित होगा कि हम अपनी चर्चा चंद साधारण प्रश्नों से शुरू करें जैसे कि मंगोल कौन थे? वे कहाँ रहते थे? उनके संबंध किनके साथ थे और उनके समाज और राजनीति के बारे में हमें जानकारी कहाँ से मिलती है?

मंगोलों की सामाजिक और राजनैतिक पृष्ठभूमि

मंगोल विविध जनसमुदाय का एक निकाय था। ये लोग पूर्व में तातार, खितान और मंचू लोगों से और पश्चिम में तुर्की कबीलों से भाषागत समानता होने के कारण परस्पर सम्बद्ध थे। कुछ मंगोल पशुपालक थे और कुछ शिकारी संग्राहक थे। पशुपालक घोड़ों, भेड़ों और कुछ हद तक अन्य पशुओं जैसे बकरी और ऊँटों को भी पालते थे। उनका यायावरीकरण मध्यएशिया की चारण भूमि (स्टेपीज) में हुआ जोकि आज के आधुनिक मंगोलिया राज्य का भूभाग है। इस क्षेत्र का परिदृश्य आज जैसा ही अत्यंत मनोरम था और क्षितिज अत्यंत विस्तृत और लहरिया मैदानों से घिरा था जिसके पश्चिमी भाग में अल्ताई पहाड़ों की बर्फ़ीली चोटियाँ थीं। दक्षिण भाग में शुष्क गोबी का मरुस्थल इसके उत्तर और पश्चिम क्षेत्र में ओनोन और सेलेंगा जैसी नदियों और बर्फ़ीली पहाड़ियों से निकले सैकड़ों झरनों के पानी से सिंचित हो रहा था। पशुचारण के लिए यहाँ पर अनेक हरी घास के मैदान और प्रचुर मात्रा में छोटे-मोटे शिकार अनुकूल ऋतुओं में उपलब्ध हो जाते थे। शिकारी-संग्राहक लोग, पशुपालक कबीलों के आवास-क्षेत्र के उत्तर में साइबेरियाई वनों में रहते

ओनोन नदी के मैदान में बाढ़।

थे। वे पशुपालक लोगों की तुलना में अधिक गरीब होते थे और ग्रीष्म काल में पकड़े गए जानवरों की खाल के व्यापार से अपना जीविकोपार्जन करते थे। इस पूरे क्षेत्र के अधिकतम और न्यूनतम तापमान में बहुत अंतर पाया जाता था : कठोर और लंबे शीत के मौसम के बाद अल्पकालीन और शुष्क गर्मियों की अवधि आती थी। चारण क्षेत्र में साल की सीमित अवधियों में ही कृषि करना संभव था परंतु मंगोलों ने (अपने पश्चिम के तुर्कों के विपरीत) कृषि कार्य को नहीं अपनाया। न ही पशुपालकों और न ही शिकारी संग्राहकों की अर्थव्यवस्था घने आबादी वाले क्षेत्रों का भरण पोषण करने में समर्थ थी। परिणामस्वरूप इन क्षेत्रों में कोई नगर नहीं उभर पाए। मंगोल तंबुओं और जरों (gers) में निवास करते थे और अपने पशुधन के साथ शीतकालीन निवास स्थल से ग्रीष्मकालीन चारण भूमि की ओर चले जाते थे।

नृजातीय और भाषायी संबंधों ने मंगोल लोगों को परस्पर जोड़ रखा था, पर उपलब्ध आर्थिक संसाधनों में कमी होने के कारण उनका समाज अनेक पितृपक्षीय वंशों में विभाजित था। धनी-परिवार विशाल होते थे, उनके पास अधिक संख्या में पशु और चारण भूमि होती थी। इस कारण उनके अनेक अनुयायी होते थे और स्थानीय राजनीति में उनका अधिक दबदबा होता था। समय-समय पर आने वाली प्राकृतिक आपदाएँ जैसे भीषण शीत-ऋतु के दौरान एकत्रित की गई शिकार-सामग्रियाँ और अन्य भंडार में रखी हुई सामग्रियाँ समाप्त हो जाने की स्थिति में अथवा वर्षा न होने पर घास के मैदानों के सूख जाने पर उन्हें चरागाहों की खोज में भटकना पड़ता था। इस दौरान उनमें संघर्ष होता था। पशुधन को प्राप्त करने के लिए वे लूटपाट भी करते थे। प्राय: परिवारों के समूह आक्रमण करने और अपनी रक्षा करने हेतु अधिक शक्तिशाली और संपन्न कुलों से मित्रता कर लेते थे और परिसंघ बना लेते थे। कुछ अपवादों को छोड़कर ऐसे परिसंघ प्राय: बहुत छोटे और अल्पकालिक होते थे। मंगोल और तुर्की कबीलों को मिलाकर चंगेज़ खान द्वारा बनाया गया परिसंघ पाँचवीं शताब्दी के अट्टीला (मृत्यु 453 ई.) द्वारा बनाए गए परिसंघ के बराबर था।

अट्टीला के बनाए परिसंघ के विपरीत चंगेज़ खान की राजनीतिक व्यवस्था बहुत अधिक स्थायी रही और अपने संस्थापक की मृत्यु के बाद भी कायम रही। यह व्यवस्था इतनी स्थायी थी कि चीन, ईरान और पूर्वी यूरोपीय देशों की उन्नत शस्त्रों से लैस विशाल सेनाओं का मुकाबला करने में सक्षम थी। मंगोलों ने इन क्षेत्रों में नियंत्रण स्थापित करने के साथ ही साथ जटिल कृषि-अर्थव्यवस्थाएँ एवं, नगरीय आवासों - स्थानबद्ध समाजों (sedentary societies) का बड़ी कुशलता से प्रशासन किया। मंगोलों के अपने सामाजिक अनुभव और रहने के तौर-तरीके इनसे बिलकुल ही भिन्न थे।

यद्यपि यायावरी सामाजिक और राजनीतिक संगठन कृषि अर्थव्यवस्थाओं से बहुत भिन्न थे, पर ये दोनों समाज एक दूसरे की व्यवस्था से अनभिज्ञ नहीं थे। वास्तव में स्टेपी क्षेत्र में संसाधनों की कमी के कारण मंगोलों और मध्य-एशिया के यायावरों को व्यापार और वस्तु-विनिमय के लिए उनके पड़ोसी चीन के स्थायी निवासियों के पास जाना पड़ता था। यह व्यवस्था दोनों पक्षों के लिए लाभकारी थी। यायावर कबीले खेती से प्राप्त उत्पादों और लोहे के उपकरणों को चीन से लाते थे और घोड़े, फ़र और स्टेपी में पकड़े गए शिकार का विनिमय करते थे। उन्हें वाणिज्यिक क्रियाकलापों में काफी तनाव का सामना करना पड़ता था क्योंकि दोनों पक्ष अधिक लाभ प्राप्त करने की होड़ में बेधड़क सैनिक कार्यवाही भी कर बैठते थे। जब मंगोल कबीलों के लोग साथ मिलकर व्यापार करते थे तो वे अपने चीनी पड़ोसियों को व्यापार में बेहतर शर्तें रखने के लिए मजबूर कर देते थे। कभी-कभी ये लोग व्यापारिक संबंधों को नकार कर केवल लूटपाट करने लगते थे। मंगोलों का जीवन अस्त-व्यस्त होने पर ही इन संबंधों में बदलाव आता था। ऐसी स्थिति में चीनी लोग अपने प्रभाव का प्रयोग, स्टेपी-क्षेत्र में बड़े आत्मविश्वास से करते थे। इन सीमावर्ती झड़पों से

नीचे मध्य-एशियाई स्टेपी-क्षेत्र के तुर्क और मंगोल लोगों के कुछ महान परिसंघों की सूची दी गई है। इन सारे परिसंघों ने एक ही क्षेत्र पर अधिकार नहीं जमाया और न ही ये क्षेत्रफल में समान थे और न ही इनका आंतरिक संगठन एक जैसा जटिल था।
यद्यपि इनका यायावरी जन समुदाय के इतिहास पर विशेष प्रभाव पड़ा परंतु चीन और समीपवर्ती क्षेत्रों पर इनका प्रभाव भिन्न-भिन्न था।

सिउंग-नु (Hsiung-nu) (200 ई.पू.) (तुर्क)

जुआन-जुआन (Juan-juan) (400 ई.) (मंगोल)

एफ़्थलैट हूण (Epthalite Huns) (400 ई.) (मंगोल)

तू-चे (T'u-chueh) (550 ई.) (तुर्क)

उइग़ुर (Uighurs) (740 ई.) (तुर्क)

खितान (Khitan) (940 ई.) (मंगोल)

© NCERT not to be republished

स्थायी समाज कमज़ोर पड़ने लगे। उन्होंने कृषि को अव्यवस्थित कर दिया और नगरों को लूटा। दूसरी ओर यायावर, लूटपाट कर संघर्ष क्षेत्र से दूर भाग जाते थे जिससे उन्हें बहुत कम हानि होती थी। अपने संपूर्ण इतिहास में चीन को इन यायावरों से विभिन्न शासन-कालों में बहुत अधिक क्षति पहुँची। यहाँ तक कि आठवीं शताब्दी ई.पू. से ही अपनी प्रजा की रक्षा के लिए चीनी शासकों ने किलेबंदी करना प्रारंभ कर दिया था। तीसरी शताब्दी ई.पू. से इन किलेबंदियों का एकीकरण सामान्य रक्षात्मक ढाँचे के रूप में किया गया जिसे आज 'चीन की महान दीवार' के रूप में जाना जाता है। उत्तरी चीन के कृषक समाजों पर यायावरों द्वारा लगातार हुए हमलों और उनसे पनपते अस्थिरता और भय का यह एक प्रभावशाली चाक्षुष साक्ष्य है।

चीन की महान दीवार।

चंगेज़ खान का जीवन-वृत्त

चंगेज़ खान का जन्म 1162 ई. के आसपास आधुनिक मंगोलिया के उत्तरी भाग में ओनोन नदी के निकट हुआ था। उसका प्रारंभिक नाम तेमुजिन था। उसके पिता का नाम येसूजेई (Yesugei) था जो कियात कबीले का मुखिया था। यह एक परिवारों का समूह था और बोरजिगिद (Borjigid) कुल से संबंधित था। उसके पिता की अल्पायु में ही हत्या कर दी गई थी और उसकी माता ओलुन-इके (Oelun-eke) ने तेमुजिन और उसके सगे तथा सौतेले भाइयों का लालन-पालन बड़ी कठिनाई से किया था। 1170 का दशक विपर्यायों से भरा था- तेमुजिन का अपहरण कर उसे दास बना लिया गया और उसकी पत्नी बोरटे (Borte) का भी विवाह के उपरांत अपहरण कर लिया गया और अपनी पत्नी को छुड़ाने के लिए उसे लड़ाई लड़नी पड़ी। विपत्ति के इन वर्षों में भी वह अनेक मित्र बनाने में कायमाब रहा। नवयुवक बोघूरचू (Boghurchu) उसका प्रथम-मित्र था और सदैव एक विश्वस्त साथी के रूप में उसके साथ रहा। उसका सगा भाई *(आंडा)* जमूका भी उसका एक और विश्वसनीय मित्र था। तेमुजिन ने कैराईट (Kereyite) लोगों के शासक व अपने पिता के वृद्ध सगे भाई तुगरिल उर्फ ओंग खान के साथ पुराने रिश्तों की पुनर्स्थापना की।

यद्यपि जमूका उसका पुराना मित्र था, बाद में वह उसका शत्रु बन गया। 1180 और 1190 के दशकों में तेमुजिन ओंग खान का मित्र रहा और उसने इस मित्रता का इस्तेमाल जमूका जैसे शक्तिशाली प्रतिद्वंद्वियों को परास्त करने के लिए किया। जमूका को पराजित करने के बाद तेमुजिन

में काफी आत्म-विश्वास आ गया और अब वह अन्य कबीलों के विरुद्ध युद्ध के लिए निकल पड़ा। इनमें से उसके पिता के हत्यारे, शक्तिशाली तातार कैराईट और खुद ओंग खान जिसके विरुद्ध उसने 1203 में युद्ध छेड़ा। 1206 में शक्तिशाली जमूका और नेमन लोगों को निर्णायक रूप से पराजित करने के बाद तेमुजिन स्टेपी-क्षेत्र की राजनीति में सबसे प्रभावशाली व्यक्ति के रूप में उभरा। उसकी इस प्रतिष्ठा को मंगोल कबीले के सरदारों की एक सभा *(कुरिलताई)* में मान्यता मिली और उसे चंगेज़ खान 'समुद्री खान' या 'सार्वभौम शासक' की उपाधि के साथ मंगोलों का महानायक (Qa'an/Great Khan) घोषित किया गया।

1206 ई. में कुरिलताई से मान्यता मिलने से पूर्व चंगेज़ खान ने मंगोल लोगों को एक सशक्त अनुशासित सैन्य-शक्ति *(निम्नलिखित अनुभागों को देखें)* के रूप में पुनर्गठित कर लिया था जिससे उसके भविष्य में किए गए सैन्य अभियान की सफलता एक प्रकार से तय हो गई। उसकी पहली मंशा चीन पर विजय प्राप्त करने की थी जो उस समय तीन राज्यों में विभक्त था। वे थे- उत्तर-पश्चिमी प्रांतों के तिब्बती मूल के सी-सिआ लोग (Hsi Hsia); जरचेन लोगों के चिन राजवंश जो पेकिंग से उत्तरी चीन क्षेत्र का शासन चला रहे थे; शुंग राजवंश जिनके आधिपत्य में दक्षिणी चीन था। 1209 में सी-सिआ लोग परास्त हो गए। 1213 ई. में चीन की महान दीवार का अतिक्रमण हो गया। 1215 ई. में पेकिंग नगर को लूटा गया। चिन वंश के विरुद्ध 1234 तक लंबी लड़ाइयाँ चलीं पर चंगेज़ खान अपने अभियानों की प्रगति से खूब संतुष्ट था और इसलिए उस क्षेत्र के सैनिक मामले अपने अधीनस्थों की देखरेख में छोड़कर 1216 में मंगोलिया स्थित अपनी मातृभूमि में लौट आया।

1218 ई. में करा खिता (Qara Khita) की पराजय के बाद जो चीन के उत्तर पश्चिमी भाग में स्थित तियेन-शान की पहाड़ियों को नियंत्रित करती थीं, मंगोलों का साम्राज्य अमू दरिया, तुरान और ख्वारज़म राज्यों तक विस्तृत हो गया। ख्वारज़म का सुल्तान मोहम्मद चंगेज़ खान के प्रचंड कोप का भाजक बना जब उसने मंगोल दूतों का वध कर दिया। 1219 और 1221 ई. तक के अभियानों में बड़े नगरों - ओट्रार, बुखारा, समरकंद, बल्ख़, गुरगंज, मर्व, निशापुर और हेरात - ने मंगोल सेनाओं के सम्मुख समर्पण कर दिया। जिन नगरों ने प्रतिरोध किया उनका विध्वंस कर दिया गया। निशापुर में घेरा डालने के दौरान जब एक मंगोल राजकुमार की हत्या कर दी गई तो चंगेज़ खान ने आदेश दिया कि, "नगर को इस तरह विध्वंस किया जाए कि संपूर्ण नगर में हल चलाया जा सके; अपने प्रतिशोध (राजकुमार की हत्या के लिए) को उग्र रूप देने के लिए ऐसा संहार किया जाए कि नगर के समस्त बिल्ली और कुत्तों को भी जीवित न रहने दिया जाए।"

मंगोल सेनाएँ सुल्तान मोहम्मद का पीछा करते हुए अज़रबैजान तक चली आईं और क्रीमिया में रूसी सेनाओं को हराने के साथ-साथ उन्होंने कैस्पियन सागर को घेर लिया। सेना की दूसरी

मंगोलों द्वारा किए गए विनाश का आकलन

चंगेज़ खान के अभियानों के विषय में प्राप्त समस्त विवरण इस पर सहमत हैं कि जिन नगरों ने उनका प्रभुत्व स्वीकार नहीं किया उन पर अधिकार जमाने के बाद वहाँ रहने वाले बहुत से लोगों को उसने मौत के घाट उतार दिया। इनकी संख्या बहुत चौंका देने वाली है। 1220 ई. में निशापुर पर आधिपत्य करने में 17,47,000, जबकि 1222 ई. हिरात पर आधिपत्य करने में 16,00,000 और 1258 में बगदाद पर आधिपत्य करते समय 8,00,000 लोगों का वध किया गया। छोटे नगरों में सापेक्षिक रूप से कम नरसंहार हुआ। नासा में 70,000, बैहाक ज़िले में 70,000 और कुहिस्तान प्रांत के तून नगर में 12,000 लोगों को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ा।

मध्यकालीन इतिवृत्तकारों ने मृतकों की संख्या का अनुमान कैसे लगाया?

इलखानों के फ़ारसी इतिवृत्तकार जुवैनी ने बताया कि मर्व में 13,00,000 लोगों का वध किया गया। उसने इस संख्या का अनुमान इस प्रकार लगाया कि तेरह दिन तक 1,00,000 शव प्रतिदिन गिने जाते थे।

सम्मुख पृष्ठ पर : यूरोपीय कलाकारों द्वारा 'बर्बरों' का कल्पित चित्र

टुकड़ी ने सुल्तान के पुत्र जलालुद्दीन का अफ़गानिस्तान और सिंध प्रदेश तक पीछा किया। सिंधु नदी के तट पर चंगेज़ खान ने उत्तरी भारत और असम मार्ग से मंगोलिया वापस लौटने का विचार किया परंतु असह्य गर्मी, प्राकृतिक आवास की कठिनाइयों तथा उसके शमन निमित्तज्ञ द्वारा दिए गए अशुभ संकेतों के आभास ने उसे अपने विचारों को बदलने के लिए बाध्य किया।

अपने जीवन का अधिकांश भाग युद्धों में व्यतीत करने के बाद 1227 में चंगेज़ खान की मृत्यु हो गई। उसकी सैनिक उपलब्धियाँ विस्मित कर देने वाली थीं। यह बहुत हद तक स्टेपी-क्षेत्र की युद्ध शैली के बहुत से आयामों को आवश्यकतानुसार परिवर्तन और सुधार करके उसको प्रभावशाली रणनीति में बदल पाने का परिणाम था। मंगोलों और तुर्कों के घुड़सवारी कौशल ने उसकी सेना को गति प्रदान की थी। घोड़े पर सवार होकर उनकी तीरंदाज़ी का कौशल अद्‌भुत था जिसे उन्होंने अपने दैनिक जीवन में जंगलों में पशुओं का आखेट करते समय प्राप्त किया था। उनके इस घुड़सवारी तीरंदाज़ी के अनुभव ने उनकी सैनिक-गति को बहुत तेज़ कर दिया। स्टेपी-प्रदेश के घुड़सवार सदैव फुर्तीले और बड़ी तेज़ गति से यात्रा करते थे। अब उन्हें अपने आसपास के भूभागों और मौसम की जानकारी हो गई जिसने उन्हें अकल्पनीय कार्य करने की क्षमता प्रदान की। उन्होंने घोर शीत-ऋतु में युद्ध-अभियान प्रारंभ किए तथा उनके नगरों और शिविरों में प्रवेश करने के लिए बर्फ़ से जमी हुई नदियों का राजमार्गों की तरह प्रयोग किया। यायावर लोग अपनी परंपराओं के अनुसार प्राचीरों के आरक्षित शिविरों में पैठ बनाने में सक्षम नहीं थे, पर चंगेज़ खान ने घेराबंदी-यंत्र (Siege-engine) और नेफ्था बमबारी के महत्त्व को शीघ्र जाना। उसके इंजीनियरों ने उसके शत्रुओं के विरुद्ध अभियानों में इस्तेमाल के लिए हलके चल-उपस्कर (Light portable equipment) का निर्माण किया जिसके युद्ध में घातक प्रभाव होते थे।

लगभग 1167	तेमुजिन का जन्म
1160 और 70 के दशक	दासता और संघर्ष के वर्ष
1180 और 90 के दशक	संधि संबंधों का काल
1203-27	विस्तार और विजय
1206	तेमुजिन को चंगेज़ खान, यानी मंगोलो का 'सार्वभौम शासक' घोषित किया
1227	चंगेज़ खान की मृत्यु
1227-41	चंगेज़ खान के पुत्र ओगोदेई का शासन-काल
1227-60	तीन महान खानों का शासन और मंगोल-एकता की स्थापना
1236-42	बाटू के अधीन रूस, हंगरी, पोलैंड और आस्ट्रिया पर आक्रमण। बाटू, चंगेज़ खान के सबसे बड़े पुत्र जोची (Jochi) का पुत्र था
1246-49	ओगोदेई के पुत्र गुयूक का काल
1251-60	मोंके, चंगेज़ खान के पौत्र और तुलू (Tuluy) के पुत्र का काल
1253-55	मोंके के अधीन ईरान और चीन में पुन: आक्रमण
1257-67	बाटू के पुत्र बर्के का राज्यकाल। सुनहरा गिरोह (Golden Horde) का नेस्टोरियन ईसाई धर्म से इस्लाम धर्म की ओर पुन: प्रवृत्त होना। 1350 के दशक में उनका इस्लाम में निश्चयात्मक रूप से धर्मांतरण हुआ। इल-खान के विरुद्ध गोल्डन होर्ड और मिस्र देश की मैत्री का प्रारंभ

© NCERT not to be republished

1258	बग़दाद पर अधिकार और अब्बासी खिलाफ़त का अंत। मोंके के छोटे भाई हुलेगु के अधीन ईरान में इल-खानी राज्य की स्थापना। जोचिद और इल-खान के मध्य संघर्ष का प्रारंभ
1260	पेकिंग में 'महान खान' के रूप में कुबलई खान (Qubilai Khan) का राज्यारोहण। चंगेज़ खान के उत्तराधिकारियों में संघर्ष। मुगल राज्य अनेक स्वतंत्र भागों में अनेक वंशों में विभक्त - तोलुई (Toluy), चघताई (Chaghatai), और जोची (ओगोदेई का वंश पराजित हो गया और तोलूयिद में मिल गए) तोलूयिद : चीन का यूआन वंश और ईरान का इल-खानी राज्य चघताई : उत्तरी-तूरान के स्टेपी-क्षेत्र और तुर्किस्तान में रूसी स्टेपी-क्षेत्र में जोचिद वंश थे। उन्हें पर्यवेक्षक 'गोल्डन होर्ड' के नाम से वर्णन करते थे
1295-1304	ईरान में इल-खानी शासक गज़न खान का शासन-काल। उसके बौद्ध धर्म से इस्लाम में धर्मांतरण के बाद धीरे-धीरे अन्य इल-खानी सरदारों का भी धर्मांतरण होने लगा
1368	चीन में यूआन राजवंश का अंत
1370-1405	तैमूर का शासन। बरलास तुर्क होते हुए उसने चघताई वंश के आधार पर अपने को चंगेज़ खान का वंशज बताया। उसने स्टेपी-साम्राज्य की स्थापना की। टोलू राज्य चघताई और जोची राज्यों के कुछ हिस्सों (चीन को छोड़कर) को सम्मिलित करते हुए उसने स्टेपी-क्षेत्र में एक साम्राज्य का गठन किया। उसने अपने को 'गुरेगेन' (Guregen) 'शाही-दामाद' की उपाधि से विभूषित किया और चंगेज़ खान के कुल की एक राजकुमारी से विवाह किया
1495-1530	ज़हीरुद्दीन बाबर जो तैमूर और चंगेज़ खान का वंशज था, फ़रगना और समरकंद के तैमूरी क्षेत्र का उत्तराधिकारी बना। वहाँ से खदेड़ा गया। काबुल पर कब्ज़ा किया और 1526 में दिल्ली और आगरा पर अधिकार जमाया; भारत में मुगल साम्राज्य की नींव रखी
1500	जोची के कनिष्ठ पुत्र शिबान का वंशज शयबानी खान द्वारा तूरान पर आधिपत्य। तूरान में शयबानी सत्ता (शयबानियों को उज़्बेग भी कहा जाता था जिनके नाम से ही वर्तमान उज़्बेकिस्तान का नाम पड़ा) को सुदृढ़ किया और इस क्षेत्र से बाबर और तैमूर के वंशजों को खदेड़ दिया
1759	चीन के मंचुओं ने मंगोलिया पर विजय प्राप्त कर ली
1921	मंगोलिया का गणराज्य

not to be republished © NCERT

चंगेज़ खान के उपरांत मंगोल

चंगेज़ खान की मृत्यु के पश्चात हम मंगोल साम्राज्य को दो चरणों में विभाजित कर सकते हैं। पहला चरण 1236-1242 तक था जिसके दौरान रूस के स्टेपी-क्षेत्र, बुलघार, कीव, पोलैंड तथा हंगरी में भारी सफलता प्राप्त की गई। दूसरा चरण 1255-1300 तक रहा जिसमें समस्त चीन (सन् 1279), ईरान, इराक और सीरिया पर विजय प्राप्त की गई। इन अभियानों के पश्चात साम्राज्य की परिसीमाओं में स्थिरता आई।

सन् 1203 के बाद के दशकों में मंगोल सेनाओं को बहुत कम विपर्याय का सामना करना पड़ा परंतु यह ध्यान देने योग्य है कि सन् 1260 के दशक के बाद पश्चिम के सैन्य अभियानों के शुरुआती आवेग को जारी रखना संभव नहीं हो पाया। यद्यपि वियना और उससे परे पश्चिमी यूरोप एवं मिस्र मंगोल सेनाओं के अधिकार में ही रहे। तथापि उनके हंगरी के स्टेपी-क्षेत्र से पीछे हट जाने और मिस्र की सेनाओं द्वारा पराजित होने से नवीन राजनीतिक प्रवृत्तियों के उदय होने के संकेत मिले। इस प्रवृत्ति के दो पहलू थे। पहला, मंगोल परिवार में उत्तराधिकार को लेकर आंतरिक राजनीति थी। जब प्रथम दो पीढ़ियाँ जोची और ओगोदेई के उत्तराधिकारी महान खान के राज्य पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए एकजुट हो गए। अब उनके लिए यूरोप में अभियान करने की अपेक्षा अपने इन हितों की रक्षा करना अधिक महत्त्वपूर्ण हो गया। दूसरी स्थिति तब उत्पन्न हुई जब चंगेज़ खान के वंश की तोलूयिद शाखा के उत्तराधिकारियों ने जोची और ओगोदेई वंशों को कमज़ोर कर दिया। मोंके जो चंगेज़ खान के सबसे छोटे पुत्र तोलूई का वंशज था उसके राज्याभिषेक के उपरांत 1250 ई. के दशक में ईरान में शक्तिशाली अभियान किए गए। परंतु 1260 ई. के दशक में तोलूई के वंशजों ने चीन में अपने हितों की वृद्धि की तो उसी समय सैनिकों और रसद-सामग्रियों को मंगोल साम्राज्य के मुख्य भागों की ओर भेज दिया गया। इसके परिणामस्वरूप मिस्र की सेना का सामना करने के लिए मंगोलों ने एक छोटी, अपर्याप्त सेना भेजी। मंगोलों की पराजय और तोलूई परिवार की चीन के प्रति निरंतर बढ़ती हुई रुचि से उनका पश्चिम की ओर विस्तार रुक गया। इसी दौरान रूस और चीन की सीमा पर जोची और तोलूई वंशजों के अंदरूनी झगड़ों ने जोची वंशजों का ध्यान उनके संभावित यूरोपीय अभियानों से हटा दिया।

पश्चिम में मंगोलों का विस्तार रुक जाने से चीन में उनके अभियान शिथिल नहीं हुए। वस्तुतः उन्होंने चीन को एकीकृत किया। ये विरोधाभास है कि सबसे बड़ी सफलताओं को प्राप्त करने के समय ही शासक-परिवार के सदस्यों के मध्य आंतरिक विक्षोभ दिखाई देने लगे। इस अध्याय के अगले अनुभाग में उन कारकों की चर्चा की जाएगी जिनके चलते मंगोलों को महान राजनैतिक सफलताएँ प्राप्त हुईं परंतु उन्हीं वजहों से उनकी प्रगति में बाधाएँ भी आईं।

सामाजिक, राजनैतिक और सैनिक संगठन

मंगोलों और अन्य अनेक यायावर समाजों में प्रत्येक तंदुरुस्त वयस्क सदस्य हथियारबंद होते थे। जब कभी आवश्यकता होती थी तो इन्हीं लोगों से सशस्त्र सेना बनती थी। विभिन्न मंगोल जनजातियों के एकीकरण और उसके पश्चात विभिन्न लोगों के खिलाफ अभियानों से चंगेज़ खान की सेना में नए सदस्य शामिल हुए। इससे उनकी सेना जोकि अपेक्षाकृत रूप से छोटी और अविभेदित समूह थी, वह अविश्वसनीय रूप से एक विशाल विषमजातीय संगठन में परिवर्तित हो गई। इसमें उनकी सत्ता को स्वेच्छा से स्वीकार करने वाले तुर्कीमूल के उइग़ुर समुदाय के लोग सम्मिलित थे। केराइटों जैसे पराजित लोग भी इसमें सम्मिलित थे जिन्हें अपनी पुरानी शत्रुता के बावजूद महासंघ में शामिल कर लिया गया।

© NCERT not to be republished

चंगेज़ खान उन विभिन्न जनजातीय समूहों जो उसके महासंघ के सदस्य थे, की पहचान को योजनाबद्ध रूप से मिटाने को कृत-संकल्प था। उसकी सेना स्टेपी-क्षेत्रों की पुरानी दशमलव पद्धति के अनुसार गठित की गई। जो दस, सौ, हज़ार और (अनुमानित) दसहज़ार सैनिकों की इकाई में विभाजित थी। पुरानी पद्धति में कुल (clan), कबीले (tribe) और सैनिक दशमलव इकाइयाँ एक साथ अस्तित्व में थीं। चंगेज़ खान ने इस प्रथा को समाप्त कर दिया। उसने प्राचीन जनजातीय समूहों को विभाजित कर उनके सदस्यों को नवीन सैनिक इकाइयों में विभक्त कर दिया। उस व्यक्ति को जो अपने अधिकारी से अनुमति लिए बिना बाहर जाने की चेष्टा करता था, उसे कठोर दंड दिया जाता था। सैनिकों की सबसे बड़ी इकाई लगभग दस हज़ार सैनिकों *(तुमन)* की थी जिसमें अनेक कबीलों और कुलों के लोग शामिल होते थे। उसने स्टेपी-क्षेत्र की पुरानी सामाजिक व्यवस्था को परिवर्तित किया और विभिन्न वंशों तथा कुलों को एकीकृत कर इसके जनक चंगेज़ खान ने इन सभी को एक नवीन पहचान प्रदान की।

नयी सैनिक टुकड़ियों को, जो उसके चार पुत्रों के अधीन थीं और विशेष रूप से चयनित कप्तानों के अधीन कार्य करती थी; *नोयान* कहा जाता था। इस नयी व्यवस्था में उसके अनुयायियों का वह समूह भी शामिल था जिन्होंने बड़ी निष्ठा से, कई वर्ष घोर प्रतिकूल अवस्था में भी चंगेज़ खान का साथ दिया था। चंगेज़ खान ने सार्वजनिक रूप से अनेक ऐसे व्यक्तियों को *आंडा* (सगा भाई) कहकर सम्मानित किया था। ऐसे अन्य और भी कई जो आंडा से निम्न श्रेणी के थे। स्वतंत्र व्यक्ति थे, इनको चंगेज़ खान ने अपने खास नौकर के पद पर रखा। नौकर का पद इन लोगों का अपने स्वामी के साथ गहरा संबंध दर्शाता था।

इस तरह से नए वर्गीकरण ने पूर्व से चले आ रहे सरदारों के अधिकारों को सुरक्षित नहीं रखा। जबकि नए तरह से उभरे अभिजात्य वर्ग ने अपनी प्रतिष्ठा मंगोलों के महानायक के साथ अपने करीबी रिश्ते से प्राप्त की।

इस नवीन श्रेणी (hierarchy) में चंगेज़ खान ने अपने नव-विजित लोगों पर शासन करने का उत्तरदायित्व अपने चार पुत्रों को सौंप दिया। इससे *उलुस* (Ulus) का गठन हुआ। उलुस शब्द का मूल अर्थ निश्चित भूभाग नहीं था। चंगेज़ खान का जीवन काल अभी भी निरंतर विजयों और साम्राज्य को अधिक से अधिक बढ़ाने का युग था और जिसकी सीमाएँ अत्यंत परिवर्तनशील थीं। उसके सबसे ज्येष्ठ पुत्र जोची को रूसी स्टेपी-प्रदेश प्राप्त हुआ। परंतु उसकी दूरस्थ सीमा (उलुस) निर्धारित नहीं थी। इसका विस्तार सुदूर पश्चिम तक विस्तृत था जहाँ तक उसके घोड़े स्वेच्छापूर्वक भ्रमण कर सकते थे।

उसके दूसरे पुत्र चघताई को तूरान का स्टेपी-क्षेत्र तथा पामीर के पहाड़ का उत्तरी क्षेत्र भी मिला जो उसके भाई के प्रदेश से लगा हुआ था। संभवत: वह जैसे-जैसे पश्चिम की ओर बढ़ता गया होगा वैसे-वैसे यह अधिकार क्षेत्र भी परिवर्तित होता गया होगा।

चंगेज़ खान ने संकेत किया था कि उसका तीसरा पुत्र ओगोदेई उसका उत्तराधिकारी होगा और उसे महान खान की उपाधि दी जाएगी। इस राजकुमार ने अपने राज्याभिषेक के बाद अपनी राजधानी कराकोरम में प्रतिष्ठित की। उसके सबसे छोटे पुत्र तोलोए ने अपनी पैतृक भूमि मंगोलिया को प्राप्त किया। चंगेज़ खान का यह विचार था कि उसके पुत्र परस्पर मिलजुल कर साम्राज्य का शासन करेंगे और इसे ध्यान में रखते हुए उसने विभिन्न राजकुमारों के लिए अलग-अलग सैन्य-टुकड़ियाँ *(तामा)* निर्धारित कर दीं जो प्रत्येक *उलुस* में तैनात रहती थीं। परिवार के सदस्यों में राज्य की भागीदारी का बोध सरदारों की परिषद *(किरिलताई)* में होता था जिसमें परिवार या राज्य के भविष्य के निर्णय, अभियानों, लूट के माल का बँटवारा, चरागाह भूमि और उत्तराधिकार आदि के समस्त निर्णय, सामूहिक रूप से लिए जाते थे।

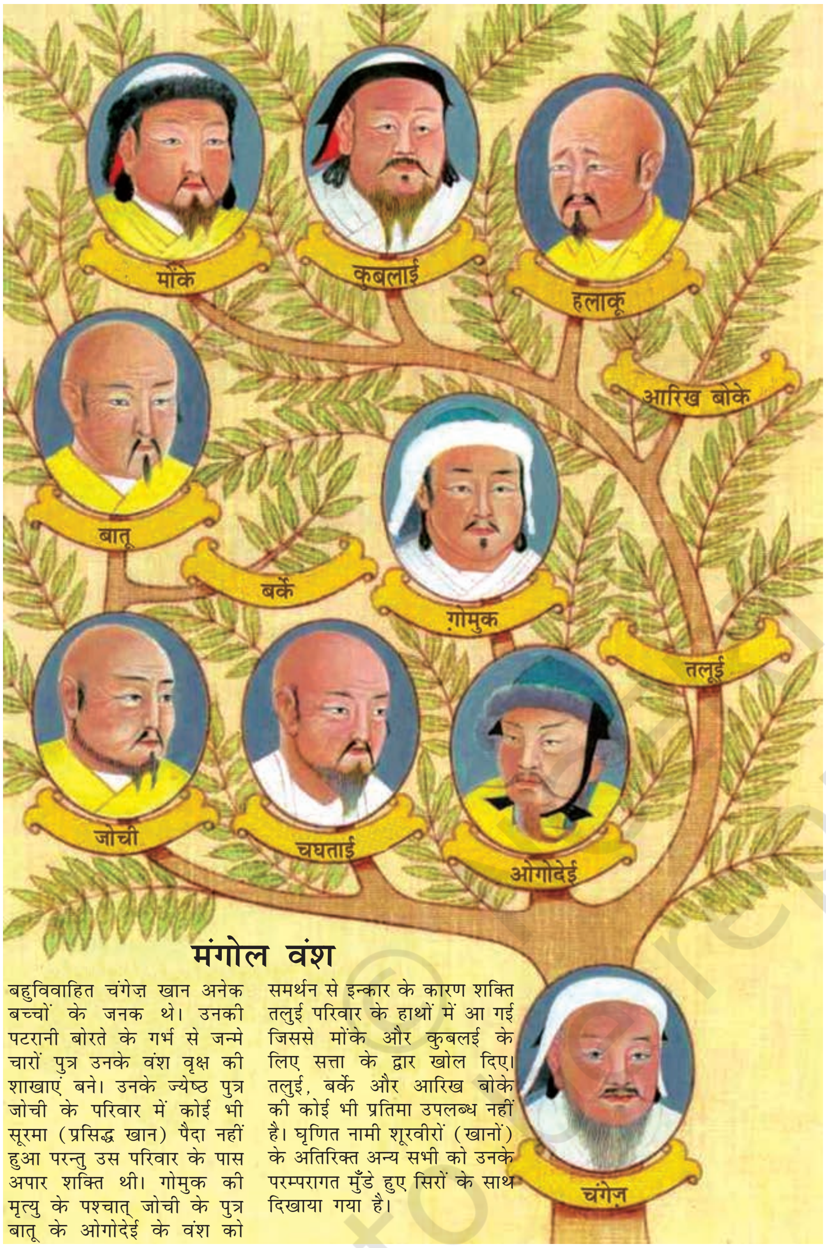

मंगोल वंश

बहुविवाहित चंगेज़ खान अनेक बच्चों के जनक थे। उनकी पटरानी बोरते के गर्भ से जन्मे चारों पुत्र उनके वंश वृक्ष की शाखाएं बने। उनके ज्येष्ठ पुत्र जोची के परिवार में कोई भी सूरमा (प्रसिद्ध खान) पैदा नहीं हुआ परन्तु उस परिवार के पास अपार शक्ति थी। गोमुक की मृत्यु के पश्चात् जोची के पुत्र बातू के ओगोदेई के वंश को समर्थन से इन्कार के कारण शक्ति तलुई परिवार के हाथों में आ गई जिससे मोंके और कुबलई के लिए सत्ता के द्वार खोल दिए। तलुई, बर्के और आरिख बोके की कोई भी प्रतिमा उपलब्ध नहीं है। घृणित नामी शूरवीरों (खानों) के अतिरिक्त अन्य सभी को उनके परम्परागत मुँडे हुए सिरों के साथ दिखाया गया है।

चंगेज़ खान ने पहले से ही एक फुर्तीली हरकारा पद्धति अपना रखी थी जिससे राज्य के दूरदराज़ के स्थानों में परस्पर सम्पर्क रखा जाता था। अपेक्षित दूरी पर निर्मित सैनिक चौकियों में स्वस्थ एवं बलवान घोड़े तथा घुड़सवार संदेशवाहक तैनात रहते थे। इस संचार पद्धति की व्यवस्था करने के लिए मंगोल यायावर अपने पशु-समूहों से अपने घोड़े अथवा अन्य पशुओं का दसवाँ हिस्सा प्रदान करते थे। इसे *कुबकुर* (qubcur) कर कहते थे। इस उगाही (levy) को यायावर लोग अपनी स्वेच्छा से प्रदान करते थे, जिससे उन्हें अनेक लाभ प्राप्त होते थे। चंगेज़ खान की मृत्यु के उपरांत इस हरकारी पद्धति (याम) में और भी सुधार लाया गया। इस पद्धति की गति तथा विश्वसनीयता यात्रियों को आश्चर्य में डाल देती थी। इससे महान खानों को अपने विस्तृत महाद्वीपीय साम्राज्य के सुदूर स्थानों में होने वाली घटनाओं की निगरानी करने में सहायता मिलती थी।

तथापि, विजित लोगों को अपने नवीन यायावर शासकों से कोई लगाव नहीं था। तेरहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हुए युद्धों में अनेक नगर नष्ट कर दिए गए, कृषि भूमि को हानि हुई, व्यापार चौपट हो गया तथा दस्तकारी वस्तुओं की उत्पादन-व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई। सैकड़ों-हज़ारों लोग मारे गए और इससे कहीं अधिक दास बना लिए गए। इसकी वास्तविक संख्या अतिशयोक्तिपूर्ण तथ्यों के जाल में खो गई है। संभ्रांत लोगों से लेकर कृषक-वर्ग तक समस्त लोगों को बहुत कष्टों का सामना करना पड़ा। इसके परिणामस्वरूप उत्पन्न अस्थिरता से ईरान के शुष्क पठार में भूमिगत नहरों *(कनात)* का नियमित रूप से मरम्मत कार्य संभव नहीं हो पाया। नहरों की मरम्मत न होने से मरुस्थल उस ओर फैलने लगा जिससे बहुत बड़ा पारिस्थितिक विनाश हुआ जिससे खुरासान के कुछ हिस्से कभी नहीं उबर पाए।

मरुस्थल उस ओर फैलने लगा।

जब सैन्य अभियानों में विराम आया तब यूरोप और चीन के भूभाग परस्पर संबंद्ध हो गए थे। मंगोल विजय (Pax Mongolica) के बाद उत्पन्न शांति से व्यापारिक संबंध परिपक्व हुए। मंगोलों की देखरेख में रेशम मार्ग (Silk route) पर व्यापार और भ्रमण अपने शिखर पर पहुँचा किंतु पहले की तरह अब व्यापारिक मार्ग चीन में ही खत्म नहीं होते थे।

वे उत्तर की ओर मंगोलिया तथा नवीन साम्राज्य के केंद्र कराकोरम की ओर बढ़ गए। मंगोल शासन में सामंजस्य स्थापित करने के लिए संचार और यात्रियों के लिए सुलभ यात्रा आवश्यक थी। सुरक्षित यात्रा के लिए यात्रियों को पास जिसे फ़ारसी में *पैज़ा* (Paiza) और मंगोल भाषा में *जेरेज़* (Gerege) जारी किए जाते थे। इस सुविधा के लिए व्यापारी *बाज* नामक कर अदा करते थे जिसका यह तात्पर्य था, कि वे मंगोल शासक (खान) की सत्ता स्वीकार करते थे।

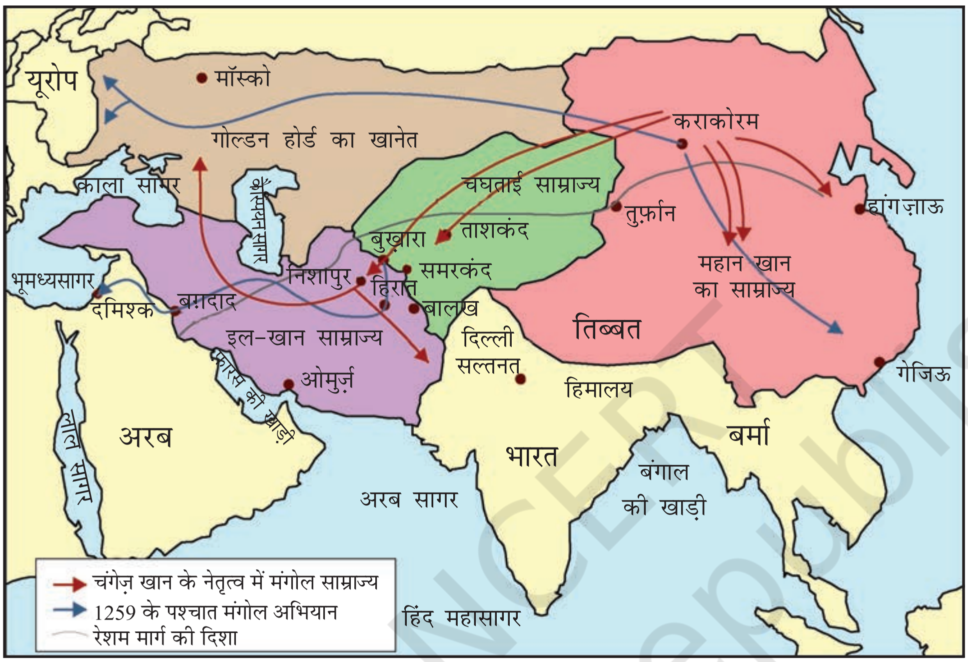

मानचित्र 2: मंगोलों के अभियान।

तेरहवी शताब्दी ई. में मंगोल साम्राज्य में यायावरों और स्थानबद्ध समुदायों में विरोध कम होते गए उदाहरणार्थ, 1230 के दशक में जब मंगोलों ने उत्तरी चीन के चिन वंश के विरुद्ध युद्ध में सफलता प्राप्त की तो मंगोल नेताओं के एक क्रुद्ध वर्ग ने दबाव डालकर यह विचार रखा कि समस्त कृषकों को मौत के घाट उतार दिया जाए और उनकी कृषि-भूमि को चरागाह में परिवर्तित कर दिया जाए। परंतु 1270 के दशक के आते-आते शुंग वंश की पराजय के उपरांत दक्षिण चीन को मंगोल साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया गया। तब चंगेज़ खान का पोता कुबलई खान (मृत्यु 1294) कृषकों और नगरों के रक्षक के रूप में उभरा। गज़न खान (मृत्यु 1304) जो चंगेज़ खान के सबसे छोटे पुत्र तोलूई का वंशज था, उसने अपने परिवार के सदस्यों और अन्य सेनापतियों को आगाह कर दिया था कि वे कृषकों को न लूटें। एक बार अपने भाषण के दौरान उसने कहा था कि ऐसा करने से राज्य में स्थायित्व और समृद्धि नहीं आती। उसके वक्तव्य की स्थानबद्ध ध्वनियाँ चंगेज़ खान को भी हैरानी में डाल देती थीं।

क्रियाकलाप 2

रेशम मार्ग के क्षेत्रों को देखिए और उन वस्तुओं पर भी गौर करिए जोकि उस रास्ते में यात्रा करते हुए व्यापारियों को उपलब्ध होती थीं। इस मानचित्र में मंगोल शक्ति के चरमोत्कर्ष काल के दौरान का एक अंतिम पूर्वी बिंदु अंकित नहीं है जिससे रेशम मार्ग गुजरता था।

क्या आप इसमें उस नगर को दिखा सकते हैं जो यहाँ अंकित नहीं हैं? क्या ये बारहवीं शताब्दी में रेशम मार्ग पर हो सकता था? अगर नहीं तो क्यों नहीं?

© NCERT not to be republished

क्रियाकलाप 3

पशुचारकों और किसानों के स्वार्थों में संघर्ष का क्या कारण था? क्या चंगेज़ खान खानाबदोश कमांडरों को देनेवाले भाषण में इस तरह की भावनाओं को शामिल करता?

गज़न खान का भाषण

गज़न खान (1295-1304) पहला इल-खानी शासक था जिसने धर्म-परिर्वतन कर इस्लाम ग्रहण किया। उसने अपने मंगोल-तुर्की यायावर सेनापतियों को निम्न भाषण दिया जिसे संभवत: उसके इरानी वज़ीर रशीदुद्दीन ने लिखा था और जिसे मंत्री के पत्रों में शामिल किया गया था:

"मैं फ़ारस के कृषक वर्ग के पक्ष में नहीं हूँ। यदि उन सबको लूटने का कोई उद्देश्य है, तो ऐसा करने के लिए मेरे से अधिक शक्तिशाली और कोई नहीं है, चलो हम सब मिल कर उन्हें लूटते हैं। लेकिन अगर आप निश्चित रूप से भविष्य में अपने भोजन के लिए अनाज और भोज्य-सामग्री इकट्ठा करना चाहते हैं तो मुझे आपके साथ कठोर होना पड़ेगा। आपको तर्क और बुद्धि से काम लेना सिखाना पड़ेगा। यदि आप कृषकों का अपमान करेंगे, उनसे उनके बैल और अनाज के बीज छीन लेंगे और उनकी फसलों को कुचल डालेंगे, तो आप भविष्य में क्या करेंगे? एक आज्ञाकारी कृषक वर्ग और एक विद्रोही कृषक वर्ग में अंतर समझना आवश्यक है।......."

चंगेज़ खान के शासनकाल से ही मंगोलों ने विजित राज्यों से नागरिक प्रशासकों (Civil administrators) को अपने यहाँ भर्ती कर लिया था। इनको कभी-कभी एक स्थान से दूसरे स्थान पर भी भेज दिया जाता था जैसे, चीनी सचिवों का ईरान और ईरानी सचिवों का चीन में स्थानांतरण। इस तरह इन्होंने दूरस्थ राज्यों को संघटित करने में भी मदद की और इनकी पृष्ठभूमि और प्रशिक्षण से वहाँ के स्थानबद्ध जन-जीवन पर होने वाली खानाबदोशों की लूटमारों की धार कम हो गई। मंगोल शासकों का भी इन पर तब तक विश्वास बना रहता था जब तक ये प्रशासक अपने स्वामियों के लिए कर इकट्ठा करने की क्षमता बनाए रखते थे। इनमें से कुछ प्रशासक काफ़ी प्रभावशाली थे और अपने प्रभाव का उपयोग खानों पर भी कर पाते थे। उदाहरण के लिए 1230 के दौरान चीनी मंत्री ये-लू-चुत्साई (Yeh-lu Ch'u-ts'ai) ने ओगोदेई की लूटने वाली प्रवृत्ति को परिवर्तित कर दिया। जुवैनी परिवार ने भी ईरान में तेरहवीं शताब्दी के उत्तरवर्ती काल और उसके अंत में भी इसी तरह की भूमिका निभाई। वज़ीर रशीदुद्दीन ने गज़न खान के लिए वह भाषण भी इसी समय तैयार किया था जो उसने अपने मंगोल देशवासियों के समक्ष दिया था, जिसमें उसने कृषक-वर्ग को सताने की बजाय उनकी रक्षा करने की बात कही थी।

स्थानबद्ध रूप से रहने का दबाव मंगोल निवास स्थानों के नए क्षेत्रों में अधिक था, उन क्षेत्रों में जो यायावरों के मूल स्टेपी-आवास से दूर थे। धीरे-धीरे तेरहवीं शताब्दी के मध्य तक, भाइयों के बीच पिता द्वारा अर्जित धन को मिल-बाँटकर इस्तेमाल करने की बजाय व्यक्तिगत राजवंश बनाने की भावना ने स्थान ले लिया और हर एक अपने *उलुस*, जिसका तात्पर्य अब क्षेत्रीय यानी अधिकृत क्षेत्र का स्वामी हो गया। यह अंशत: उत्तराधिकार के लिए संघर्ष का परिणाम था जिसमें चंगेज़ खान के वंशजों के बीच महान पद के लिए तथा उत्कृष्ट चरागाही भूमि पाने के लिए होड़ होती थी। चीन और ईरान दोनों पर शासन करने के लिए लिए आए टोलुई के वंशजों ने युआन और इल-खानी वंशों की स्थापना की। जोची ने 'सुनहरा गिरोह' (Golden Horde) का गठन किया और रूस के स्टेपी-क्षेत्रों पर राज किया। चघताई के उत्तराधिकारियों ने तुरान के स्टेपी-क्षेत्रों पर राज किया, जिसे आजकल तुर्किस्तान कहा जाता है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि मध्य-एशिया (चघताई के वंशज) तथा रूस (गोल्डन होर्ड) के स्टेपी-निवासियों में यायावर परंपराएँ सबसे अधिक समय तक चलीं।

चंगेज़ खान के वंशजों का धीरे-धीरे अलग होकर पृथक-पृथक वंश समूहों में बँट जाने का तात्पर्य था उनका अपने पिछले परिवार से जुड़ी स्मृतियों और परंपराओं के सामंजस्य में बदलाव

आना। स्पष्टतः यह सब एक कुल के सदस्यों में परस्पर प्रतिस्पर्धा के परिणामस्वरूप हुआ और इसी की एक शाखा टोलिईद ने अपने पारिवारिक मतभेदों का वृत्तांत बड़ी निपुणता से अपने संरक्षण में प्रस्तुत किए जा रहे इतिहासों में दिया। बहुत हद तक, यह सब चीन और ईरान पर उनके नियंत्रण का और उनके परिवार के सदस्यों द्वारा बहुत बड़ी संख्या में विद्वानों को अपने यहाँ भर्ती करने का परिणाम था। परिष्कृत रूप से कहा जा सकता है कि अतीत से अलग होने का मतलब, पिछले शासकों की अपेक्षा प्रचलित शासकों के गुणों को अधिक लोकप्रिय करना था। तुलना की इस प्रक्रिया में स्वयं चंगेज़ खान को भी नहीं छोड़ा गया। इल-खानी ईरान में तेरहवीं शताब्दी के आखिर में फ़ारसी इतिहासवृत्त में महान खानों द्वारा की गई रक्तरंजित हत्याओं का विस्तृत वर्णन किया गया और मृतकों की संख्या बहुत अधिक बढ़ा-चढ़ा कर दी गई है। उदाहरण के लिए, एक चश्मदीद गवाह के इस विवरण के विरोध में, कि बुखारा के किले की रक्षा के लिए 400 सैनिक तैनात थे, एक इल-खानी इतिहासवृत्त में यह विवरण दिया गया कि बुखारा के किले पर हुए आक्रमण में 30,000 सैनिक मारे गए। यद्यपि इल-खानी विवरणों में अभी भी चंगेज़ खान की प्रशंसा की जाती थी लेकिन उनमें साथ ही तसल्लीबख़्श यह कथन भी दिया जाने लगा कि समय बदल गया है और अब पहले जैसा खून-खराबा समाप्त हो चुका था। चंगेज़ खान के वंशजों को विरासत में जो कुछ भी मिला वह महत्त्वपूर्ण था लेकिन उनके सामने एक समस्या थी। अब उन्हें एक स्थानबद्ध समाज में अपनी धाक जमानी थी। इस बदले हुए समय में वे वीरता की वह तस्वीर नहीं पेश कर सकते थे जैसी चंगेज़ खान ने की थी।

डेविड आयलॉन (David Ayalon) के शोध के बाद *यास* (yasa) पर हाल ही में हुआ कार्य (वह नियम संहिता, जिसके बारे में कहा जाता है कि चंगेज़ खान ने 1206 के *किरिलताई* में लागू की थी) उन जटिल विधियों का विस्तृत वर्णन करता है जो महान खान की स्मृति को बनाए रखने के लिए उसके उत्तराधिकारियों ने प्रयुक्त की थीं। अपने प्रारंभिक स्वरूप में *यास* को *यसाक* (yasaq) लिखा जाता था जिसका अर्थ था विधि, आज्ञप्ति व, आदेश। वास्तव में जो थोड़ा बहुत विवरण *यसाक* के बारे में हमें मिला है उसका संबंध प्रशासनिक विनियमों से है; जैसे– आखेट, सैन्य और डाक प्रणाली का संगठन। तेरहवीं शताब्दी के मध्य तक, किसी तरह से मंगोलों ने *यास* शब्द का प्रयोग ज़्यादा सामान्य रूप में करना शुरू कर दिया। इसका मतलब था चंगेज़ खान की विधि-संहिता।

यदि हम उसी समय में घटने वाली अन्य घटनाओं की ओर देखें तो शायद हम इस शब्द के अर्थ में होनेवाले परिवर्तनों को समझ सकते हैं। तेरहवीं शताब्दी के मध्य तक मंगोल एक एकीकृत जनसमूह के रूप में उभरकर सामने आए और उन्होंने एक ऐसे विशाल साम्राज्य का निर्माण किया जिसे दुनिया में पहले नहीं देखा गया था। उन्होंने अत्यंत जटिल शहरी समाजों पर शासन किया जिनके अपने-अपने इतिहास, संस्कृतियाँ और नियम थे। हालांकि मंगोलों का अपने साम्राज्य के क्षेत्रों पर राजनैतिक प्रभुत्व रहा, फिर भी संख्यात्मक रूप में वे अल्पसंख्यक ही थे। उनके लिए अपनी पहचान और विशिष्टता की रक्षा का एकमात्र उपाय उस पवित्र नियम के अधिकार के दावे के ज़रिये हो सकता था, जो उन्हें अपने पूर्वजों से प्राप्त हुआ था। इस बात की पूरी संभावना है कि *यास* मंगोल जनजाति की ही प्रथागत परंपराओं का एक संकलन था। किंतु उसे चंगेज़ खान की विधि-संहिता कहकर मंगोलों ने भी मूसा और सुलेमान की भांति अपने एक स्मृतिकार के होने का दावा किया जिसकी प्रामाणिक संहिता प्रजा पर लागू की जा सकती थी। *यास* मंगोलों को समान आस्था रखने वालों के आधार पर संयुक्त करने में सफल हुआ। उसने चंगेज़ खान और उनके वंशजों से मंगोलों की निकटता को स्वीकार किया। यद्यपि मंगोलों ने भी काफी हद तक

स्थानबद्ध जीवन-प्रणाली के कुछ पहलुओं को अपना लिया था, फिर भी *यास* ने उनको अपनी कबीलाई पहचान बनाए रखने और अपने नियमों को उन पराजित लोगों पर लागू करने का आत्म-विश्वास दिया। *यास* एक बहुत ही सशक्त विचारधारा थी। हो सकता है कि चंगेज़ खान ने ऐसी विधि की कोई योजना पहले से न बनाई हो लेकिन वह निश्चित रूप से उसकी कल्पना-शक्ति से प्रेरित था, जिसने विश्वव्यापी मंगोल राज्य की संरचना में अहम भूमिका निभाई।

क्रियाकलाप 4

क्या इन चार शताब्दियों में *यास* का अर्थ बदल गया, जिसने चंगेज़ खान को अब्दुल्लाह खान से अलग कर दिया? हफ़ीज-ए तानीश के अनुसार अब्दुल्लाह खान ने मुसलमान उत्सव मैदान में किए गए धार्मिक अनुपालन के संबंध में चंगेज़ खान के *यास* का उल्लेख क्यों किया?

_यास_

1221 में बुखारा पर विजय प्राप्त करने के बाद चंगेज़ खान ने वहाँ के अमीर मुसलमान निवासियों को 'उत्सव मैदान' में एकत्रित कर उनकी भर्त्सना की। उसने उनको पापी कहा और चेतावनी दी कि इन पापों के प्रायश्चितस्वरूप उनको अपना छिपा हुआ धन उसे देना पड़ेगा। यह वर्णन करने योग्य एक नाटकीय घटना थी जिसको लोगों ने लंबे समय तक याद रखा और उस पर चित्र बनाए। सोलहवीं शताब्दी के अंत में चंगेज़ खान के सबसे बड़े पुत्र जोची का एक दूर का वंशज अब्दुल्लाह खान बुखारा के उसी उत्सव मैदान में गया। चंगेज़ खान के विपरीत अब्दुल्लाह खान वहाँ छुट्टी की नमाज़ अदा करने गया। उसके इतिहासकार हफ़ीज़-ए-तानीश ने अपने स्वामी की इस मुस्लिम धर्म-परायणता का विवरण अपने इतिवृत्त में दिया और साथ में यह चौंका देने वाली टिप्पणी भी की: 'कि यह चंगेज़ खान के *यास* के अनुसार था'।

निष्कर्ष : चंगेज़ खान और मंगोलो का विश्व इतिहास में स्थान

आज जब हम चंगेज़ खान को याद करते हैं तो हमारी कल्पना में ऐसी तस्वीरें आती हैं जैसेकि एक विजेता, नगरों को ध्वस्त करने वाला और एक ऐसे व्यक्ति की, जो हज़ारों लोगों की मृत्यु का उत्तरदायी है। तेरहवीं शताब्दी के चीन, ईरान और पूर्वी यूरोप के नगरवासी स्टेपी के इन गिरोहों को भय और घृणा की दृष्टि से देखते थे। फिर भी मंगोलों के लिए चंगेज़ खान अब तक का सबसे महान शासक था : उसने मंगोलों को संगठित किया, लंबे समय से चली आ रही कबीलाई लड़ाइयों और चीनियों द्वारा शोषण से मुक्ति दिलवाई, साथ ही उन्हें समृद्ध बनाया। एक शानदार पारमहाद्वीपीय साम्राज्य बनाया और व्यापार के रास्तों और बाज़ारों को पुनर्स्थापित किया जिनसे वेनिस के मार्कोपोलो की तरह दूर के यात्री आकृष्ट हुए। चंगेज़ खान के इन परस्पर विरोधी चित्रों का कारण एकमात्र परिप्रेक्ष्य की भिन्नता नहीं बल्कि ये विचार हमें यह सोचने पर मजबूर करते हैं कि किस तरह से एक (प्रभावशाली) दृष्टिकोण अन्य को पूरी तरह से मिटा देता है।

स्थानबद्ध पराजित लोगों की सोच से परे कुछ देर के लिए तेरहवीं शताब्दी के उस छोटे से मंगोल अधिराज्य के बारे में सोचिए जिसने विविध मतों और आस्था वाले लोगों को सम्मिलित किया। हालांकि मंगोल शासक स्वयं भी विभिन्न धर्मों, आस्थाओं से संबंध रखने वाले थे—शमन, बौद्ध, ईसाई और अंतत: इस्लाम—लेकिन उन्होंने सार्वजनिक नीतियों पर अपने वैयक्तिक मत कभी

नहीं थोपे। मंगोल शासकों ने सब जातियों और धर्मों के लोगों को अपने यहाँ प्रशासकों और हथियारबंद सैन्य दल के रूप में भर्ती किया। इनका शासन बहु-जातीय, बहु-भाषी, बहु-धार्मिक था जिसको अपने बहुविध संविधान का कोई भय नहीं था। यह उस समय के लिए एक असामान्य बात थी। इतिहासकार अब उन विधियों का अध्ययन करने में लगे हैं जिनके माध्यम से मंगोल अपने बाद में आनेवाली शासन-प्रणालियों (जैसे कि भारत में मुगल शासकों की) के अनुसरण के लिए आदर्श प्रस्तुत कर सके।

मंगोलों और किसी भी यायावर शासन प्रणाली से संबंधित जिस तरह के प्रलेख हैं, उनसे यह समझना वस्तुत: असंभव है कि वह कौन सा ऐसा प्रेरणा-स्रोत था जिसने साम्राज्य निर्माण की महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए अनेक समुदाय में बंटे हुए लोगों का एक परिसंघ बनाया। अंतत: मंगोल साम्राज्य भिन्न-भिन्न वातावरण में परिवर्तित हो गया तथापि मंगोल साम्राज्य के संस्थापक की प्रेरणा एक प्रभावशाली शक्ति बनी रही। चौदहवीं शताब्दी के अंत में एक अन्य राजा तैमूर, जो एक विश्वव्यापी राज्य की आकांक्षा रखता था, ने अपने को राजा घोषित करने में संकोच का अनुभव किया, क्योंकि वह चंगेज़ खान का वंशज नहीं था। जब उसने अपनी स्वतंत्र संप्रभुता की घोषणा की तो अपने को चंगेज़ खानी परिवार के दामाद के रूप में प्रस्तुत किया।

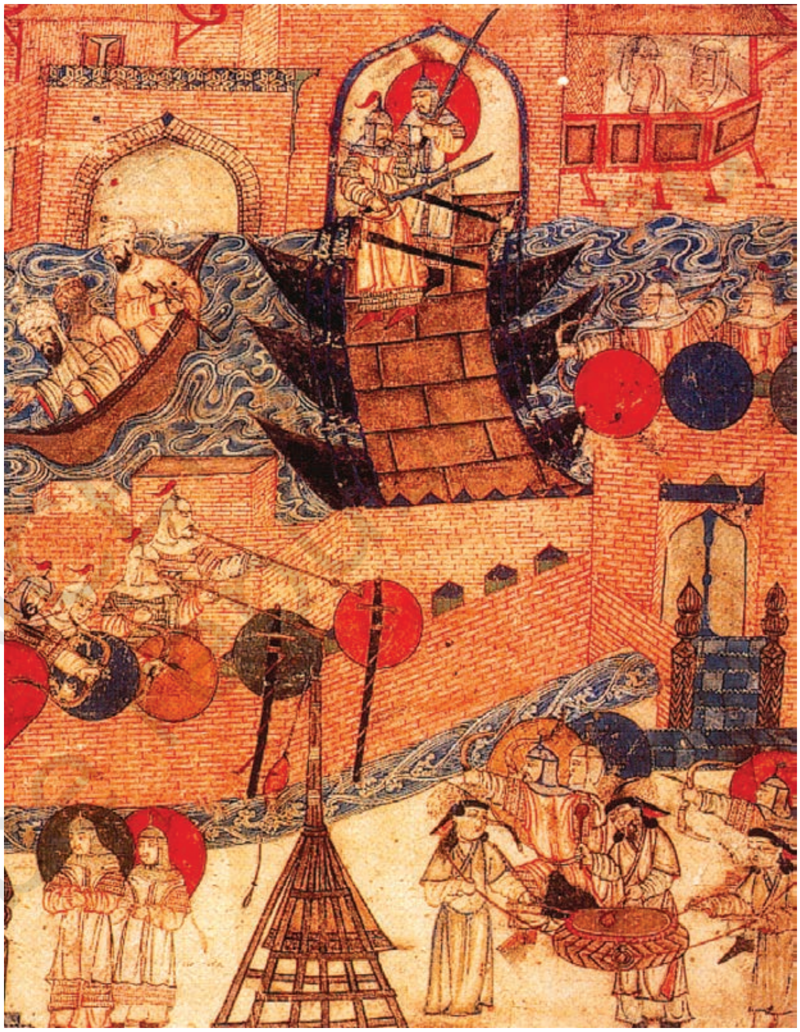

मंगोलों द्वारा बग़दाद पर कब्ज़ा।
रशीद अल-दीन, तबरेज़ का इतिवृत्त में दिया गया चौदहवीं शताब्दी का एक लघुचित्र।

आज, दशकों के रूसी नियंत्रण के बाद, मंगोलिया एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में अपनी पहचान बना रहा है। उसने चंगेज़ खान को एक महान राष्ट्र-नायक के रूप में लिया है जिसका सार्वजनिक रूप से सम्मान किया जाता है और जिसकी उपलब्धियों का वर्णन गर्व के साथ किया जाता है। मंगोलिया के इतिहास में इस निर्णायक समय पर चंगेज़ खान एक बार फिर मंगोलों के लिए एक आराध्य व्यक्ति के रूप में उभरकर सामने आया है जो महान अतीत की स्मृतियों को जागृत कर राष्ट्र की पहचान बनाने की दिशा में शक्ति प्रदान करने के साथ-साथ राष्ट्र को भविष्य की ओर ले जाएगा।

कुबलई खान और चाबी, शिविर में

अभ्यास

संक्षेप में उत्तर दीजिए

1. मंगोलों के लिए व्यापार क्यों इतना महत्त्वपूर्ण था?
2. चंगेज़ खान ने यह क्यों अनुभव किया कि मंगोल कबीलों को नवीन सामाजिक और सैनिक इकाइयों में विभक्त करने की आवश्यकता है?
3. *यास* के बारे में परवर्ती मंगोलों का चिंतन किस तरह चंगेज़ खान की स्मृति के साथ जुड़े हुए उनके तनावपूर्ण संबंधों को उजागर करता है?
4. यदि इतिहास नगरों में रहने वाले साहित्यकारों के लिखित विवरणों पर निर्भर करता है तो यायावर समाजों के बारे में हमेशा प्रतिकूल विचार ही रखे जाएँगे। क्या आप इस कथन से सहमत हैं? क्या आप इसका कारण बताएँगे कि फ़ारसी इतिवृत्तकारों ने मंगोल अभियानों में मारे गए लोगों की इतनी बढ़ा-चढ़ा कर संख्या क्यों बताई है?

संक्षेप में निबंध लिखिए

5. मंगोल और बेदोइन समाज की यायावरी विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए, यह बताइए कि आपके विचार में किस तरह उनके ऐतिहासिक अनुभव एक दूसरे से भिन्न थे? इन भिन्नताओं से जुड़े कारणों को समझाने के लिए आप क्या स्पष्टीकरण देंगे?
6. तेरहवीं शताब्दी के मध्य में मंगोलिया द्वारा निर्मित 'पैक्स मंगोलिका' का निम्नलिखित विवरण उसके चरित्र को किस तरह उजागर करता है?

एक फ्रेन्सिसकन भिक्षु, रूब्रुक निवासी विलियम को फ्रांस के सम्राट लुई IX ने राजदूत बनाकर महान खान मोंके के दरबार में भेजा। वह 1254 में मोंके की राजधानी कराकोरम पहुँचा और वहाँ वह लोरेन, फ्रांस की एक महिला पकेट (Paquette) के संपर्क में आया जिसे हंगरी से लाया गया था। यह महिला राजकुमार की पत्नियों में से एक पत्नी की सेवा में नियुक्त थी जो नेस्टोरियन ईसाई थी। वह दरबार में एक फ़ारसी जौहरी ग्वीयोम् बूशेर के संपर्क में आया, 'जिसका भाई पेरिस के 'ग्रेन्ड पोन्ट' में रहता था। इस व्यक्ति को सर्वप्रथम रानी सोरगकतानी ने और उसके उपरांत मोंके के छोटे भाई ने अपने पास नौकरी में रखा। विलियम ने यह देखा कि विशाल दरबारी उत्सवों में सर्वप्रथम नेस्टोरिन पुजारियों को उनके चिह्नों के साथ तथा इसके उपरांत मुसलमान, बौद्ध और ताओ पुजारियों को महान खान को आशीर्वाद देने के लिए आमंत्रित किया जाता था। ...

तीन

बदलती परंपराएँ

तीन वर्ग

बदलती हुई सांस्कृतिक परंपराएँ

संस्कृतियों का टकराव

© NCERT not to be republished

बदलती परंपराएँ

हमने देखा है कि नौवीं सदी तक कैसे एशिया और यूरोप के अधिकांश भागों में विशाल साम्राज्यों का विकास और विस्तार हुआ। इन साम्राज्यों में से कुछ यायावरों के थे, कुछ विकसित शहरों और उन शहरों के व्यापारी तंत्रों पर आधारित थे। मकदूनिया, रोम, अरब साम्राज्य, मंगोल साम्राज्य और उनसे पूर्व आने वाले साम्राज्यों (मिस्र, असीरिया, चीनी और मौर्य) में यह अंतर था कि यहाँ दिए गए पहले चार साम्राज्य विस्तृत क्षेत्रों में फैले हुए थे और महाद्वीपीय एवं पारमहाद्वीपीय स्वरूप के थे।

जो कुछ हुआ उसमें विभिन्न सांस्कृतिक टकरावों की भूमिका निर्णायक थी। साम्राज्यों का उदय प्राय: अचानक होता था परन्तु वे हमेशा उन बदलावों के परिणाम थे जो साम्राज्य-निर्माण की दिशा में लंबे समय से उन मूल क्षेत्रों में निहित थे जहाँ से ये साम्राज्य फैलने लगे।

विश्व इतिहास में परंपराएँ विभिन्न तरीकों से बदल सकती हैं। पश्चिमी यूरोप में नौवीं से सत्रहवीं सदी के मध्य ऐसा बहुत कुछ धीरे-धीरे विकसित हुआ जिसे हम 'आधुनिक समय' के साथ जोड़कर देखते हैं। इन कारकों में धार्मिक विश्वासों पर आधारित होने की अपेक्षा प्रयोगों पर आधारित वैज्ञानिक ज्ञान का विकास, लोक सेवाओं के निर्माण, संसद और विभिन्न कानूनी धाराओं के सृजन पर ध्यान देते हुए सरकार के संगठन पर गहन विचार और उद्योग व कृषि में प्रयोग आने वाली तकनीक में सुधार शामिल हैं। इन परिवर्तनों के परिणाम यूरोप के बाहर भी पुरज़ोर तरीके से महसूस किये गए।

जैसा कि हमने देखा पाँचवीं सदी में पश्चिम में रोमन साम्राज्य विघटित हो गया था। पश्चिमी और मध्य यूरोप में रोमन साम्राज्य के अवशेषों ने धीरे-धीरे अपने को उन कबीलों की प्रशासनिक आवश्यकताओं और अपेक्षाओं के अनुसार ढाल लिया था, जिन्होंने वहाँ पर राज्य स्थापित कर लिए थे। पूर्वी यूरोप, पश्चिमी एशिया एवं उत्तरी अफ़्रीका की तुलना में पश्चिमी यूरोप में नगरीय केंद्र छोटे थे।

वाइकिंग* स्कैंडीनेविया (डेनमार्क, नार्वे, स्वीडन, आइसलैंड) के वे लोग जो 8वीं-11वीं शताब्दी के बीच उत्तर पश्चिमी यूरोप के क्षेत्रों पर आक्रमण करने के बाद वहाँ बस गए। इनमें से अधिकांश लोग समुद्री दस्यु और व्यापारी थे।

नौवीं सदी तक, पश्चिमी और दक्षिणी यूरोप के वाणिज्यिक और शहरी केन्द्र-एक्स, लंदन, रोम व सियना यद्यपि छोटे थे तथापि उनका महत्त्व कम नहीं था। नौवीं से ग्यारहवीं सदी के मध्य पश्चिमी यूरोप के ग्रामीण क्षेत्रों में कई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। चर्च व शाही शासन ने वहाँ के कबीलों के प्रचलित नियमों और रोमन संस्थाओं में सामंजस्य स्थापित करने में मदद की। इसका सबसे अच्छा उदाहरण पश्चिमी और मध्य यूरोप में नौवीं सदी के प्रारंभ में शार्लमेन का साम्राज्य था। इसके शीघ्र पतन के पश्चात भी हंगरीवासियों व वाइकिंग* लोगों के भयंकर आक्रमणों के बावजूद, ये नगरीय केंद्र व व्यापार तंत्र बने रहे।

© NCERT not to be republished

इन सभी परिवर्तनों की अंतर्क्रियाओं के फलस्वरूप 'सामंती' व्यवस्था अस्तित्व में आई। सामंतवाद की पहचान थी दुर्गों व मेनर-भवन के इर्द-गिर्द कृषि उत्पादन। यह भूमि मेनर के लॉर्डों की थी जिस पर कृषक (कृषिदास) कार्य करते थे। ये वफ़ादार होने के साथ माल और सेवा प्रदान करने के प्रति वचनबद्ध होते थे। ये लॉर्ड, बड़े लॉर्डों के, जो राजा के सामंत (Vassal) होते थे, के प्रति वचनबद्ध थे। कैथलिक चर्च (जिसका केंद्र-बिंदु पोप और उनकी व्यवस्था थी) सामंतवाद को समर्थन देता था और उनके पास अपनी भूमि भी थी। ऐसे संसार में जहाँ पर जीवन की अनिश्चितताएँ, औषधियों का अल्प ज्ञान और निम्न जीवन-प्रत्याशा आम बात थी, चर्च ने लोगों को व्यवहार का ऐसा तरीका सिखाया जिससे मृत्यु के बाद का जीवन सहनीय बन सके। मठों का निर्माण हुआ जहाँ पर धर्म में आस्था रखने वाले लोग अपने को कैथलिक चर्चवासियों के निर्देशानुसार सेवा में लगाते थे। साथ ही चर्च स्पेन से बाइज़ेंटियम तक के मुस्लिम राज्यों में फैले विद्वत्ता-तंत्र का भाग थे। इसके अलावा वे यूरोप के अधीनस्थ राजाओं, पूर्वी भूमध्यसागर तथा सुदूर क्षेत्रों को प्रचुर मात्रा में धन-संपदा उपलब्ध कराते थे।

वेनिस और जिनेवा के भूमध्यसागरीय उद्यमियों से प्रेरित होकर (बारहवीं सदी से) सामंती व्यवस्था पर, वाणिज्य और नगरों का प्रभाव बढ़ता व बदलता गया। इन उद्यमियों के जहाज़ मुस्लिम राज्यों एवं पूर्व में बचे हुए रोमन साम्राज्य के साथ व्यापार करते रहे। इन क्षेत्रों की सम्पत्ति के लोभ में तथा ईसा के जीवन से जुड़े 'पवित्र स्थलों' को मुसलमानों से आज़ाद कराने की भावना से प्रेरित होकर यूरोपीय राजाओं ने 'धर्म-युद्ध' के दौरान भूमध्यसागर के पार के स्थानों से संबंध मज़बूत किए। यूरोप के आंतरिक व्यापार में सुधार हुआ (जो मेलों और बाल्टिक समुद्र तथा उत्तरी सागर के बंदरगाहों पर केंद्रित था और बढ़ती हुई जनसंख्या द्वारा प्रेरित था)।

वाणिज्य-विस्तार के ये अवसर जीवन के मूल्य के प्रति बदलते हुए रवैये से मेल खाते थे। इस्लामी कला और साहित्य में मानव और अन्य प्राणियों के प्रति प्रचुरता से दिखाई पड़ने वाला सम्मान और बाइज़ेंटाइन के व्यापार द्वारा यूरोप में आने वाली यूनानी कला और विचारों ने यूरोप को संसार देखने का एक नया नज़रिया प्रदान किया। चौदहवीं सदी से (जिसे पुनर्जागरण कहा जाता है) विशेष रूप से उत्तरी इटली के नगरों में रईस लोग मृत्योपरांत जीवन की अपेक्षा इस

दक्षिणी फ्रांस के नगर एविगनोन (चौदहवीं शताब्दी) में पोप का महल।

पंद्रहवीं शताब्दी में वेनिस में डोगे का महल।

जीवन से अधिक वास्ता रखने लगे। मूर्तिकार, चित्रकार और लेखक मानव और संसार की खोज में अधिक दिलचस्पी लेने लगे।

पंद्रहवीं सदी के अंत तक, इस तरह की परिस्थितियों ने यात्रा और खोजों को अभूतपूर्व ढंग से बढ़ावा दिया। कई खोज यात्राएँ शुरू हुईं। स्पेनवासी और पुर्तगाली जो उत्तरी अफ्रीका के साथ व्यापार करते थे, पश्चिमी अफ़्रीका के तट पर और दक्षिण में जाने लगे। इस तरह उत्तमाशा-अंतरीप (Cape of Good Hope) होते हुए वे भारत पहुँचे जो यूरोप में मसालों के एक महत्त्वपूर्ण स्रोत के रूप में प्रसिद्ध था। कोलम्बस ने भारत के लिए एक पश्चिमी मार्ग खोजने का प्रयास किया और 1492 ई. में एक द्वीप पर पहुँचा जिसे यूरोपवासियों ने वेस्टइंडीज़ कहा। दूसरे खोजकर्ताओं ने आर्कटिक की ओर से भारत और चीन के लिए उत्तरी मार्ग खोजने का प्रयास किया।

यूरोप के यात्रियों को अपनी यात्रा के दौरान भांति-भांति के लोग मिले। कुछ हद तक वे उनसे सीखने के इच्छुक थे। पोप और कैथलिक चर्च ने भूगोलवेत्ता एवं पर्यटक हसन-अल-वज़ान (Hassan-al-Wazzan, यूरोप में लियो अफ़्रीकानस के नाम से विदित) के काम को प्रोत्साहित किया। इस भूगोलवेत्ता ने पोप लियो दशम के लिए सोलहवीं सदी के पूर्वार्ध में अफ़्रीका का भूगोल पहली बार लिखा। जेसुइट चर्च के सदस्यों ने सोलहवीं सदी में जापान के बारे में जाना और उसके बारे में लिखा। सत्रहवीं सदी में एक अंग्रेज़ व्यक्ति विल एडम्स (Will Adams), जापानी शोगुन, तोकोगावा ईयास (Tokugawa Ieyasu) का मित्र एवं सलाहकार बन गया। अमरीका पहुँचने पर यूरोपीय लोगों का वहाँ के मूल निवासियों से सम्पर्क हुआ। हसन अल-वज़ान की तरह ही इन लोगों ने यूरोपीय लोगों में दिलचस्पी ली और कभी-कभी उनके लिए काम भी किया। उदाहरण के लिए, एज़्टेक (Aztec) की एक महिला ने जो बाद में डोना मेरिना (Dona Marina) नाम से जानी गई मेक्सिको के स्पेनी विजेता कोरटेस (Cortes) से दोस्ती की, उसके लिए दुभाषिये का काम किया और कई तरह के प्रबंध करवाये।

यूरोपवासी नये लोगों के साथ सामना होने की स्थिति में कभी-कभी सचेत, अनात्मशंसी और चौकन्ने होते थे। यहाँ तक कि जब वे व्यापारिक एकाधिकार स्थापित करने और हथियारों के बल

पर अपनी सत्ता थोपने के लगातार प्रयास करते रहे। आप जानते होंगे कि ऐसा ही पुर्तगालियों ने 1498 में वास्को डि गामा के कालीकट (कोझीकोड) आगमन के बाद हिंद महासागर में भी किया। दूसरी ओर कभी-कभी वे दबंग, आक्रामक एवं क्रूर थे और जिनसे भी वे मिले उन्हें अज्ञानी मान कर उन्होंने अपने श्रेष्ठ होने का भाव प्रदर्शित किया। कैथलिक चर्च ने दोनों रवैयों को प्रोत्साहन दिया। चर्च, दूसरी सभ्यताओं और भाषाओं के लिए अध्ययन का केंद्र था, लेकिन उसने उन लोगों पर होने वाले हमलों को बढ़ावा दिया जिन लोगों को वह गैर-ईसाई मानता था।

गैर-यूरोपवासियों की दृष्टि से, यूरोप के साथ उनके संपर्क - संघर्ष अलग-अलग तरह के थे। अधिकांश इस्लामी क्षेत्रों और भारत तथा चीन के लिए यूरोपवासी सत्रहवीं सदी के अंत तक एक कौतूहल का विषय थे। वे ऐसे हृष्ट-पुष्ट व्यापारियों तथा नाविकों के रूप में देखे जाते थे जो बृहत्तर दुनिया के बारे में पूर्वी लोगों की समझ में बहुत योगदान नहीं कर सकते थे। फिर भी जापानियों ने उनकी प्रौद्योगिकी के कुछ लाभ जल्द ही सीख लिए। उदाहरण के लिए सोलहवीं सदी के उत्तरार्ध तक उन्होंने बड़े पैमाने पर बंदूकों का उत्पादन शुरू कर दिया। उत्तरी व दक्षिणी अमरीका में, एज़टेक साम्राज्य के शत्रुओं ने यूरोपवासियों का उपयोग एज़टेकों की शक्ति को चुनौती देने में किया। साथ ही साथ यूरोपवासियों के साथ आई बीमारियों ने जनसंख्या का विनाश कर दिया। सोलहवीं सदी के अंत तक कुछ क्षेत्रों में नब्बे प्रतिशत जनसंख्या मृत्यु के आगोश में समा गई।

© NCERT not to be republished

कालक्रम तीन

(लगभग 1300-1700)

यूरोप में विचाराधीन काल में अनेक महत्त्वपूर्ण विकास हुए जिसमें कृषि और किसानों के जीवन में अनेक प्रकार के परिवर्तनों को देखा गया। इसके अलावा अनेक सांस्कृतिक परिवर्तन भी हुए। इस कालरेखा से ज्ञात होता है कि महाद्वीपों के आपसी संबंधों ने व्यापार को प्रोत्साहित किया। इन संपर्कों ने अनेक क्षेत्रों को प्रभावित किया और विचारों, आविष्कारों तथा वस्तुओं का आदान-प्रदान एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप में होने लगा। भूमि पर नियंत्रण, स्रोत और व्यापार के क्षेत्रों पर नियंत्रण रखने के लिए राज्यों में परस्पर लगातार संघर्ष हो रहे थे जिसके कारण महिलाओं और पुरुषों को यदि उनकी हत्या न कर दी गई हो तो उन्हें उनके निवास-स्थानों से निकाल कर उन्हें दास बनाया जा रहा था। इस तरह लोगों का जीवन अनेक रूपों में इतना अधिक बदल गया था कि उसे पहचानना बहुत कठिन हो गया था।

© NCERT not to be republished

तिथि	अफ़्रीका	यूरोप
1300-25		स्पेन में अल्हम्ब्रा और ग्रेनेडा महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक केंद्रों के रूप में प्रतिष्ठित हुए
1325-1350	मिस्र में प्लेग* (1348-55)	इंग्लैंड और फ्रांस के मध्य शतवर्षीय युद्ध (1337-1453); संपूर्ण यूरोप में 'ब्लैक डैथ' (एक प्रकार का प्लेग) का प्रकोप
1350-75	इब्नबतूता द्वारा सहारा की खोज	फ्रांस के किसानों ने ऊँचे करों का विरोध किया (1358)
1375-1400		ब्रिटेन में किसानों का विद्रोह (1381); जोफरी चॉसर (Geoffrey Chaucer) ने *दि केन्टरबरी टेल्स* की रचना की जो अंग्रेज़ी भाषा की प्राचीनतम कृति थी
1400-1425		
1425-50	पुर्तगालियों नें दास व्यापार (1442) को प्रारंभ किया	
1450-75	पश्चिम अफ़्रीका में सोंघाई साम्राज्य की स्थापना जिसका उद्देश्य सहारा के पार व्यापार का जाल बिछाना था; पुर्तगालियों का अफ़्रीका के पश्चिमी तटवर्ती (1471 के बाद) क्षेत्रों में आक्रमण और बस्तियों की स्थापना	यूरोप में पहली मुद्रित पुस्तक का निर्माण; इटली के लियोनार्डो -दा विन्सी (1452-1519), चित्रकार, वास्तुविद् और अन्वेषक
1475-1500	पुर्तगालियों ने बोकोंगो राजा को ईसाई बनाया	इंग्लैंड में (1485) में टयूड्र वंश की स्थापना
1500-1525	अफ़्रीकी गुलामों को अमरीका में गन्ने की खेती के लिए ले जाया गया (1510); ऑटोमन तुर्की ने मिस्र पर विजय प्राप्त की (1517)	दक्षिण अमरीका में उपजी काफी को यूरोप में पहली बार (1517) तथा तंबाकू, चॉकलेट, टमाटर और तुर्की का भी पहली बार प्रयोग किया गया; मॉर्टिन लूथर ने कैथोलिक चर्च में सुधार किए (1517)
1525-1550		कोपरनिकस ने सौर-परिवार सिद्धांत को प्रस्तुत किया (1543)
1550-75		विलियम शेक्सपियर (1564-1616) - इंग्लैंड के नाटककार
1575-1600		जचरियास जेन्सेन (Zacharias Janssen) ने माइक्रोस्कोप की खोज की (1590 का दशक)
1600-25	नाइजीरिया का ओयू राज्य अपने चरम-शिखर पर था। यहाँ धातु-कर्म के अनेक क्रेंद्र थे	प्रथम उपन्यास *डॉन-क्विकजोट* (Don Quixote) को स्पेनी भाषा में (1605) में लिखा गया
1625-50		विलियम हॉर्वे ने यह दिखाया कि रक्त हृदय से पंप होकर शरीर में जाता है (1628)
1650-75	पुर्तगालियों ने कोंगो राज्य को नष्ट किया (1662)	लुई चौदहवाँ फ्रांस का शासक बना (1638-1715)
1675-1700		पीटर महान (1682-1725) ने रूस का आधुनिकीकरण किया

© NCERT not to be republished

तिथि	एशिया	दक्षिणी एशिया
1300-25		
1325-1350		विजयनगर साम्राज्य* की स्थापना (1336)
1350-75	चीन में मिंग राजवंश (1368 से)	
1375-1400		
1400-1425		क्षेत्रीय सुल्तानों का अभ्युदय
1425-50		
1450-75	ऑटोमन तुर्कों का कुंस्तुनतुनिया पर अधिकार (1453)	
1475-1500		वास्को-डि-गामा भारत आया (1498)
1500-1525	पुर्तगालियों का चीन में प्रवेश, इनका विरोध और इन्हें मकावो की ओर खदेड़ा जाना (1522)	
1525-1550		बाबर ने उत्तरी भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना की। पानीपत का प्रथम युद्ध (1526)
1550-75		अकबर (1556-1605) ने मुगल शासन को संगठित किया
1575-1600	प्रथम काबुकी नाटक जापान में प्रस्तुत किया गया (1586)। फारस के शाह अब्बास (1587-1629) ने यूरोपीय सैन्य प्रशिक्षण प्रणाली को लागू किया	
1600-25	जापान में तोकूगावा शोगुनेट (Tokugawa Shogunate) की स्थापना (1603) हुई	ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना (1600)
1625-50	डच लोगों को छोड़कर समस्त यूरोपीय व्यापारियों को जापान से व्यापार करने पर रोक लगाई गई (1637); चीन में मंचू शासन (1644 से आगे) 300 वर्षों तक रहा; यूरोप में चीन की चाय और रेशम की माँग में बढ़ोत्तरी	ताजमहल का निर्माण (1632-53)
1650-75		
1675-1700		

© NCERT not to be republished

तिथि	अमरीका	आस्ट्रेलिया/प्रशांत महासागरीय द्वीप
1300-25	टेनोंक्टिटलान (Tenochtitlan) मेक्सिको की एज़्टेक राजधानी (1325) यहाँ के भवनों, मंदिरों, सिंचाई प्रणालियों तथा लेखा प्रणाली (क्विपू) के लिए विख्यात*	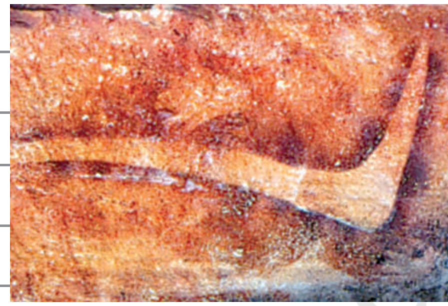
1325-1350	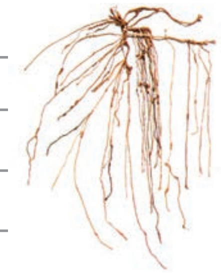	
1350-75		
1375-1400		
1400-1425		
1425-50		
1450-75	इंका लोगों ने पेरु पर अधिकार किया	
1475-1500	कोलम्बस वेस्टइंडीज़ पहुँचा (1492)	
1500-1525	मेक्सिको पर स्पेन की विजय (1521)	स्पेनी–नौचालक मेगलन प्रशांत महासागर (1519) में पहुँचा
1525-1550	फ्रांसीसी अन्वेषक कनाडा पहुँचे (1534)	
1550-75	स्पेन की पेरु पर विजय (1572)	
1575-1600		डच नाविक अनायास ही आस्ट्रेलिया पहुँचे
1600-25	इंग्लैण्ड ने उत्तरी अमरीका (1607) में अपनी प्रारंभिक कालोनियाँ बनाईं; सबसे पहले गुलामों को पश्चिमी अफ्रीका से वर्जिनिया (1619) लाया गया	स्पेनी नाविक तहिती (Tahiti) (1606) में पहुँचे
1625-50	डच लोगों ने न्यू अमेस्टरडम की खोज की जिसे आजकल न्यूयार्क (1626) कहते हैं; मेसाच्यूसेट्स (Massachusetts)में प्रथम प्रिंटिंग प्रेस की स्थापना हुई (1635)।	डच नाविक अबेल तस्मान (Abel Tasman) ने अनजाने में आस्ट्रेलिया की परिक्रमा की। इसके बाद वह वान डिमेन (Van Diemen) की भूमि में उतरा जिसे बाद में तस्मानिया नाम दिया गया। वह न्यूजीलैंड भी पहुँचा और उसने उसे विशाल क्षेत्र का भाग समझा
1650-75	वेस्टइंडीज़ (1654) में पहली बार गन्ने की खेती की गई	
1675-1700	मिसिसिपी घाटी में फ्रांसीसियों ने उपनिवेश स्थापित किए और इसका नामकरण सम्राट लुई चौदहवें के नाम पर लुसियाना रखा (1682)	

क्रियाकलाप

आपने यह ध्यान दिया होगा कि आस्ट्रेलिया/प्रशांत महासागरीय द्वीपों के खाने में बहुत ही कम तिथियाँ अंकित हुई हैं। ऐसा इसलिए हुआ कि इन क्षेत्रों के लोग प्राय: तिथि को बताने के लिए दूसरे साधनों जैसे पेंटिंग आदि का प्रयोग करते थे जैसा ऊपर दिखाया गया है।* कृपया एक घटना बताएँ जो ऊपर दिए गए पाँच खानों में दिखाई गई है जिसे आस्ट्रेलिया के एक चित्रकार ने रिकार्ड करने योग्य समझा। ऐसे ही दूसरी अन्य पाँच घटनाओं की तालिका बनाएँ जो उसे असंगत लगीं।

© NCERT not to be republished

विषय

6

तीन वर्ग

11091CH06

इस अध्याय में, हम नौवीं और सोलहवीं सदी के मध्य पश्चिमी यूरोप में होने वाले सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक परिवर्तनों के बारे में पढ़ेंगे। रोमन साम्राज्य के पतन के पश्चात पूर्वी एवं मध्य यूरोप के अनेक जर्मन मूल के समूहों ने इटली, स्पेन और फ्रांस के क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया था।

किसी भी संगठित राजनीतिक बल के अभाव में प्राय: युद्ध होते थे और अपनी भूमि की रक्षा के लिए संसाधन जुटाना अति आवश्यक हो गया था। इस प्रकार से सामाजिक ढाँचे का केंद्र-बिंदु भूमि पर नियंत्रण था। इसकी विशेषताएँ जर्मन रीति-रिवाजों और शाही रोम की परंपराओं से ली गई थीं। ईसाई धर्म, जो चौथी सदी से रोमन साम्राज्य का राजकीय धर्म था, रोम के पतन के पश्चात भी बचा रहा और धीरे-धीरे मध्य और उत्तरी यूरोप में फैल गया। चर्च भी यूरोप में एक मुख्य भूमिधारक और राजनीतिक शक्ति बन गया था।

तीन वर्ग – जो इस अध्याय का केंद्र बिंदु हैं, से हमारा अभिप्राय तीन सामाजिक श्रेणियों से है: ईसाई पादरी, भूमिधारक अभिजात वर्ग और कृषक। इन तीन वर्गों के बीच बदलते संबंध कई सदियों तक यूरोप के इतिहास को गढ़ने वाले महत्त्वपूर्ण कारक थे।

पिछले सौ वर्षों में, यूरोपीय इतिहासकारों ने विविध क्षेत्रों के इतिहासों, यहाँ तक कि प्रत्येक गाँव के इतिहास पर विस्तृत कार्य किया है। ऐसा इसलिए संभव हो पाया क्योंकि भू-स्वामित्व के विवरणों, मूल्यों, और कानूनी मुकद्दमों जैसी बहुत सारी सामग्री दस्तावेज़ों के रूप में उपलब्ध थी। उदाहरण के लिए, चर्चों में मिलने वाले जन्म, मृत्यु और विवाह के अभिलेखों की मदद से ही परिवारों और जनसंख्या की संरचना को समझा जा सका। चर्चों से प्राप्त अभिलेखों ने व्यापारिक संस्थाओं के बारे में सूचना दी और गीत व कहानियों द्वारा हमें त्योहारों और सामुदायिक गतिविधियों के बारे में बोध हुआ।

इन सभी का उपयोग इतिहासकार द्वारा आर्थिक एवं सामाजिक जीवन, दीर्घकालीन (जैसे जनसंख्या में वृद्धि) अथवा अल्पकालीन (जैसे कृषक विद्रोहों) परिवर्तनों को समझने में किया जा सकता है।

सामंतवाद पर सर्वप्रथम काम करने वाले विद्वानों में से एक फ्रांस के मार्क ब्लॉक (Marc Bloch) थे। मार्क ब्लॉक (1886-1944) फ्रांस के विद्वानों के उस वर्ग से थे जिनका यह तर्क था कि इतिहास की विषयवस्तु राजनीतिक इतिहास, अंतर्राष्ट्रीय संबंध और महान व्यक्तियों की जीवनियों से कुछ अधिक है। उन्होंने भूगोल के महत्त्व द्वारा मानव

© NCERT not to be republished

इतिहास को गढ़ने पर ज़ोर दिया जिससे कि लोगों के समूहों का व्यवहार और रुख समझा जा सके।

ब्लॉक का *सामंती समाज* यूरोपियों, विशेषकर 900 से 1300 के मध्य, फ्रांसीसी समाज के सामाजिक संबंधों और श्रेणियों, भूमि प्रबंधन और उस काल की जन संस्कृति का असाधारण विवरण देता है।

द्वितीय विश्वयुद्ध में नाज़ियों द्वारा गोली मारकर हत्या करने के कारण उनके द्वारा किए जा रहे शोध व अध्यापन कार्य पर अचानक ही विराम लग गया।

सामंतवाद का परिचय

इतिहासकारों द्वारा 'सामंतवाद' (fuedalism) शब्द का प्रयोग मध्यकालीन यूरोप के आर्थिक, विधिक, राजनीतिक और सामाजिक संबंधों का वर्णन करने के लिए किया जाता रहा है। यह जर्मन शब्द

'मध्यकालीन युग' शब्द पाँचवीं और पन्द्रहवीं सदी के मध्य के यूरोपीय इतिहास को इंगित करता है।

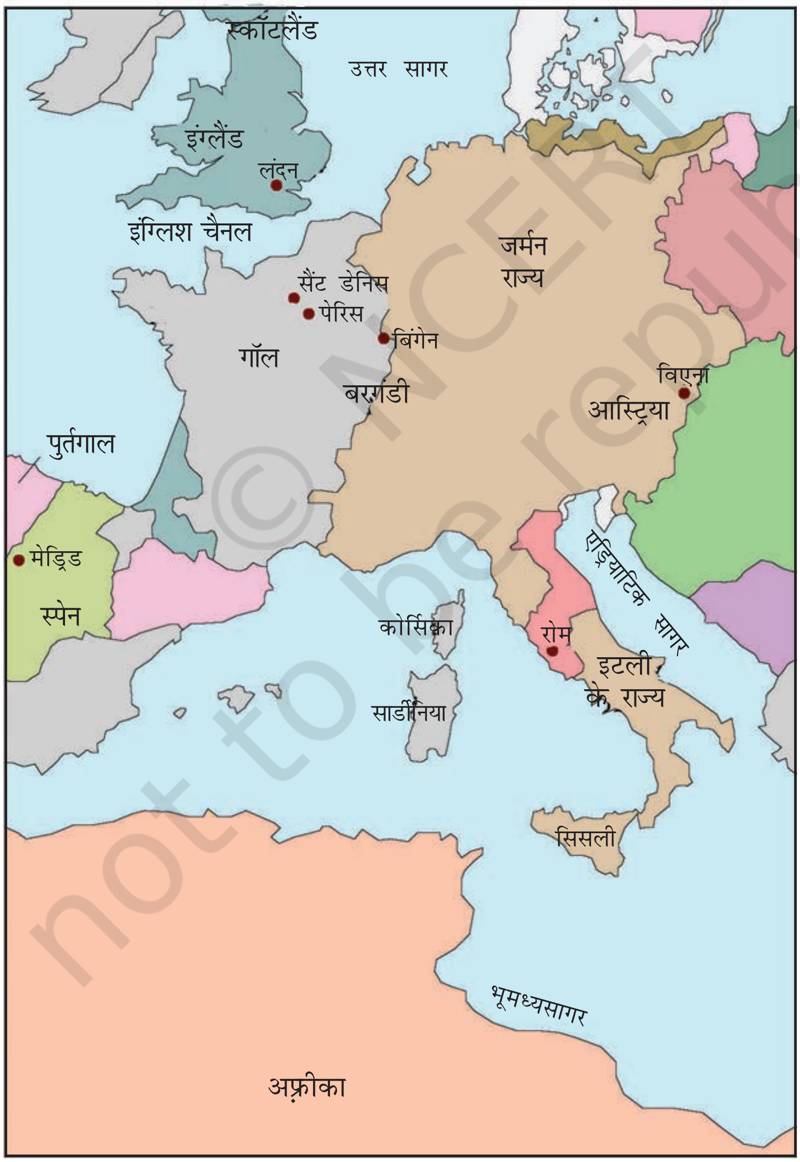

मानचित्र 1: पश्चिमी यूरोप।

© NCERT not to be republished

'फ़्यूड' से बना है जिसका अर्थ 'एक भूमि का टुकड़ा है' और यह एक ऐसे समाज को इंगित करता है जो मध्य फ्रांस और बाद में इंग्लैंड और दक्षिणी इटली में भी विकसित हुआ।

आर्थिक संदर्भ में, सामंतवाद एक तरह के कृषि उत्पादन को इंगित करता है जो सामंत (Lord) और कृषकों (peasents) के संबंधों पर आधारित है। कृषक, अपने खेतों के साथ-साथ लॉर्ड के खेतों पर कार्य करते थे। कृषक लॉर्ड को श्रम-सेवा प्रदान करते थे और बदले में वे उन्हें सैनिक सुरक्षा देते थे। इसके साथ-साथ लॉर्ड के कृषकों पर व्यापक न्यायिक अधिकार भी थे। इसलिए सामंतवाद ने जीवन के न केवल आर्थिक बल्कि सामाजिक और राजनीतिक पहलुओं पर भी अधिकार कर लिया।

यद्यपि इसकी जड़ें रोमन साम्राज्य में विद्यमान प्रथाओं और फ्रांस के राजा शॉर्लमेन (Charlemagne, 742-814) के काल में पाई गईं, तथापि ऐसा कहा जाता है कि जीवन के सुनिश्चित तरीके के रूप में सामंतवाद की उत्पत्ति यूरोप के अनेक भागों में ग्यारहवीं सदी के उत्तरार्ध में हुई।

फ्रांस और इंग्लैंड

गॉल (Gaul), जो रोमन साम्राज्य का एक प्रांत था, में दो विस्तृत तट-रेखाएँ, पर्वत-श्रेणियाँ, लंबी नदियाँ, वन और कृषि करने के लिए उपयुक्त विस्तृत मैदान थे।

जर्मनी की एक जनजाति, फ्रैंक (Franks) ने गॉल को अपना नाम देकर उसे फ्रांस बना दिया। छठी सदी से यह प्रदेश फ्रैंकिश अथवा फ्रांस के ईसाई राजाओं द्वारा शासित राज्य था। फ्रांसीसियों के चर्च के साथ प्रगाढ़ संबंध थे जो पोप द्वारा राजा शॉर्लमेन से समर्थन प्राप्त करने के लिए उसे पवित्र रोमन सम्राट की उपाधि दिए जाने पर और अधिक मज़बूत हो गए।*

*कुंस्तुनतुनिया में रहने वाले पूर्वी चर्च के प्रधान के भी बाइज़ेंटियम के सम्राट के साथ समान संबंध थे।

एक संकरे जलमार्ग के पार स्थित इंग्लैंड-स्काटलैंड द्वीपों को ग्यारहवीं सदी में फ्रांस के एक प्रांत नारमंडी (Normandy) के राजकुमार द्वारा जीत लिया गया था।

फ्रांस का प्रारंभिक इतिहास	
481	क्लोविस फ्रैंक लोगों का राजा बना
486	क्लोविस और फ्रैंक ने उत्तरी गॉल का विजय अभियान प्रारंभ किया
496	क्लोविस और फ्रैंक लोग धर्म परिवर्तन करके ईसाई बने
714	चॉर्ल्स मारटल राजमहल का मेयर बना
751	मारटल का पुत्र पेपिन फ्रैंक लोगों के शासक को अपदस्थ करके शासक बना और उसने एक अलग वंश की स्थापना की। विजय अभियानों ने राज्य का आकार दुगुना कर दिया
768	पेपिन का स्थान उसके पुत्र शॉर्लमेन/चार्ल्स महान द्वारा लिया गया
800	पोप लियो III ने शार्लमेन को पवित्र रोमन सम्राट का ताज पहनाया गया
840 से	नार्वे से वाइकिंग लोगों के हमले

तीन वर्ग

फ्रांसीसी पादरी इस अवधारणा में विश्वास रखते थे कि प्रत्येक व्यक्ति कार्य के आधार पर तीन वर्गों में से किसी एक का सदस्य होता है। एक बिशप ने कहा "यहाँ वर्ग क्रम में, कुछ प्रार्थना करते हैं, दूसरे लड़ते हैं और शेष अन्य कार्य करते हैं।" इस तरह समाज मुख्य रूप से तीन वर्ग पादरी, अभिजात और कृषक वर्ग से बना था।

बारहवीं सदी में, बिंगेन के आबेस हिल्डेगार्ड (Hildegard) ने लिखा : कौन चरवाहा अपने समस्त पशुओं, गायों, गधों, भेड़ों, बकरियों को कोई अंतर किए बिना एक अस्तबल में रखने की सोचेगा? इसलिए मनुष्यों में भी अंतर स्थापित करना आवश्यक है जिससे वे एक दूसरे को तबाह न करें... ईश्वर अपने रेवड़ में अंतर रखता है चाहे स्वर्ग पर अथवा पृथ्वी पर। उसके द्वारा सबको प्यार मिलता है परंतु उनमें कोई समानता नहीं है।

'ऑबे' शब्द सीरिया के अबा से लिया गया है जिसका अर्थ पिता है। ऐबी, एबट या एबेस से संचालित था।

दूसरा वर्ग–अभिजात वर्ग

पादरियों ने स्वयं को प्रथम वर्ग में तथा अभिजात वर्ग को दूसरे वर्ग में रखा था। परंतु वास्तव में, सामाजिक प्रक्रिया में अभिजात वर्ग की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। ऐसा भूमि पर उनके नियंत्रण के कारण था। यह वैसलेज (Vassalage) नामक एक प्रथा के विकास के कारण हुआ।

फ्रांस के शासकों का लोगों से जुड़ाव एक प्रथा के कारण था जिसे 'वैसलेज' कहते थे और यह प्रथा जर्मन मूल के लोगों, जिनमें से फ्रैंक लोग भी एक थे, में समान रूप से विद्यमान थी। बड़े भू-स्वामी और अभिजात वर्ग राजा के अधीन होते थे जबकि कृषक भू-स्वामियों के अधीन होते थे। अभिजात वर्ग राजा को अपना स्वामी (Seigneur-शाब्दिक अर्थ अंग्रेजी का Senior) मान लेता था और वे आपस में वचनबद्ध होते थे- सेन्योर/लॉर्ड (लॉर्ड एक ऐसे शब्द से निकला जिसका अर्थ था रोटी देने वाला) दास (Vassal) की रक्षा करता था और बदले में वह उसके प्रति निष्ठावान रहता था। इन संबंधों में व्यापक रीति-रिवाजों और शपथों का विनिमय शामिल था जो कि चर्च में बाईबल की शपथ लेकर की जाती थी। इस समारोह में दास (vassal) को उस भूमि के प्रतीक के रूप में, जो कि उसके मालिक द्वारा एक लिखित अधिकार पत्र या एक छड़ी (staff) या केवल एक मिट्टी का डला दिया जाता था।

फ्रांसीसी अभिजात शिकार पर जाते हुए, पंद्रहवीं सदी की पेंटिंग।

अभिजात वर्ग की एक विशेष हैसियत थी। उनका अपनी संपदा पर स्थायी तौर पर पूर्ण नियंत्रण था। वह अपनी सैन्य क्षमता बढ़ा सकते थे (जो सामंती सेना, feudal levies, कहलाती थी)। वे अपना स्वयं का न्यायालय लगा सकते थे और यहाँ तक कि अपनी मुद्रा भी प्रचलित कर सकते थे।

वे अपनी भूमि पर बसे सभी व्यक्तियों के मालिक थे। वे विस्तृत क्षेत्रों के स्वामी थे जिसमें उनके घर, उनके निजी खेत, जोत व चरागाह और उनके असामी-कृषकों (Tenant-peasant) के घर और खेत होते थे। उनका घर 'मेनर' कहलाता था। उनकी व्यक्तिगत भूमि कृषकों द्वारा जोती जाती थी जिनको आवश्यकता पड़ने पर युद्ध के समय पैदल सैनिकों के रूप में कार्य करना पड़ता था और साथ ही साथ अपने खेतों पर भी काम करता पड़ता था।

मेनर की जागीर

लॉर्ड का अपना मेनर-भवन होता था। वह गाँवों पर नियंत्रण रखता था - कुछ लॉर्ड, अनेक गाँवों के मालिक थे। किसी छोटे मेनर की जागीर में दर्जन भर और बड़ी जागीर में 50 या 60 परिवार हो सकते थे। प्रतिदिन के उपभोग की प्रत्येक वस्तु जागीर पर मिलती थी - अनाज खेतों में उगाये जाते थे, लोहार और बढ़ई लॉर्ड के औज़ारों की देखभाल और हथियारों की मरम्मत करते थे, जबकि राजमिस्त्री उनकी इमारतों की देखभाल करते थे। औरतें वस्त्र कातती एवं बुनती थीं और बच्चे लॉर्ड की मदिरा सम्पीडक में कार्य करते थे। जागीरों में विस्तृत अरण्यभूमि और वन होते थे जहाँ लॉर्ड शिकार करते थे। उनके यहाँ चरागाह होते थे जहाँ उनके पशु और घोड़े चरते थे। वहाँ पर एक चर्च और सुरक्षा के लिए एक दुर्ग होता था।

तेरहवीं सदी के इंग्लैंड के मेनर की एक जागीर।

तेरहवीं सदी से कुछ दुर्गों को बड़ा बनाया जाने लगा जिससे वे नाइट (knight) के परिवार का निवास स्थान बन सकें। वास्तव में, इंग्लैंड में नॉरमन विजय से पहले दुर्गों की कोई जानकारी नहीं थी और इनका विकास सामंत प्रथा के तहत राजनीतिक प्रशासन और सैनिक शक्ति के केंद्रों के रूप में हुआ था।

मेनर कभी भी आत्मनिर्भर नहीं हो सकते थे क्योंकि उन्हें नमक, चक्की का पाट और धातु के बर्तन बाहर के स्रोतों से प्राप्त करने पड़ते थे। ऐसे लॉर्ड जो विलासी जीवन बिताना चाहते थे और मँहगे साजो-सामान, वाद्य यंत्र और आभूषण खरीदना चाहते थे जो स्थानीय जगहों पर उपलब्ध नहीं होते थे, ऐसी चीज़ों को इन्हें दूसरे स्थानों से प्राप्त करना पड़ता था।

क्रियाकलाप 1

विभिन्न मानकों; जैसे - व्यवसाय, भाषा, धन और शिक्षा पर आधारित श्रेणीबद्ध सामाजिक ढाँचे की चर्चा कीजिए। मध्यकालीन फ्रांस की तुलना मेसोपोटामिया और रोमन साम्राज्य से करें।

नाइट

नौवीं सदी से, यूरोप में स्थानीय युद्ध प्राय: होते रहते थे। शौकिया कृषक-सैनिक पर्याप्त नहीं थे और कुशल अश्वसेना की आवश्यकता थी। इसने एक नए वर्ग को बढ़ावा दिया जो नाइट्स (Knights) कहलाते थे। वे लॉर्ड से उसी प्रकार सम्बद्ध थे जिस प्रकार लॉर्ड राजा से सम्बद्ध था। लॉर्ड ने नाइट को भूमि का एक भाग (जिसे फ़ीफ़ कहा गया) दिया और उसकी रक्षा करने का वचन दिया। फ़ीफ़ (fief) को उत्तराधिकार में पाया जा सकता था। यह 1000-2000 एकड़ या उससे अधिक में फैली हुई हो सकती थी जिसमें नाइट और उसके परिवार के लिए एक पनचक्की और मदिरा संपीडक के अतिरिक्त, उसके व उसके परिवार के लिए घर, चर्च और उस पर निर्भर व्यक्तियों के रहने की व्यवस्था शामिल थी। सामंती मेनर (feudal manor) की तरह, फ़ीफ़ की भूमि को कृषक जोतते थे। बदले में, नाइट अपने लॉर्ड को एक निश्चित रकम देता था और युद्ध में उसकी तरफ से लड़ने का वचन देता था। अपनी सैन्य योग्यताओं को बनाए रखने के लिए, नाइट प्रतिदिन अपना समय बाड़ बनाने/घेराबंदी करने और पुतलों से रणकौशल एवं अपने बचाव का अभ्यास करने में निकालते थे। नाइट अपनी सेवाएँ अन्य लॉर्डों को भी दे सकता था पर उसकी सर्वप्रथम निष्ठा अपने लॉर्ड के लिए ही होती थी।

बारहवीं सदी से गायक फ्रांस के मेनरों में वीर राजाओं और नाइट्स की वीरता की कहानियाँ, गीतों के रूप में सुनाते हुए घूमते रहते थे जो अंशत: ऐतिहासिक और अंशत: काल्पनिक होती थीं। उस काल में जब बहुत अधिक संख्या में पढ़े-लिखे लोग नहीं थे और पांडुलिपियाँ भी अधिक नहीं थीं, ये घुमक्कड़ चारण बहुत प्रसिद्ध थे। अनेक मेनर भवनों के मुख्य कक्ष के ऊपर एक संकरा छज्जा होता था जहाँ मेनर के लोग भोजन के लिए एकत्र होते थे। यह एक गायक दीर्घा होती थी जो कि संगीतज्ञों द्वारा अभिजात वर्ग के लोगों का भोजन करते वक्त मनोरंजन करने के लिए बनी थी।

"अगर मेरे प्यारे लॉर्ड
को काट दिया जाता है,
उसकी तकदीर का मैं
भागीदार बनूंगा,
अगर वह लटका दिया
जाता है तब मुझे भी
उसके साथ लटका दें,
अगर उसे अग्नि दंड
दिया जाता है तो मैं भी
उसके साथ जल
जाऊँगा;
और अगर उसे डुबा
दिया जाता है तो मुझे
भी उसके साथ डुबा
दिया जाए।"

तेरहवीं सदी में गाई जाने वाली फ्रांसीसी कविता 'डून दे मयान्स' जो नाइटों के साहस की याद दिलाती है।

प्रथम वर्ग-पादरी वर्ग

कैथोलिक चर्च के अपने नियम थे, राजा द्वारा दी गई भूमियाँ थीं जिनसे वे कर उगाह सकते थे। इसलिए यह एक शक्तिशाली संस्था थी जो राजा पर निर्भर नहीं थी। पश्चिमी चर्च के अध्यक्ष पोप थे, जो रोम में रहते थे। यूरोप में ईसाई समाज का मार्गदर्शन बिशपों तथा पादरियों द्वारा किया जाता था जो प्रथम वर्ग के अंग थे। अधिकतर गाँवों में अपने चर्च हुआ करते थे जहाँ पर प्रत्येक रविवार को लोग पादरी के धर्मोपदेश सुनने तथा सामूहिक प्रार्थना करने के लिए इकट्ठा होते थे।

प्रत्येक व्यक्ति पादरी नहीं हो सकता था जैसे कृषि-दास पर, प्रतिबंध था शारीरिक रूप से बाधित व्यक्तियों पर और स्त्रियों पर भी प्रतिबंध था। जो पुरुष पादरी बनते थे वे शादी नहीं कर सकते थे। धर्म के क्षेत्र में बिशप अभिजात माने जाते थे। बिशपों के पास भी लॉर्ड की तरह विस्तृत जागीरें थीं और वे शानदार महलों में रहते थे। चर्च को एक वर्ष के अंतराल में कृषक से उसकी उपज का दसवाँ भाग लेने का अधिकार था जिसे 'टीथ' (Tithe) कहते थे। अमीरों द्वारा अपने कल्याण और मरणोपरांत अपने रिश्तेदारों के कल्याण हेतु दिया जाने वाला दान भी आय का एक स्रोत था।

चर्च के औपचारिक रीति-रिवाज की कुछ महत्त्वपूर्ण रस्में, सामंती कुलीनों की नकल थीं। प्रार्थना करते वक्त, हाथ जोड़कर और सिर झुकाकर घुटनों के बल झुकना, नाइट द्वारा अपने वरिष्ठ लॉर्ड के प्रति वफ़ादारी की शपथ लेते वक्त अपनाए गए तरीके की नकल था। इसी प्रकार ईश्वर के लिए लॉर्ड शब्द का प्रचलन एक उदाहरण था जिसके द्वारा सामंती संस्कृति चर्च के उपासना कक्षों में प्रवेश करने लगी। इस प्रकार अनेक सांस्कृतिक सामंती रीति-रिवाजों और तौर-तरीकों को चर्च की दुनिया में अपना लिया गया था।

भिक्षु

चर्च के अतिरिक्त कुछ विशेष श्रद्धालु ईसाइयों की एक दूसरी तरह की संस्था थी। कुछ अत्यधिक धार्मिक व्यक्ति, पादरियों के विपरीत जो लोगों के बीच में नगरों और गाँवों में रहते थे, एकांत ज़िंदगी जीना पसंद करते थे। वे धार्मिक समुदायों में रहते थे जिन्हें ऐबी (Abbeys) या मोनैस्ट्री* (monastery) मठ कहते थे और जो अधिकतर मनुष्य की आम आबादी से बहुत दूर होते थे। दो सबसे अधिक प्रसिद्ध मठों में एक मठ 529 में इटली में स्थापित संेंट बेनेडिक्ट (St. Benedict) था और दूसरा 910 में बरगंडी (Burgundy) में स्थापित क्लूनी (Cluny) था।

भिक्षु अपना सारा जीवन ऑबे में रहने और समय प्रार्थना करने, अध्ययन और कृषि जैसे शारीरिक श्रम में लगाने का व्रत लेता था। पादरी-कार्य के विपरीत भिक्षु की ज़िंदगी पुरुष और स्त्रियाँ दोनों ही अपना सकते थे – ऐसे पुरुषों को मोंक (Monk) तथा स्त्रियाँ नन (Nun) कहलाती थीं। कुछ ऑबों को छोड़कर ज़्यादातर में एक ही लिंग के व्यक्ति रह सकते थे। पुरुषों और महिलाओं के लिए अलग-अलग ऑबे थे। पादरियों की तरह, भिक्षु और भिक्षुणियाँ भी विवाह नहीं कर सकती थे।

दस या बीस पुरुष/ स्त्रियों के छोटे समुदाय से बढ़कर मठ अब सैकड़ों की संख्या के समुदाय बन गए जिसमें बड़ी इमारतें और भू-जागीरों के साथ-साथ स्कूल या कॉलेज और अस्पताल समबद्ध थे। इन समुदायों ने कला के विकास में योगदान दिया। आबेस हिल्डेगार्ड (देखिए पृष्ठ 135) एक प्रतिभाशाली संगीतज्ञ था जिसने चर्च की प्रार्थनाओं में सामुदायिक गायन की प्रथा के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। तेरहवीं सदी से भिक्षुओं के कुछ समूह जिन्हें फ्रायर (friars) कहते थे उन्होंने मठों में न रहने का निर्णय लिया। वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूम-घूम कर लोगों को उपदेश देते और दान से अपनी जीविका चलाते थे।

क्रियाकलाप 2

मध्यकालीन मेनर, महल और पूजा के स्थान पर विभिन्न सामाजिक-स्तर के व्यक्तियों से अपेक्षित व्यवहार के तरीकों की उदाहरण देते हुए चर्चा कीजिए।

*मोनेस्ट्री शब्द ग्रीक भाषा के शब्द 'मोनोस' से बना है जिसका अर्थ है ऐसा व्यक्ति जो अकेला रहता हो।

इंग्लैंड के फार्नबरो में सेंट माईकेल की बेनेडिक्टीन ऑबे।

बेनेडिक्टीन (Benedictine) मठों में, भिक्षुओं के लिए एक हस्तलिखित पुस्तक होती थी जिसमें नियमों के 73 अध्याय थे। इसका पालन भिक्षुओं द्वारा कई सदियों तक किया जाता रहा। इस पुस्तक के कुछ नियम इस प्रकार हैं:

अध्याय 6 : भिक्षुओं को बोलने की आज्ञा कभी-कभी ही दी जानी चाहिए।

अध्याय 7 : विनम्रता का अर्थ है आज्ञा पालन।

अध्याय 33 : किसी भी भिक्षु को निजी संपत्ति नहीं रखनी चाहिए।

अध्याय 47 : आलस्य आत्मा का शत्रु है, इसलिए भिक्षु और भिक्षुणियों को निश्चित समय में शारीरिक श्रम और निश्चित घंटों में पवित्र पाठ करना चाहिए।

अध्याय 48 : मठ इस प्रकार बनाने चाहिए कि आवश्यकता की समस्त वस्तुएँ -जल, चक्की, उद्यान, कार्यशाला सभी उसकी सीमा के अंदर हों।

पांडुलिपि पर कार्य करते हुये एक बेनेडिक्टीन भिक्षु का काष्ठचित्र

चौदहवीं सदी तक आते-आते, मठवाद के महत्त्व और उद्देश्य के बारे में कुछ शंकाएँ व्याप्त होने लगीं। इंग्लैंड में, लैंग्लैंड (Langland) की कविता पियर्स प्लाउमैन (1360-70 ई.) में कुछ भिक्षुओं के आरामदायक एवं विलासितापूर्ण जीवन की साधारण कृषकों, गड़रियों और गरीब मजदूरों के 'विशुद्ध विश्वास' से तुलना की गई है। इंग्लैंड में भी चॉसर ने कैंटरबरी टेल्स लिखी (नीचे बॉक्स में उद्धरण देखिए) जिसमें भिक्षुणी (nun), भिक्षु (monk) और फ़्रायर का हास्यास्पद चित्रण किया गया है।

चर्च और समाज

यद्यपि यूरोपवासी ईसाई बन गए थे पर उन्होंने अभी भी कुछ हद तक चमत्कार और रीति-रिवाजों से जुड़े अपने पुराने विश्वासों को नहीं छोड़ा था। चौथी सदी से ही क्रिसमस और ईस्टर कैलेंडर की महत्त्वपूर्ण तिथियाँ बन गए थे। 25 दिसम्बर को मनाए जाने वाले ईसा मसीह के जन्मदिन ने एक पुराने पूर्व-रोमन त्योहार का स्थान ले लिया। इस तिथि की गणना सौर-पंचांग (solar calendar) के आधार पर की गई थी। ईस्टर ईसा के शूलारोपण और उनके पुनर्जीवित होने का प्रतीक था। परंतु उसकी तिथि निश्चित नहीं थी क्योंकि इसने चन्द्र-पंचांग (lunar calendar) पर आधारित एक प्राचीन त्योहार का स्थान लिया था जो लंबी सर्दी के पश्चात् बसंत के आगमन का स्वागत करने के लिए मनाया जाता था। परंपरागत रूप में, उस दिन प्रत्येक गाँव के व्यक्ति अपने गाँव की भूमि का दौरा करते थे। ईसाई धर्म के आने पर भी उन्होंने इसे जारी रखा पर अब वे उसे ग्राम के स्थान पर 'पैरिश' (Parish - एक पादरी की देखरेख में आने वाला क्षेत्र) कहने लगे। काम से दबे कृषक इन पवित्र दिनों/छुट्टियों (Holy days/Holidays) का स्वागत इसलिए करते थे क्योंकि इन दिनों उन्हें कोई काम नहीं करना पड़ता था। वैसे तो यह दिन प्रार्थना करने के लिए था परन्तु लोग सामान्यत: इसका अधिकतर समय मौज-मस्ती करने और दावतों में बिताते थे।

तीर्थयात्रा, ईसाइयों के जीवन का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा थी, और बहुत से लोग शहीदों की समाधियों या बड़े गिरजाघरों की लंबी यात्राओं पर जाते थे।

''अप्रैल के महीने में जब मधु वृष्टि होती है
और मार्च की शुष्कता को जड़ से भेद जाती है
और जब नन्हीं चिड़ियाँ संगीत सुनाती हैं
जो कि उन्निद्र चक्षु में रात बिता देती हैं....
(इस तरह प्रकृति उन्हें प्रेरित करती है और उनके हृदय को आकर्षित करती है);
तब लोग तीर्थयात्रा पर जाने की आकांक्षा रखते हैं,
और घुमक्कड़ भिक्षु* दूरस्थ उपासना स्थलों के
सर्वत्र पूजित संतों के दर्शन की अभिलाषा करते हैं।
और विशेष रूप से इंग्लैंड के प्रत्येक प्रांत से
कैंटरबरी की अपनी यात्रा पर निकल पड़ते हैं।''

– जेफ़्री चॉसर (1340-1400 ई.), द *कैंटरबरी टेल्स*। इस काव्य-कृति की रचना मूल रूप से मध्यकालीन अंग्रेज़ी में की गई थी। यहाँ उसका हिंदी रूपांतरण करने का प्रयास किया गया है।

*दूर-दूर तक विभिन्न तीर्थस्थलों का भ्रमण करने वाला भिक्षु।

तीसरा वर्ग–किसान, स्वतंत्र और बंधक

अब हम लोगों के उस विशाल समूह की चर्चा करेंगे जो पहले दो वर्गों का भरण-पोषण करते थे। काश्तकार दो तरह के होते थे, स्वतंत्र किसान और सर्फ़ जिन्हें हिंदी में कृषि-दास कहा जाता है। सर्फ़ अंग्रेज़ी की क्रिया टू सर्व (To serve) से बना है।

स्वतंत्र कृषक अपनी भूमि को लॉर्ड के काश्तकार के रूप में देखते थे। पुरुषों का सैनिक सेवा में योगदान आवश्यक होता था (वर्ष में कम से कम चालीस दिन)। कृषकों के परिवारों को लॉर्ड की जागीरों पर जाकर काम करने के लिए सप्ताह के तीन या उससे अधिक कुछ दिन निश्चित करने पड़ते थे। इस श्रम से होने वाला उत्पादन जिसे 'श्रम-अधिशेष' (Labour rent) कहते थे, सीधे लॉर्ड के पास जाता था। इसके अतिरिक्त, उनसे अन्य श्रम कार्य; जैसे- गड्ढे खोदना, जलाने के लिए लकड़ियाँ इकट्ठी करना, बाड़ बनाना और सड़कें व इमारतों की मरम्मत करने की भी उम्मीद की जाती थी और इनके लिए उन्हें कोई मज़दूरी नहीं मिलती थी। खेतों में मदद करने के अतिरिक्त, स्त्रियों व बच्चों को अन्य कार्य भी करने पड़ते थे। वे सूत कातते, कपड़ा बुनते, मोमबत्ती बनाते और लॉर्ड के उपयोग हेतु अंगूरों से रस निकाल कर मदिरा तैयार करते थे। इसके साथ ही एक प्रत्यक्ष कर 'टैली' (Taille) था जिसे राजा कृषकों पर कभी-कभी लगाते थे। (पादरी और अभिजात वर्ग इस कर से मुक्त थे)।

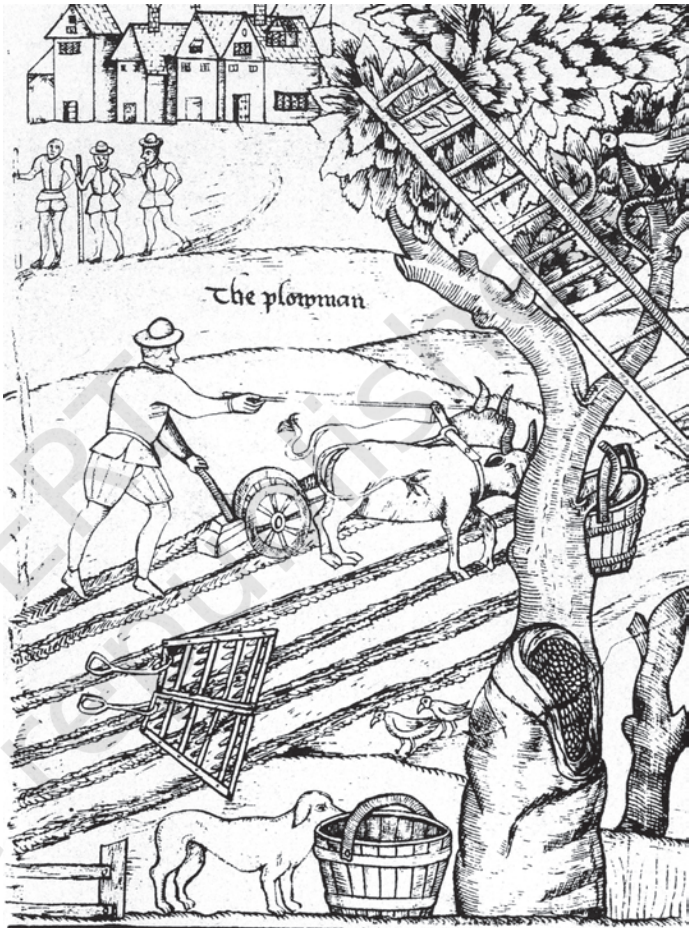

एक अंग्रेज़ कृषक सोलहवीं सदी का रेखाचित्र।

कृषिदास अपने गुजारे के लिए जिन भूखंडों पर कृषि करते थे वो लॉर्ड के स्वामित्व में थे। इसलिए उनकी अधिकतर उपज भी लॉर्ड को ही मिलती थी। वे उन भूखंडों पर भी कृषि करते थे जो केवल लॉर्ड के स्वामित्व में थी। इसके लिए उन्हें कोई मज़दूरी नहीं मिलती थी और वे लॉर्ड की आज्ञा के बिना जागीर नहीं छोड़ सकते थे। लॉर्ड कई तरह के एकाधिकार का दावा करते थे हालाँकि इससे कृषि दासों को हानि हो सकती थी। सर्फ़ केवल अपने लॉर्ड की चक्की में ही आटा पीस सकते थे, उनके तंदूर में ही रोटी सेंक सकते थे और उनकी मदिरा संपीडक में ही आसवन-मदिरा और बीयर तैयार कर सकते थे। लॉर्ड यह तय कर सकता था कि कृषिदास को किसके साथ विवाह करना चाहिए या फिर कृषिदास की पसंद को ही अपना आशीर्वाद दे सकता था, परन्तु इसके लिए वह शुल्क लेता था।

इंग्लैंड

सामंतवाद का विकास इंग्लैंड में ग्यारहवीं सदी से हुआ।

छठी सदी में मध्य यूरोप से एंजिल (Angles) और सैक्सन (Saxons) इंग्लैंड में आकर बस गए। इंग्लैंड देश का नाम 'एंजिल लैंड' का रूपांतरण है। ग्यारहवीं सदी में नारमैंडी (Normandy) के ड्यूक, विलियम ने एक सेना के साथ इंग्लिश चैनल (English

*इंग्लैंड की वर्तमान रानी विलियम प्रथम की उत्तराधिकारी है।

तेरहवीं सदी के इंग्लैंड का हेवर दुर्ग।

channel) को पार कर इंग्लैंड के सैक्सन राजा को हरा दिया। इस समय, फ्रांस और इंग्लैंड में क्षेत्रीय सीमाओं और व्यापार से उत्पन्न होने वाले विवादों के कारण प्रायः युद्ध होते रहते थे।

विलियम प्रथम ने भूमि नपवाई, उसके नक्शे बनवाए और उसे अपने साथ आए 180 नॉरमन अभिजातों में बाँट दिए। यही लॉर्ड, राजा के प्रमुख काश्तकार बन गए थे जिनसे वह सैन्य-सहायता की उम्मीद करता था। वे राजा को कुछ नाइट देने के लिए बाध्य थे। शीघ्र ही वे नाइटों को कुछ भूमि उपहार में देने लगे जिनसे वे उसी प्रकार सेवा की आशा रखते थे जैसी वे राजा की करते थे। किंतु वे नाइटों का अपने निजी युद्धों के लिए उपयोग नहीं कर सकते थे क्योंकि इस पर इंग्लैंड में प्रतिबंध था। एंग्लो-सैक्सन कृषक विभिन्न स्तरों के भू-स्वामियों के काश्तकार बन गए।

सामाजिक और आर्थिक संबंधों को प्रभावित करने वाले कारक

यद्यपि प्रथम दोनों वर्गों के सदस्यों ने सामाजिक व्यवस्था को स्थिर और अपरिवर्तनीय पाया, परंतु वहाँ अनेक प्रक्रियाएँ थीं जो व्यवस्था को बदल रही थीं। इनमें से कुछ, जैसे पर्यावरण में परिवर्तन, धीरे-धीरे और लगभग अदृश्य थे। अन्य परिवर्तन जैसे कृषि प्रौद्योगिकी में बदलाव और भूमि का उपयोग अधिक स्पष्ट थे। लॉर्ड और सामंत के सामाजिक और आर्थिक संबंध इन परिवर्तनों से बने थे और इन्हें प्रभावित भी कर रहे थे। हम इन प्रक्रियाओं की बारी-बारी से जाँच करेंगे।

पर्यावरण

पाँचवीं से दसवीं सदी तक यूरोप का अधिकांश भाग विस्तृत वनों से घिरा हुआ था। अतः कृषि के लिए उपलब्ध भूमि सीमित थी। इसके साथ ही, अपनी परिस्थितियों से असंतुष्ट कृषक अत्याचार से बचने के लिए वहाँ से भाग कर वनों में शरण ले सकते थे। इस समय यूरोप में तीव्र ठंड का दौर चल रहा था। इससे सर्दियाँ प्रचंड और लंबी अवधि की हो गईं। फसलों का उपज काल छोटा हो गया और इसके कारण कृषि की पैदावार कम हो गई।

ग्यारहवीं सदी से यूरोप में एक गर्माहट का दौर शुरू हो गया और औसत तापमान बढ़ गया जिससे कृषि पर अच्छा प्रभाव पड़ा। कृषकों को कृषि के लिए अब लंबी अवधि मिलने लगी। मिट्टी पर पाले का असर कम होने के कारण आसानी से खेती की जा सकती थी। पर्यावरण इतिहासकारों का कहना है कि इससे यूरोप के अनेक भागों के वन क्षेत्रों में उल्लेखनीय कमी हुई फलस्वरूप कृषि भूमि का विस्तार हुआ।

भूमि का उपयोग

प्रारंभ में, कृषि प्रौद्योगिकी बहुत आदिम किस्म थी। कृषक को मिलने वाली यांत्रिक मदद केवल बैलों की जोड़ी से चलने वाला लकड़ी का हल था। यह हल केवल पृथ्वी की सतह को खुरच ही सकता था। यह भूमि की प्राकृतिक उत्पादकता को पूरी तरह से बाहर निकाल पाने में असमर्थ था। इसलिए कृषि में अत्यधिक परिश्रम करना पड़ता था। भूमि को प्रायः चार वर्ष में एक बार हाथ से खोदा जाता था और उसमें अत्यधिक मानव श्रम की आवश्यकता होती थी।

साथ ही फ़सल-चक्र के एक प्रभावहीन तरीके का उपयोग हो रहा था। भूमि को दो भागों में बाँट दिया जाता था। एक भाग में शरद ऋतु में सर्दी का गेहूँ बोया जाता था, जबकि दूसरी भूमि

© NCERT not to be republished

को परती या खाली रखा जाता था। अगले वर्ष परती भूमि पर राई बोई जाती थी जबकि दूसरा आधा भाग खाली रखा जाता था। इस व्यवस्था के कारण, मिट्टी की उर्वरता का धीरे-धीरे ह्रास होने लगा और प्रायः अकाल पड़ने लगे। दीर्घकालिक कुपोषण और विनाशकारी अकाल बारी-बारी से पड़ने लगे जिससे गरीबों के लिए जीवन अत्यंत दुष्कर हो गया।

इन कठिनाइयों के बावजूद, लॉर्ड अपनी आय को अधिकतम करने के लिए उत्सुक रहते थे। हालांकि भूमि के उत्पादन को बढ़ाना संभव नहीं था, इसलिए कृषकों को मेनरों की जागीर (Manorial estate) की समस्त भूमि को कृषिगत बनाने के लिए बाध्य होना पड़ता था और इस कार्य को करने के लिए उन्हें नियमानुसार निर्धारित समय से अधिक समय देना पड़ता था। कृषक इस अत्याचार को चुपचाप नहीं सहते थे। चूँकि वे खुलकर विरोध नहीं कर सकते थे इसलिए उन्होंने निष्क्रिय प्रतिरोध का सहारा लिया। वे अपने खेतों पर कृषि करने में अधिक समय लगाने लगे और उस मेहनत का अधिकतर उत्पाद अपने लिए रखने लगे। वे बेगार करने से बचने लगे। चरागाहों व वन-भूमि के कारण उनका उन लॉर्डों के साथ विवाद होने लगा। लॉर्ड इस भूमि को अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति समझते थे जबकि कृषक इसको संपूर्ण समुदाय द्वारा उपयोग की जाने वाली साझा संपदा मानते थे।

नयी कृषि प्रौद्योगिकी

ग्याहरवीं सदी तक विभिन्न प्रौद्योगिकियों में बदलाव के प्रमाण मिलते हैं।

मूल रूप से लकड़ी से बने हल के स्थान पर लोहे की भारी नोक वाले हल और साँचेदार पटरे (Mould boards) का उपयोग होने लगा। ऐसे हल अधिक गहरा खोद सकते थे और साँचेदार पटरे सही ढंग से उपरि मृदा को पलट सकते थे। इसके फलस्वरूप भूमि में व्याप्त पौष्टिक तत्वों का बेहतर उपयोग होने लगा।

पशुओं को हलों में जोतने के तरीकों में सुधार हुआ। गले (Neck harness) के स्थान पर जुआ अब कंधे पर बाँधा जाने लगा। इससे पशुओं को अधिक शक्ति मिलने लगी। घोड़े के खुरों पर अब लोहे की नाल लगाई जाने लगी जिससे उनके खुर सुरक्षित हो गए। कृषि के लिए वायु और जल शक्ति का उपयोग बहुतायत में होने लगा। यूरोप में अन्न को पीसने और अंगूरों को निचोड़ने के लिए अधिक जलशक्ति और वायुशक्ति से चलने वाले कारखाने स्थापित हो रहे थे।

भूमि के उपयोग के तरीके में भी बदलाव आया। सबसे क्रांतिकारी था दो खेतों वाली व्यवस्था से तीन खेतों वाली व्यवस्था में परिवर्तन। इस व्यवस्था में कृषक तीन वर्षों में से दो वर्ष अपने खेत का उपयोग कर सकता था बशर्ते वह एक फ़सल शरत् ऋतु में और उसके डेढ़ वर्ष पश्चात दूसरी बसंत में बोता। इसका अर्थ था कि कृषक अपनी जोतों को तीन खेतों में बाँट सकते थे। वे मानव उपभोग के लिए एक खेत में शरत ऋतु में गेहूँ या राई बो सकते थे। दूसरे में, बसंत ऋतु में मनुष्यों के उपभोग के लिए मटर, सेम और मसूर तथा घोड़ों के लिए जौ और बाजरा बो सकते थे, तीसरा खेत परती यानि खाली रखा जाता था। प्रत्येक वर्ष वे तीनों खेतों का प्रयोग बदल-बदल कर करते थे।

इन सुधारों के कारण, भूमि की प्रत्येक इकाई में होने वाले उत्पादन में तेज़ी से बढ़ोतरी हुई। भोजन की उपलब्धता दुगुनी हो गई। मटर और सेम जैसे पौधों का अधिक उपयोग एक औसत यूरोपीय के आहार में अधिक प्रोटीन का तथा उनके पशुओं के लिए अच्छे चारे का स्रोत बन गया। फलस्वरूप कृषकों को बेहतर अवसर मिलने लगा। वे अब कम भूमि पर अधिक भोजन का उत्पादन कर सकते थे। तेरहवीं सदी तक एक कृषक के खेत का औसत आकार सौ एकड़

से घटकर बीस से तीस एकड़ तक रह गया। छोटी जोतों पर अधिक कुशलता से कृषि की जा सकती थी और उसमें कम श्रम की आवश्यकता थी। इससे कृषकों को अन्य गतिविधियों के लिए समय मिला।

इनमें से कुछ प्रौद्योगिकी बदलावों में अत्यधिक धन लगता था। कृषकों के पास पनचक्की और पवनचक्की स्थापित करने के लिए पर्याप्त धन नहीं था इसलिए इस मामले में पहल लॉर्डों द्वारा की गई। परन्तु कृषक भी कई अन्य क्षेत्रों में पहल करने में सक्षम रहे, जैसे कि खेती योग्य भूमि का विस्तार करने में। उन्होंने फ़सलों की तीन-चक्रीय व्यवस्था को अपनाया और गाँवों में लोहार की दुकानें और भट्ठियाँ स्थापित कीं, जहाँ पर लोहे की नोक वाले हल और घोड़े की नाल बनाने और मरम्मत करने के काम को सस्ती दरों पर किया जाने लगा।

ग्यारहवीं सदी से, व्यक्तिगत संबंध, जो सामंतवाद का आधार थे कमज़ोर पड़ने लगे क्योंकि आर्थिक लेन-देन अधिक से अधिक मुद्रा पर आधारित होने लगा। लॉर्डों को लगान, उनकी सेवाओं के बजाए नकदी में लेना अधिक सुविधाजनक लगने लगा और कृषकों ने अपनी फ़सल व्यापारियों को मुद्रा में (उन्हें वस्तुओं से बदलने के स्थान पर) बेचना शुरू कर दिया जो पुनः उन वस्तुओं को शहर में बेच देते थे। धन का बढ़ता उपयोग कीमतों को प्रभावित करने लगा जो खराब फ़सल के समय बहुत अधिक हो जाती थीं। उदाहरण के लिए, इंग्लैंड में 1270 और 1320 के बीच कृषि मूल्य दुगुने हो गए थे।

चौथा वर्ग? नए नगर और नगरवासी

कृषि में विस्तार के साथ ही उससे संबद्ध तीन क्षेत्रों – जनसंख्या, व्यापार और नगरों का विस्तार हुआ। यूरोप की जनसंख्या जो 1000 में लगभग 420 लाख थी बढ़कर 1200 में लगभग 620 लाख और 1300 में 730 लाख हो गई। बेहतर आहार का अर्थ लंबी जीवन-अवधि था। तेरहवीं सदी तक एक औसत यूरोपीय आठवीं सदी की तुलना में दस वर्ष अधिक जी सकता था। पुरुषों की तुलना में स्त्रियों और बालिकाओं की जीवन-अवधि छोटी होती थी क्योंकि पुरुष बेहतर भोजन करते थे।

रोमन साम्राज्य के पतन के पश्चात उसके नगर उजाड़ और तबाह हो गए थे। परन्तु ग्यारहवीं सदी से जब कृषि का विस्तार हुआ और वह अधिक जनसंख्या का भार सहने में सक्षम हुई तो नगर फिर से बढ़ने लगे। जिन कृषकों के पास अपनी आवश्यकता से अधिक खाद्यान्न होता था, उन्हें एक ऐसे स्थान की आवश्यकता महसूस हुई जहाँ वे अपना एक बिक्री केन्द्र स्थापित कर सकें और जहाँ से वे अपने उपकरण और कपड़े खरीद सकें। इस ज़रूरत ने मियादी हाट-मेलों को बढ़ावा दिया, और छोटे विपणन केन्द्रों का विकास किया जिनमें धीरे-धीरे नगरों के लक्षण विकसित होने लगे – एक नगर चौक, चर्च, सड़कें जहाँ पर व्यापारी, घर और दुकानों का निर्माण कर सकें और एक कार्यालय जहाँ से नगर पर शासन करने वाले व्यक्ति मिल सकें। दूसरे स्थानों पर नगरों का विकास, बड़े दुर्गों, बिशपों की जागीरों और बड़े चर्चों के चारों तरफ होने लगा।

नगरों में लोग, सेवा के स्थान पर, उन लॉर्डों को जिनकी भूमि पर नगर बसे थे, कर देने लगे। नगरों ने कृषक परिवारों के जवान लोगों को वैतनिक कार्य और लॉर्ड के नियंत्रण से मुक्ति की अधिक संभावनाएँ प्रदान कीं।

'नगर की हवा स्वतंत्र बनाती है' एक प्रसिद्ध कहावत थी। स्वतंत्र होने की इच्छा रखने वाले अनेक कृषिदास भाग कर नगरों में छिप जाते थे। अपने लॉर्ड की नज़रों से एक वर्ष व एक दिन तक छिपे रहने में सफल रहने वाला कृषिदास एक स्वाधीन नागरिक बन जाता था। नगरों में रहने वाले अधिकतर व्यक्ति या तो स्वतंत्र कृषक या भगोड़े कृषिदास थे जो कार्य की दृष्टि से अकुशल श्रमिक होते थे। दुकानदार और व्यापारी बहुतायत में थे। बाद में विशिष्ट कौशल वाले व्यक्तियों

रेम्स, फ्रांसीसी कथीड्रल नगर, सत्रहवीं सदी का नक्शा।

क्रियाकलाप 3

उपर्युक्त नक्शे और नगर के चित्र को ध्यान से देखिए। मध्यकालीन यूरोपीय नगरों के कौन से महत्त्वपूर्ण लक्षण आपको उनमें दिखाई पड़ते हैं। वे अन्य स्थानों व अन्य काल के नगरों से किस प्रकार भिन्न थे?

जैसे साहूकार और वकीलों की आवश्यकता हुई। बड़े नगरों की जनसंख्या लगभग तीस हज़ार होती थी। ये कहा जा सकता है कि उन्होंने समाज में एक चौथा वर्ग बना लिया था।

आर्थिक संस्था का आधार 'श्रेणी' (Guild) था। प्रत्येक शिल्प या उद्योग एक 'श्रेणी' के रूप में संगठित था। यह एक ऐसी संस्था थी जो उत्पाद की गुणवत्ता, उसके मूल्य और बिक्री पर नियंत्रण रखती थी। 'श्रेणी सभागार' प्रत्येक नगर का आवश्यक अंग था। यह आनुष्ठानिक समारोहों के लिए था जहाँ गिल्डों के प्रधान औपचारिक रूप से मिला करते थे। पहरेदार नगर के चारों ओर गश्त लगाकर शांति स्थापित करते थे, संगीतकारों को प्रीतिभोजों और नागरिक जुलूसों में अपनी कला का प्रदर्शन करने के लिए बुलाया जाता था और सरायवाले यात्रियों की देखभाल करते थे।

ग्यारहवीं सदी आते-आते, पश्चिम एशिया के साथ नवीन व्यापार-मार्ग विकसित हो रहे थे (विषय 5 देखिए)। स्कैंडिनेविया के व्यापारी वस्त्र के बदले में फ़र और शिकारी बाज़ लेने के लिए उत्तरी सागर से दक्षिण की समुद्री यात्रा करते थे और अंग्रेज़ व्यापारी राँगा बेचने के लिए आते थे। बारहवीं सदी तक फ्रांस में वाणिज्य और शिल्प विकसित होने लगा था। पहले, दस्तकारों को एक मेनर से दूसरे मेनर में जाना पड़ता था पर अब उन्हें एक स्थान पर बसना अधिक आसान लगा, जहाँ वस्तुओं का उत्पादन किया जा सके और फिर अपनी आजीविका के लिए उनका व्यापार हो सके। जैसे-जैसे नगरों की संख्या बढ़ने लगी और व्यापार का विस्तार होता गया, नगर के व्यापारी अधिक अमीर और शक्तिशाली होने लगे और अभिजात्यता के लिए प्रतिस्पर्धा करने लगे।

© NCERT not to be republished

कथीड्रल-नगर

चर्चों को दान देना अमीर व्यापारियों द्वारा अपने धन को खर्च करने का एक तरीका था। बारहवीं सदी से फ्रांस में कथीड्रल कहलाने वाले बड़े चर्चों का निर्माण होने लगा। यद्यपि वे मठों की संपत्ति थे पर लोगों के विभिन्न समूहों ने अपने श्रम, वस्तुओं और धन से उनके निर्माण में सहयोग दिया। कथीड्रल पत्थर के बने होते थे और उन्हें पूरा करने में अनेक वर्ष लगते थे। जब उन्हें बनाया जा रहा था तो कथीड्रल के आसपास का क्षेत्र और अधिक बस गया और जब उनका निर्माण पूर्ण हुआ तो वे स्थान तीर्थ-स्थल बन गए। इस प्रकार, उनके चारों तरफ छोटे नगर विकसित हुए।

कथीड्रल इस प्रकार बनाए गए थे कि पादरी की आवाज़ लोगों के जमा होने वाले सभागार में साफ सुनाई पड़ सके और भिक्षुओं का गायन भी अधिक मधुर सुनाई पड़े, साथ ही लोगों को प्रार्थना के लिए बुलाने वाली घंटियाँ दूर तक सुनाई पड़ सकें। खिड़कियों के लिए अभिरंजित काँच का प्रयोग होता था। दिन के वक्त सूरज की रोशनी उन्हें कथीड्रल के अंदर के व्यक्तियों के लिए चमकदार बना देती थी और सूर्यास्त के पश्चात मोमबत्तियों की रोशनी उन्हें बाहर के व्यक्तियों के लिए दृश्यमान बनाती थी। अभिरंजित काँच की खिड़कियों पर बने चित्र बाईबल की कथाओं का वर्णन करते थे जिन्हें अनपढ़ व्यक्ति भी 'पढ़' सकते थे।

सॉल्सबरी कथीड्रल, इंग्लैंड।

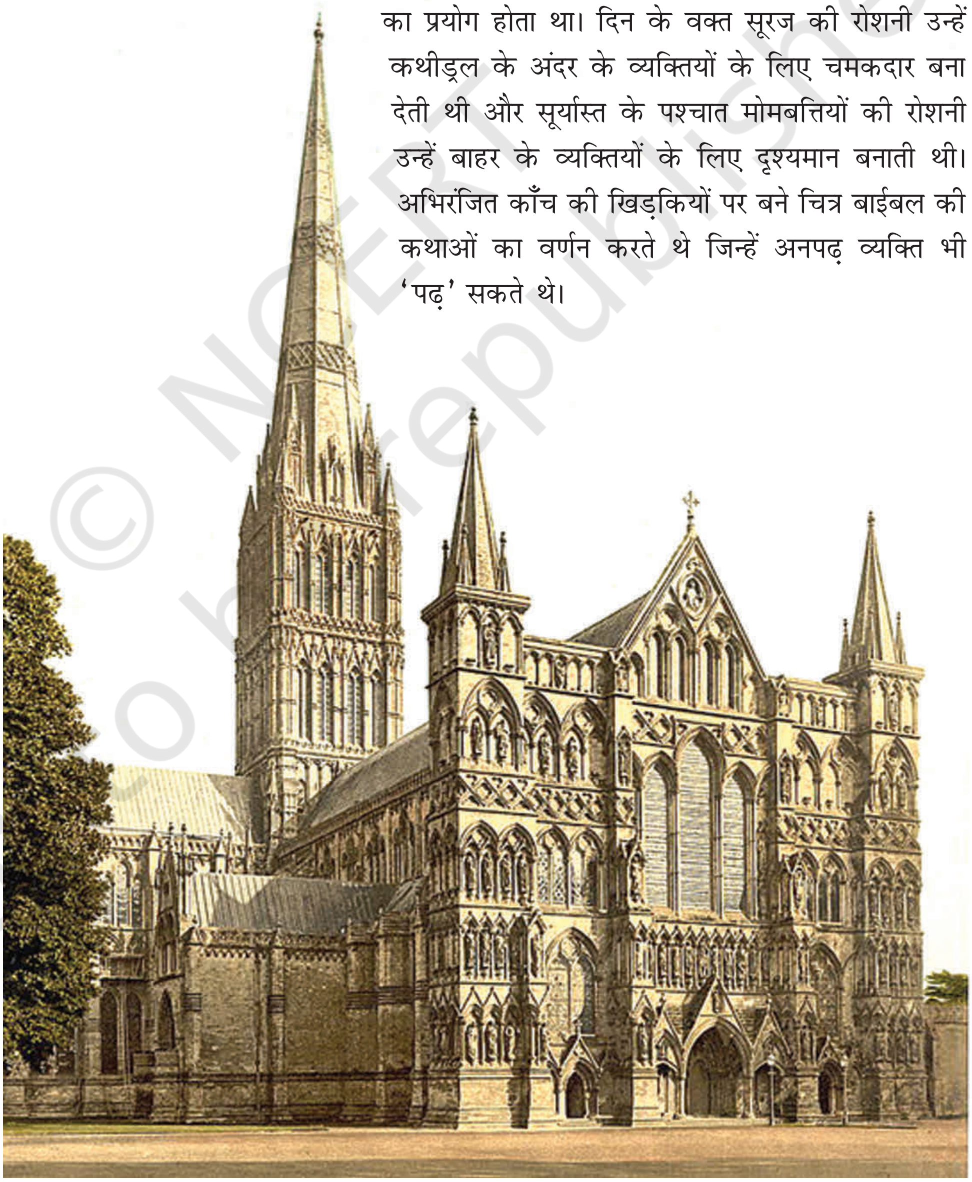

© NCERT not to be republished

"दावत के दिनों में हमारे द्वारा अक्सर अनुभव की जाने वाली कमी, जगह की संकीर्णता, अत्यधिक यंत्रणा और शोर के कारण भाग कर स्त्रियों का पुरुषों के सिरों के ऊपर स्थित वेदिका पर चले जाना – ये सब कुछ ऐसे कारण थे कि हमने पवित्र चर्च को विस्तृत एवं व्यापक बनाने का निर्णय लिया...

विभिन्न क्षेत्रों से आए अनेक विशेषज्ञों के अति कुशल हाथों से तरह-तरह की शानदार नयी खिड़कियों की पुताई कराई, क्योंकि ये खिड़कियाँ अपने अद्‌भुत निष्पादन और बहुत मँहगे रंजित व सफ़ायर काँच के कारण बहुत मूल्यवान थीं इसलिए उनकी रक्षा के लिए हमने एक सरकारी प्रधान शिल्पकार और स्वर्णकार की नियुक्ति की, वे अपनी तनख्वाह वेदिका से सिक्कों के रूप में और आटा अपने भाईबंधुओं के सार्वजनिक भंडार से ले सकते थे; वे उन कला वस्तुओं की देखरेख के कर्तव्यों की उपेक्षा कभी नहीं कर सकते थे।"

— एबट सुगेर (Abbot Suger) (1081-1151) ने पैरिस के निकट सेंट डेनिस में स्थित ऑबे के बारे में लिखा।

अभिरंजित काँच की खिड़की, कारटेस कथीड्रल, फ्रांस, पंद्रहवीं सदी।

चौदहवीं सदी का संकट

चौदहवीं सदी की शुरुआत तक, यूरोप का आर्थिक विस्तार धीमा पड़ गया। ऐसा तीन कारकों की वजह से हुआ।

उत्तरी यूरोप में, तेरहवीं सदी के अंत तक पिछले तीन सौ वर्षों की तेज़ ग्रीष्म ऋतु का स्थान तीव्र ठंडी ग्रीष्म ऋतु ने ले लिया था। पैदावार वाले मौसम छोटे हो गए और ऊँची भूमि पर फसल उगाना कठिन हो गया। तूफानों और सागरीय बाढ़ों ने अनेक फार्म प्रतिष्ठानों को नष्ट कर दिया जिसके परिणामस्वरूप सरकार को करों द्वारा कम आमदनी हुई। तेरहवीं सदी के पूर्व की अनुकूल जलवायु द्वारा प्रदान किए गए अवसरों के कारण अनेक जंगल और चरागाह कृषि भूमि में बदल गए, परन्तु गहन जुताई ने फसलों के तीन क्षेत्रीय फसल-चक्र के प्रचलन के बावजूद भूमि को कमज़ोर बना दिया। उचित भू-संरक्षण के अभाव में ऐसा हुआ था। चरागाहों की कमी के कारण पशुओं की संख्या में कमी आ गई। जनसंख्या वृद्धि इतनी तेज़ी से हुई कि उपलब्ध संसाधन कम पड़ गए जिसका तात्कालिक परिणाम था अकाल। 1315 और 1317 के बीच यूरोप में भयंकर अकाल पड़े। इसके पश्चात् 1320 के दशक में अनगिनत पशुओं की मौतें हुईं।

इसके साथ-साथ ऑस्ट्रिया और सर्बिया की चाँदी की खानों के उत्पादन में कमी के कारण धातु-मुद्रा में भारी कमी आई जिससे व्यापार प्रभावित हुआ। इसके कारण सरकार को मुद्रा में चाँदी की शुद्धता को घटाना पड़ा और उसमें सस्ती धातुओं का मिश्रण करना पड़ा।

इससे भी बुरा समय अभी आना बाकी था। बारहवीं व तेरहवीं सदी में जैसे-जैसे वाणिज्य में विस्तार हुआ तो दूर देशों से व्यापार करने वाले पोत यूरोपीय तटों पर आने लगे। पोतों के साथ-साथ चूहे आए – जो अपने साथ ब्यूबोनिक प्लेग जैसी महामारी का संक्रमण (Black death) लाए। पश्चिमी यूरोप, जो प्रारंभिक सदियों में अपेक्षाकृत अधिक अलग-थलग रहा था, 1347 और 1350 के मध्य महामारी से बुरी तरह प्रभावित हुआ। आधुनिक आकलन के आधार पर यूरोप की आबादी का करीब 20% भाग इसमें काल-कवलित हो गया जबकि कुछ स्थानों पर मरने वालों की संख्या वहाँ की जनसंख्या का 40% तक थी।

"कितने बहादुर पुरुषों और महिलाओं ने अपने कुटुंबियों के साथ नाश्ता कर उसी रात्रि को दूसरी दुनिया में अपने पूर्वजों के साथ रात्रि भोजन किया होगा। लोगों की हालत दयनीय थी जिसे देखा नहीं जा सकता था। वे हज़ारों की संख्या में प्रतिदिन बीमार होते थे, और बिना किसी मदद के मर जाते थे। अनेक खुली गलियों में मरते थे और बाकी अपने घरों में मरते थे इसका पता उनके सड़े शरीर की बदबू से चलता था। चूँकि पवित्र कब्रिस्तान इतनी अधिक संख्या में शरीरों को दबाने के लिए पर्याप्त नहीं थे अतः उनको सैकड़ों की संख्या में बड़ी-बड़ी खंदकों में डाल दिया जाता था, जैसे कि पोत में सामान को भरा जाता है, और ऊपर थोड़ी सी मिट्टी डाल दी जाती थी।"

– जिओवानी बोकाचियो (Giovanni Boccacio) (1313-75), इतालवी लेखक

व्यापार केन्द्र होने के कारण नगर सबसे अधिक प्रभावित हुए। बंद समुदाय में, जैसे मठों और आश्रमों में जब एक व्यक्ति प्लेग की चपेट में आ जाता था तो सबको इससे बीमार होने में देर नहीं लगती थी और लगभग प्रत्येक मामले में कोई भी नहीं बचता था। प्लेग, शिशुओं, युवाओं और बुर्ज़ुगों को सबसे अधिक प्रभावित करता था। इस प्लेग के पश्चात 1360 और 1370 में प्लेग की अपेक्षाकृत छोटी घटनाएँ हुई। यूरोप की जनसंख्या 1300 में 730 लाख से घटकर 1400 में 450 लाख हो गई।

इस विनाशलीला के साथ आर्थिक मंदी के जुड़ने से व्यापक सामाजिक विस्थापन हुआ। जनसंख्या में ह्रास के कारण मज़दूरों की संख्या में अत्यधिक कमी आई। कृषि और उत्पादन के बीच गंभीर असंतुलन उत्पन्न हो गया क्योंकि इन दोनों ही कामों में पर्याप्त संख्या में लग सकने वाले लोगों में भारी कमी आ गई थी। खरीदारों की कमी के कारण कृषि-उत्पादों के मूल्यों में कमी आई। प्लेग के बाद इंग्लैंड में मज़दूरों, विशेषकर कृषि मज़दूरों की भारी माँग के कारण मज़दूरी की दरों में 250 प्रतिशत तक की वृद्धि हो गई। बचा हुआ श्रमिक बल अब अपनी पुरानी दरों से दुगुने की माँग कर सकता था।

सामाजिक असंतोष

इस तरह लॉर्डों की आमदनी बुरी तरह प्रभावित हुई। मज़दूरी की दरें बढ़ने तथा कृषि संबंधी मूल्यों की गिरावट ने अभिजात वर्ग की आमदनी को घटा दिया। निराशा में उन्होंने उन धन संबंधी अनुबंधों को तोड़ दिया जिसे उन्होंने हाल ही में अपनाया था और उन्होंने पुरानी मज़दूरी सेवाओं को फिर से प्रचलित कर दिया। इसका कृषकों विशेषकर पढ़े-लिखे और समृद्ध कृषकों द्वारा हिंसक विरोध किया गया। 1323 में कृषकों ने फ्लैंडर्स (Flanders) में, 1358 में फ्रांस में और 1381 में इंग्लैंड में विद्रोह किए।

यद्यपि इन विद्रोहों का क्रूरतापूर्वक दमन कर दिया गया पर महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि ये विद्रोह सर्वाधिक हिंसक तरीकों से उन स्थानों पर हुए जहाँ पर आर्थिक विस्तार के कारण समृद्धि हुई थी। यह इस बात का संकेत था कि कृषक पिछली सदियों में हुए लाभों को बचाने का प्रयास कर रहे थे। तीव्र दमन के बावजूद कृषक विद्रोहों की तीव्रता ने यह सुनिश्चित कर दिया कि पुराने सामंती रिश्तों को पुनः लादा नहीं जा सकता। धन अर्थव्यवस्था (money economy) काफी अधिक विकसित थी जिसे पलटा नहीं जा सकता था। इसलिए, यद्यपि लॉर्ड विद्रोहों का दमन करने में सफल रहे, परन्तु कृषकों ने यह सुनिश्चित कर लिया कि दासता के पुराने दिन फिर नहीं लौटेंगे।

ग्यारहवीं से चौदहवीं शताब्दियों में	
1066	नॉरमन लोगों की एंग्लो-सैक्सनी लोगों को हराकर इंग्लैंड पर विजय
1100 के पश्चात्	फ्रांस में कथीड्रलों का निर्माण
1315–17	यूरोप में महान अकाल
1347–50	ब्यूबोनिक प्लेग (Black Death)
1338–1461	इंग्लैंड और फ्रांस के मध्य "सौ-वर्षीय युद्ध"
1381	कृषकों के विद्रोह

क्रियाकलाप 4

तिथियों के साथ दी गई घटनाओं और प्रक्रियाओं को पढ़िए और उनका विवरणात्मक लेखा-जोखा दीजिए।

राजनीतिक परिवर्तन

राजनीतिक हलकों में हुए विकास, सामाजिक प्रक्रियाओं के साथ-साथ होते रहे। पंद्रहवीं और सोलहवीं सदियों में यूरोपीय शासकों ने अपनी सैनिक एवं वित्तीय शक्ति को बढ़ाया। यूरोप के लिए उनके द्वारा बनाए गए नए शक्तिशाली राज्य उस समय होने वाले आर्थिक बदलावों के समान ही महत्त्वपूर्ण थे। इसी कारण इतिहासकार इन राजाओं को 'नए शासक' (the new monarchs) कहने लगे। फ्रांस में लुई ग्यारहवें, आस्ट्रिया में मैक्समिलन, इंग्लैंड में हेनरी सप्तम और स्पेन में ईसाबेला और फरडीनेंड, निरकुंश शासक थे जिन्होंने संगठित स्थायी सेनाओं की प्रक्रिया, एक स्थायी नौकरशाही और राष्ट्रीय कर प्रणाली स्थापित करने की प्रक्रिया को शुरू किया। स्पेन और पुर्तगाल ने यूरोप के समुद्र पार विस्तार की नयी संभावनाओं की शुरुआत की। (देखिए विषय 8)

इंग्लैंड की रानी एलिजाबेथ प्रथम, पिकनिक मनाते हुए, सोलहवीं सदी के अंतिम दशकों में।

बारहवीं और तेरहवीं सदी में होने वाला सामाजिक परिवर्तन इन राजतंत्रों की सफलता का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कारण था। जागीरदारी (Vassalage) और सामंतशाही (lordship) वाली सामंत प्रथा के विलयन और आर्थिक विकास की धीमी गति ने इन शासकों को प्रभावशाली और सामान्य जनों पर अपने नियंत्रण को बढ़ाने का पहला मौका दिया। शासकों ने सामंतों से अपनी सेना के लिए कर लेना बंद कर दिया और उसके स्थान पर बंदूकों और बड़ी तोपों से सुसज्जित प्रशिक्षित सेना बनाई जो पूर्ण रूप से उनके अधीन थी (देखिए विषय 5)। अभिजात वर्ग का विरोध राजाओं की गोली के शक्ति प्रदर्शन के समक्ष टुकड़े-टुकड़े हो गया।

नए शासक	
1461–1559	फ्रांस में नए शासक
1474–1556	स्पेन में नए शासक
1485–1547	इंग्लैंड में नए शासक

करों को बढ़ाने से शासकों को पर्याप्त राजस्व प्राप्त हुआ जिससे वे पहले से बड़ी सेनाएँ रख सके। इस तरह उन्होंने अपनी सीमाओं की रक्षा और विस्तार किया तथा राजसत्ता के प्रति होने वाले आंतरिक प्रतिरोधों को दबाया। किंतु इसका मतलब यह नहीं था कि केंद्रीयकरण का अभिजात वर्ग ने विरोध नहीं किया। राजसत्ता के विरुद्ध हुए विरोधों का एक समान मुद्दा कराधान था। इंग्लैंड में विद्रोह हुए जिनका 1497, 1536, 1547, 1549 और 1553 में दमन कर दिया गया। फ्रांस में लुई XI (1461–83) को ड्यूक लोगों और राजकुमारों के विरुद्ध एक लंबा संघर्ष करना पड़ा। अवर कोटि के अभिजातों और अधिकतर स्थानीय सभाओं के सदस्यों ने भी अपनी शक्ति के जबरदस्ती हड़पे जाने का विरोध किया। सोलहवीं सदी में फ्रांस में होने वाले 'धर्म–युद्ध' कुछ हद तक शाही सुविधाओं और क्षेत्रीय स्वतंत्रता के बीच संघर्ष थे।

नेमूर का दुर्ग, पंद्रहवीं सदी

अभिजात वर्ग ने अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिए एक चतुरतापूर्ण परिवर्तन किया। नई शासन–व्यवस्था के विरोधी रहने के स्थान पर उन्होंने जल्दी ही अपने को राजभक्तों में बदल लिया। इसी कारण से शाही निरंकुशता को सामंतवाद का परिष्कृत रूप माना जाता है। वास्तव में, लॉर्ड जैसे व्यक्ति जो सामंती प्रथा में शासक थे, राजनीतिक परिदृश्य पर अभी भी छाए रहे। उन्हें प्रशासनिक सेवाओं में स्थायी स्थान दिए गए। परन्तु नयी शासन व्यवस्था कई महत्त्वपूर्ण तरीकों में अलग थी।

शासक अब उस पिरामिड के शिखर पर नहीं था जहाँ राजभक्ति विश्वास और आपसी निर्भरता पर टिकी थी। वह अब व्यापक दरबारी समाज और आश्रयदाता–अनुयायी तंत्र का केंद्र–बिंदु था। सभी राजतंत्र, चाहे वे कितने भी कमज़ोर या शक्तिशाली हों, उन व्यक्तियों का सहयोग चाहते थे, जिनके पास सत्ता हो। धन इस प्रकार के सहयोग को सुनिश्चित करने का साधन बन गया। समर्थन धन के माध्यम से दिया या प्राप्त किया जा सकता था। इसलिए, धन ग़ैर–अभिजात वर्गों जैसे व्यापारियों और साहूकारों के लिए दरबार में प्रवेश करने का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम बन गया। वे राजाओं को धन उधार देते थे जो इसका उपयोग सैनिकों को वेतन देने के लिए करते थे। शासकों ने इस प्रकार राज्य–व्यवस्था में ग़ैर सामंती तत्त्वों के लिए स्थान बना दिया।

फ्रांस और इंग्लैंड का बाद का इतिहास इन शक्ति संरचनाओं में हो रहे परिवर्तनों से बनना था। 1614 में बालक शासक लुई XIII के शासनकाल में फ्रांस की परामर्शदात्री सभा, जिसे एस्ट्रेट्स जनरल कहते थे (जिसके तीन सदन थे, जो तीन वर्गों – पादरी वर्ग, अभिजात वर्ग तथा अन्य का प्रतिनिधित्व करते थे), का एक अधिवेशन हुआ। इसके पश्चात दो सदियों, 1789 तक इसे फिर नहीं बुलाया गया क्योंकि राजा तीन वर्गों के साथ अपनी शक्ति बाँटना नहीं चाहते थे।

इंग्लैंड में जो हुआ वह बहुत अलग था। नॉरमन विजय से भी पहले एंग्लो-सैक्सन लोगों की एक महान परिषद होती थी। कोई भी कर लगाने से पहले राजा को इस परिषद की सलाह लेनी पड़ती थी। यह आगे चलकर पार्लियामेंट के रूप में विकसित हुई जिसमें हाउस ऑफ लॉर्ड्स, जिसके सदस्य लॉर्ड और पादरी थे व हाउस ऑफ कामन्स, जो नगरों व ग्रामीण क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते थे, शामिल थे। राजा चार्ल्स प्रथम (1629-40) ने पार्लियामेंट को बिना बुलाए ग्यारह वर्षों तक शासन किया। एक बार जब धन की आवश्यकता पड़ने पर वह उसे बुलाने को बाध्य हुआ तो पार्लियामेंट का एक भाग उसके विरोध में हो गया और बाद में उसे प्राणदंड देकर गणतंत्र की स्थापना की गई। परन्तु यह व्यवस्था अधिक दिनों तक नहीं चल पाई और राजतंत्र की पुन: स्थापना हुई; परंतु इस शर्त पर कि अब पार्लियामेंट नियमित रूप से बुलाई जाएगी।

वर्तमान में फ्रांस में गणतंत्रीय सरकार है और इंग्लैंड में राजतंत्र है। इसका कारण यह है कि सत्रहवीं सदी के बाद दोनों राष्ट्रों के इतिहासों ने अलग-अलग दिशाएँ अपनाईं।

अभ्यास

संक्षेप में उत्तर दीजिए

1. फ्रांस के प्रारंभिक सामंती समाज के दो लक्षणों का वर्णन कीजिए।
2. जनसंख्या के स्तर में होने वाले लंबी-अवधि के परिवर्तनों ने किस प्रकार यूरोप की अर्थव्यवस्था और समाज को प्रभावित किया?
3. नाइट एक अलग वर्ग क्यों बने और उनका पतन कब हुआ?
4. मध्यकालीन मठों का क्या कार्य था?

संक्षेप में निबंध लिखिए

5. मध्यकालीन फ्रांस के नगर में एक शिल्पकार के एक दिन के जीवन की कल्पना कीजिए और इसका वर्णन कीजिए।
6. फ्रांस के सर्फ़ और रोम के दास के जीवन की दशा की तुलना कीजिए।

© NCERT not to be republished

विषय
7

बदलती हुई सांस्कृतिक परंपराएँ

11091CH07

चौदहवीं शताब्दी से सत्रहवीं शताब्दी के अंत तक यूरोप के अनेक देशों में नगरों की संख्या बढ़ रही थी। एक विशेष प्रकार की 'नगरीय-संस्कृति' विकसित हो रही थी। नगर के लोग अब यह सोचने लगे थे कि वे गाँव के लोगों से अधिक 'सभ्य' हैं। नगर खासकर फ़्लोरेंस, वेनिस और रोम–कला और विद्या के केंद्र बन गए। नगरों को राजाओं और चर्च से थोड़ी बहुत स्वायत्तता (autonomy) मिली थी। नगर कला और ज्ञान के केन्द्र बन गए। अमीर और अभिजात वर्ग के लोग कलाकारों और लेखकों के आश्रयदाता थे। इसी समय मुद्रण के आविष्कार से अनेक लोगों को चाहे वह दूर-दराज़ नगरों या देशों में रह रहे हों, छपी हुई पुस्तकें उपलब्ध होने लगीं। यूरोप में इतिहास की समझ विकसित होने लगी और लोग अपने 'आधुनिक विश्व' की तुलना यूनानी व रोमन 'प्राचीन दुनिया' से करने लगे थे।

अब यह माना जाने लगा कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छानुसार अपना धर्म चुन सकता है। चर्च के, पृथ्वी के केंद्र संबंधी विश्वासों को वैज्ञानिकों ने गलत सिद्ध कर दिया चूँकि वे अब सौर-मंडल को समझने लगे थे। नवीन भौगोलिक ज्ञान ने इस विचार को उलट दिया कि भूमध्यसागर विश्व का केंद्र है। इस विचार के पीछे यह मान्यता रही थी कि यूरोप विश्व का केंद्र है (देखिए विषय 8)।

चौदहवीं शताब्दी से यूरोपीय इतिहास की जानकारी के लिए बहुत अधिक सामग्री दस्तावेज़ों, मुद्रित पुस्तकों, चित्रों, मूर्तियों, भवनों तथा वस्त्रों से प्राप्त होती है जो यूरोप और अमरीका के अभिलेखागारों, कला-चित्रशालाओं और संग्रहालयों में सुरक्षित रखी हुई हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी के इतिहासकारों ने 'रेनेसाँ' (शाब्दिक अर्थ-पुनर्जन्म, हिंदी में पुनर्जागरण) शब्द का प्रयोग किया जो उस काल के सांस्कृतिक परिवर्तनों को बताता है। स्विट्ज़रलैंड के ब्रेसले विश्वविद्यालय के इतिहासकार जैकब बर्कहार्ट (Jacob Burckhardt, 1818-97) ने इस पर बहुत अधिक बल दिया। वे जर्मन इतिहासकार लियोपोल्ड वॉन रांके (Leopold von Ranke, 1795-1886) के विद्यार्थी थे। रांके ने उन्हें यह बताया कि इतिहासकार का पहला उद्देश्य है कि वह राज्यों और राजनीति के बारे में लिखे जिसके लिए वह सरकारी विभागों के कागज़ात और फाइलों का इस्तेमाल करे। पर बर्कहार्ट अपने गुरु के सीमित लक्ष्यों से असंतुष्ट थे। उनके अनुसार इतिहास-लेखन में राजनीति ही सब कुछ नहीं है। इतिहास का सरोकार उतना ही संस्कृति से है जितना राजनीति से।

1860 ई. में बर्कहार्ट ने *दि सिविलाईजेशन ऑफ दि रेनेसाँ इन इटली* नामक पुस्तक की रचना की। इसमें उन्होंने अपने पाठकों का ध्यान साहित्य, वास्तुकला और चित्रकला की ओर आकर्षित किया और यह बताया कि चौदहवीं शताब्दी से सत्रहवीं शताब्दी तक इटली के नगरों में किस प्रकार एक 'मानवतावादी' संस्कृति पनप रही थी। उन्होंने यह लिखा कि

© NCERT not to be republished

यह संस्कृति इस नए विश्वास पर आधारित थी कि व्यक्ति अपने बारे में खुद निर्णय लेने और अपनी दक्षता को आगे बढ़ाने में समर्थ है। ऐसा व्यक्ति 'आधुनिक' था जबकि 'मध्यकालीन मानव' पर चर्च का नियंत्रण था।

इटली के नगरों का पुनरुत्थान

पश्चिम रोम साम्राज्य के पतन के बाद इटली के राजनैतिक और सांस्कृतिक केन्द्रों का विनाश हो गया। इस समय कोई भी एकीकृत सरकार नहीं थी और रोम का पोप जो अपने राज्य में बेशक सार्वभौम था, समस्त यूरोपीय राजनीति में इतना मज़बूत नहीं था।

एक अरसे से पश्चिमी यूरोप के क्षेत्र, सामंती संबंधों के कारण नया रूप ले रहे थे और लातिनी चर्च के नेतृत्व में उनका एकीकरण हो रहा था। इसी समय पूर्वी यूरोप बाइज़ेंटाइन साम्राज्य के शासन में बदल रहा था। उधर कुछ और पश्चिम में इस्लाम एक सांझी सभ्यता का निर्माण कर रहा था। इटली एक कमज़ोर देश था और अनेक टुकड़ों में बँटा हुआ था। परंतु इन्हीं परिवर्तनों ने इतालवी संस्कृति के पुनरुत्थान में सहायता प्रदान की।

बाइज़ेंटाइन साम्राज्य और इस्लामी देशों के बीच व्यापार के बढ़ने से इटली के तटवर्ती बंदरगाह पुनर्जीवित हो गए। बारहवीं शताब्दी से जब मंगोलों ने चीन के साथ 'रेशम-मार्ग' (देखिए विषय 5) से व्यापार आरंभ किया तो इसके कारण पश्चिमी यूरोपीय देशों के व्यापार को बढ़ावा मिला। इसमें इटली के नगरों ने मुख्य भूमिका निभाई। अब वे अपने को एक शक्तिशाली साम्राज्य के अंग

मानचित्र 1 : इटली के राज्य।

© NCERT not to be republished

के रूप में ही नहीं देखते थे बल्कि स्वतंत्र नगर-राज्यों का एक समूह मानते थे। नगरों में फ़्लोरेंस और वेनिस, गणराज्य थे और कई अन्य दरबारी-नगर थे जिनका शासन राजकुमार चलाते थे।

इनमें सर्वाधिक जीवंत शहरों में पहला वेनिस और दूसरा जिनेवा था। वे यूरोप के अन्य क्षेत्रों से इस दृष्टि में अलग थे कि यहाँ पर धर्माधिकारी और सामंत वर्ग राजनैतिक दृष्टि से शक्तिशाली नहीं थे। नगर के धनी व्यापारी और महाजन नगर के शासन में सक्रिय रूप से भाग लेते थे जिससे नागरिकता की भावना पनपने लगी। यहाँ तक कि जब इन नगरों का शासन सैनिक तानाशाहों के हाथ में रहा तब भी इन नगरों के निवासी अपने को यहाँ का नागरिक कहने में गर्व का अनुभव करते थे।

नगर-राज्य

कार्डिनल गेसपारो कोन्तारिनी (Cardinal Gasparo Contarini, 1483-1542) अपने ग्रंथ *दि कॉमनवेल्थ एण्ड गवर्नमेंट ऑफ वेनिस* (1534) में अपने नगर-राज्य की लोकतांत्रिक सरकार के बारे में लिखते हैं:

"... हमारे वेनिस के संयुक्तमंडल (Commonwealth) की संस्था के बारे में जानने पर आपको ज्ञात होगा कि नगर का संपूर्ण प्राधिकार... एक ऐसी परिषद् के हाथों में है जिसमें 25 वर्ष से अधिक आयु वाले [संभ्रांत वर्ग के] सभी पुरुषों को सदस्यता मिल जाती है...।

सबसे पहले मैं आपको यह बताऊँगा कि हमारे पूर्वजों ने ऐसा नियम क्यों बनाया कि सामान्य जनता को नागरिक वर्ग में-जिनके हाथ में संयुक्तमंडल के शासन की बागडोर है-शामिल क्यों नहीं किया जाए... क्योंकि उन नगरों में अनेक प्रकार की गड़बड़ियाँ और जन उपद्रव होते रहते हैं जहाँ की सरकार पर जन-सामान्य का प्रभाव रहता है। कुछ लोगों के विचार इससे अलग थे। उनका कहना था कि यदि संयुक्त मंडल का शासन-संचालन अधिक कुशलता से करना है तो योग्यता और संपन्नता को आधार बनाना चाहिए। दूसरी ओर सच्चरित्र नागरिक जिनका लालन-पालन उदार वातावरण में होता है वे प्राय: निर्धन हो जाते हैं.... इसीलिए हमारे बुद्धिमान और विवेकवान पूर्वजों ने ... यह विचार रखा कि इस सार्वजनिक नियम को बदल कर धन-संपन्नता को आधार न बनाकर कुलीन वंशीय लोगों को प्राथमिकता दी जाए। तथापि इस शर्त के साथ कि केवल उच्च अभिजात वंशीय लोग ही सत्ता में न रहें (क्योंकि ऐसा करने से चंद लोगों की शक्ति काफी बढ़ जाएगी न कि संयुक्तमंडल की)। गरीब लोगों को छोड़कर सभी नागरिकों का प्रतिनिधित्व सत्ता में होना चाहिए: चाहें वे अभिजात वंशीय हों या वे लोग हों जो अपने विशिष्ट गुणों के कारण उदात्त हों। इन सभी को सरकार चलाने का अधिकार मिलना चाहिए।"

जी. बेलिनी का दि रिकवरी ऑफ दि रेलिक ऑफ दि होली क्रास (पवित्र क्रॉस के स्मृतिशेष की पुनर्प्राप्ति) चित्र 1370 की एक घटना की याद में 1500 में बना परन्तु इसमें चित्रण 15वीं शताब्दी के वेनिस का है।

not to be republished © NCERT

चौदहवीं और पंद्रहवीं शताब्दियाँ	
1300	इटली के पादुआ विश्वविद्यालय में मानवतावाद पढ़ाया जाने लगा
1341	पेट्रार्क को रोम में 'राजकवि' की उपाधि से सम्मानित किया गया
1349	फ़्लोरेंस में विश्वविद्यालय की स्थापना
1390	जेफ़्री चॉसर की *'केन्टरबरी टेल्स'* का प्रकाशन
1436	ब्रुनेलेशी ने फ़्लोरेंस में ड्यूमा का परिरूप तैयार किया
1453	कुंस्तुनतुनिया के बाइज़ेंटाइन शासक को ऑटोमन तुर्कों ने पराजित किया
1454	गुटेनबर्ग ने विभाज्य टाइप (Movable type) से बाईबल का प्रकाशन किया
1484	पुर्तगाली गणितज्ञों ने सूर्य का अध्ययन कर अक्षांश की गणना की
1492	कोलम्बस अमरीका पहुँचे
1495	लियोनार्डो द विंची ने 'द *लास्ट सपर' (अंतिमभोज)* चित्र बनाया
1512	माइकल एन्जिलो ने सिस्टीन चैपल की छत पर चित्र बनाए

विश्वविद्यालय और मानवतावाद

यूरोप में सबसे पहले विश्वविद्यालय इटली के शहरों में स्थापित हुए। ग्यारहवीं शताब्दी से पादुआ और बोलोनिया (Bologna) विश्वविद्यालय विधिशास्त्र के अध्ययन केंद्र रहे। इसका कारण था यह कि इन नगरों के प्रमुख क्रियाकलाप व्यापार और वाणिज्य संबंधी थे इसलिए वकीलों और नोटरी (यह सोलिसिटर और अभिलेखपाल दोनों के कार्य करते थे) की बहुत अधिक आवश्यकता होती थी क्योंकि वे नियमों को लिखते, उनकी व्याख्या करते और समझौते तैयार करते थे। इनके बिना बड़े पैमाने पर व्यापार करना संभव नहीं था। यही कारण था कि कानून का अध्ययन एक प्रिय विषय बन गया। लेकिन कानून के अध्ययन में यह बदलाव आया कि उसे रोमन संस्कृति के संदर्भ में पढ़ा जाने लगा। फ़्रांचेस्को पेट्रार्क (1304-1378) इस परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करते हैं। पेट्रार्क के लिए पुराकाल एक विशिष्ट सभ्यता थी जिसे प्राचीन यूनानियों और रोमनों के वास्तविक शब्दों के माध्यम से ही अच्छी तरह समझा जा सकता है। अतः उसने इस बात पर जोर दिया कि इन प्राचीन लेखकों की रचनाओं का बहुत अच्छी तरह से अध्ययन किया जाए।

इस शिक्षा कार्यक्रम में यह अंतर्निहित था कि बहुत कुछ जानना बाकी है और यह सब हम केवल धार्मिक शिक्षण से नहीं सीखते। इसी नयी संस्कृति को उन्नीसवीं शताब्दी के इतिहासकारों ने 'मानवतावाद' नाम दिया। पंद्रहवीं शताब्दी के शुरू के दशकों में 'मानवतावादी' शब्द उन अध्यापकों के लिए प्रयुक्त होता था जो व्याकरण, अलंकारशास्त्र, कविता, इतिहास और नीतिदर्शन विषय पढ़ाते थे। *लातिनी* शब्द 'ह्यूमेनिटास' जिससे 'ह्यूमेनिटिज़' शब्द बना है जिसे कई शताब्दियों पहले रोम के वकील तथा निबंधकार सिसरो (Cicero, 106-43 ई.पू.) ने, जो कि जूलियस सीज़र का समकालीन था, 'संस्कृति' के अर्थ में लिया था। ये विषय धार्मिक नहीं थे वरन् उस कौशल पर बल देते थे जो व्यक्ति चर्चा और वाद-विवाद से विकसित करता है।

इन क्रांतिकारी विचारों ने अनेक विश्वविद्यालयों का ध्यान आकर्षित किया। इनमें एक नया-नया स्थापित विश्वविद्यालय फ़्लोरेंस भी था जो पेट्रार्क का स्थायी नगर-निवास था। इस नगर ने तेरहवीं

क्रियाकलाप 1

इटली के मानचित्र में वेनिस को ढूँढ़िए और पृ. 154 पर दिए गए चित्र को ध्यान से देखिए। आप नगर का वर्णन कैसे करेंगे? यह शहर किसी कथीड्रल नगर से कैसे भिन्न है?

© NCERT not to be republished

> फ़्लोरेंस के मानवतावादी जोवान्ने पिको देल्ला मिरांदोला (Giovanni Pico della Mirandola, 1463-94) ने *ऑन दि डिगनिटी ऑफ मैन* (1486) नामक पुस्तक में वाद-विवाद के महत्त्व पर लिखा–
> "(प्लेटो और अरस्तू) के अनुसार सत्य की खोज करने और इसे प्राप्त करने के लिए वे हमेशा जुटे रहते थे और उनका कहना था कि जहाँ तक हो सके विचारगोष्ठियों में जाना चाहिए और वाद-विवाद करना चाहिए। यह उसी तरह है जैसे शरीर को मज़बूत बनाने के लिए कसरत ज़रूरी है, दिमाग की ताकत को बढ़ाने के लिए शब्दों के दंगल में उतरना ज़रूरी है। इससे दिमागी ताकत बढ़ने के साथ-साथ और अधिक ओजस्वी होती है।"

शताब्दी के अंत तक व्यापार या शिक्षा के क्षेत्र में कोई विशेष तरक्की नहीं की थी पर पंद्रहवीं शताब्दी में सब कुछ पूरी तरह बदल गया। किसी भी नगर की पहचान उसके महान नागरिकों के साथ-साथ उसकी संपन्नता से बनती है। फ़्लोरेंस की प्रसिद्धि में दो लोगों का बड़ा हाथ था। इनमें से एक व्यक्ति थे दाँते अलिगहियरी (Dante Alighieri, 1265 – 1321) जो किसी धार्मिक संप्रदाय विशेष से संबंधित नहीं थे पर उन्होंने अपनी कलम धार्मिक विषयों पर चलायी थी। दूसरे व्यक्ति थे कलाकार जोटो (Giotto, 1267–1337) जिन्होंने जीते-जागते रूपचित्र

फ़्लोरेंस, 1470 में बनाया गया एक रेखाचित्र।

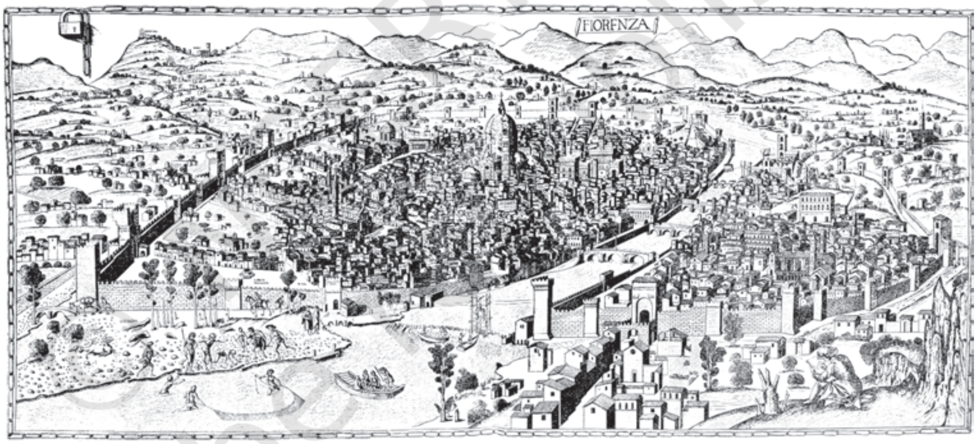

(Portrait) बनाए। उनके बनाए रूपचित्र पहले के कलाकारों की तरह बेजान नहीं थे। इसके बाद धीरे-धीरे फ़्लोरेंस, इटली के सबसे जीवंत बौद्धिक नगर के रूप में जाना जाने लगा और कलात्मक कृतियों के सृजन का केन्द्र बन गया। 'रेनेसाँ व्यक्ति' शब्द का प्रयोग प्राय: उस मनुष्य के लिए किया जाता है जिसकी अनेक रुचियाँ हों और अनेक हुनर में उसे महारत प्राप्त हो। पुनर्जागरण काल में अनेक महान लोग हुए जो अनेक रुचियाँ रखते थे और कई कलाओं में कुशल थे। उदाहरण के लिए, एक ही व्यक्ति विद्वान, कूटनीतिज्ञ, धर्मशास्त्रज्ञ और कलाकार हो सकता था।

जोटो द्वारा रचित चित्र, असिसी, इटली।

इतिहास का मानवतावादी दृष्टिकोण

मानवतावादी समझते थे कि वह अंधकार की कई शब्तादियों बाद सभ्यता के सही रूप को पुन: स्थापित कर रहे हैं। इसके पीछे यह मान्यता थी कि रोमन साम्राज्य के टूटने के बाद 'अंधकारयुग' शुरू हुआ। मानवतावादियों की भाँति बाद के विद्वानों ने बिना कोई प्रश्न उठाए यह मान लिया कि [यूरोप में चौदहवीं शताब्दी के बाद 'नये युग' का जन्म हुआ।] 'मध्यकाल' जैसी संज्ञाओं का प्रयोग रोम साम्राज्य के पतन के बाद एक हज़ार वर्ष की समयावधि के लिए किया गया। उनके यह

तर्क थे कि 'मध्ययुग' में चर्च ने लोगों की सोच को इस तरह जकड़ रखा था कि यूनान और रोमवासियों का समस्त ज्ञान उनके दिमाग से निकल चुका था। मानवतावादियों ने 'आधुनिक' शब्द का प्रयोग पंद्रहवीं शताब्दी से शुरू होने वाले काल के लिए किया।

मानवतावादियों और बाद के विद्वानों द्वारा प्रयुक्त कालक्रम (Periodisation)।

5–14 शताब्दी	मध्य युग
5–9 शताब्दी	अंधकार युग
9–11 शताब्दी	आरंभिक मध्य युग
11–14 शताब्दी	उत्तर मध्य युग
15 शताब्दी से	आधुनिक युग

हाल में अनेक इतिहासकारों ने इस काल विभाजन पर सवाल उठाया है। इस काल के यूरोप के बारे में जैसे-जैसे खोजें और शोध बढ़ते गए वैसे-वैसे विद्वानों ने शताब्दियों की सांस्कृतिक समृद्धि अथवा असमृद्धि को आधार मानकर तीक्ष्ण विभाजन करने में अपनी दुविधा जताई। किसी भी काल को 'अंधकार युग' की संज्ञा देना उन्हें अनुचित लगा।

विज्ञान और दर्शन–अरबीयों का योगदान

पूरे मध्यकाल में ईसाई गिरजाघरों और मठों के विद्वान यूनानी और रोमन विद्वानों की कृतियों से परिचित थे। पर इन लोगों ने इन रचनाओं का प्रचार-प्रसार नहीं किया। चौदहवीं शताब्दी में अनेक विद्वानों ने प्लेटो और अरस्तू के ग्रंथों से अनुवादों को पढ़ना शुरू किया। इसके लिए वे अपने विद्वानों के ऋणी नहीं, बल्कि वे अरब के अनुवादकों के ऋणी थे जिन्होंने अतीत की पांडुलिपियों का संरक्षण और अनुवाद सावधानीपूर्वक किया था (अरबी भाषा में प्लेटो, अफ़लातून और एरिसटोटिल, अरस्तू नाम से जाने जाते थे)।

जबकि एक ओर यूरोप के विद्वान यूनानी ग्रंथों के अरबी अनुवादों का अध्ययन कर रहे थे दूसरी ओर यूनानी विद्वान अरबी और फ़ारसी विद्वानों की कृतियों को अन्य यूरोपीय लोगों के बीच प्रसार के लिए अनुवाद कर रहे थे। ये ग्रंथ प्राकृतिक विज्ञान, गणित, खगोल विज्ञान (astronomy), औषधि विज्ञान और रसायन विज्ञान से संबंधित थे। टॉलेमी के *अलमजेस्ट* (खगोल शास्त्र पर रचित ग्रंथ जो 140 ई. के पूर्व यूनानी भाषा में लिखा गया था और बाद में इसका अरबी में अनुवाद भी हुआ) में अरबी भाषा के विशेष उपपद 'अल' का उल्लेख है जो कि यूनानी और अरबी भाषा के बीच रहे संबंधों को दर्शाता है।

मुसलमान लेखकों, जिन्हें इतालवी दुनिया में ज्ञानी माना जाता था, में अरबी के हकीम और मध्य एशिया के बुखारा के दार्शनिक इब्न-सिना* (Ibn Sina-लातिनी में एविसिना 980–1037) और आयुर्विज्ञान विश्वकोश के लेखक अल-राज़ी (रेज़ेस) सम्मिलित थे।

स्पेन के अरबी दार्शनिक इब्न रूश्द (लातिनी में अविरोज़ 1126–98) ने दार्शनिक ज्ञान *(फैलसुफ़)* और धार्मिक विश्वासों के बीच रहे तनावों को सुलझाने की चेष्टा की। उनकी पद्धति को ईसाई चिंतकों द्वारा अपनाया गया।

मानवतावादी अपनी बात लोगों तक तरह-तरह से पहुँचाने लगे। यद्यपि विश्वविद्यालयों में पाठ्यचर्या पर कानून, आयुर्विज्ञान और धर्मशास्त्र का दबदबा रहा, फिर भी मानवतावादी विषय धीरे-धीरे स्कूलों में पढ़ाया जाने लगा। यह सिर्फ इटली में ही नहीं बल्कि यूरोप के अन्य देशों में भी हुआ।

*इन व्यक्तियों के नामों की यूरोपीय वर्तनी ने बाद की पीढ़ियों को यह सोचने पर मजबूर कर दिया कि वे यूरोपीय थे!

इस काल के विद्यालय लड़कों के लिए ही थे।

कलाकार और यथार्थवाद

उस काल के लोगों के विचार को आकार देने का साधन मानवतावादियों के लिए केवल औपचारिक शिक्षा ही नहीं थी। कला, वास्तुकला और ग्रंथों ने मानवतावादी विचारों को फैलाने में प्रभावी भूमिका निभाई।

ड्यूरर का तूलिका चित्र 1508– "प्रार्थना रत हस्त"

"कला प्रकृति में रची-बसी होती है। जो इसके सार को पकड़ सकता है वही इसे प्राप्त कर सकता है... इसके अतिरिक्त आप अपनी कला को गणित द्वारा दिखा सकते हैं। ज़िंदगी की अपनी आकृति से आपकी कृति जितनी जुड़ी होगी उतना ही सुंदर आपका चित्र होगा। कोई भी आदमी केवल अपनी कल्पना मात्र से एक सुंदर आकृति नहीं बना सकता जब तक उसने अपने मन को जीवन की प्रतिछवि से न भर लिया हो।"

– अल्वर्ट ड्यूरर (Albrecht Durer, 1471–1528)

ड्यूरर द्वारा बनाया गया यह रेखाचित्र (प्रार्थनारत हस्त) सोलहवीं शताब्दी की इतालवी संस्कृति का आभास कराता है जब यहाँ के लोग गहन रूप से धार्मिक थे। परंतु उन्हें मनुष्य की योग्यता पर भरोसा था कि वह निकट पूर्णता को प्राप्त कर सकता है और दुनिया तथा ब्रह्मांड के रहस्यों को सुलझा सकता है।

'दि पाइटा' चित्र में माइकेल एन्जिलो ने मेरी को ईसा के शरीर को धारण करते हुए दिखाया है।

पहले के कलाकारों द्वारा बनाए गए चित्रों के अध्ययन से नए कलाकारों को प्रेरणा मिली। रोमन संस्कृति के भौतिक अवशेषों की उतनी ही उत्सुकता के साथ खोज की गई जितनी कि अतीत के प्राचीन ग्रंथों की। रोम साम्राज्य के पतन के एक हज़ार साल बाद भी प्राचीन रोम और उसके उजाड़ नगरों के खंडहरों में कलात्मक वस्तुएँ मिलीं। अनेक शताब्दियों पहले बनी आदमी और औरतों की 'संतुलित' मूर्तियों के प्रति आदर ने उस परंपरा को कायम रखने के लिए इतालवी वास्तुविदों को प्रोत्साहित किया। 1416 में दोनातल्लो (Donatello, 1386–1466) ने सजीव मूर्तियाँ बनाकर नयी परंपरा कायम की।

कलाकारों द्वारा हूबहू मूल आकृति जैसी मूर्तियों को बनाने की चाह को वैज्ञानिकों के कार्यों से सहायता मिली। नर-कंकालों का अध्ययन करने के लिए कलाकर आयुर्विज्ञान कॉलेजों की प्रयोगशालाओं में गए। बेल्जियम मूल के आन्ड्रीयस वेसेलियस (Andreas Vesalius, 1514–64) पादुआ विश्वविद्यालय में आयुर्विज्ञान के प्राध्यापक थे। ये पहले व्यक्ति थे जिन्होंने सूक्ष्म परीक्षण के लिए मनुष्य के शरीर की चीर-फाड़ (dissection) की। इसी समय से आधुनिक शरीर-क्रिया विज्ञान (Physiology) का प्रारंभ हुआ।

© NCERT not to be republished

यह स्वनिर्मित रूपचित्र लियोनार्डो दा विन्ची (Leonardo da Vinci, 1452-1519) का है जिनकी आश्चर्यजनक अभिरुचि वनस्पति विज्ञान और शरीर रचना विज्ञान से लेकर गणित शास्त्र और कला तक विस्तृत थी। उन्होंने *मोना लीसा* और *द लास्ट सपर* चित्रों की रचना की।

उनका यह स्वप्न था कि वे आकाश में उड़ सकें। वे वर्षों तक आकाश में पक्षियों के उड़ने का परीक्षण करते रहे और उन्होंने एक उड़न-मशीन (Flying machine) का प्रतिरूप (Design) बनाया। उन्होंने अपना नाम 'लियोनार्डो दा विन्ची, परीक्षण का अनुयायी' रखा।

क्रियाकलाप 2

सोलहवीं शताब्दी ई. के इटली के कलाकारों की कृतियों के विभिन्न वैज्ञानिक तत्वों का वर्णन कीजिए।

चित्रकारों के लिए नमूने के तौर पर प्राचीन कृतियाँ नहीं थीं। लेकिन मूर्तिकारों की तरह उन्होंने यथार्थ चित्र बनाने की कोशिश की। उन्हें अब यह मालूम हो गया कि रेखागणित (geometry) के ज्ञान से चित्रकार अपने परिदृश्य (Perspective) को ठीक तरह से समझ सकता है तथा प्रकाश के बदलते गुणों का अध्ययन करने से उनके चित्रों में त्रि-आयामी (three dimentional) रूप दिया जा सकता है। लेप चित्र (Painting) के लिए तेल के एक माध्यम के रूप में प्रयोग ने चित्रों को पूर्व की तुलना में अधिक रंगीन और चटख बनाया। उनके अनेक चित्रों में दिखाए गए वस्त्रों के डिज़ाइन और रंग संयोजन में चीनी और फ़ारसी चित्रकला का प्रभाव दिखाई देता है जो उन्हें मंगोलों से मिली थी (विषय 5 देखिए)।

इस तरह शरीर विज्ञान, रेखागणित, भौतिकी और सौंदर्य की उत्कृष्ट भावना ने इतालवी कला को नया रूप दिया जिसे बाद में 'यथार्थवाद' (realism) कहा गया। यथार्थवाद की यह परंपरा उन्नीसवीं शताब्दी तक चलती रही।

वास्तुकला

पंद्रहवीं शताब्दी में रोम नगर भव्य रूप से पुनर्जीवित हो उठा। 1417 से पोप राजनैतिक दृष्टि से शक्तिशाली बन गए क्योंकि 1378 से दो प्रतिस्पर्धी पोप के निर्वाचन से जन्मी दुर्बलता का अंत हो गया था। उन्होंने रोम के इतिहास के अध्ययन को सक्रिय रूप से प्रोत्साहित किया। पुरातत्त्वविदों (पुरातत्व का नया हुनर था) द्वारा रोम के अवशेषों का सावधानी से उत्खनन किया गया। इसने वास्तुकला की एक 'नयी शैली' को प्रोत्साहित किया जो वास्तव में रोम साम्राज्य कालीन शैली का पुनरूद्धार थी जिसे अब 'शास्त्रीय' शैली कहा गया। पोप, धनी व्यापारियों और अभिजात वर्ग के लोगों ने उन वास्तुविदों (architect) को अपने भवनों को बनाने के लिए नियुक्त किया जो शास्त्रीय वास्तुकला से परिचित थे। चित्रकारों और शिल्पकारों ने भवनों को लेपचित्रों, मूर्तियों और उभरे चित्रों से भी सुसज्जित किया।

सोलहवीं शताब्दी की इटली की वास्तुकला ने रोम साम्राज्य कालीन अनेक भवनों की विशिष्टताओं की नकल की।

इस काल में कुछ ऐसे भी लोग हुए जो कुशल चित्रकार, मूर्तिकार और वास्तुकार, सभी कुछ थे। इसका सबसे श्रेष्ठ उदाहरण माईकल ऐंजेलो बुआनारोत्ती (Michael Angelo Buonarroti, 1475-1564) हैं जिन्होंने पोप के सिस्टीन चैपल की भीतरी छत में लेपचित्र, 'दि पाइटा' नामक प्रतिमा, और संट पीटर गिरजे के गुम्बद का डिज़ाइन बनाया और इनकी वजह से माईकल ऐंजेलो अमर हो गए। ये सारी कलाकृतियाँ रोम में ही हैं। वास्तुकार फिलिप्पो ब्रूनेलेशी

(Philippo Brunelleschi,1337-1446) जिन्होंने फ़्लोरेंस के भव्य गुम्बद (Duomo) का परिरूप प्रस्तुत किया था, ने अपना पेशा एक मूर्तिकार के रूप में शुरू किया। इस काल में एक और अनोखा बदलाव आया। अब कलाकार की पहचान उसके नाम से होने लगी, न कि पहले की तरह उसके संघ या श्रेणी (गिल्ड) के नाम से।

दी ड्यूमा (Duomo), फ़्लोरेंस के कथीड्रल का गुम्बद, इसका डिज़ाइन ब्रूनेलेशी ने बनाया।

लिओन बतिस्ता अल्बर्टी (Leon Batista Alberti, 1402–72) ने कला सिद्धांत और वास्तुकला पर लिखा। उन्होंने लिखा है: ''मैं उसे वास्तुविद् मानता हूँ जो नए-नए तरीकों का आविष्कार कर इस तरह अपने निर्माण को पूरा करे कि उसमें भारी वज़न को ठीक बैठाया गया हो और संपूर्ण कृति के संयोजन और द्रव्यमान में ऐसा तालमेल हो कि उसका सर्वाधिक सौन्दर्य उभर कर आए ताकि मानवमात्र के लिए इसका श्रेष्ठ उपयोग हो सके।''

प्रथम मुद्रित पुस्तकें

दूसरे देशों के लोग यदि महान कलाकारों द्वारा रचित लेप-चित्रों, मूर्तियों या भवनों को देखना चाहते थे तो उन्हें इटली की यात्रा करनी पड़ती थी। किंतु जहाँ तक साहित्य की बात है जो कुछ भी इटली में लिखा गया विदेशों तक पहुँचा। ये सब सोलहवीं शताब्दी की क्रांतिकारी मुद्रण प्रौद्योगिकी की दक्षता की वजह से हुआ। इसके लिए यूरोपीय लोग अन्य लोगों के–मुद्रण प्रौद्योगिकी के लिए चीनियों के तथा मंगोल शासकों के ऋणी रहे, क्योंकि यूरोप के व्यापारी और राजनयिक मंगोल शासकों के राज-दरबार में अपनी यात्राओं के दौरान इस तकनीक से परिचित हुए थे। (ऐसा ही अन्य तीन प्रमुख तकनीकी नवीकरणों–आग्नेयास्त्र, कम्पास और फलक (Abacus) के विषय में भी हुआ)। इससे पहले किसी ग्रंथ की कुछ ही हस्तलिखित प्रतियाँ होती थीं। सन् 1455 में जर्मनमूल के जोहानेस गूटेनबर्ग (Johennes Gutenberg, 1400-58) जिन्होंने पहले छापेखाने का निर्माण किया, उनकी कार्यशाला में बाईबल की 150 प्रतियाँ छपीं। इससे पहले इतने ही समय में एक धर्मभिक्षु (Monk) बाईबल की केवल एक ही प्रति लिख पाता था।

पंद्रहवी शताब्दी तक अनेक क्लासिकी ग्रंथों जिनमें अधिकतर लातिनी ग्रंथ थे, उनका मुद्रण इटली में हुआ था। चूंकि मुद्रित पुस्तकें उपलब्ध होने लगीं और उनका क्रय संभव होने लगा, छात्रों को केवल अध्यापकों के व्याख्यानों से बने नोट पर निर्भर नहीं रहना पड़ा। अब विचार, मत और जानकारी पहले की अपेक्षा तेज़ी से प्रसारित हुए। नये विचारों को बढ़ावा देने वाली एक मुद्रित पुस्तक कई सौ पाठकों के पास बहुत जल्दी पहुँच सकती थी। अब पाठक एकांत में बैठकर पुस्तकों को पढ़ सकता था क्योंकि वह उन्हें बाज़ार से खरीद सकता था। इससे लोगों में पढ़ने की आदत का विकास हुआ।

पंद्रहवी शताब्दी के अंत से इटली की मानवतावादी संस्कृति का आल्प्स (Alps) पर्वत के पार बहुत तेज़ी से फैलने का मुख्य कारण वहाँ पर छपी हुई पुस्तकों का वितरण था। इससे स्पष्ट है कि पहले के बौद्धिक आंदोलन खास क्षेत्रों तक ही सीमित क्यों रहते थे।

मनुष्य की एक नयी संकल्पना

मानवतावादी संस्कृति की विशेषताओं में से एक था मानव जीवन पर धर्म का नियंत्रण कमजोर होना। इटली के निवासी भौतिक संपत्ति, शक्ति और गौरव से बहुत ज़्यादा आकृष्ट थे। परंतु ये ज़रूरी नहीं कि वे अधार्मिक थे। वेनिस के मानवतावादी फ्रेन्चेस्को बरबारो (Francesco Barbaro, 1390-1454) ने अपनी एक पुस्तिका में संपत्ति अधिग्रहण करने को एक विशेष गुण कहकर उसकी तरफ़दारी की। लोरेन्ज़ो वल्ला (Lorenzo Valla, 1406-1457)

विश्वास करते थे कि इतिहास का अध्ययन मुनष्य को पूर्णतया जीवन व्यतीत करने के लिए प्रेरित करता है, उन्होंने अपनी पुस्तक *ऑनप्लेज़र* में भोग-विलास पर लगाई गई ईसाई धर्म की निषेधाज्ञा की आलोचना की। इस समय लोगों में अच्छे व्यवहारों के प्रति दिलचस्पी थी– व्यक्ति को किस तरह विनम्रता से बोलना चाहिए; कैसे कपड़े पहनने चाहिए और एक सभ्य व्यक्ति को किसमें दक्षता हासिल करनी चाहिए।

मानवतावाद का मतलब यह भी था कि व्यक्ति विशेष सत्ता और दौलत की होड़ को छोड़कर अन्य कई माध्यमों से अपने जीवन को रूप दे सकता था। यह आदर्श इस विश्वास के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ा था कि मनुष्य का स्वभाव बहुमुखी है जो कि तीन भिन्न-भिन्न वर्गों जिसमें सामंती समाज विश्वास करता था, के विरुद्ध गया।

निकोलो मैक्यिावेली (Niccolo Machiavelli) अपने ग्रंथ *दि प्रिंस* (1513) के पंद्रहवें अध्याय में मनुष्य के स्वभाव के बारे में लिखते हैं–

"काल्पनिक बातों को यदि अलग कर दें और केवल उन्हीं विषयों के बारे में सोचें जो वास्तव में हैं, मैं यह कहता हूँ कि जब भी मनुष्यों के बारे में चर्चा होती है (विशेषकर राजकुमारों के बारे में, जो जनता की नजर में रहते हैं) तो इनमें अनेक गुण देखे जाते हैं जिनके कारण वे प्रशंसा या निंदा के योग्य बने हैं। उदाहरण के लिए, कुछ को दानी माना जाता है और अन्य को कंजूस। कुछ लोगों को हितैषी माना जाता है तो अन्य को लोभी कहा जाता है; कुछ निर्दयी और कुछ दयालु। एक व्यक्ति अविश्वसनीय और दूसरा विश्वसनीय; एक व्यक्ति पौरुषहीन और कायर; दूसरा खूँखार और साहसी; एक व्यक्ति शिष्ट दूसरा घमंडी; एक व्यक्ति कामुक दूसरा पवित्र; एक निष्कपट दूसरा चालाक; एक अड़ियल दूसरा लचीला; एक गंभीर दूसरा छिछोरा; एक धार्मिक दूसरा संदेही इत्यादि।

मैक्यिावेली यह मानते थे कि 'सभी मनुष्य बुरे हैं और वह अपने दुष्ट स्वभाव को प्रदर्शित करने में सदैव तत्पर रहते हैं क्योंकि कुछ हद तक मनुष्य की इच्छाएँ अपूर्ण रह जाती हैं।' मैक्यिावेली ने देखा कि इसके पीछे, प्रमुख कारण है कि मनुष्य अपने समस्त कार्यों में अपना स्वार्थ देखता है।"

महिलाओं की आकांक्षाएँ

वैयक्तिकता (individuality) और नागरिकता के नए विचारों से महिलाओं को दूर रखा गया। सार्वजनिक जीवन में अभिजात व संपन्न परिवार के पुरुषों का प्रभुत्व था और घर-परिवार के मामले में भी वे ही निर्णय लेते थे। उस समय लोग अपने लड़कों को ही शिक्षा देते थे जिससे उनके बाद वे उनके खानदानी पेशे या जीवन की आम ज़िम्मेदारियों को उठा सकें। कभी-कभी वे अपने छोटे लड़कों को धार्मिक कार्य के लिए चर्च को सौंप देते थे, यद्यपि विवाह में प्राप्त महिलाओं के दहेज़ को वे अपने पारिवारिक कारोबारों में लगा देते थे, तथापि महिलाओं को यह अधिकार नहीं था कि वे अपने पति को कारोबार चलाने के बारे में कोई राय दें। प्राय: कारोबारी मैत्री को सुदृढ़ करने के लिए दो परिवारों में आपस में विवाह संबंध होते थे। अगर पर्याप्त दहेज़ का प्रबंध नहीं हो पाता था तो शादीशुदा लड़कियों को ईसाई मठों में भिक्षुणी (Nun) का जीवन बिताने के लिए भेज दिया जाता था। आम तौर पर सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की भागीदारी बहुत सीमित थी और उन्हें घर-परिवार को चलाने वाले के रूप में देखा जाता था।

© NCERT not to be republished

व्यापारी परिवारों में महिलाओं की स्थिति कुछ भिन्न थी। दुकानदारों की स्त्रियाँ दुकानों को चलाने में प्रायः उनकी सहायता करती थीं। व्यापारी और साहूकार परिवारों की पत्नियाँ, परिवार के कारोबार को उस स्थिति में सँभालती थीं जब उनके पति लंबे समय के लिए दूर-दराज़ स्थानों को व्यापार के लिए जाते थे। अभिजात्य संपन्न परिवारों के विपरीत, व्यापारी परिवारों में यदि व्यापारी की कम आयु में मृत्यु हो जाती थी तो उसकी पत्नी सार्वजनिक जीवन में बड़ी भूमिका निभाने के लिए बाध्य होती थी।

पर उस काल की कुछ महिलाएँ बौद्धिक रूप से बहुत रचनात्मक थीं और मानवतावादी शिक्षा की भूमिका के बारे में संवेदनशील थीं। वेनिस निवासी कसान्द्रा फेदेले (Cassandra Fedele, 1465-1558) ने लिखा, "यद्यपि महिलाओं को शिक्षा न तो पुरस्कार देती है न किसी सम्मान का आश्वासन, तथापि प्रत्येक महिला को सभी प्रकार की शिक्षा को प्राप्त करने की इच्छा रखनी चाहिए और उसे ग्रहण करना चाहिए।" वह उस समय की उन थोड़ी सी महिलाओं में से एक ऐसी महिला थी जिन्होंने तत्कालीन इस विचारधारा को चुनौती दी कि एक मानवतावादी विद्वान के गुण एक महिला के पास नहीं हो सकते। फेदेले का नाम यूनानी और लातिनी भाषा के विद्वानों के रूप में विख्यात था। उन्हें पादुआ विश्वविद्यालय में भाषण देने के लिए आमंत्रित किया गया था।

इसाबेला दि इस्ते।

फेदेले की रचनाओं से यह बात सामने आती है कि इस काल में सब लोग शिक्षा को बहुत महत्त्व देते थे। वे वेनिस की अनेक लेखिकाओं में से एक थीं जिन्होंने गणतंत्र की आलोचना "स्वतंत्रता की एक बहुत सीमित परिभाषा निर्धारित करने के लिए की, जो महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों की इच्छा का ज्यादा समर्थन करती थी।" इस काल की एक अन्य प्रतिभाशाली महिला मंटुआ की मार्चिसा ईसाबेला दि इस्ते (Isabella d' Este,1474-1539) थीं। उन्होंने अपने पति की अनुपस्थिति में अपने राज्य पर शासन किया। यद्यपि मंटुआ, एक छोटा राज्य था तथापि उसका राजदरबार अपनी बौद्धिक प्रतिभा के लिए प्रसिद्ध था। महिलाओं की रचनाओं से उनके इस दृढ़ विश्वास का पता चलता है कि उन्हें पुरुष-प्रधान समाज में अपनी पहचान बनाने के लिए अधिक आर्थिक स्वायत्तता, संपत्ति और शिक्षा मिलनी चाहिए।

क्रियाकलाप 3

महिलाओं की आकांक्षाओं के संदर्भ में एक महिला (फेदेले) और एक पुरुष (कास्टिल्योनी) द्वारा अभिव्यक्त भावों की तुलना कीजिए? उन लोगों की सोच में क्या महिलाओं का एक निर्दिष्ट वर्ग ही था?

लेखक और कूटनीतिज्ञ, बाल्थासार कास्टिल्योनी (Balthasar Castiglione) ने अपनी पुस्तक *दि कोर्टियर* (1528) में लिखा है–

मेरे विचार से अपने तौर-तरीके, व्यवहार, बातचीत के तरीके, भाव-भंगिमा और छवि में एक महिला पुरुष के सदृश नहीं होनी चाहिए। जैसे कि यह कहना बिलकुल उपयुक्त होगा कि पुरुषों को हट्टा-कट्टा और पौरुषसंपन्न होना चाहिए इसी तरह एक स्त्री के लिए यह अच्छा ही है कि उसमें कोमलता और सहृदयता हो, एक स्त्रियोचित मधुरता का आभास उसके हर हाव-भाव में हो और यह उसके चाल-चलन, रहन-सहन और हर ऐसे कार्य में हो जो वह करती है, ताकि ये सारे गुण उसे हर हाल में एक स्त्री के रूप में ही दिखाएँ, न कि किसी पुरुष के सदृश। यदि उन महानुभावों द्वारा दरबारियों को सिखाए गए नियमों में इन नीति वचनों को जोड़ दिया जाए तो महिलाएँ इनमें से अनेक को अपनाकर खुद को बेहतरीन गुणों से सुसज्जित कर सकेंगी। क्योंकि मेरा यह मानना है कि मस्तिष्क के कुछ ऐसे गुण हैं जो महिलाओं के लिए उतने ही आवश्यक हैं जितने कि पुरुष के लिए जैसे कि अच्छे कुल का होना, दिखावे का परित्याग करना, सहज रूप से शालीन होना, आचरणवान, चतुर और बुद्धिमान होना, गर्वी, ईर्ष्यालु, कटु और उद्दंड न होना...जिससे महिलाएँ उन क्रीड़ाओं को, शिष्टता और मनोहरता के साथ संपन्न कर सकें, जो उनके लिए उपयुक्त हैं।

ईसाई धर्म के अंतर्गत वाद-विवाद

व्यापार और सरकार, सैनिक विजय और कूटनीतिक संपर्कों के कारण इटली के नगरों और राजदरबारों के दूर-दूर के देशों से संपर्क स्थापित हुए। नयी संस्कृति की शिक्षित और समृद्धिशाली लोगों द्वारा प्रशंसा ही नहीं की गई वरन् उसको अपनाया भी गया। परंतु इन नए विचारों में कुछ ही आम आदमी तक पहुँच सके क्योंकि वे साक्षर नहीं थे।

पंद्रहवीं और आरंभिक सोलहवीं शताब्दियों में उत्तरी यूरोप के विश्वविद्यालयों के अनेक विद्वान मानवतावादी विचारों की ओर आकर्षित हुए। अपने इतालवी सहकर्मियों की तरह उन्होंने भी यूनान और रोम के क्लासिक ग्रंथों और ईसाई धर्मग्रंथों के अध्ययन पर अधिक ध्यान दिया। पर इटली के विपरीत जहाँ पेशेवर विद्वान मानवतावादी आंदोलन पर हावी रहे, उत्तरी यूरोप में मानवतावाद ने ईसाई चर्च के अनेक सदस्यों को आकर्षित किया। उन्होंने ईसाइयों को अपने पुराने धर्मग्रथों में बताए गए तरीकों से धर्म का पालन करने का आह्वान किया। साथ ही उन्होंने अनावश्यक कर्मकांडों को त्यागने की बात की और उनकी यह कहकर निंदा की कि उन्हें एक सरल धर्म में बाद में जोड़ा गया है। मानव के बारे में उनका दृष्टिकोण बिलकुल नया था क्योंकि वे उसे एक मुक्त विवेकपूर्ण कर्ता समझते थे। बाद के दार्शनिक बार-बार इसी बात को दोहराते रहे। वे एक दूरवर्ती ईश्वर में विश्वास रखते थे और मानते थे कि उसने मनुष्य बनाया है लेकिन उसे अपना जीवन मुक्त रूप से चलाने की पूरी आज़ादी भी दी है। वे यह भी मानते थे कि मनुष्य को अपनी खुशी इसी विश्व में वर्तमान में ही ढूँढ़नी चाहिए।

ईसाई मानवतावादी जैसे कि इंग्लैंड के टॉमस मोर (Thomas More, 1478-1535) और हालैंड के इरेस्मस, (Erasmus,1466-1536) का यह मानना था कि चर्च एक लालची और साधारण लोगों से बात-बात पर लूट-खसोट करने वाली संस्था बन गई। पादरियों का लोगों से धन ठगने का सबसे सरल तरीका 'पाप-स्वीकारोक्ति' (indulgences) नामक दस्तावेज़ था जो व्यक्ति को उसके सारे किए गए पापों से छुटकारा दिला सकता था। ईसाइयों को बाईबल के स्थानीय भाषाओं में छपे अनुवाद से यह ज्ञात हो गया कि उनका धर्म इस प्रकार की प्रथाओं के प्रचलन की आज्ञा नहीं देता है।

यूरोप के लगभग प्रत्येक भाग में किसानों ने चर्च द्वारा लगाए गए इस प्रकार के अनेक करों का विरोध किया। इसके साथ-साथ राजा भी राज-काज में चर्च की दखलअंदाज़ी से चिढ़ते थे। जब मानवतावादियों ने उन्हें यह सूचित किया कि न्यायिक और वित्तीय शक्तियों पर पादरियों का दावा 'कॉन्स्टैनटाइन के अनुदान' नामक एक दस्तावेज़ से उत्पन्न होता है जो कि प्रथम ईसाई रोमन सम्राट कॉन्स्टैनटाइन द्वारा संभवतः जारी किया गया था, तो उन राजाओं को खुशी हुई क्योंकि मानवातावादी विद्वान यह दर्शाने में सफल रहे कि कॉन्स्टैनटाइन का वह दस्तावेज़ असली नहीं बल्कि परिवर्ती काल में जालसाजी से तैयार किया गया था।

1517 में एक जर्मन युवा भिक्षु मार्टिन लूथर (Martin Luther, 1483-1546) ने कैथलिक चर्च के विरुद्ध अभियान छेड़ा और इसके लिए उसने दलील पेश की कि मनुष्य को ईश्वर से संपर्क साधने के लिए पादरी की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने अपने अनुयायियों को आदेश दिया कि वे ईश्वर में पूर्ण विश्वास रखें क्योंकि केवल उनका विश्वास ही उन्हें एक सम्यक् जीवन की ओर ले जा सकता है और उन्हें स्वर्ग में प्रवेश दिला सकता है। इस आंदोलन को प्रोटैस्टेंट सुधारवाद नाम दिया गया जिसके कारण जर्मनी और स्विटज़रलैंड के चर्च ने पोप तथा कैथलिक चर्च से अपने संबंध समाप्त कर दिए। स्विटज़रलैंड में लूथर के विचारों को उलरिक ज़्विंगली

(Ulrich Zwingli, 1484–1531) और उसके बाद जौं कैल्विन (Jean Calvin, 1509-64) ने काफी लोकप्रिय बनाया। व्यापारियों से समर्थन मिलने के कारण सुधारकों की लोकप्रियता शहरों में अधिक थी, जबकि ग्रामीण इलाकों में कैथलिक चर्च का प्रभाव बरकरार रहा। अन्य जर्मन सुधारक जैसे कि एनाबेपटिस्ट सम्प्रदाय के नेता इनसे कहीं अधिक उग्र-सुधारक थे। उन्होंने मोक्ष (salvation) के विचार को हर तरह के सामाजिक-उत्पीड़न के अंत होने के साथ जोड़ दिया। उनका कहना था कि क्योंकि ईश्वर ने सभी इनसानों को एक जैसा बनाया है इसलिए उनसे कर देने की अपेक्षा नहीं की जानी चाहिए और उन्हें अपना पादरी चुनने का अधिकार होना चाहिए। इसने सामंतवाद द्वारा उत्पीड़ित किसानों को आकर्षित किया।

न्यू टेस्टामेंट बाईबल का वह खंड है जिसमें ईसा मसीह का जीवन-चरित्र, धर्मोपदेश और प्रारंभिक अनुयायियों का उल्लेख है।

1506 में अंग्रेज़ी भाषा में बाईबल का अनुवाद करने वाले, लूथरवादी अंग्रेज़, विलियम टिंडेल (William Tyndale, 1494-1536) ने प्रोटैस्टेंटवाद का इस तरह समर्थन किया:

"इस बात से सब लोग सहमत होंगे कि वे आपको धर्मग्रंथ के ज्ञान से दूर रखने के लिए यह चाहते थे कि धर्मग्रंथ के अनुवाद आपकी मातृभाषा में उपलब्ध न हो सकें जिससे दुनिया अंधकार में ही रहे और वे [पुरोहित वर्ग] लोगों के अंत:करण (conscience) में बने रहें जिससे उनके द्वारा बनाए व्यर्थ के अंधविश्वास और झूठे धर्मसिद्धांत चलते रहें; जिसके रहते उनकी ऊँची आकांक्षाएँ और अतृप्त लोलुपता पूरी हो सके। इस तरह वे राजा, सम्राट और यहाँ तक कि अपने को ईश्वर से भी ऊँचा बना सके... जिस बात ने मुझे मुख्य रूप से *न्यू टेस्टामेंट* का अनुवाद करने की प्रेरणा दी। मुझे अपने अनुभवों से ज्ञात हुआ कि सामान्य लोगों को किसी भी सच्चाई की तब तक जानकारी नहीं हो सकती जब तक उनके पास अपने धर्मग्रंथ के मातृभाषा में अनुवाद उपलब्ध न हों। इन अनुवादों से ही वे धर्मग्रंथ की परिपाटी, क्रम और अर्थ समझ सकेंगे।

लूथर ने आमूल परिवर्तनवाद (Radicalism) का समर्थन नहीं किया। उन्होंने आह्वान किया कि जर्मन शासक समकालीन किसान विद्रोह का दमन करें। ऐसा इन शासकों ने 1525 में किया। पर इसके बावजूद आमूल परिवर्तनवाद बना रहा। आमूल परिवर्तनवादी फ्रांस में प्रोटैस्टेंटों के विरोध से मिल गए जिन्होंने कैथलिक शासकों के अत्याचार के कारण यह दावा करना शुरू कर दिया था कि जनता को अत्याचारी शासक को अपदस्थ करने का अधिकार है और वे उसके स्थान पर अपने पसंद के व्यक्ति को शासक बना सकते हैं। अंतत: यूरोप के अनेक क्षेत्रों की तरह फ्रांस में भी कैथलिक चर्च ने प्रोटैस्टेंट लोगों को अपनी पसंद के अनुसार उपासना करने की छूट दी। इंग्लैंड के शासकों ने पोप से अपने संबंध तोड़ दिए। इसके उपरांत राजा/रानी इंग्लैंड के चर्च के प्रमुख बन गए।

कैथलिक चर्च स्वयं भी इन विचारधाराओं के प्रभाव से अछूता नहीं रह सका और उसने अनेक आंतरिक सुधार करने प्रारंभ कर दिए। स्पेन और इटली में पादरियों ने सादा जीवन और निर्धनों की सेवा पर जोर दिया। स्पेन में, प्रोटैस्टेंट लोगों से संघर्ष करने के लिए इग्नेशियस लोयोला (Ignatius Loyala) ने 1540 में 'सोसाइटी ऑफ जीसस' नामक संस्था की स्थापना की। उनके अनुयायी जेसुइट कहलाते थे और उनका ध्येय निर्धनों की सेवा करना और दूसरी संस्कृतियों के बारे में अपने ज्ञान को ज्यादा व्यापक बनाना था।

क्रियाकलाप 4

वे कौन से मुद्दे थे जिनको लेकर प्रोटैस्टेंट धर्म के अनुयायी कैथलिक चर्च की आलोचना करते थे?

सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियाँ	
1516	टॉमस मोर की *यूटोपिया* (Utopia) का प्रकाशन
1517	मॉर्टिन लूथर द्वारा *नाइन्टी फाईव थिसेज़* की रचना
1522	लूथर द्वारा बाईबल का जर्मन में अनुवाद
1525	जर्मनी में किसान विद्रोह
1543	एन्ड्रीयास वेसेलियस द्वारा *ऑन ऐनॉटमी* ग्रंथ की रचना
1559	इंग्लैंड में आँग्ल-चर्च की स्थापना जिसके प्रमुख राजा/रानी थे
1569	गेरहार्डस मरकेटर (Gerhardus Mercator) ने पृथ्वी का पहला बेलनाकार मानचित्र (Cylindrical Map) बनाया
1582	पोप ग्रैगरी XIII के द्वारा ग्रैगोरियन (Gregorian) कैलेंडर का प्रचलन
1628	विलियम हार्वे (William Harvey) ने हृदय को रुधिर-परिसंचरण (Blood circutaion) से जोड़ा
1673	पेरिस में 'अकादमी ऑफ साइंसेज़' की स्थापना
1687	आइज़क न्यूटन के *प्रिन्सिपिया मैथेमेटिका* (Principia Mathematica) का प्रकाशन

कोपरनिकसीय क्रांति

खगोलीय का अर्थ दैवी या स्वर्गीय है जबकि पार्थिव में दुनियावी गुण अंतर्निहित है।

ईसाइयों की यह धारणा थी कि मनुष्य पापी है इस पर वैज्ञानिकों ने पूर्णतया अलग दृष्टिकोण से आपत्ति की। यूरोपीय विज्ञान के क्षेत्र में एक युगांतरकारी परिवर्तन मॉर्टिन लूथर के समकालीन कोपरनिकस (1473-1543) के काम से आया। ईसाइयों का यह विश्वास था कि पृथ्वी पापों से भरी हुई है और पापों की अधिकता के कारण वह स्थिर है। पृथ्वी, ब्रह्मांड (universe) के बीच में स्थिर है जिसके चारों ओर खगोलीय गृह (celestial planets) घूम रहे हैं।

कोपरनिकस का आत्म-चित्र।

कोपरनिकस ने यह घोषणा की कि पृथ्वी समेत सारे ग्रह सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करते हैं। कोपरनिकस एक निष्ठावान ईसाई थे और वह इस बात से भयभीत थे कि उनकी इस नयी खोज से परंपरावादी ईसाई धर्माधिकारियों में घोर-प्रतिक्रिया उत्पन्न हो सकती है। यही कारण था कि वह अपनी पाण्डुलिपि *दि रिवल्यूशनिबस* (De revolutionibus-परिभ्रमण) को प्रकाशित नहीं कराना चाहते थे। जब वह अपनी मृत्यु-शैया पर पड़े थे तब उन्होंने यह पाण्डुलिपि अपने अनुयायी जोशिम रिटिकस (Joachim Rheticus) को सौंप दी। उनके इन विचारों को ग्रहण करने में लोगों को थोड़ा समय लगा। काफी समय बाद यानि आधी शताब्दी से अधिक समय बीतने पर खगोलशास्त्री जोहानेस कैप्लर (Johannes Kepler, 1571-1630) तथा गैलिलियो गैलिली (Galileo Galilei, 1564-1642) ने अपने लेखों द्वारा 'स्वर्ग' और 'पृथ्वी' के अंतर को समाप्त कर दिया। कैप्लर ने अपने ग्रंथ *कॉस्मोग्राफ़िकल मिस्ट्री* (Cosmographical Mystery-खगोलीय रहस्य) में कोपरनिकस

© NCERT not to be republished

के सूर्य-केंद्रित सौरमंडलीय सिद्धांत को लोकप्रिय बनाया जिससे यह सिद्ध हुआ कि सारे ग्रह सूर्य के चारों ओर वृत्ताकार (circles) रूप में नहीं बल्कि दीर्घ वृत्ताकार (ellipses) मार्ग पर परिक्रमा करते हैं। गैलिलियो ने अपने ग्रंथ *दि मोशन* (The Motion, गति) में गतिशील विश्व के सिद्धांतों की पुष्टि की। विज्ञान के जगत में इस क्रांति ने न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत के साथ अपनी पराकाष्ठा की ऊँचाई को छू लिया।

ब्रह्मांड का अध्ययन

गैलिलियो ने एक बार टिप्पणी की कि बाईबल जिस स्वर्ग का मार्ग आलोकित करता है वह स्वर्ग किस प्रकार चलता है, उसके बारे में कुछ नहीं बताता। इन विचारकों ने हमें बताया कि ज्ञान विश्वास से हटकर अवलोकन एवं प्रयोगों पर आधारित है। जैसे-जैसे इन वैज्ञानिकों ने ज्ञान की खोज का रास्ता दिखाया वैसे-वैसे भौतिकी, रसायन शास्त्र और जीव विज्ञान के क्षेत्र में अनेक प्रयोग और अन्वेषण कार्य बहुत तेज़ी से पनपने लगे। इतिहासकारों ने मनुष्य और प्रकृति के ज्ञान के इस नए दृष्टिकोण को वैज्ञानिक क्रांति का नाम दिया।

परिणामस्वरूप संदेहवादियों और नास्तिकों के मन में सारी सृष्टि की रचना के स्रोत के रूप में प्रकृति ईश्वर का स्थान लेने लगी। यहाँ तक कि वे लोग जिन्होंने ईश्वर में अपने विश्वास को बरकरार रखा वे भी एक दूरस्थ ईश्वर की बात करने लगे जो भौतिक दुनिया में जीवन को प्रत्यक्ष रूप से नियंत्रित नहीं करता था। इस प्रकार के विचारों को वैज्ञानिक संस्थाओं के माध्यम से लोकप्रिय बनाया गया जिससे सार्वजनिक क्षेत्र में एक नयी वैज्ञानिक संस्कृति की स्थापना हुई। 1670 में बनी पेरिस अकादमी और 1662 में वास्तविक ज्ञान के प्रसार के लिए लंदन में गठित रॉयल सोसाइटी ने लोगों की जानकारी के लिए व्याख्यानों का आयोजन किया और सार्वजनिक प्रदर्शन के लिए प्रयोग करवाए।

चौदहवीं सदी में क्या यूरोप में 'पुनर्जागरण' हुआ था?

अब हम 'पुनर्जागरण' की अवधारणा पर पुनर्विचार करें। क्या हम यह कह सकते हैं कि इस काल में अतीत से साफ विच्छेद हुआ और यूनानी और रोमन परंपराओं से जुड़े विचारों का पुनर्जन्म हुआ? क्या इससे पहले का काल (बारहवीं और तेरहवीं शताब्दियाँ) अंधकार का समय था?

इंग्लैंड के पीटर बर्क (Peter Burke) जैसे हाल ही के लेखकों का यह सुझाव है कि बर्कहार्ट के ये विचार अतिशयोक्तिपूर्ण हैं। बर्कहार्ट इस काल और इससे पहले के कालों के फ़र्कों को कुछ बढ़ा-चढ़ा कर पेश कर रहे थे। ऐसा करने में उन्होंने पुनर्जागरण शब्द का प्रयोग किया। इस शब्द में यह अंतर्निहित है कि यूनानी और रोमन सभ्यताओं का चौदहवीं शताब्दी में पुनर्जन्म हुआ और समकालीन विद्वानों और कलाकारों में ईसाई विश्वदृष्टि की जगह पूर्व ईसाई विश्वदृष्टि का प्रचार-प्रसार किया। दोनों ही तर्क अतिशयोक्तिपूर्ण थे। पिछली शताब्दियों के विद्वान यूनानी और रोमन संस्कृतियों से परिचित थे और लोगों के जीवन में धर्म का महत्त्वपूर्ण स्थान था।

यह कहना कि पुनर्जागरण, गतिशीलता और कलात्मक सृजनशीलता का काल था और इसके विपरीत, मध्यकाल अंधकारमय काल था जिसमें किसी प्रकार का विकास नहीं हुआ था, ज़रूरत से ज्यादा सरलीकरण है। इटली में पुनर्जागरण से जुड़े अनेक तत्व बारहवीं और तेरहवीं शताब्दी में पाए जा सकते हैं। कुछ इतिहासकारों ने इसका उल्लेख किया है कि नौवीं शताब्दी में फ्रांस में इसी प्रकार के साहित्यिक और कलात्मक रचनाओं के विचार पनपे।

यूरोप में इस समय आए सांस्कृतिक बदलाव में रोम और यूनान की 'क्लासिकी' सभ्यता का ही केवल हाथ नहीं था। रोमन संस्कृति के पुरातात्त्विक और साहित्यिक पुनरुद्धार ने भी इस सभ्यता के प्रति बहुत अधिक प्रशंसा के भाव उभारे। लेकिन एशिया में प्रौद्योगिकी और कार्य-कुशलता यूनानी और रोमन लोगों की तुलना में काफी विकसित थी। विश्व का बहुत बड़ा क्षेत्र आपस में सम्बद्ध हो चुका था और नौसंचालन (navigation) की नयी तकनीकों (विषय 8 में देखिए) ने लोगों के लिए पहले की तुलना में दूरदराज़ के क्षेत्रों की जलयात्रा को संभव बनाया। इस्लाम के विस्तार और मंगोलों की विजयों ने एशिया एवं उत्तरी अफ्रीका को यूरोप के साथ राजनीतिक दृष्टि से ही नहीं बल्कि व्यापार और कार्य-कुशलता के ज्ञान को सीखने के लिए आपस में जोड़ दिया। यूरोपियों ने न केवल यूनानियों और रोमवासियों से सीखा बल्कि भारत, अरब, ईरान, मध्य एशिया और चीन से भी ज्ञान प्राप्त किया। बहुत लंबे समय तक इन ऋणों को स्वीकार नहीं किया गया क्योंकि जब इस काल का इतिहास लिखने की प्रक्रिया का प्रारंभ हुआ तब इतिहासकारों ने इसके यूरोप-केंद्रित दृष्टिकोण को सामने रखा।

इस काल में जो महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए उनमें धीरे-धीरे 'निजी' और 'सार्वजनिक' दो अलग-अलग क्षेत्र बनने लगे। जीवन के सार्वजनिक क्षेत्र का तात्पर्य सरकार के कार्यक्षेत्र और औपचारिक धर्म से संबंधित था और निजी क्षेत्र में परिवार और व्यक्ति का निजी धर्म था। व्यक्ति की दो भूमिकाएँ थीं—निजी और सार्वजनिक। वह न केवल तीन वर्गों (three orders) में से किसी एक वर्ग का सदस्य ही था बल्कि अपने आप में एक स्वतंत्र व्यक्ति था। एक कलाकार किसी संघ या गिल्ड (guild) का सदस्य मात्र ही नहीं होता था बल्कि वह अपने हुनर के लिए भी जाना जाता था। अठारहवीं शताब्दी में व्यक्ति की इस पहचान को राजनीतिक रूप में अभिव्यक्त किया गया, इस विश्वास के साथ कि प्रत्येक व्यक्ति के एकसमान राजनीतिक अधिकार हैं।

इस काल की एक अन्य महत्त्वपूर्ण विशेषता यह थी कि भाषा के आधार पर यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों ने अपनी पहचान बनानी शुरू की। पहले, आंशिक रूप से रोमन साम्राज्य द्वारा और बाद में लातिनी भाषा और ईसाई धर्म द्वारा जुड़ा यूरोप अब अलग-अलग राज्यों में बँटने लगा। इन राज्यों के आंतरिक जुड़ाव का कारण समान भाषा का होना था।

अभ्यास

संक्षेप में उत्तर दीजिए

1. चौदहवीं और पंद्रहवीं शताब्दियों में यूनानी और रोमन संस्कृति के किन तत्वों को पुनर्जीवित किया गया?
2. इस काल की इटली की वास्तुकला और इस्लामी वास्तुकला की विशिष्टताओं की तुलना कीजिए?
3. मानवतावादी विचारों का अनुभव सबसे पहले इतालवी शहरों में क्यों हुआ?
4. वेनिस और समकालीन फ्रांस में 'अच्छी सरकार' के विचारों की तुलना कीजिए।

संक्षेप में निबंध लिखिए

5. मानवतावादी विचारों के क्या अभिलक्षण थे?
6. सत्रहवीं शताब्दी के यूरोपियों को विश्व किस प्रकार भिन्न लगा? उसका एक सुचिंतित विवरण दीजिए।

© NCERT not to be republished

विषय

8

संस्कृतियों का टकराव

11091CH08

इस अध्याय में पंद्रहवीं से सत्रहवीं शताब्दियों के दौरान यूरोपवासियों और उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका के मूल निवासियों के बीच हुए संघर्ष के कुछ पहलुओं पर विचार किया जाएगा। इस अवधि में यूरोपवासियों ने ऐसे देशों के व्यापारिक भागों की खोज के लिए अज्ञात महासागरों में साहसपूर्ण अभियान किये जहाँ से वे चाँदी और मसाले प्राप्त कर सकते थे। इस काम को सर्वप्रथम स्पेन और पुर्तगाल के निवासियों ने शुरू किया। उन्होंने पोप से उन प्रदेशों पर शासन करने का अनन्य अधिकार प्राप्त कर लिया जिन्हें वे भविष्य में खोजेंगे। स्पेन के शासकों के तत्त्वावधान में इटली निवासी क्रिस्टोफर कोलंबस 1492 में पूर्व की ओर यात्रा करते-करते, जिन प्रदेशों में पहुँचा उन्हें उसने 'इंडीज' (भारत और भारत के पूर्व में स्थित देश, जिनके बारे में उसने मार्को पोलो (Marco Polo) के यात्रा-वृत्तांतों में पढ़ रखा था) समझा।

बाद में हुई खोजों से पता चला कि 'नयी दुनिया' के 'इंडियन' वास्तव में भारतीय नहीं बल्कि अलग संस्कृतियों के लोग थे और वे जहाँ रहते थे वह एशिया का हिस्सा नहीं था। उस समय उत्तरी व दक्षिणी अमरीका में दो तरह की संस्कृतियों के लोग रहते थे–एक ओर कैरीबियन क्षेत्र तथा ब्राज़ील में छोटी निर्वाह अर्थव्यवस्थाएँ (subsistence economy) थीं। दूसरी ओर विकसित खेती और खनन पर आधारित शक्तिशाली राजतांत्रिक व्यवस्थाएँ थीं। मैक्सिको और मध्य अमरीका के एज़्टेक और माया समुदाय और पेरू के इंका समुदाय के समान यहाँ भव्य वास्तुकला थी।

दक्षिण अमरीका की खोज और बाद में बाहरी लोगों का वहाँ बस जाना वहाँ के मूल निवासियों और उनकी संस्कृतियों के लिए विनाशकारी साबित हुआ। इसी से दास-व्यापार की शुरुआत हो गई जिसके अंतर्गत यूरोपवासी अफ़्रीका से गुलाम पकड़कर या खरीदकर उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका की खानों तथा बागानों में काम करने के लिए बेचने लगे।

अमरीका के लोगों पर यूरोपवासियों की विजय का एक दुष्परिणाम यह हुआ कि अमरीकी लोगों की पांडुलिपियों और स्मारकों को निर्ममतापूर्वक नष्ट कर दिया गया। इसके बाद उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दौर में जाकर ही मानवविज्ञानियों द्वारा इन संस्कृतियों का अध्ययन प्रारंभ किया गया और उसके बाद पुरातत्त्वविदों ने इन सभ्यताओं के भग्नावशेषों को खोज निकाला। सन् 1911 में इंकाई शहर माचू-पिच्चू (Machu Picchu)की फिर से खोज की गई। हाल में, हवाई जहाज़ से लिए गए चित्रों से पता चला है कि वहाँ और भी कई शहर थे जो अब जंगलों से ढके हुए हैं।

हम अमरीका के मूल निवासियों तथा यूरोपवासियों के बीच हुई मुठभेड़ों के बारे में मूलनिवासियों के पक्ष को तो अधिक नहीं जानते पर यूरोपीय पक्ष को विस्तारपूर्वक जानते हैं। जो यूरोपवासी अमरीका की यात्राओं पर गए वे अपने साथ रोजनामचा (log-book) और डायरियाँ रखते थे जिसमें वे अपनी यात्राओं का दैनिक विवरण लिखते थे। हमें सरकारी अधिकारियों, एवं जेसुइट धर्मप्रचारकों के विवरणों से भी इसके बारे में जानकारी मिलती है। लेकिन यूरोपवासियों ने अपनी अमरीका की खोज के बारे में जो कुछ विवरण दिया है और वहाँ के देशों के जो इतिहास लिखे हैं उनमें यूरोपीय बस्तियों के बारे में ही अधिक और स्थानीय लोगों के बारे में बहुत कम या न के बराबर ही लिखा गया है।

© NCERT not to be republished

अनेक जन-समुदाय उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका और निकटवर्ती द्वीपसमूहों में हजारों वर्षों से रहते आए थे और एशिया तथा दक्षिणी सागर के द्वीपों (South Sea Islands) से जाकर लोग वहाँ बसते रहे थे। दक्षिणी अमरीका घने जंगलों और पहाड़ों से ढका हुआ था (आज भी उसके अनेक भाग जंगलों से ढके हैं) और दुनिया की सबसे बड़ी नदी अमेज़न (Amazon) मीलों तक वहाँ के घने जंगली इलाकों से होकर बहती है। मध्य अमरीका में, मैक्सिको में समुद्रतट के आसपास के क्षेत्र और मैदानी इलाके घने बसे हुए थे, जबकि अन्यत्र सघन वनों वाले क्षेत्रों में गाँव दूर-दूर स्थित थे।

कैरीबियन द्वीपसमूह और ब्राज़ील के जन-समुदाय

अरावाकी लुकायो (Arawakian Lucayos) समुदाय के लोग कैरीबियन सागर में स्थित छोटे-छोटे सैकड़ों द्वीपसमूहों (जिन्हें आज बहामा (Bahamas) कहा जाता है) और बृहत्तर ऐंटिलीज (Greater Antilles) में रहते थे। कैरिब (Caribs) नाम के एक खूंखार कबीले ने उन्हें लघु ऐंटिलीज (Lesser Antilles) प्रदेश से खदेड़ दिया था। इनके विपरीत, अरावाक लोग ऐसे थे, जो लड़ने की बजाय बातचीत से झगड़ा निपटाना अधिक पसंद करते थे। वे कुशल नौका-निर्माता थे (वे पेड़ के खोखले तनों से अपनी डोंगियाँ बनाते थे) और डोंगियों में बैठकर खुले समुद्र में यात्रा करते थे। वे खेती, शिकार और मछली पकड़कर अपना जीवन-निर्वाह करते थे। खेती में वे मक्का, मीठे आलू और अन्य किस्म के कंद-मूल और कसावा उगाते थे।

अरावाक संस्कृति के लोगों का मुख्य सांस्कृतिक मूल्याधार यह था कि वे सब एक साथ मिलकर खाद्य उत्पादन करें और समुदाय के प्रत्येक सदस्य को भोजन प्राप्त हो। वे अपने वंश के बुजुर्गों के अधीन संगठित रहते थे। उनमें बहुविवाह प्रथा प्रचलित थी। वे जीववादी (Animists) थे। अन्य अनेक समाजों की तरह अरावाक समाज में भी शमन लोग (Shamans) कष्ट निवारकों और इहलोक तथा परलोक के बीच मध्यस्थों के रूप में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते थे।

जीववादियों का विश्वास है कि आज के वैज्ञानिक जिन वस्तुओं को निर्जीव मानते हैं उनमें भी जीवन या आत्मा हो सकती है।

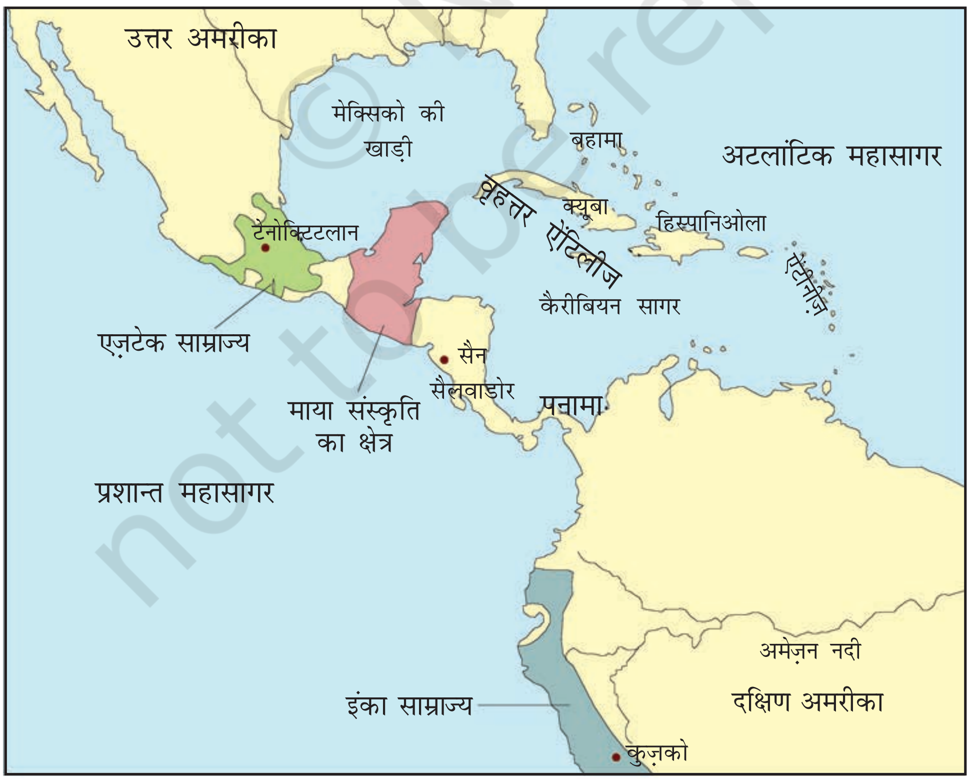

मानचित्र 1: मध्य अमरीका और कैरीबियन द्वीपसमूह।

© NCERT not to be republished

क्रियाकलाप 1

अरावाकों और स्पेनवासियों के बीच पाए जाने वाले अंतरों को स्पष्ट कीजिए। इनमें से कौन से अंतरों को आप सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण मानते हैं और क्यों?

अरावाक लोग सोने के गहने पहनते थे पर यूरोपवासियों की तरह सोने को उतना महत्त्व नहीं देते थे। उन्हें अगर कोई यूरोपवासी सोने के बदले काँच के मनके दे देता था तो वे खुश होते थे क्योंकि उन्हें काँच का मनका ज़्यादा सुंदर दिखाई देता था। उनमें बुनाई की कला बहुत विकसित थी–हैमक (Hammock) यानी झूले का इस्तेमाल उनकी एक विशेषता थी जिसे यूरोपीय लोगों ने बहुत पसंद किया।

अरावाकों का व्यवहार बहुत उदारतापूर्ण होता था और वे सोने की तलाश में स्पेनी लोगों का साथ देने के लिए सदा तैयार रहते थे। लेकिन आगे चलकर जब स्पेन की नीति क्रूरतापूर्ण हो गई तब उन्होंने उसका विरोध किया परन्तु उन्हें उसके विनाशकारी परिणाम भुगतने पड़े। स्पेनी लोगों के संपर्क में आने के बाद कोई पच्चीस साल के भीतर ही अरावाकों और उनकी जीवन शैली का लगभग सत्यानाश ही हो गया।

'तुपिनांबा' (Tupinamba) कहे जाने वाले लोग दक्षिणी अमरीका के पूर्वी समुद्र तट पर और ब्राज़ील नामक पेड़ों के जंगलों में बसे हुए गाँवों में रहते थे (ब्राज़ील पेड़ के नाम पर ही इस प्रदेश का नाम ब्राज़ील पड़ा)। वे खेती के लिए घने जंगलों का सफाया नहीं कर सके क्योंकि पेड़ काटने का कुल्हाड़ा बनाने के लिए उनके पास लोहा नहीं था। लेकिन उन्हें बहुतायत से फल, सब्जियाँ और मछलियाँ मिल जाती थीं जिससे उन्हें खेती पर निर्भर नहीं होना पड़ा। जो यूरोपवासी उनसे मिले, वे उनकी खुशहाल आज़ादी को देखकर उनसे ईर्ष्या करने लगे, क्योंकि वहाँ न कोई राजा था, न सेना और न ही कोई चर्च था जो उनकी ज़िंदगी को नियंत्रित कर सके।

मध्य और दक्षिणी अमरीका की राज्य-व्यवस्थाएँ

कैरीबियन और ब्राज़ील क्षेत्रों के विपरीत, मध्य अमरीका में कुछ अत्यंत सुगठित राज्य थे। वहाँ मक्के की उपज उनकी आवश्यकता से अधिक होती थी जो एज़्टेक, माया और इंका जनसमुदायों की शहरीकृत सभ्यताओं का आधार बनी। इन शहरों की भव्य वास्तुकला के अवशेष आज भी आगंतुकों को मुग्ध कर देते हैं।

एज़्टेक जन

बारहवीं शताब्दी में एज़्टेक लोग उत्तर से आकर मेक्सिको की मध्यवर्ती घाटी में बस गए थे। (इस घाटी का यह नाम उनके मेक्सिली (mexitli) नामक देवता के नाम पर पड़ा था।) उन्होंने अनेक जनजातियों को परास्त करके अपने साम्राज्य का विस्तार कर लिया और उन पराजित लोगों से नज़राना वसूल करने लगे।

बॉल कोर्ट मारकर पर उत्कीर्ण तिथियाँ, माया संस्कृति, काईपास, छठी शताब्दी।

एज़्टेक समाज श्रेणीबद्ध था। अभिजात वर्ग में वे लोग शामिल थे जो उच्च कुलोत्पन्न, पुरोहित थे अथवा जिन्हें बाद में यह प्रतिष्ठा प्रदान कर दी गई थी। पुश्तैनी अभिजातों की संख्या बहुत कम थी और वे सरकार, सेना तथा पौरोहित्य कर्म में ऊँचे पदों पर आसीन थे। अभिजात लोग अपने में से एक सर्वोच्च नेता चुनते थे जो आजीवन शासक बना रहता था। राजा पृथ्वी पर सूर्य देवता का प्रतिनिधि माना जाता था। योद्धा, पुरोहित और अभिजात वर्गों को सबसे अधिक सम्मान दिया जाता था; लेकिन व्यापारियों को भी अनेक विशेषाधिकार प्राप्त थे और उन्हें अक्सर सरकारी राजदूतों और गुप्तचरों के रूप में सेवा करने का मौका दिया जाता था। प्रतिभाशाली शिल्पियों, चिकित्सकों और विशिष्ट अध्यापकों को भी आदर की दृष्टि से देखा जाता था।

चूँकि एज़्टेक लोगों के पास भूमि की कमी थी इसलिए उन्होंने भूमि उद्धार (reclamation, जल में से जमीन लेकर इस कमी को पूरा करना) किया। सरकंडे की बहुत बड़ी चटाइयाँ बुनकर और उन्हें मिट्टी तथा पत्तों से ढँककर उन्होंने मैक्सिको झील में कृत्रिम टापू बनाये, जिन्हें *चिनाम्पा* (Chinampas) कहते थे। इन अत्यंत उपजाऊ द्वीपों के बीच नहरें बनाई गईं जिन पर 1325 में एज़्टेक राजधानी टेनोक्टिटलान (Tenochtitlan) का निर्माण किया गया, जिसके राजमहल और पिरामिड झील के बीच में खड़े हुए बड़े अद्भुत लगते थे। चूंकि एज़्टेक शासक अक्सर युद्ध में लगे रहते थे, इसलिए उनके सर्वाधिक भव्य मंदिर भी युद्ध के देवताओं और सूर्य भगवान को समर्पित थे।

भूमि उद्धार का अभिप्राय बंजर भूमि को आवासीय या कृषि योग्य भूमि में परिवर्तन से है। कई बार, भूमि उद्धार विभिन्न जलस्रोतों से जमीन लेकर भी किया जाता है।

साम्राज्य ग्रामीण आधार पर टिका हुआ था। लोग मक्का, फलियाँ, कुम्हड़ा, कद्दू, कसावा, आलू और अन्य फसलें उगाते थे। भूमि का स्वामित्व किसी व्यक्ति विशेष का न होकर कुल (Clan) के पास होता जो सार्वजनिक निर्माण कार्यों को सामूहिक रूप से पूरा करवाता था। यूरोपीय कृषिदासों जैसे खेतिहर लोग अभिजातों की ज़मीनों से जुड़े रहते थे और फसल में से कुछ हिस्से के बदले, उनके खेत जोतते थे, गरीब लोग कभी-कभी अपने बच्चों को भी गुलामों के रूप में बेच देते थे; लेकिन यह बिक्री आमतौर पर कुछ वर्षों के लिए ही की जाती थी और गुलाम अपनी आजादी फिर से खरीद सकते थे।

एज़्टेक लोग इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखते थे कि उनके सभी बच्चे स्कूल अवश्य जाएँ। कुलीन वर्ग के बच्चे *कालमेकाक* (Calmecac) में भर्ती किए जाते थे जहाँ उन्हें सेना अधिकारी और धार्मिक नेता बनने के लिए प्रशिक्षित किया जाता था। बाकी सारे बच्चे पड़ोस के तेपोकल्ली स्कूल (Tepochcalli) में पढ़ते थे जहाँ उन्हें इतिहास, पुराण-मिथकों, धर्म और उत्सवी गीतों की शिक्षा दी जाती थी। लड़कों को सैन्य प्रशिक्षण, खेती और व्यापार करना सिखाया जाता था और लड़कियों को घरेलू काम-धंधों में कुशलता प्रदान की जाती थी।

सोलहवीं शताब्दी के शुरू के सालों में, एज़्टेक साम्राज्य में अस्थिरता के लक्षण दिखाई देने लगे। यह स्थिति हाल ही में जीते गए लोगों में उत्पन्न असंतोष के कारण पैदा हुई, जो केंद्रीय नियंत्रण से मुक्त होने के अवसर खोजने लगे।

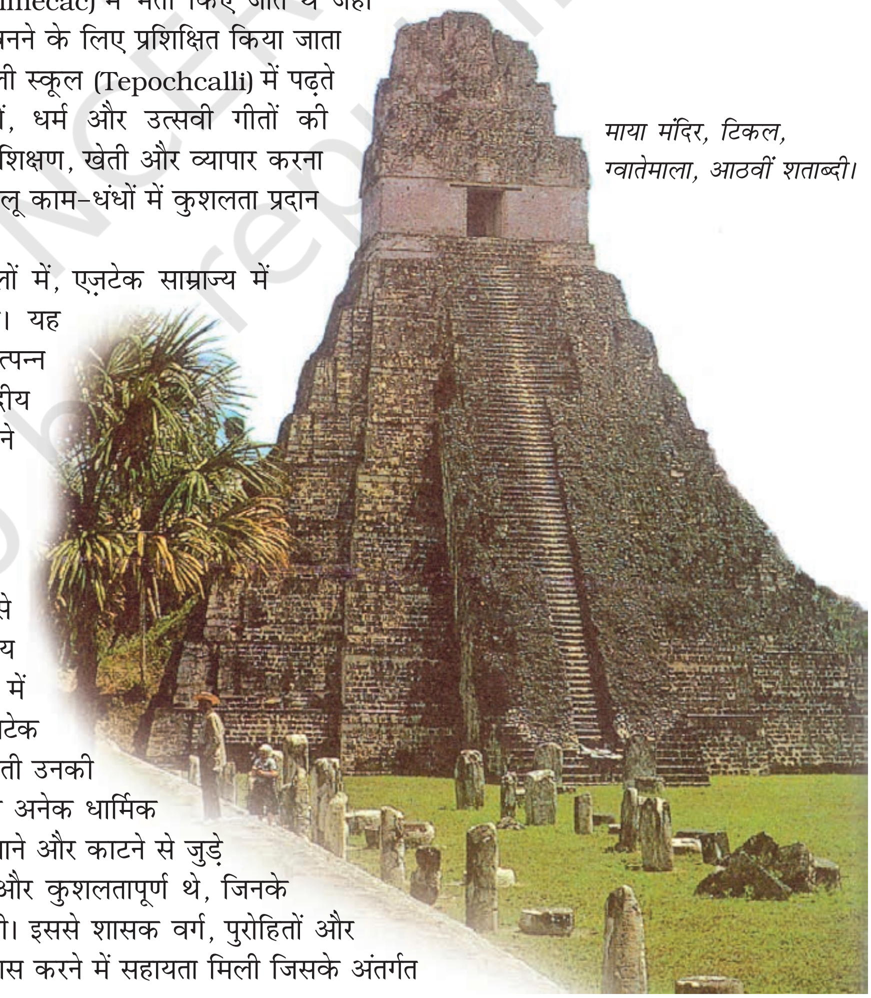

माया मंदिर, टिकल, ग्वातेमाला, आठवीं शताब्दी।

माया लोग

मेक्सिको की माया संस्कृति ने ग्याहरवीं से चौदहवीं शताब्दियों के दौरान उल्लेखनीय उन्नति की, लेकिन सोलहवीं शताब्दी में माया लोगों के पास राजनीतिक शक्ति एज़्टेक लोगों की अपेक्षा कम थी। मक्के की खेती उनकी सभ्यता का मुख्य आधार थी और उनके अनेक धार्मिक क्रियाकलाप एवं उत्सव मक्का बोने, उगाने और काटने से जुड़े होते थे। खेती करने के तरीके उन्नत और कुशलतापूर्ण थे, जिनके कारण खेतों में बेशुमार पैदावार होती थी। इससे शासक वर्ग, पुरोहितों और प्रधानों को एक उन्नत संस्कृति का विकास करने में सहायता मिली जिसके अंतर्गत

© NCERT not to be republished

वास्तुकला, खगोल विज्ञान और गणित जैसे विषयों की अभिव्यक्ति हुई। माया लोगों के पास अपनी एक चित्रात्मक लिपि थी। लेकिन इस लिपि को अभी तक पूरी तरह नहीं पढ़ा जा सका है।

पेरू के इंका लोग

दक्षिणी अमरीकी देशज संस्कृतियों में से सबसे बड़ी पेरू में क्वेचुआ (Quechuas) या इंका (Inca) लोगों की संस्कृति थी। बारहवीं शताब्दी में प्रथम इंका शासक मैंको कपाक (Manco Capac) ने कुज़को (Cuzco) में अपनी राजधानी स्थापित की थी। नौवें इंका शासक के काल में राज्य का विस्तार शुरू हुआ और अंततः इंका साम्राज्य इक्वेडोर से चिली तक 3000 मील में फैल गया।

साम्राज्य अत्यंत केंद्रीकृत था। राजा में ही संपूर्ण शक्ति निहित थी और वह ही सत्ता का उच्चतम स्रोत था। नए जीते गए कबीलों और जनजातियों को पूरी तरह अपने भीतर मिला लिया गया। प्रत्येक प्रजाजन को प्रशासन की भाषा क्वेचुआ (Quechua) बोलनी पड़ती थी। प्रत्येक कबीला स्वतंत्र रूप से वरिष्ठों की एक सभा द्वारा शासित होता था, लेकिन पूरा कबीला अपने आप में शासक के प्रति निष्ठावान था। साथ ही साथ स्थानीय शासकों को उनके सैनिक सहयोग के लिए पुरस्कृत किया जाता था। इस प्रकार, एज़टेक साम्राज्य की ही तरह इंका साम्राज्य इंकाइयों के नियंत्रण वाले एक संघ के समान था। आबादी के निश्चित आँकड़े तो उपलब्ध नहीं हैं लेकिन ऐसा लगता है कि 10 लाख से ज़्यादा लोग इस साम्राज्य में थे।

मानचित्र 2: दक्षिणी अमरीका।

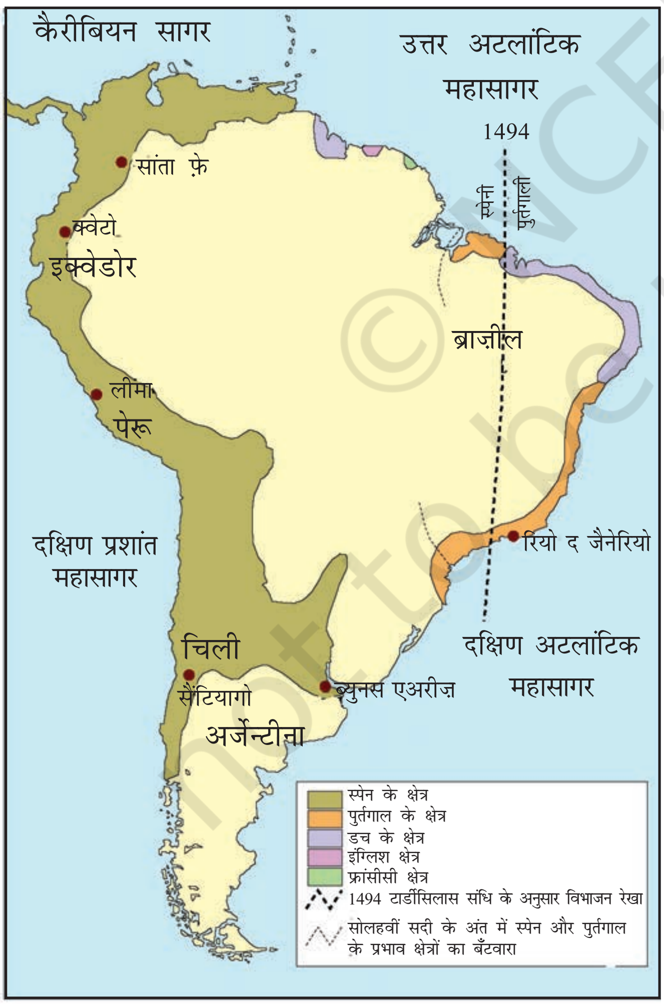

एज़टेक लोगों की तरह इंका भी उच्चकोटि के भवन निर्माता थे। उन्होंने पहाड़ों के बीच इक्वेडोर से चिली तक अनेक सड़कें बनाई थीं। उनके किले शिलापट्टियों को इतनी बारीकी से तराश कर बनाए जाते थे कि उन्हें जोड़ने के लिए गारे जैसी सामग्री की जरूरत नहीं होती थी। वे निकटवर्ती इलाकों में टूटकर गिरी हुई चट्टानों से पत्थरों को तराशने और ले जाने के लिए श्रम-प्रधान प्रौद्योगिकी का उपयोग करते थे जिसमें अपेक्षाकृत अधिक संख्या में मज़दूरों की ज़रूरत पड़ती थी। राज मिस्त्री खंडों को सुंदर रूप देने के लिए शल्क पद्धति (फ्लेकिंग) का प्रयोग करते थे जो प्रभावकारी होने के साथ-साथ सरल होती थी। कई शिलाखंड वजन में 100 मेट्रिक टन से भी अधिक भारी होते थे, लेकिन उनके पास इतने बड़े शिलाखंडों को ढोने के लिए पहियेदार गाड़ियाँ नहीं थीं। यह सब काम मज़दूरों को जुटाकर बड़ी सावधानी से करवाया जाता था।

इंका सभ्यता का आधार कृषि था। उनके यहाँ जमीन खेती के लिए बहुत उपजाऊ नहीं थी इसलिए उन्होंने पहाड़ी इलाकों में सीढ़ीदार खेत बनाए और जल-निकासी तथा सिंचाई की प्रणालियाँ विकसित कीं। हाल ही में यह बताया गया है कि पंद्रहवीं शताब्दी में एंडियाई अधित्यकाओं (ऊँची भूमियों) में खेती आज की तुलना में काफी अधिक परिमाण में की जाती थी। इंका लोग मक्का और आलू उगाते थे और भोजन तथा श्रम के लिए लामा पालते थे।

© NCERT not to be republished

आज भी अनेक सैलानी इंका लोगों के कला-कौशल के नमूनों को देखकर दंग रह जाते हैं। हालाँकि चिली के कवि नेरुदा (Neruda) जैसे भी कुछ लोग हैं, जिन्होंने इस बात पर प्रकाश डाला है कि ऐसे विपरीत वातावरण में खेती, शिल्प, स्थापत्य आदि के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य करने के लिए हज़ारों लोगों को कितने कठोर परिश्रम के लिए बाध्य किया गया होगा।

पर्वत के शिखर पर बसा माचू-पिच्चू नगर: इस पर स्पेनियों का निगाह नहीं पड़ी जिसके कारण यह नष्ट नहीं हो पाया।

"ऐ खेत जोतने वालो, बुनकरो, ऊँचे खतरनाक मचान पर चढ़कर चिनाई करने वाले राजगीरो, ऐंडीज़ के मेहनतकश पनहारो, अपनी कुचली हुई उंगलियों वाले जौहरियो, अपने लगाए पौधों की खुशहाली के लिए चिंतातुर किसानो, मिट्टी में बरबाद हुए कुम्हारो-
ज़रा ज़मीन की गहराइयों से झाँककर मेरी ओर तो देखो;
अपने पुराने दु:ख-दर्दों को मिट्टी में दफनाकर ज़िंदगी का नया प्याला भर लाओ;
तुमने इन खेतों, खलिहानों, खदानों में जो खून बहाया है जरा उसका नमूना तो मुझे दिखलाओ;
जरा बताओ कि : यहाँ मुझ पर चाबुक की मार पड़ी थी क्योंकि मेरा तराशा गया एक हीरा जरा धुँधला रह गया था। अथवा यह धरती अपने अनाज या पत्थर का हिस्सा समय पर नहीं दे सकी थी।"

– पाबलो नेरुड़ा (1904-1973) हाइट्स ऑफ माचू-पिच्चू, 1943 की पंक्तियों का स्वतंत्र अनुवाद।

उनकी बुनाई और मिट्टी के बर्तन बनाने की कला उच्च कोटि की थी। उन्होंने लेखन की किसी प्रणाली का विकास नहीं किया। किंतु उनके पास हिसाब लगाने की एक प्रणाली अवश्य थी– यह थी *क्विपु* (Quipu), यानी डोरियों पर गाँठें लगाकर गणितीय इकाइयों का हिसाब रखना। कुछ विद्वानों का विचार है कि इंका लोग इन धागों में एक किस्म का संकेत (code) बुनते थे।

इंका सम्राज्य का ढाँचा पिरामिडनुमा था जिसका मतलब यह था कि जब एक बार इंका प्रधान पकड़ लिया जाता तो उसके शासन की सारी श्रृंखला तुरंत टूट जाती थी और उस समय भी ऐसा ही हुआ जब स्पेनी सैनिकों ने उनके देश पर आक्रमण करने का निश्चय किया।

एज़टेक तथा इंका संस्कृतियों में कुछ समानताएँ थीं, और वे यूरोपीय संस्कृति से बहुत भिन्न थीं। समाज श्रेणीबद्ध था, लेकिन वहाँ यूरोप की तरह कुछ लोगों के हाथों में संसाधनों का निजी स्वामित्व नहीं था। पुरोहितों और शमनों को समाज में ऊँचा स्थान प्राप्त था। यद्यपि भव्य मंदिर बनाए जाते थे, जिनमें परंपरागत रूप से सोने का प्रयोग किया जाता था, लेकिन सोने या चाँदी को अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता था। तत्कालीन यूरोपीय समाज की स्थिति इस मामले में बिलकुल विपरीत थी।

क्रियाकलाप 2

दक्षिणी अमरीका के प्राकृतिक मानचित्र का अवलोकन करें। आपके अनुसार किस हद तक भूगोल ने इंका साम्राज्य के विकास को प्रभावित किया?

यूरोपवासियों की खोज यात्राएँ

दक्षिणी अमरीकी और कैरीबियन लोगों को यूरोपवासियों के अस्तित्व का पता तभी चला जब यूरोपवासी अटलांटिक सागर को जहाजों द्वारा पार करके वहाँ पहुँचे। सन् 1380 में कुतबनुमा यानी दिशासूचक यंत्र का आविष्कार हो चुका था जिससे यात्रियों को खुले समुद्र में दिशाओं की सही जानकारी लेने में सहायता मिल सकती थी, लेकिन उसका इस्तेमाल 15वीं शताब्दी में ही जाकर हो पाया, जब लोगों ने अनजान मुल्कों की ओर दुस्साहसिक समुद्री यात्राएँ कीं। इस समय तक, समुद्री यात्रा पर जाने वाले यूरोपीय जहाज़ों में भी काफी सुधार हो चुका था। बहुत बड़े जहाज़ों

सृष्टिशास्त्र (Cosmography) विश्व का मानचित्र तैयार करने का विज्ञान था। इसमें स्वर्ग और पृथ्वी दोनों का वर्णन किया जाता था लेकिन इसे भूगोल और खगोल से अलग शास्त्र माना जाता था।

का निर्माण होने लगा था, जो विशाल मात्रा में माल की ढुलाई करते थे, साथ ही, आत्मरक्षा के अस्त्र-शस्त्रों से भी लैस होते थे, ताकि शत्रुओं के आक्रमण का मुकाबला किया जा सके। पूरी पंद्रहवीं सदी के दौरान यात्रा-वृत्तांतों और सृष्टि-वर्णन तथा भूगोल की पुस्तकों के प्रसार ने लोगों में व्यापक रुचि उत्पन्न की।

1477 में टॉलेमी की *ज्योग्राफी* नाम की पुस्तक (जो 1300 वर्ष पहले लिखी गई थी) मुद्रित हुई (विषय 7 देखिए) और इसीलिए लोगों द्वारा व्यापक रूप से पढ़ी गई। मिस्रवासी टॉलेमी ने विभिन्न क्षेत्रों की स्थिति को अक्षांश और देशांतर रेखाओं के रूप में व्यवस्थित किया था। इन विवरणों को पढ़ने से यूरोपवासियों को दुनिया के बारे में कुछ जानकारी मिली जिसे उन्होंने तीन महाद्वीपों यानी यूरोप, एशिया और अफ़्रीका में बँटा हुआ समझा। टॉलेमी ने बताया था कि दुनिया गोल (Spherical) है, लेकिन उसने महासागरों की चौड़ाई को काफ़ी कम आँका था। यूरोपवासियों को इस बात का कोई अंदाज़ा नहीं था कि अटलांटिक के दूसरी ओर भूमि पर पहुँचने के लिए उन्हें कितनी दूरी तय करनी होगी। चूँकि वे यह सोचते थे कि यह दूरी बहुत कम होगी इसलिए उनमें से कई बिना सोचे-समझे समुद्रों में उतरने के लिए सदा उतारू रहते थे।

पंद्रहवीं शताब्दी में आईबेरियाई प्रायद्वीप (Iberian Peninsula), यानी स्पेन और पुर्तगाल के लोग इन खोज यात्राओं में सबसे आगे रहे। पहले इतिहासकार इन समुद्री यात्राओं को 'खोज-यात्रा' कहा करते थे परंतु, बाद में उन्होंने ऐसा कहना छोड़ दिया। बाद के इतिहासकारों ने यह कहा कि अनजान इलाकों की ओर 'पुरानी दुनिया' (old world) के लोगों की ये पहली समुद्री यात्राएँ नहीं थीं। पहले भी अरब, चीनी और भारतीय यात्री और प्रशांत द्वीपसमूहों के (पोलिनेशियन तथा मइक्रोनेशियन) नाविक अपने समुद्री जलयानों में बैठकर बड़े-बड़े महासागरों के आरपार जा चुके थे। नार्वे के जलदस्यु (Vikings) ग्यारहवीं शताब्दी में उत्तरी अमरीका पहुँच चुके थे।

स्पेन और पुर्तगाल के शासक ही विशेष रूप से इस समुद्री खोज के लिए धन देने को इतने लालायित क्यों थे? उनके सिर पर सोने तथा धनदौलत के भंडारों और यश एवं सम्मान प्राप्ति की धुन क्यों सवार हुई? दरअसल वे आर्थिक, धार्मिक और राजनीतिक तीन प्रकार के मिले-जुले कारणों से इस कार्य के लिए प्रेरित हुए।

14वीं शताब्दी के मध्य से 15वीं शताब्दी के मध्य तक यूरोप की अर्थव्यवस्था गिरावट के दौर से गुज़र रही थी (विषय 6 देखिए)। प्लेग और युद्धों ने यूरोप के अनेक भागों में आबादी को उजाड़ दिया, व्यापार में मंदी आती गई और वहाँ सोने तथा चाँदी की कमी आ गई, जो कि उन दिनों यूरोप में सिक्के बनाने के काम आती थी। यह स्थिति इससे पहले (11वीं से मध्य 14वीं शताब्दी तक) की उस स्थिति से बिलकुल विपरीत थी जब बढ़ते हुए व्यापार ने इटली के नगर-राज्यों को समृद्ध बना दिया था और उसके चलते पूँजी-संचय भी हुआ था। लेकिन 14वीं शताब्दी के बाद के दशकों में लंबी दूरी के व्यापार में गिरावट आ गई, और 1453 में तुर्कों द्वारा कुंस्तुनतुनिया (Constantinople) की विजय के बाद तो वह और भी मुश्किल हो गया। इटलीवासियों ने किसी तरह तुर्कों के साथ व्यवसाय करने का इंतजाम तो कर लिया पर उन्हें व्यापार पर अधिक कर देना पड़ता था।

बाहरी दुनिया के लोगों को ईसाई बनाने की संभावना ने भी यूरोप के धर्मपरायण ईसाइयों को इन साहसिक कार्यों की ओर उन्मुख किया।

यह तो सभी जानते हैं कि तुर्कों के विरुद्ध क्रूसेड (Crusades) (विषय 4 देखिए) यों तो धर्मयुद्ध के रूप में ही प्रारंभ हुए थे पर इन्होंने एशिया के साथ यूरोप के व्यापार में वृद्धि की और एशिया के उत्पादों, विशेष रूप से मसालों के प्रति भी यूरोपवासियों की रुचि बढ़ाई। यूरोपवासियों को ऐसा लगा कि यदि व्यापार के साथ-साथ राजनीतिक नियंत्रण भी स्थापित हो पाए और यूरोपीय देश अधिक गर्म जलवायु वाले स्थानों पर उपनिवेश स्थापित कर पाएँ, तो उन्हें अधिक लाभ होगा।

जब यूरोपवासी सोने और मसालों की खोज में नए-नए प्रदेशों में जाने की बात सोचने लगे तो उन्हें पश्चिमी अफ़्रीका का ध्यान आया जहाँ उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से अब तक किसी तरह का व्यापार नहीं किया था। एक छोटा-सा देश पुर्तगाल, जो 1139 में स्पेन से अलग होकर स्वतंत्र राज्य के रूप में स्थापित हो चुका था और मछुवाही तथा नौकायन के क्षेत्र में उसने विशेष कुशलता प्राप्त कर ली थी, ने इस दिशा में पहल की। पुर्तगाल के राजकुमार हेनरी जो नाविक (Navigator) के नाम से मशहूर था, ने पश्चिमी अफ़्रीका की तटीय यात्रा आयोजित की और 1415 में सिउटा (Ceuta) पर आक्रमण कर दिया। उसके बाद कई अभियान आयोजित किए गए और अफ़्रीका के बोजाडोर अंतरीप में पुर्तगालियों ने अपना व्यापार केंद्र स्थापित कर लिया। अफ़्रीकियों को पकड़-पकड़ कर गुलाम बनाया जाने लगा और स्वर्णधूलि को साफ करके सोना तैयार किया जाने लगा।

स्पेन में, आर्थिक कारणों ने लोगों को महासागरी शूरवीर (Knights of the ocean) बनने के लिए प्रोत्साहित किया। धर्मयुद्धों की याद और *रीकांक्विस्टा* (Reconquista) की सफलता ने निजी महत्त्वाकांक्षाओं को उत्तेजित कर दिया और उन इकरारनामों की शुरुआत की जिन्हें *कैपिटुलैसियोन* (Capitulaciones) कहा जाता था। इन इकरारनामों के तहत स्पेन का शासक नए जीते हुए इलाकों पर अपनी प्रभुसत्ता जमा लेता था और उन्हें जीतने वाले अभियानों के नेताओं को पुरस्कार के रूप में पदवियाँ और जीते गए देशों पर शासनाधिकार देता था।

रीकांक्विस्टा (पुनर्विजय) ईसाई राजाओं द्वारा आइबेरियन प्रायद्वीप पर प्राप्त की गई सैनिक विजय थी जिसके द्वारा इन राजाओं ने 1492 में इस प्रायद्वीप को अरबों के कब्ज़े से छुड़ा लिया था।

अटलांटिक पारगमन

क्रिस्टोफर कोलंबस (1451-1506) एक स्वयं-शिक्षित व्यक्ति था, लेकिन उसमें साहसिक कार्य करने और नाम कमाने की उत्कट इच्छा थी। भविष्यवाणियों में विश्वास करते हुए वह यह मानता था कि उसके भाग्य में पश्चिम की ओर से यात्रा करते हुए पूर्व (the Indies) की ओर जाने का रास्ता खोजना लिखा है। वह कार्डिनल पिएर डिऐली (Cardinal Pierre d' Ailly) द्वारा 1410 में लिखी गई (खगोलशास्त्र और भूगोल की) पुस्तक *इमगो मुंडी* (Imago Mundi) से बहुत प्रेरित हुआ। उसने इस संबंध में पुर्तगाल के राजा के समक्ष अपनी योजनाएँ प्रस्तुत कीं, लेकिन वे मंजूर नहीं हुईं। पर सौभाग्य से स्पेन के प्राधिकारियों ने उसकी एक साधारण-सी योजना स्वीकार कर ली और वह उसे पूरा करने के लिए 3 अगस्त 1492 को पालोस के पत्तन से अपने अभियान पर जहाज़ द्वारा रवाना हो गया।

लेकिन कोलंबस और उसके साथी अनुमान से अधिक लंबी चलने वाली अटलांटिक यात्रा के लिए तैयार नहीं थे। उनका बेड़ा छोटा-सा था जिसमें *सांता मारिया* नाम की एक छोटी *नाओ* (Nao) और दो कैरेवल (Caravel, छोटे हलके जहाज) 'पिंटा' और 'नीना' थे। सांता मारिया की कमान स्वयं कोलंबस के हाथों में थी। उसमें 40 कुशल नाविक थे। यात्रा पर जाते समय अनुकूल व्यापारिक हवाओं के सहारे उनका बेड़ा आगे बढ़ता जा रहा था, लेकिन रास्ता लंबा था। 33 दिनों तक बेड़ा तैरता हुआ आगे से आगे बढ़ता गया मगर तट के दर्शन नहीं हुए, ऊपर आकाश था तो नीचे समुद्र। अब तो उसके नाविक बेचैन हो उठे और उनमें से कुछ तुरंत वापस चलने की माँग करने लगे।

स्पेनिश भाषा में 'नाओ' शब्द का अर्थ है भारी जहाज़। यह शब्द अरबी से स्पेनिश भाषा में आया है। इससे यह तथ्य स्पष्ट होता है कि 1492 तक इस क्षेत्र पर अरबों का शासन था।

आखिर 12 अक्टूबर 1492 को उन्हें ज़मीन दिखाई दी, जिसे कोलंबस ने भारत समझा लेकिन वह स्थान बहामा द्वीपसमूह का गुआनाहानि (Guanahani) द्वीप था। (यह कहा जाता है कि इस द्वीपसमूह को 'बहामा' नाम कोलंबस द्वारा इसलिए दिया गया था क्योंकि वह चारों ओर से छिछले समुद्र, जिसे स्पेनिश में बाजा मार, Baja mar, कहते हैं, से घिरा हुआ था।) गुआनाहानि में इस बेड़े के नाविकों का अरावाक लोगों ने स्वागत किया। अरावाक लोग शांतिप्रिय थे, उन्होंने दोस्ती का हाथ बढ़ाया और अपना खाने-पीने का सामान नाविकों के साथ मिल-बाँटकर खाया; वस्तुत: कोलंबस उनकी इस उदारता से बहुत प्रभावित हुआ। उसने इस बारे में अपने रोजनामचे

अमरीकी मूलनिवासियों के साथ यूरोपीय लोगों की मुलाकात–यूरोप की काष्ठ ब्लॉक वाली एक छपाई, सोलहवीं सदी।

में लिखा, ''वे इतने ज्यादा उदार और सरल स्वभाव के लोग हैं कि अपना सब कुछ देने को तैयार हैं, वे कभी इनकार नहीं करते; बल्कि वे सदा बाँटने को तत्पर रहते हैं और इतना अधिक प्यार जताते हैं कि मानो उनका प्यार भरा कलेजा ही बाहर निकल आएगा।''

कोलंबस ने गुआनाहानि में स्पेन का झंडा गाड़ दिया (उसने इस द्वीप का नया नाम सैन सैल्वाडोर, San Salvador रखा)। वहाँ उसने एक सार्वजनिक उपासना कराई और स्थानीय लोगों से बिना पूछे ही अपने-आपको वाइसराय घोषित कर दिया। उसने बड़े द्वीपसमूह क्यूबानास्कैन (Cubanascan, क्यूबा, जिसे उसने जापान समझा था) और किस्केया (Kiskeya, नया नाम हिस्पानिओला, Hispaniola, जो आज दो देशों - हाइती और डोमिनिकन रिपब्लिक- में बँटा हुआ है) तक आगे बढ़ने के लिए इन स्थानीय लोगों का सहयोग प्राप्त किया। यद्यपि सोना तत्काल उपलब्ध नहीं था लेकिन खोजकर्ताओं ने सुन रखा था कि सोना हिस्पानिओला में, भीतरी क्षेत्र की पहाड़ी जलधाराओं में मिल सकता है।

वाइसराय (Viceroy) का अर्थ है राजा के स्थान पर यानी उसका स्थापनापन्न या प्रतिनिधि (इस संदर्भ में राजा का मतलब है, स्पेन का राजा)।

लेकिन कोलंबस और उसके साथी इस संबंध में आगे कुछ और करते उससे पहले ही उनका यह अभियान दुर्घटनाओं में फँस गया और खूंख़ार 'कैरिब' (Carib) कबीलों की प्रचंडता का भी उन्हें सामना करना पड़ा। नाविक जल्दी से जल्दी घर लौटने के लिए अधीर हो गए। वापसी यात्रा अधिक कठिन साबित हुई क्योंकि जहाज़ों को दीमक लग गई थी और नाविकों को थकान व घर की याद सताने लगी थी। इस संपूर्ण यात्रा में कुल 32 सप्ताह लगे। आगे चलकर ऐसी तीन यात्राएँ और आयोजित की गईं, जिनके दौरान कोलंबस ने बहामा और बृहत्तर ऐंटिलीज द्वीपों (Greatar Antilles) ,दक्षिणी अमरीका की मुख्य भूमि और उसके तटवर्ती इलाकों में अपना खोज कार्य पूरा किया। परवर्ती यात्राओं से यह पता चला कि इन स्पेनी नाविकों ने 'इंडीज' (Indies) नहीं बल्कि एक नया महाद्वीप ही खोज निकाला था।

कोलंबस की विशेष उपलब्धि यह रही कि उसने अनंत समुद्र की सीमाएँ खोज निकालीं और यह करके दिखा दिया कि यदि पाँच सप्ताहों तक व्यापारिक हवाओं के साथ-साथ यात्रा की जाए तो पृथ्वी के गोले के दूसरी ओर पहुँचा जा सकता है। अक्सर जगहों को उन्हें खोजने वालों के अनुसार नाम दिया जाता है, इसलिए यह एक अजीब बात है कि कोलंबस की स्मृति में समस्त

यूरोपवासियों द्वारा समुद्री यात्राएं

1492	कोलंबस ने बहामा द्वीपसमूह और क्यूबा पर स्पेन की दावेदारी की
1494	'अनखोजी दुनिया' का पुर्तगाल और स्पेन के बीच बँटवारा हुआ
1497	एक अंग्रेज यात्री जॉन कैबोट (John Cabot) ने उत्तरी अमरीका के समुद्र तट की खोज की
1498	वास्कोडिगामा कालीकट/कोझीकोड पहुँचा
1499	अमेरिगो वेस्पुसी ने दक्षिणी अमरीका के समुद्र तट को देखा
1500	कैब्राल ने ब्राज़ील पर पुर्तगाल की दावेदारी की
1513	बालबोआ (Balboa) ने पनामा इस्थुमस को पार किया और प्रशांत महासागर को देखा
1521	कोर्टेस ने एज़टेक लोगों को हराया
1522	स्पेनवासी मैगेलन ने जहाज में बैठकर पृथ्वी का चक्कर लगाया
1532	पिज़ारो ने इंका राज्य को जीता
1571	स्पेन के सैनिकों ने फिलिपीन्स को जीता
1600	ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना हुई
1602	डच ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना हुई

क्रियाकलाप 3

आपके विचार से ऐसे कौन से कारण थे जिनसे प्रेरित होकर यूरोप के भिन्न-भिन्न देशों के लोगों ने खोज यात्राओं पर जाने का ज़ोखिम उठाया।

अमरीका महाद्वीप को नहीं बल्कि संयुक्त राज्य अमरीका के एक छोटे से जिले में और दक्षिणी अमरीका के पश्चिमोत्तर भाग में स्थित एक देश (कोलंबिया) का नामकरण किया गया है जबकि वह उन दोनों इलाकों में से किसी एक में भी नहीं गया था। उसके द्वारा खोजे गए दो महाद्वीपों उत्तरी और दक्षिणी अमरीका का नामकरण फ्लोरेन्स के एक भूगोलवेत्ता 'अमेरिगो वेस्पुस्सी'' (Amerigo Vespucci) के नाम पर किया गया, जिसने उनके विस्तार का अनुभव किया और उन्हें 'नयी दुनिया' (New world) के नाम से संबोधित किया। उनके लिए 'अमरीका' (America) नाम का प्रयोग सर्वप्रथम एक जर्मन प्रकाशक द्वारा 1507 में किया गया।

अमरीका में स्पेन के साम्राज्य की स्थापना

स्पेनी साम्राज्य का विस्तार बारूद और घोड़ों के इस्तेमाल पर आधारित सैन्य-शक्ति की बदौलत हुआ। स्थानीय लोगों को या तो नज़राना देना पड़ता था या फिर सोने व चाँदी की खानों में काम करना पड़ता था। विशेष बात यह थी कि वहाँ प्रारंभ में 'खोज' के बाद छोटी बस्ती बसानी पड़ती थी जिसमें रहने वाले स्पेनी लोग स्थानीय मजदूरों पर निगरानी रखते थे। स्थानीय प्रधानों को नए-नए प्रदेश और संभव हो तो, सोने के नए-नए स्रोत खोजने के लिए भर्ती किया जाता था। सोने के लालच से गंभीर हिंसक घटनाएँ भड़कीं, जिनका स्थानीय लोगों ने प्रतिरोध किया। स्पेनी विजेताओं के कठोर आलोचक कैथलिक भिक्षु (friar) बार्टोलोम डि लास कैसास (Bartolome de las Casas) ने कहा है कि स्पेनी उपनिवेशक अक्सर अपनी तलवारों की धार अरावाकों के नंगे बदन पर आज़माते थे।

जब सैनिक दमन और बेगार का तांडव हो रहा था तभी महामारी की विनाश लीला ने नया मोर्चा खोल दिया। पुरानी दुनिया की बीमारियों विशेषत: चेचक ने अरावाक लोगों पर कहर ढाह दिया, क्योंकि उनमें प्रतिरोध-क्षमता नहीं थी। स्थानीय लोग ये मानते थे कि इन बीमारियों का कारण

© NCERT not to be republished

स्पेनियों द्वारा चलाई जाने वाली 'अदृश्य' गोलियाँ थीं। अरावाकों और उनकी जीवन शैली का लोप निहायत खामोशी से स्पेनियों के साथ हुए उस दु:खांत मुकाबले की याद दिलाता है।

कोलंबस के अभियानों के बाद स्पेनवासियों द्वारा मध्यवर्ती और दक्षिणी अमरीका में खोज बराबर चलती रही और उसमें सफलता मिलती गई। आधी सदी के भीतर ही स्पेनवासियों ने लगभग 40 डिग्री उत्तरी से 40 डिग्री दक्षिणी अक्षांश तक के समस्त क्षेत्र को खोज-खोज कर बिना किसी चुनौती के उस पर अपना आसानी से अधिकार जमा लिया।

उपर्युक्त घटनाओं से पहले, स्पेनवासियों ने इस क्षेत्र के दो बड़े साम्राज्यों को जीतकर अपने कब्ज़े में कर लिया था। यह काम मुख्यत: दो व्यक्तियों हरमन कोर्टेस (Herman Cortes 1488–1547) और फ्रांसिस्को पिज़ारो (Francisco Pizarro 1478–1541) का था। उनके अभियानों के द्वारा किया गया खर्चा स्पेन के जमींदारों, नगरपरिषदों के अधिकारियों और अभिजातों ने उठाया था। इन अभियानों में शामिल होनेवालों ने जीत के बाद हासिल होनेवाले अपेक्षित हिस्से के बदले में अपने अस्त्र-शस्त्र भी मुहैया कराए।

कोर्टेस और एज़टेक लोग

कोर्टेस और उसके सैनिकों ने (जिन्हें *कोंक्विस्टोडोर*, Conquistadores, कहा जाता था) मैक्सिको को रौंदते हुए उसे चुटकियों में जीत लिया। 1519 में, कोर्टेस क्यूबा से मैक्सिको आया था जहाँ उसने टॉटानैक (Totonacs) समुदाय से दोस्ती कर ली। टॉटानैक लोग एज़टेक शासन से अलग होना चाहते थे। एज़टेक शासक मोंटेज़ुमा ने कोर्टेस से मिलने के लिए अपना एक अधिकारी भेजा। वह स्पेनवासियों की आक्रमण-क्षमता, उनके बारूद और घोड़ों के प्रयोग को देखकर घबरा गया। स्वयं मोंटेज़ुमा को भी यह पक्का विश्वास हो गया कि कोर्टेस सचमुच किसी निर्वासित देवता का अवतार है जो अपना बदला लेने के लिए फिर से प्रकट हुआ है।

बर्नाड डियाज़ ने लिखा, "और जब हमने इन सभी शहरों और गाँवों को जल में बना हुआ और अन्य कस्बों को सूखी जमीन पर बसा हुआ देखा और यह भी देखा कि मेक्सिको नगर तक जाने के लिए जल में सीधा और समतल रास्ता बनाया गया है तो हम दंग रह गए। ये बड़े नगर और भवन जो पानी में खड़े हुए थे, सभी पत्थर के बने हुए थे और ऐसा लगता था कि मानो हम 'अमाडिस' (Amadis) की कहानी का कोई अद्भुत दृश्य देख रहे हैं। सचमुच, हमारे कुछ सैनिक तो यह पूछ ही बैठे कि कहीं हम कोई सपना तो नहीं देख रहे हैं।"

डोना मैरीना

बर्नार्ड डियाज़ डेल कैस्टिलो (Bernard Diaz del Castillo, 1495-1584) ने अपने *ट्रू हिस्ट्री ऑफ़ मैक्सिको* में लिखा है कि टैबैस्को (Tabasco) के लोगों ने कोर्टेस को डोना मैरीना नाम की एक सहायिका दी थी। वह तीन भाषाओं में प्रवीण थी और उसने कोर्टेस के लिए दुभाषिये के रूप में बहुत निर्णायक भूमिका अदा की। "यह हमारी जीतों की ज़ोरदार शुरुआत थी और डोना मैरीना की सहायता के बिना हम न्यू स्पेन और मैक्सिको की भाषा नहीं समझ सकते थे।"

डियाज सोचता था कि वह एक राजकुमारी थी लेकिन मैक्सिकन लोग उसे 'मालिंच', यानी विश्वासघातिनी कहते थे। *मालिंचिस्टा* (Malinchista) का अर्थ है वह व्यक्ति जो दूसरों की भाषा और कपड़े की हू-ब-हू नकल करता है।

स्पेनी सैनिकों ने ट्लैक्सकलानों (Tlaxcalans) पर हमला बोल दिया। ट्लैक्सकलान खूंखार लड़ाकू थे जिन्होंने ज़बर्दस्त प्रतिरोध करने के बाद अंतत: समर्पण कर दिया। स्पेनी सैनिकों ने क्रूरतापूर्वक उन सबका सफ़ाया कर दिया। फिर वे टेनोक्टिटलैन (Tenochtitlan) की ओर बढ़े जहाँ वे 8 नवंबर 1519 को पहुँच गए।

स्पेनी आक्रमणकारी टेनोक्टिटलैन के दृश्य को देखकर हक्के-बक्के रह गए। यह मैड्रिड से पाँच गुना बड़ा था और इसकी आबादी स्पेन के सबसे बड़े शहर सेविली (Seville) से दो गुनी (यानी 100,000) थी।

मोंटेज़ुमा ने कोर्टेस का हार्दिक स्वागत किया। एज़टेक लोग बड़े सम्मान के साथ स्पेनियों को शहर के बीचोंबीच ले गए, जहाँ मोंटेज़ुमा ने उन पर उपहारों की वर्षा कर दी। लेकिन टलैक्सकलान के हत्याकांड के बारे में जानकारी होने के कारण उसके अपने लोगों के मन में आशंका थी। एज़टेकों के एक वृत्तांत में स्थिति का वर्णन कुछ इस प्रकार है–''ऐसा लग रहा था मानो टेनोंक्टिटलान ने किसी दानव को शरण दे दी है। टेनोंक्टिटलान के निवासियों को ऐसा महसूस हुआ कि सभी ने भांग खा ली है... वे सब पगला-से गए हैं। हर आदमी भयभीत होकर काँप रहा था, मानो सारी दुनिया की आँते ही बाहर निकाली जा रही हों...लोग भयाक्रांत नींद में सो गए।''

एज़टेक लोगों की चिंता भी निर्मूल नहीं थी। कोर्टेस ने बिना कोई कारण बताए सम्राट को नज़रबंद कर लिया और फिर उसके नाम पर शासन चलाने का प्रयास करने लगा। स्पेन के प्रति सम्राट मोंटेज़ुमा के समर्पण को औपचारिक बनाने के प्रयत्न में, कोर्टेस ने एज़टेक मंदिरों में ईसाई प्रतिमाएँ स्थापित करवाईं। मोंटेज़ुमा ने एक समझौता प्रस्तावित किया और मंदिर में एज़टेक और ईसाई दोनों प्रकार की प्रतिमाएँ रखवा दीं।

ऊपर: टेनोंक्टिटलान का एक यूरोपीय रेखांकन, सोलहवीं सदी।
नीचे: टेनोक्टिटलैन के केंद्र में मंदिरों तक ले जाने वाला भव्य सीढ़ी मार्ग, जो अब मेक्सिको शहर का एक खंडहर है।

इसी समय कोर्टेस को अपने सहायक ऐल्वारैडो (Alvarado) को सब कुछ सौंपकर जल्दी से क्यूबा लौटना पड़ा। स्पेनी शासन के अत्याचारों से और सोने के लिए उनकी निरन्तर माँगों के दबाव के कारण, आम जनता ने विद्रोह कर दिया। ऐल्वारैडो ने हुइजिलपोक्टली (Huizilpochtli) के वसंतोत्सव में कत्लेआम का हुक्म दे दिया। जब 25 जून 1520 को कोर्टेस वापस लौटा तो उसे घोर संकट का सामना करना पड़ा। पुल तोड़ दिए गए थे। जलमार्ग काट दिए गए थे, और सड़कें बंद कर दी गई थीं। स्पेनियों को भोजन और पेयजल की घोर कमी का सामना करना पड़ा। कोर्टेस को मजबूर होकर वापस लौटना पड़ा।

इसी समय, रहस्यमय परिस्थितियों में मोंटेज़ुमा की मृत्यु हो गई। एज़टेकों की स्पेनियों के साथ लड़ाई जारी रही और उसके परिणामस्वरूप लगभग 600 अत्याचारी विजेता और उतने ही ट्लैक्सकलान के लोग मारे गए। हत्याकांड की इस भयंकर रात को आँसूभरी रात (Night of Tears) के नाम से जाना जाता है। कोर्टेस को नवनिर्वाचित राजा क्वेटेमोक (Cuatemoc) के विरुद्ध अपनी रणनीति की योजना बनाने के लिए वापस ट्लैक्सकलान में शरण लेनी पड़ी। उस समय एज़टेक लोग यूरोपीय लोगों के साथ आई चेचक के प्रकोप से मर रहे थे। कोर्टेस

केवल 180 सैनिकों और 30 घोड़ों के साथ टेनोंक्टिटलान में घुस आया और एज़टेक भी अपनी आखिरी मुठभेड़ के लिए तैयार थे। अपशकुनों ने एज़टेकों को बता दिया कि उनका अंत दूर नहीं है। इसे वास्तविकता समझकर, सम्राट ने अपना जीवन त्याग देना ही ठीक समझा।

मेक्सिको पर विजय प्राप्त करने में दो वर्ष का समय लग गया। कोर्टेस मेक्सिको में 'न्यू स्पेन' का कैप्टेन-जनरल बन गया और उसे चार्ल्स पंचम द्वारा सम्मानों से विभूषित कर दिया गया। मेक्सिको से, स्पेनियों ने अपना नियंत्रण ग्वातेमाला (Guatemala), निकारगुआ (Nicaragua) और होंडुरास (Honduras) पर भी स्थापित कर लिया।

एक औरत की छोटी सी प्रतिमा, पेरू। यह एक मकबरे में मिली जिस पर स्पेनियों की निगाह नहीं गई थी और इसीलिए यह लघु प्रतिमा गलाए जाने से बच गई।

पिज़ारो और इंका लोग

कोर्टेस के विपरीत, पिज़ारो (Pizarro) गरीब और अनपढ़ था। वह सेना में भर्ती होकर 1502 में कैरीबियन द्वीपसमूह में आया था। उसने कहानियों में इंका राज्य के बारे में यह सुन रखा था कि वह चाँदी और सोने का देश (El-dor-ado) है। उसने प्रशांत से वहाँ पहुँचने के लिए कई प्रयत्न किए। एक बार जब वह अपनी यात्रा से घर (स्पेन) लौटा तो वह स्पेन के राजा से मिलने में सफल हो गया। इस मुलाकात के दौरान उसने राजा को इंका के कारीगरों द्वारा बनाए गए सोने के सुंदर-सुंदर मर्तबान दिखाए। राजा के मन में लोभ जाग उठा और उसने पिज़ारो को यह वचन दे दिया कि अगर वह इंका प्रदेश को जीत लेगा तो उसे वहाँ का राज्यपाल (गवर्नर) बना दिया जाएगा। पिज़ारों ने कोर्टेस का तरीका अपनाने की योजना बनाई। लेकिन वह यह देख कर क्षुब्ध हुआ कि इंका साम्राज्य की स्थिति वहाँ से भिन्न थी।

1532 में वहाँ अताहुआल्पा (Atahualpa) ने एक गृहयुद्ध के बाद इंका साम्राज्य की बागडोर अपने हाथ में ले ली थी। तभी वहाँ के परिदृश्य में पिज़ारों ने प्रवेश किया। उसने जाल बिछाकर राजा को बंदी बना लिया। राजा ने अपने आप को मुक्त कराने के लिए एक कमरा-भर सोना फिरौती में देने का प्रस्ताव किया—आज तक के इतिहास में इतनी बड़ी फिरौती किसी को नहीं मिली थी। लेकिन पिज़ारो ने अपना वचन नहीं निभाया। उसने राजा का वध करवा दिया। और उसके सैनिकों ने जी भरकर लूटमार मचाई। लूटपाट के बाद इंका राज्य क्षेत्र पर कब्जा कर लिया गया। विजेताओं की क्रूरता के कारण 1534 में विद्रोह भड़क उठा जो दो साल तक चलता रहा, जिसके दौरान हज़ारों की संख्या में लोग युद्ध और महामारियों के कारण मौत के मुँह में चले गए।

अगले पाँच वर्षों में स्पेनियों ने पोटोसी (Potosi, ऊपरी पेरू, आज का बोलीविया) की खानों में चाँदी के विशाल भंडारों का पता लगा लिया और उन खानों में काम करने के लिए उन्होंने इंका लोगों को गुलाम बना लिया।

कैब्राल और ब्राज़ील

ब्राज़ील पर पुर्तगालियों का कब्ज़ा तो इत्तफाक से ही हुआ। सन् 1500 में पुर्तगाल निवासी पेड्रो अल्वारिस कैब्राल (Pedro Alvares Cabral) जहाज़ों का एक शानदार जुलूस लेकर भारत के लिए रवाना हुआ। तूफानी समुद्रों से बचने के लिए उसने पश्चिमी अफ़्रीका का एक बड़ा चक्कर लगाया और यह देखा कि वह उस प्रदेश के समुद्रतट पर पहुँच गया है जिसे वर्तमान में ब्राज़ील कहा जाता है। दक्षिणी अमरीका का यह पूर्वी भाग उस क्षेत्र में आता था जिसे पोप ने पुर्तगाल को सौंप रखा था, इसलिए वे अविवादित रूप से इसे अपना इलाका मानते थे।

पुर्तगालवासी ब्राज़ील की बजाय पश्चिमी भारत के साथ अपना व्यापार बढ़ाने के लिए अधिक उत्सुक थे क्योंकि ब्राज़ील में सोना मिलने की कोई संभावना नहीं थी। लेकिन वहाँ एक प्राकृतिक संसाधन था, जिसका उन्होंने भरपूर लाभ उठाया और यह संपदा थी 'टिंबर' यानी इमारती लकड़ी। ब्राज़ीलवुड वृक्ष, जिसके नाम पर यूरोपवासियों ने इस प्रदेश का नामकरण किया, से एक सुंदर लाल रंजक (Dye) मिलता था। ब्राज़ील के मूल निवासी लोहे के चाकू-छुरियों और आरियों के बदले में,

जिन्हें वे अद्‌भुत वस्तु मानते थे, इन पेड़ों को काटने और इनके लट्‌ठे बनाकर जहाज़ों तक ले जाने के लिए तुरंत तैयार हो गए। (एक हँसिए, चाकू या कंघे के बदले वे ढेरों मुर्ग़ियाँ, बंदर, तोते, शहद मोम, सूती धागा, और अन्यान्य चीज़ें, जो भी इन गरीब लोगों के पास थी, देने को तैयार रहते थे)

"तुम फ्रांसीसी और पुर्तगाली लोग इस लकड़ी की तलाश में इतनी दूरी से यहाँ क्यों आते हो? क्या तुम्हारे देश में लकड़ी नहीं है?" एक मूलनिवासी ने फ्रांसीसी पादरी से पूछा। चर्चा के अंत में उसने कहा, "मुझे लगता है तुम बिलकुल बावले हो। तुम लंबा समुद्र पार करते हो, घोर परेशानियाँ झेलते हो और इतना कठिन परिश्रम करते हो, किसलिए? अपने बच्चों के लिए धन इकट्ठा करने के लिए ही न! क्या जिस भूमि ने तुम्हें पाला-पोसा और बड़ा किया है वह तुम्हारे बच्चों का पेट भरने के लिए पर्याप्त नहीं है? हमारे भी माता, पिता और बच्चे हैं, जिन्हें हम बहुत प्यार करते हैं। लेकिन हमें यह पक्का विश्वास है कि जिस भूमि ने हमें पालपोसकर बड़ा किया है, वह उनका भी भरण-पोषण कर देगी। इसलिए हम लोग आगे की चिंता किए बिना आराम से जिंदगी जीते हैं।"

इमारती लकड़ी के इस व्यापार की वजह से पुर्तगाली और फ्रांसीसी व्यापारियों के बीच भयंकर लड़ाइयाँ हुईं। इनमें अंततः पुर्तगालियों की जीत हुई क्योंकि वे स्वयं तटीय क्षेत्र में बसना और उपनिवेश बसाना चाहते थे। 1534 में पुर्तगाल के राजा ने ब्राज़ील के तट को 14 आनुवंशिक कप्तानियों (Captaincies) में बाँट दिया। उनके मालिकाना हक उन पुर्तगालियों को सौंप दिए जो वहाँ स्थायी रूप से रहना चाहते थे, और उन्हें स्थानीय लोगों को गुलाम बनाने का अधिकार भी दे दिया। बहुत से पुर्तगाली बाशिंदे भूतपूर्व सैनिक थे जिन्होंने भारत के गोवा क्षेत्र में लड़ाइयाँ लड़ी थीं और स्थानीय लोगों के प्रति उनका व्यवहार अत्यंत क्रूर था।

1540 के दशक में पुर्तगालियों ने बड़े-बड़े बागानों में गन्ना उगाना और चीनी बनाने के लिए मिलें चलाना शुरू कर दिया । यह चीनी यूरोप के बाज़ारों में बेची जाती थी। बहुत ही गर्म और नम जलवायु में चीनी की मिलों में काम करने के लिए वे स्थानीय लोगों पर निर्भर थे। जब उन लोगों ने इस थकाने वाले नीरस काम को करने से इनकार कर दिया तो मिल मालिकों ने उनका अपहरण करवाकर उन्हें गुलाम बनाना शुरू कर दिया।

तब स्थानीय लोग इन गुलाम बनाने वाले मिल मालिकों से बचने के लिए गाँव छोड़कर जंगलों की ओर भागने लगे। और ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, तटीय क्षेत्र में मुश्किल से कोई इक्का-दुक्का ही स्थानीय लोगों का गाँव बचा, लेकिन उनके बदले यूरोपीय लोगों के सुनियोजित कस्बे बस गए। मिल मालिकों को गुलाम लाने के लिए मजबूर होकर एक दूसरे स्रोत यानी पश्चिमी अफ़्रीका की ओर मुड़ना पड़ा। लेकिन स्पेनी उपनिवेशों में स्थिति इससे बिलकुल विपरीत थी। वहाँ एज़्टेक और इंका साम्राज्यों के अधिकांश लोगों से खदानों और खेतों में काम कराया जाता था, इसलिए स्पेनी बाशिंदों को 'औपचारिक' रूप से उन्हें गुलाम बनाने अथवा कहीं और से गुलाम लाने की जरूरत नहीं पड़ी।

1549 में पुर्तगाली राजा के अधीन एक औपचारिक सरकार स्थापित की गई और बहिया (Bahia) / सैल्वाडोर (Salvador) को उसकी राजधानी बनाया गया। इस समय तक जेसुइट पादरियों ने बाहर ब्राज़ील जाना शुरू कर दिया था। यूरोपीय बाशिंदे इन जेसुइट पादरियों को पसंद नहीं करते थे, क्योंकि वे मूलनिवासियों के साथ दया का बर्ताव करने की सलाह देते थे और निडरतापूर्वक जंगलों में जाकर उनके गाँवों में रहते हुए यह सिखाते थे कि ईसाई धर्म एक आनंददायक धर्म है और उसका आनंद लेना चाहिए। और सबसे बड़ी बात तो यह थी कि ये धर्मप्रचारक दासप्रथा की कड़े शब्दों में आलोचना करते थे।

विजय, उपनिवेश और दास व्यापार

जो अभियान पहले अनिश्चित परिणाम वाली समुद्री यात्राओं के रूप में शुरू हुए थे, आगे चलकर उनका यूरोप, उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका और अफ़्रीका पर स्थायी प्रभाव पड़ा।

क्रियाकलाप 4

दक्षिणी अमरीका के मूल निवासियों पर यूरोपीय लोगों के संपर्क से क्या प्रभाव पड़ा? विश्लेषण कीजिए। यूरोप से आकर दक्षिणी अमरीका में बसे लोगों और जेसुइट पादरियों के प्रति स्थानीय लोगों की प्रतिक्रिया का वर्णन कीजिए।

"घर या परिवार पर इससे बड़ा अभिशाप कोई नहीं है कि उसका भरण-पोषण दूसरों के खून-पसीने की कमाई से हो!"

"जो भी आदमी दूसरों की स्वतंत्रता छीनता है और उस स्वतंत्रता को वापस लौटाने की क्षमता रखते हुए भी नहीं लौटाता, वह अवश्य ही महापाप का भागी होता है!"

– ये विचार हैं ब्राज़ील में 1640 के दशक में रहने वाले जेसुइट पादरी एंटोनियो वीइरा (Antonio Vieira) के।

पंद्रहवीं शताब्दी में शुरू की गई यूरोपीय समुद्री परियोजनाओं ने एक महासागर से दूसरे महासागर तक के 'अटूट समुद्री मार्ग' खोल दिए। इससे पहले तक, इनमें से अधिकांश मार्ग यूरोप के लोगों के लिए अज्ञात थे और कुछ मार्गों को तो कोई भी नहीं जानता था। तब तक कोई भी जहाज़ कैरीबियन या अमरीका महाद्वीपों के जलक्षेत्रों में नहीं घुसा था। दक्षिणी अटलांटिक तो पूरी तरह अछूता था, किसी भी जहाज़ ने, उसके पार जाना तो दूर, उसके पानी में भी प्रवेश नहीं किया था। और न ही कोई जहाज़ दक्षिणी अटलांटिक से प्रशांत महासागर या हिंद महासागर तक पहुँचा था। 15वीं शताब्दी के अंतिम और 16वीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में ये सभी साहसिक कार्य सफलतापूर्वक संपन्न किए गए।

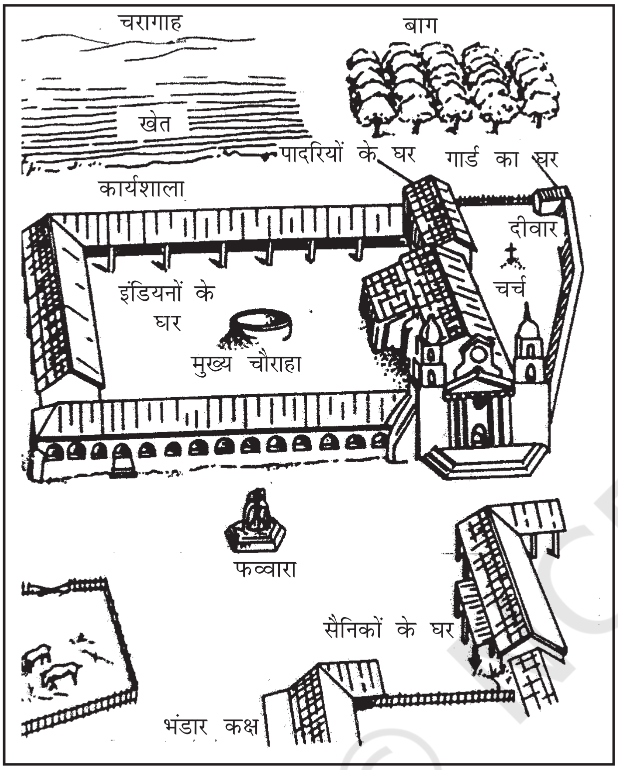

दक्षिणी अमरीका के एक ठेठ स्पेनी नगर क्षेत्र का रेखांकन।

प्रारंभिक समुद्री यात्रियों के अलावा, अन्य यूरोपवासियों के लिए भी अमरीका की 'खोज' के दीर्घकालीन परिणाम निकले। सोने-चाँदी की बाढ़ ने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और औद्योगीकरण का और अधिक विस्तार किया। 1560 से 1600 तक सैकड़ों जहाज़ हर वर्ष दक्षिणी अमरीका की खानों से चाँदी स्पेन को लाते रहे। लेकिन मजेदार बात यह हुई कि इसका लाभ स्पेन और पुर्तगाल को उतना नहीं मिला। उन्होंने अपने भारी-भरकम मुनाफ़ों को आगे व्यापार या अपने व्यापारी जहाज़ों के बेड़े का विस्तार करने में नहीं लगाया। उनकी बजाय, अटलांटिक महासागर के किनारे-किनारे स्थित ऐसे अनेक देश थे, विशेष रूप से इंग्लैंड, फ्रांस, बेल्जियम और हॉलैंड, जिन्होंने इन 'खोजों' का लाभ उठाया। उनके सौदागरों ने बड़ी-बड़ी संयुक्त-पूंजी कंपनियाँ बनाई और अपने बड़े-बड़े व्यापारिक अभियान चलाए, उपनिवेश स्थापित किए और यूरोपवासियों को नयी दुनिया में पैदा होने वाली नयी-नयी चीज़ों; जैसे- तंबाकू, आलू, गन्ने की चीनी, ककाओ और रबड़ आदि से परिचित कराया।

इसके अलावा यूरोप अमरीका से आने वाली नयी फसलों, विशेष रूप से आलू और लाल मिर्च से परिचित हो गया। फिर ये फसल यूरोपवासियों द्वारा आगे भारत जैसे अन्य देशों में ले जाई गई।

उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका के मूल निवासियों के लिए, इन अभियानों के अनेक तात्कालिक परिणाम हुए; जैसे मार काट के कारण मूल निवासियों की जनसंख्या कम हो गई; उनकी जीवन-शैली का विनाश हो गया और उन्हें गुलाम बनाकर खानों, बागानों और कारखानों में उनसे काम लिया जाने लगा।

उत्पादन की पूँजीवादी प्रणाली वह होती है जिसमें उत्पादन तथा वितरण के साधनों का स्वामित्व व्यक्तियों अथवा निगमों के पास होता है और जहाँ प्रतिस्पर्धी खुले बाजार में भाग लेते हैं।

अनुमानित आंकड़ों से पता चलता है कि विजय-पूर्व मेक्सिको की जनसंख्या 3 करोड़ से 3.75 करोड़ तक रही होगी। एंडियन (Andean) क्षेत्र की भी यही स्थिति थी। जबकि मध्य-अमरीका में यह 1 करोड़ से 1.3 करोड़ के बीच थी। यूरोपीय लोगों के आने से पहले यहाँ के स्थानीय लोगों की जनसंख्या 7 करोड़ थी। और फिर डेढ़ सौ साल बाद उनकी आबादी घटकर केवल 35 लाख रह गई। इस जनहानि के लिए लड़ाइयाँ और बीमारियाँ प्रमुख रूप से जिम्मेदार थीं।

अमरीका में दो बड़ी सभ्यताओं-एज़टेक और इंका के अचानक नष्ट हो जाने से यह बात उजागर होती है कि आपस में लड़ने वाली ये दो संस्कृतियाँ एक-दूसरे से बहुत भिन्न थीं। एज़टेक और इंका दोनों ही साम्राज्यों के मामले में युद्धकला के स्वरूप ने स्थानीय लोगों को मनोवैज्ञानिक और भौतिक रूप से भयभीत करने में अपनी निर्णायक भूमिका अदा की। इस संघर्ष से नैतिक

© NCERT not to be republished

1550 के दशक में खानों का काम चालू हो जाने के बाद, संन्यासी डोमिनिगो डि सैंटो टॉमस (Domingo de Santo Tomas) ने इंडीज़ की परिषद में कहा था कि पोटोसी (Potosi) नरक का मुख है जो हर साल हज़ारों की संख्या में इंडियन लोगों को निगल जाता है और वहाँ के लालची और बेरहम खान मालिक उनके साथ लावारिस जानवरों जैसा बर्ताव करते हैं।

मूल्यों के बुनियादी अंतर का भी पता चलता है। 'स्थानीय' लोगों के लिए सोने के प्रति स्पेनियों की लोलुपता को समझ पाना असंभव था।

इन मुठभेड़ों की बर्बरता का एक स्पष्ट प्रमाण यही है कि हारे हुए लोगों को गुलाम बना लिया जाता था। वैसे गुलाम बनाना कोई नयी बात नहीं थी– परंतु दक्षिणी अमरीका का अनुभव इस दृष्टि से नया था कि इसके साथ-साथ वहाँ उत्पादन की पूँजीवादी प्रणाली का प्रादुर्भाव हो गया। काम की परिस्थितियाँ भयावह थीं लेकिन स्पेनी मालिकों का मानना था कि उनके आर्थिक लाभ के लिए इस प्रकार का शोषण अत्यंत आवश्यक है।

1601 में, स्पेन के फिलिप द्वितीय ने सार्वजनिक रूप से बेगार की प्रथा पर रोक लगा दी, लेकिन उसने एक गुप्त आदेश के द्वारा इसे चालू रखने की व्यवस्था भी कर दी। किंतु 1609 में एक कानून बनाया गया जिसके अंतर्गत ईसाई और ग़ैर-ईसाई, सभी प्रकार के स्थानीय लोगों को पूरी स्वतंत्रता दे दी गई। इससे उपनिवेशी यानी यूरोप से आकर यहाँ बसे लोग नाराज़ हो गए और दो साल के भीतर ही उन्होंने राजा को यह कानून हटाने और गुलाम बनाने की प्रथा को चालू रखने के लिए मजबूर कर दिया।

अब नयी-नयी आर्थिक गतिविधियाँ जोरों से शुरू हो गईं। जंगलों का सफाया करके प्राप्त की गई भूमि पर पशुपालन किया जाने लगा। 1700 में सोने की खोज के बाद खानों का काम जोरों से चल पड़ा और इन सभी कामों के लिए सस्ते श्रम की माँग बनी रही। यह स्पष्ट था कि स्थानीय लोग गुलाम बनने का विरोध करेंगे। अब यही विकल्प बचा था कि गुलाम अफ़्रीका से मँगवाए जाएँ। 1550 के दशक से 1880 के दशक तक (जब ब्राज़ील में दास प्रथा का उन्मूलन कर दिया गया था) ब्राज़ील में 36 लाख से भी अधिक अफ़्रीकी गुलामों का आयात किया गया। किंतु यह अमरीकी महाद्वीपों में आयातित अफ़्रीकी गुलामों की संख्या का तक़रीबन आधा था। 1750 में, कुछ लोग ऐसे भी थे जिनके पास हज़ार-हज़ार गुलाम होते थे।

दास प्रथा के उन्मूलन के बारे में 1780 के दशक में किए गए प्रारंभिक वाद-विवाद में कुछ लोगों ने यह भी दलील दी थी कि यूरोपवासियों के अफ़्रीका में आने से पहले भी वहाँ दास प्रथा मौजूद थी। यहाँ तक कि पंद्रहवीं शताब्दी में अफ़्रीका में स्थापित किए जाने वाले राज्यों में भी अधिकांश मजदूर-वर्ग गुलामों से ही बना था। उन्होंने यह भी बताया था कि यूरोपीय व्यापारियों को जवान स्त्री-पुरुषों को गुलाम

मानचित्र 3 : अफ़्रीका के नक्शे पर वे जगहें जहाँ से दास पकड़कर ले जाए गए

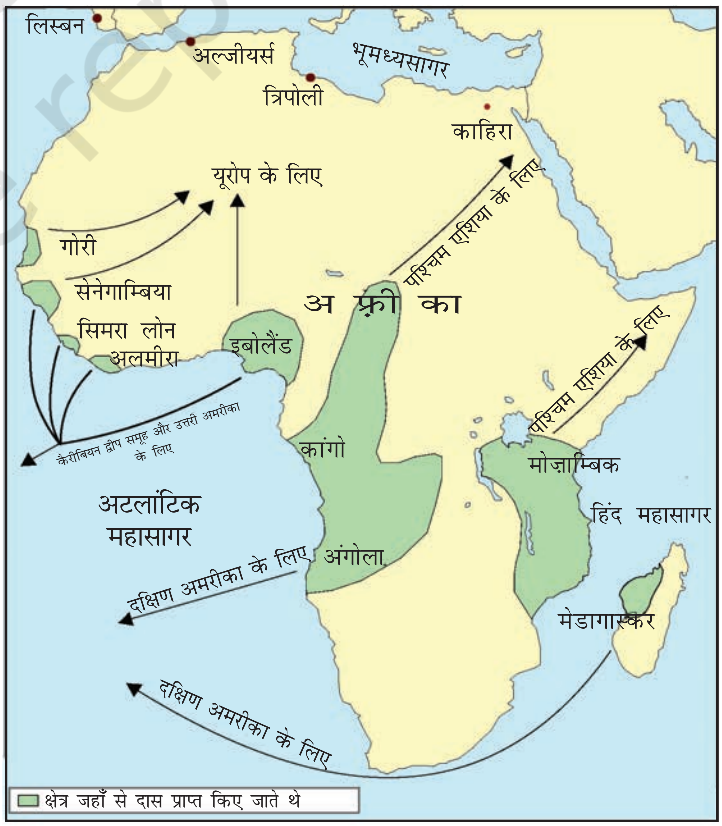

© NCERT not to be republished

बनाने में अफ़्रीकी लोगों से भी मदद मिलती थी। ये व्यापारी बदले में उन अफ़्रीकावासियों को दक्षिणी अमरीका से आयात की गई फसलें (मक्का, कसावा, कुमाला आदि जो इनका प्रमुख खाद्य था) देते थे। 1789 की अपनी आत्मकथा में ओलाउदाह एक्वियानो (Olaudah Equiano) नाम के एक मुक्त किए गए गुलाम ने इन दलीलों का उत्तर देते हुए लिखा है कि अफ़्रीका में गुलामों के साथ परिवार के सदस्यों जैसा बर्ताव किया जाता था। एरिक विलियम्स पहला आधुनिक इतिहासकार था जिसने 1940 के दशक में अपनी पुस्तक *कैपिटलिज़्म एंड स्लेवरी* (Capitalism and Slavery) में अफ़्रीकी गुलामों द्वारा सही गई तकलीफों का फिर से जायज़ा लेने की पहल की थी।

उपसंहार

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में, दक्षिणी अमरीका के उपनिवेशों में आकर बसे यूरोपीय लोगों ने स्पेन और पुर्तगाल के शासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया; वे स्वतंत्र देश बन गए, ठीक वैसे ही जैसे कि 1776 में तेरह उत्तरी अमरीकी उपनिवेशों ने ब्रिटेन के विरुद्ध विद्रोह करके संयुक्त राज्य अमरीका का निर्माण कर लिया था।

दक्षिणी अमरीका को आज 'लैटिन अमरीका'' भी कहा जाता है, क्योंकि स्पेनी और पुर्तगाली दोनों भाषाएँ लैटिन भाषा परिवार की ही हैं। वहाँ के निवासी अधिकतर देशज यूरोपीय (जिन्हें 'क्रिओल' Creole, कहा जाता था), यूरोपीय और अफ़्रीकी मूल के हैं। उनमें से अधिकांश लोग कैथलिक धर्मावलंबी हैं। उनकी संस्कृति में यूरोपीय परंपराओं के साथ मिली हुई देशी परंपराओं के तत्त्व विद्यमान हैं।

अभ्यास

संक्षेप में उत्तर दीजिए

1. एज़्टेक और मेसोपोटामियाई लोगों की सभ्यता की तुलना कीजिए।
2. ऐसे कौन-से कारण थे जिनसे 15वीं शताब्दी में यूरोपीय नौचालन को सहायता मिली?
3. किन कारणों से स्पेन और पुर्तगाल ने पंद्रहवीं शताब्दी में सबसे पहले अटलांटिक महासागर के पार जाने का साहस किया?
4. कौन सी नयी खाद्य वस्तुएँ दक्षिणी अमरीका से बाकी दुनिया में भेजी जाती थीं?

संक्षेप में निबंध लिखिए

5. गुलाम के रूप में पकड़कर ब्राज़ील ले जाए गए सत्रहवर्षीय अफ़्रीकी लड़के की यात्रा का वर्णन करें।
6. दक्षिणी अमरीका की खोज ने यूरोपीय उपनिवेशवाद के विकास को कैसे जन्म दिया?

© NCERT not to be republished

चार

आधुनिकीकरण की ओर

औद्योगिक क्रांति

मूल निवासियों का विस्थापन

आधुनिकीकरण के रास्ते

not to be republished NCERT

आधुनिकीकरण की ओर

पिछले भाग में आपने मध्यकालीन और प्रारम्भिक आधुनिक विश्व की कुछ महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक प्रक्रियाओं का अध्ययन किया – सामंतवाद, यूरोपीय पुनर्जागरण और यूरोप तथा अमरीका के बीच सम्पर्क अथवा टकराव। जैसा कि आप समझ गये होंगे, आधुनिक विश्व को बनाने में जिन घटनाओं का योगदान रहा वे इसी समय हुईं; खासतौर से 15वीं शताब्दी के मध्य से। विश्व इतिहास के दो अन्य परिवर्तनों ने ऐसी ज़मीन तैयार की जिसे 'आधुनिकीकरण' कहा गया। यह थे औद्योगिक क्रांति और राजनीतिक क्रांतियों की लड़ी जिसने प्रजा को नागरिक में तब्दील कर दिया। इन राजनीतिक क्रांतियों की शुरुआत अमरीकी क्रांति (1776–81) और फ्रांसीसी क्रांति (1789–94) से हुई।

ब्रिटेन दुनिया का पहला औद्योगिक राष्ट्र रहा है। विषय 9 में आप इसका अध्ययन करेंगे कि ऐसा कैसे और क्यों हुआ। लंबे अरसे से यह समझा जाता था कि ब्रिटेन के औद्योगीकरण ने दूसरे देशों के औद्योगीकरण के लिए आदर्श नमूना (मॉडल) प्रस्तुत किया। विषय 9 में किए गए विचार–विमर्श से आपको पता चलेगा कि इतिहासकारों ने औद्योगीकरण संबंधी पहले के कुछ विचारों को लेकर प्रश्न उठाए हैं। हालाँकि प्रत्येक देश ने दूसरों के अनुभवों से बहुत कुछ सीखा फिर भी उसने औद्योगीकरण के प्रस्तुत नमूनों का अंधानुकरण नहीं किया। मिसाल के तौर पर ब्रिटेन में कोयला और सूती कपड़े के उद्योगों का विकास औद्योगीकरण के पहले चरण में हुआ जबकि रेलवे के आविष्कार ने इस प्रक्रिया के दूसरे चरण की शुरुआत की। अन्य देशों, जैसे रूस में औद्योगिक विकास काफ़ी देर से शुरू हुआ – 19वीं शताब्दी के आखिर में – यहाँ रेलवे और भारी उद्योग औद्योगीकरण के पहले चरण में ही विकसित होने लगे। इसी तरह औद्योगीकरण में राज्य और बैंकों की भूमिका प्रत्येक देश में भिन्न–भिन्न रही है। विषय 9 में जिस तरह ब्रिटेन के औद्योगिक विकास की चर्चा की गई है उससे अन्य औद्योगिक देशों जैसे अमरीका और जर्मनी जो महत्त्वपूर्ण औद्योगिक शक्तियाँ रहे हैं, के औद्योगिक प्रगति के बारे में आपकी जिज्ञासा जगेगी। विषय 9 इस बात पर भी ज़ोर देता है कि ब्रिटेन को औद्योगीकरण की कितनी मानवीय और भौतिक कीमत चुकानी पड़ी – गरीब मज़दूर खासकर बच्चों की दुर्दशा, पर्यावरण का क्षय और हैज़ा तथा तपेदिक की महामारियाँ। इसी तरह से विषय 11 में आप जापान में कैडमियम और पारे के ज़हर

दुनिया को जोड़ना। 1927 में 25 वर्षीय चार्ल्स लिंडबर्ग की एक इंजन वाले हवाई जहाज में अंटलांटिक महासागर को पार करते हुए न्यूयार्क से पैरिस, की यात्रा।

© NCERT not to be republished

के फैलने से हुए औद्योगिक प्रदूषण के बारे में पढ़ेंगे, जिसने लोगों को अंधाधुंध औद्योगीकरण के खिलाफ़ जन आंदोलन करने के लिए जागृत किया।

यूरोपीय शक्तियों ने औद्योगिक क्रांति के बहुत पहले से अमरीका, एशिया और दक्षिण अफ़्रीका के हिस्सों में उपनिवेश बनाना शुरू कर दिया था। 10वाँ विषय आपको यूरोपीय उपनिवेशियों द्वारा अमरीका और ऑस्ट्रेलिया के मूल निवासियों के साथ किए गए बर्ताव की कहानी बताता है। आबादकारों की बुर्जुआ मानसिकता ने उन्हें ज़मीन और पानी से लेकर सब कुछ बेचने और खरीदने के लिए प्रेरित किया। लेकिन मूल निवासी, जो यूरोपीय अमरीकियों को असभ्य नज़र आते थे, का पूछना था 'अगर आप हवा की ताज़गी और पानी के बुलबुलों के मालिक नहीं हैं, तो उसे कोई कैसे खरीद सकता है?' मूल निवासियों को ज़मीन, मछली और जानवरों पर मालिकाना हक जताने की ज़रूरत महसूस नहीं हुई। उन्हें इन चीज़ों को बेचने और खरीदने की वस्तुओं के रूप में बदलने की कोई इच्छा नहीं थी। अगर चीज़ों के आदान-प्रदान की ज़रूरत थी, तो उन्हें आसानी से उपहार में दिया जा सकता था। ज़ाहिर है कि मूल निवासी और यूरोपीय, सभ्यता की प्रतियोगी अवधारणाओं का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। मूल निवासियों ने यूरोपीय अतिवृष्टि से अपनी संस्कृति को मिटने नहीं दिया। हालाँकि 20वीं सदी के मध्य की अमरीकी और कनाडा की सरकारें चाहती थीं कि मूल निवासी 'मुख्यधारा से जुड़ें'। इसी दौर में आस्ट्रेलिया में सत्ताधारियों ने उनकी परंपरा और संस्कृति को पूरी तरह से नज़रअंदाज़ करने का प्रयास किया। किसी को हैरत हो सकती है कि आखिर 'मुख्यधारा' का मतलब क्या है? आर्थिक और राजनीतिक शक्ति किस तरह 'मुख्यधारा की संस्कृति' के निर्माण को प्रभावित करती है?

दुनिया को जोड़ना। जे. लिप्सित्ज की फिगर नामक मूर्ति जो उन्होंने 1920 के दशक में बनाई। इस पर मध्य अफ़्रीका की मूर्तिकला का असर है।

पश्चिमी पूँजीवाद- व्यापारिक, औद्योगिक और वित्तीय- और 20वीं सदी के शुरू के जापानी पूँजीवाद ने तीसरी दुनिया के बहुत से हिस्सों में उपनिवेश बनाये। इनमें से कुछ ऐसे उपनिवेश थे जहाँ यूरोपीय गोरे लोग बस गए। अन्य, जैसे कि भारत में ब्रिटिश शासन, सीधे औपनिवेशिक नियंत्रण के उदाहरण हैं। 19वीं और प्रारंभिक 20वीं सदी का चीन उपनिवेशवाद की तीसरी किस्म का उदाहरण है। यहाँ ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, रूस, अमरीका और जापान ने बिना सत्ता हाथ में लिए चीन के मामलों में दखलअंदाज़ी की। उन्होंने देश के संसाधनों से भरपूर फ़ायदा उठाया। इससे चीन की प्रभुसत्ता को गंभीर ठेस पहुँची और चीन का दर्जा अर्ध-उपनिवेश का हो गया।

दुनिया को जोड़ना। जापान की ज़ेन चित्रकारी। पश्चिमी कलाकार ऐसे चित्रों की प्रशंसा करते थे। 1920 के दशक के अमरीका में ज़ेन का प्रभाव 'निराकार अभिव्यंजनावादी (एक्सप्रेशनिस्ट)' चित्रकारी पर पड़ा।

लगभग सभी देशों में शक्तिशाली राष्ट्रीय आंदोलनों ने औपनिवेशिक शोषण को चुनौती दी। वैसे राष्ट्रवाद बिना औपनिवेशिक संदर्भ के भी उभरा जैसे कि पश्चिम या जापान में। सभी किस्मों के राष्ट्रवाद लोक प्रभुसत्ता के सिद्धांतों पर आधारित हैं। राष्ट्रीय आंदोलनों का मानना है कि राजनीतिक सत्ता जनता के हाथ में होनी चाहिए और इसी वजह से राष्ट्रवाद एक आधुनिक अवधारणा है। नागरिक राष्ट्रवाद भाषा, धर्म, जाति और लिंग पर ध्यान दिए बिना प्रभुसत्ता सभी लोगों के हाथ में प्रदान करता है। यह बराबर अधिकार वाले नागरिकों का समुदाय बनाने की कोशिश करता है और राष्ट्रीयता को जातीयता और धर्म से परे हटकर नागरिकता से परिभाषित करता है। जातीय और धार्मिक राष्ट्रवाद राष्ट्रीय एकता का निर्माण किसी भाषा, धर्म या कुछ परंपराओं के इर्द-गिर्द बनाने की कोशिश करते हैं जहाँ लोगों को जातीयता के आधार पर परिभाषित किया जाता है, समान नागरिकता के आधार पर नहीं। बहु जातीय देश में जातीय राष्ट्रवादी प्रभुसत्ता चुने हुए समूहों-समुदायों तक सीमित कर सकते हैं, जिन्हें अल्पसंख्यक समुदायों की तुलना में बेहतर समझा

© NCERT not to be republished

जाता है। समसामयिक काल में अधिकतर पश्चिमी देश राष्ट्रीयता की जातीयता की बजाय समान अधिकारों से परिभाषित करते हैं। एक प्रमुख अपवाद जर्मनी है जहाँ जातीय राष्ट्रवाद की विचारधारा का लंबा और कष्टदायी इतिहास रहा है। यह इतिहास, एक तरह से, 1806 में जर्मन राज्यों पर फ्रांस के शाही कब्जे के खिलाफ़ प्रतिक्रिया से शुरू हुआ। नागरिक राष्ट्रवाद की विचारधारा विश्व भर में जातीय/धार्मिक राष्ट्रवाद के साथ प्रतियोगिता करती आई है। यही हाल आधुनिक भारत, चीन और जापान में भी रहा है।

जैसे औद्योगीकरण के भिन्न-भिन्न तरीके रहे हैं, वैसे ही आधुनिकीकरण के कई मॉडल देखने को मिले हैं। विभिन्न समाजों ने अपनी विशिष्ट आधुनिकता विकसित की है। इस मामले में जापानी और चीनी उदाहरणों से बहुत कुछ समझ में आता है। जापान उपनिवेशी नियंत्रण से आज़ाद रहने में सफल रहा और 20वीं सदी के दौरान तेज़ी से आर्थिक और औद्योगिक प्रगति कर सका। द्वितीय विश्व युद्ध में हुई शर्मनाक हार के बाद जापानी अर्थव्यवस्था के पुनर्निर्माण को केवल युद्ध के बाद के चमत्कार के रूप में नहीं देखना चाहिए। जैसा कि विषय 11 दिखाता है, यह उस उन्नति का नतीजा था जो जापान 19वीं और 20वीं शताब्दी के शुरू में बनाने में कामयाब हुआ था। उदाहरण के लिए, क्या आपको मालूम है कि 1910 तक प्राथमिक विद्यालय में पढ़ने के लिए फ़ीस लगभग खत्म हो गई थी और सब बच्चों के लिए दाखिला अनिवार्य था? फिर भी जापानी आधुनिकीकरण की, अन्य किसी भी देश की तरह, अपनी दिक्कतें थीं: लोकतंत्र और सैन्यवाद के बीच, जातीय राष्ट्रवाद और नागरिक राष्ट्र निर्माण के बीच और जिसे बहुत से जापानी 'परंपरा' और 'पश्चिमीकरण' कहते हैं।

चीनियों ने औपनिवेशिक शोषण का और अपने नौकरशाह - सामंत वर्ग का प्रतिरोध किसान विद्रोह, सुधार और क्रांति के ज़रिये किया। 1930 के दशक के शुरुआती सालों में चीनी साम्यवादी पार्टी, जिसकी ताकत किसानों में थी, ने औपनिवेशिक शक्तियों का और देश के कुलीन वर्ग का प्रतिनिधित्व कर रहे राष्ट्रवादियों का सामना करना शुरू किया। उन्होंने अपने विचार देश के कुछ चुने हुए हिस्सों में आज़माने शुरू किये। उनकी समतावादी विचारधारा, भूमि सुधारों पर ज़ोर, और महिलाओं की समस्याओं के प्रति जागरूकता ने 1949 में विदेशी उपनिवेशवाद और राष्ट्रवादियों को उखाड़ फेंकने में मदद की। एक बार सत्ता में आने के बाद वे असमानताएँ घटाने, शिक्षा फैलाने और राजनीतिक जागरूकता बनाने में सफल रहे। इसके बावजूद, देश के एक-पार्टी ढाँचा और राज्य-प्रायोजित दमन ने, 1960 के दशक के मध्य के बाद राजनीतिक व्यवस्था के साथ बढ़ते असंतोष में योगदान किया। लेकिन साम्यवादी पार्टी काफ़ी हद तक देश पर अपना नियंत्रण रख पाई है क्योंकि बाज़ार के कुछ सिद्धांतों को अपनाकर उसने खुद का पुनराविष्कार किया और चीन को आर्थिक शक्ति में तब्दील करने के लिए कड़ी मेहनत की है।

विभिन्न देशों ने आधुनिकता को अलग-अलग तरीके से समझा है और अलग-अलग तरीकों से प्राप्त करने की कोशिश की है। हर रास्ता अपनी परिस्थिति और विचारों के संदर्भ में दिलचस्प कहानी पेश करता है। यह भाग उस कहानी के कुछ पहलुओं से आपका परिचय करवाएगा।

© NCERT not to be republished

कालक्रम चार

(लगभग 1700-2000)

यह कालरेखा आपको यह बताएगी कि पिछले तीन सौ वर्षों में दुनिया के अलग–अलग भागों में क्या घटित हो रहा था और किस प्रकार विभिन्न देशों के लोग हमारे आधुनिक विश्व के निर्माण में क्या योगदान दे रहे थे। आपको यह विश्व में पिछली शताब्दी में हुए अफ़्रीका के दास–व्यापार और दक्षिण अफ़्रीका में रंगभेद शासन की स्थापना, यूरोप में सामाजिक आंदोलनों, राष्ट्र राज्यों के निर्माण, साम्राज्यिक शक्तियों के विस्तार, उपनिवेशीकरण की प्रक्रिया, जनतंत्रीय और उपनिवेश विरोधी आंदोलनों के विषय में बताएगी। यह आपको कुछ उन अन्वेषणों और प्रौद्योगिक विकास के विषय में भी जानकारी देगी जो आधुनिकता संबंधी विचारों के सहयोगी रहे।

जैसा कि सभी कालरेखाओं के साथ हुआ है, कालरेखा कुछ तिथियों पर ही प्रकाश डालती है। इसके अलावा कुछ और तिथियाँ भी हैं जो महत्त्वपूर्ण हैं। जब आप इन कालरेखाओं की कड़ियों को देखते हैं तो यह न सोचें कि आपको केवल इन्हीं तिथियों को ही जानना है। इसका भी पता लगाएँ कि क्यों विभिन्न कालों की कालरेखाएँ विभिन्न तिथियों पर प्रकाश डालती हैं और इनका चयन आपको यह सब बताता है।

तिथि	अफ़्रीका	यूरोप
1720-30	पश्चिम अफ़्रीका में स्थित दाहोमी के राजा अग़ाज (1724–34) ने दास–व्यापार* पर प्रतिबंध लगाया; 1740 ई. में इसे फिर से लागू किया गया	
1730-40		कैरोलस लिनेअएस (Carolus Linnaeus) ने पौधों और जानवरों का वर्गीकरण करने के लिए एक वर्गिकीय प्रणाली (taxononic system) की खोज की (1735)
1740-1750		
1750-1760	दक्षिण अफ़्रीका के केप टाउन में पहली बार चेचक (1755) का प्रकोप हुआ जिसे नाविकों ने फैलाया	
1760-1770		
1770-1780	अंतराष्ट्रीय दास–व्यापार अपने चरम उत्कर्ष पर था। सभी 'उपनिवेशिक शक्तियाँ दास–व्यापार कर रही थीं। लाखों अश्वेत अफ़्रीकी लोगों को प्रत्येक वर्ष अटलांटिक के पार भेजा जाता था जिनमें दो तिहाई समुद्री यात्रा के दौरान मर जाते थे	रूस में इमेलियन पगाचेव (Emelian Pugachev) ने कृषक विद्रोह (1773-75) का नेतृत्व किया
1780-90		फ्रांसीसी क्रांति* (1789) का प्रारंभ
1790-1800		
1800-1810	मोहम्मद अली ने मिस्र में शासन किया, 1805-48; मिस्र ऑटोमन साम्राज्य से अलग हो गया	
1810-1820		
1820-30	पश्चिम अफ़्रीका में लाइबेरिया की स्थापना (1822) जो स्वतंत्र दासों का देश था	लुई ब्रेल (Louis Braille) ने अंगुलियों से पढ़ने की प्रणाली* को विकसित किया (1823); इंग्लैण्ड में यात्री रेलगाड़ी चलाई गई (1825)
1830-40	अब्दुल–कादिर ने फ्रांसीसियों के अल्जीरिया में बसने के विरुद्ध (1832–47) आंदोलन किया	
1840-50		अनेक यूरोपीय देशों में उदारवादी और सामाजिक आंदोलन (1848)
1850-60		

© NCERT not to be republished

तिथि	अफ़्रीका	यूरोप
1860-70	विश्व के सबसे महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्गों में से एक स्वेज नहर* व्यापार हेतु खोली गई	रूसी कृषि-दासों (serfs) को स्वंतत्र किया गया (1861)
1870-80		जर्मनी और इटली एक संयुक्त राष्ट्र राज्यों के रूप में उभर कर आए
1880-90	यूरोप के लोगों का 'अफ़्रीका के लिए संघर्ष' प्रारंभ हुआ	
1890-1900		पहली फ़िल्म का निर्माण (1895); पहला ओलंपिक खेल एथेंस में संपन्न हुआ (1896)
1900-1910	महात्मा गांधी* ने नस्लवादी कानूनों के खिलाफ सत्याग्रह की वकालत की (1906)	
1910-1920	दक्षिण अफ़्रीका ने श्वेत लोगों के लिए 87 प्रतिशत भूमि आरक्षित करने हेतु कानून बनाए (1913)	प्रथम विश्व युद्ध (1914-1918), 1917 की रूसी क्रांति
1920-30		मुस्तफ़ा कमाल के नेतृत्व में तुर्की गणराज्य बना (1923)
1930-40	अंगोला से मोज़ाम्बिक तक प्रथम ट्रांस-अफ़्रीकी रेलसेवा पूर्ण हुई (1931)	हिटलर ने जर्मन शासन की बागडोर हथिया ली (1933); द्वितीय विश्व युद्ध (1939-45)
1940-50	दक्षिण अफ़्रीका में अफ़्रीकी नेशनल पार्टी की विजय (1948), रंगभेद नीति की स्थापना	ब्रिटेन ने आयरिश स्वतंत्रता को मान्यता दी (1949)
1950-60	उप-सहारा अफ़्रीकी क्षेत्र में घाना प्रथम स्वतंत्र देश बना (1957)	डी.एन.ए. की खोज; रूस ने अंतरिक्षयान स्पूतनिक भेजा (1957)
1960-70	अफ़्रीकी एकता संगठन की स्थापना (1963)	यूरोप में विरोध आंदोलन (1968)
1970-80		
1980-90		मिखाइल गोरबाचेव सोवियत रूस के नेता बने (1985); संपूर्ण विश्व में वेब का प्रारंभ (1989)
1990-2000	दक्षिण अफ़्रीका में नेल्सन मंडेला* को रिहा किया गया (1990); रंगभेद को समाप्त करने की प्रक्रिया आरंभ हुई	वैज्ञानिकों ने डॉली (1997) क्लोन भेड़ बनाई जिससे आनुवंशिक इंजीनियरिंग की सीमा के बारे में नए विवाद प्रारंभ हुए

© NCERT not to be republished

तिथि	एशिया	दक्षिणी एशिया
1720-30	*गुजिन तुशू जिचेंग** (Gujin tushu jicheng) नामक सबसे विशाल विश्वकोश को चीन के मंचू शासक कांगक्षी ने छपा कर अधिकृत किया	
1730-40		
1740-1750		मराठों ने उत्तरी भारत में अपनी प्रभुता का विस्तार किया
1750-1760	एओकी कोन्यो (Aoki Konyo), एक जापानी विद्वान ने डच-जापानी शब्दकोश का संकलन किया (1758)।	राबर्ट क्लाइव ने बंगाल के नवाब को प्लासी के युद्ध में पराजित किया (1757)
1760-1770		
1770-1780		
1780-90	अंग्रेज़ों ने भारत से चीन को अफीम* का निर्यात किया जिसमें अत्यधिक वृद्धि हुई	
1790-1800		रणजीत सिंह* ने पंजाब में सिख राज्य की स्थापना की (1799) 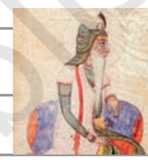
1800-1810		
1810-1820		
1820-30	जावा के लोगों की डचों के खिलाफ बग़ावत (1825-30)	सती प्रथा को ग़ैर कानूनी घोषित किया गया (1829)
1830-40	ऑटोमन सुल्तान अब्दुल मज़ीद ने आधुनिकीकरण के कार्यक्रम शुरू किए (1839)	
1840-50		
1850-60	थाईलैंड के राजा रामा चतुर्थ का शासन, उसने अपने देश में विदेशी व्यापार की शुरुआत की (1853)	रेल और टेलीग्राफ लाइन का आरंभ (1853); महान विद्रोह* (1857)
1860-70	फ्रांसीसियों के इंडोचीन (दक्षिण-एशिया) में आधिपत्य का प्रारंभ (1862)	
1870-80	जापान की प्रथम रेल-सेवा, टोकियो से याकोहामा, का प्रारंभ (1872)	दक्कन और दक्षिण भारत में अकाल (1876-78), पचास लाख से अधिक लोगों की मृत्यु
1880-90	ब्रिटेन ने बर्मा (म्यांमार) पर अधिकार किया (1885-86)	भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना* (1885)
1890-1900		प्रथम भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, 1885

© NCERT not to be republished

तिथि	एशिया	दक्षिणी एशिया
1900-1910	जापानी जलसेना ने रूसी जहाज़ी बेड़ों को परास्त किया (1905)	
1910-1920	बेल्फोर (Balfour) घोषणा-पत्र ने फिलिस्तीन में यहूदियों को स्वदेश देने का आश्वासन दिया (1917)	
1920-30		महात्मा गांधी ने असहयोग आंदोलन प्रारंभ किया (1921); ई.वी. रामास्वामी नायकर ने तमिलनाडु में आत्म-सम्मान आंदोलन प्रारंभ किया (1925)
1930-40	इराक से सीरिया तक ब्रिटिश तेल पाइपलाइन बनी (1934)	अर्देशीर ईरानी की आलम आरा (1931) सबसे पहली टॉकी फ़िल्म थी। बगदाद को इस्तांबुल से जोड़ने वाली बर्लिन-बगदाद रेलवे का परिचालन शुरू (1940)
1940-50	संयुक्त राष्ट्र अमरीका ने जापानी नगर हिरोशिमा और नागासाकी* (1945) पर अणु बम गिराया जिसमें लगभग 1,20,000 व्यक्तियों की मृत्यु हुई बाद में बहुत से लोग विकिरण के प्रभाव से मरे; चीनी लोक-गणतंत्र का संघटन (1949)	भारत छोड़ो आंदोलन (1942); भारत और पाकिस्तान को स्वतंत्रता मिली (1947)
1950-60	बांदुंग (Bandung) सम्मेलन (1955) ने गुट निरपेक्ष आंदोलन को मज़बूत किया	भारत गणतंत्र* (1950) बना
1960-70	फिलिस्तीनी शरणार्थियों को एकत्रित करने के लिए अरब नेताओं ने फिलस्तीन मुक्ति संगठन की स्थापना की (1964); वियतनाम में युद्ध (1965-73)	सिरमावो भंडारनायके* (Sirimavo Bhandarnaike) विश्व की प्रथम महिला प्रधानमंत्री (1960)।
1970-80	ईरान के शाह का तख्ता-पलट दिया गया (1979)	बांग्लादेश स्वतंत्र राष्ट्र बना (1971)
1980-90	बेगिंग, चीन के तिआननमेन चौक (Tiananmen Square) में प्रजातंत्र के लिए विशाल प्रदर्शन (1989)	भोपाल यूनियन कार्बाइड के कीटनाशी (pesticides) प्लांट में रिसाव (1984)। यह इतिहास में बहुत ही भयंकर औद्योगिक दुर्घटना थी जिसमें हज़ारों व्यक्तियों की मृत्यु हुई
1990-2000	इराक़, कुवैत और अमरीका के मध्य खाड़ी युद्ध	भारत और पाकिस्तान ने नाभिकीय परीक्षण (nuclear tests) किए (1998)

© NCERT not to be republished

तिथि	अमरीका	आस्ट्रेलिया/प्रशांत महासागरीय द्वीप
1720-30	पुर्तगालियों ने ब्राज़ील में कॉफी का प्रचलन किया (1727)	डच नाविक रोगेवीन (Roggeveen) समोआ द्वीपों और प्रशांत महासागर के ईस्टर द्वीप में पहुँचा (1722)
1730-40	स्टोनो दास विद्रोह का नेतृत्व एक शिक्षित दास जेमी ने किया (1739)	
1740-1750	जुआन संटोस (Juan Santos), जिसे अताहुआल्पा II भी कहते हैं, ने पेरू के मूल निवासियों का नेतृत्व किया किंतु उसका विद्रोह असफल रहा (1742)	
1750-1760		
1760-1770	ब्रिटिश लोगों के विरुद्ध ओटावा कबीले के चीफ पोन्टियक ने विरोध प्रदर्शन का नेतृत्व किया (1763)	कैप्टन कुक की प्रशांत महासागरीय* तीन यात्राओं में प्रथम (1768-71)
1770-1780	अमरीकी स्वतंत्रता की घोषणा (1776)	
1780-90	अमरीका का संविधान बना; डॉलर का पहली बार अमरीकी मुद्रा के रूप में प्रयोग (1787)	प्रथम ब्रिटिश अपराधियों को आस्ट्रेलिया के बोटानी बे (Botany Bay) भेजा गया (1788)
1790-1800		
1800-1810		मैथ्यू फ्लिंडर्स (Matthew Flinders) ने परिक्रमा की और आस्ट्रेलिया नाम रखा जिसका अर्थ 'दक्षिणी' है (1801-03)
1810-1820		
1820-30	साइमन बोलिवर* (Simon Bolivar) ने वेनिजुएला को स्वतंत्रता दिलाई (1821)	
1830-40	अमरीका में 'ट्रेल ऑफ टियर्स' (आँसुओं की पगडंडी); इसमें हज़ारों पूर्वी क्षेत्र के अमरीकी मूल निवासियों को जबरन पश्चिम की ओर खदेड़ा गया जिसमें बहुतों ने मार्ग में ही दम तोड़ दिया (1838)	चार्ल्स डार्विन ने प्रशांत महासागर में गलपगोस (Galapagos) द्वीपों (1831) की यात्रा की जिसके फलस्वरूप विकास के सिद्धांत को समझने में सहायता मिली
1840-50	सेनेका फॉल्स (Seneca Falls), न्यूयार्क की बैठक में अमरीकी महिलाओं के समान अधिकार का आह्वान किया (1848) गया	ब्रिटिश और माओरिस ने न्यूज़ीलैंड में वेटंगी (Waitangi) की संधि (1840) पर हस्ताक्षर किए। इसके बाद माओरिस लोगों ने अनेक विद्रोह किए (1844-88)
1850-60		आस्ट्रेलिया और इंग्लैंड के बीच भाप की नियमित जलयान सेवा पहली बार शुरू की गई (1856)

© NCERT not to be republished

तिथि	उत्तरी-दक्षिणी अमरीका	आस्ट्रेलिया/प्रशांत द्वीप समूह
1860-70	अमरीका में गृह युद्ध (1861-65); संविधान के तेरहवें संशोधन द्वारा दास प्रथा पर प्रतिबंध	ब्रिटेन से आस्ट्रेलिया बंदियों को भेजने पर प्रतिबंध (1868)
1870-80	टेलीफोन, रिकार्ड-प्लेयर, बिजली के बल्ब का अन्वेषण	
1880-90	कोका-कोला* की खोज (1886)	
1890-1900		न्यूज़ीलैंड में महिलाओं को मताधिकार मिला (1893)
1900-1910	राइट ब्रदर्स ने हवाई जहाज़ का आविष्कार किया (1903)	
1910-1920	हेनरी फोर्ड ने कार उत्पादन का प्रारंभ किया (1913); अटलांटिक और प्रशांत महासागर को जोड़ने वाली पनामा नहर खोली गई (1914)	पश्चिम सेमेओ की एक बटा पाँच जनसंख्या इन्फ्लूएंज़ा से समाप्त हो गई (1918)
1920-30	अमरीका की वॉल स्ट्रीट स्टॉक एक्सचेंज में भारी गिरावट (1929); इससे महामंदी का दौर शुरू हुआ, 1932 तक 1 करोड़ बीस लाख व्यक्ति बेरोज़गार हो गए	न्यूज़ीलैंड सरकार के विरुद्ध सेमेओ के मोओ लोगों का विद्रोह (1929)
1930-40		
1940-50	संयुक्त राष्ट्र अमरीका ने द्वितीय विश्व युद्ध में भाग लिया।	
1950-60	क्यूबा क्रांति के बाद फिदेल कास्त्रो (Fidel Castro), 1958 सत्ता में आए	
1960-70	संयुक्त राज्य अमरीका में नागरिक अधिकार आंदोलन (1963)* ; अमरीकी नागरिक अधिकार अधिनियम (1964) में प्रजातीय पार्थक्य पर प्रतिबंध लगाया। नागरिक अधिकार नेता मार्टिन लूथर किंग की हत्या (1968); अमरीकी अंतरिक्ष-यात्री चन्द्रमा की भूमि पर उतरा (1969)	
1970-80	महिलाओं के आंदोलनों के कारण अमरीकी कांग्रेस ने समान अवसर अधिनियम पारित किया	टोंगा और फीजी ने ब्रिटेन की अधीनता से मुक्त होकर स्वतंत्रता प्राप्त की (1970); पपुआ न्यू गिनी आस्ट्रेलिया की अधीनता से मुक्त होकर स्वतंत्र हो गया
1980-90		न्यूज़ीलैंड को नाभिकीय अस्त्रमुक्त क्षेत्र घोषित किया गया (1984); रेरोटोंगा की संधि ने दक्षिण पेसिफिक को नाभिकीय अस्त्र मुक्त क्षेत्र (Nuclear Free Zone) घोषित किया
1990-2000		

क्रियाकलाप

यदि आप इस पुस्तक में दी गई चार कालरेखाओं की तुलना करें तो आप बाएँ खाने में दिए गए तिथि क्रम के कालों में विभिन्नता पाएँगे। इसके पीछे के कारणों के बारे में आप क्या सोचते हैं? अपने आप एक कालरेखा बनाने की कोशिश करिए और घटनाओं के अपने चयन के कारण बताइए?

© NCERT not to be republished

विषय

9

औद्योगिक क्रांति

11091CH09

ब्रिटेन में, 1780 के दशक और 1850 के दशक के बीच उद्योग और अर्थव्यवस्था का जो रूपांतरण हुआ उसे 'प्रथम औद्योगिक क्रांति के नाम से पुकारा जाता है।' इस क्रांति के ब्रिटेन में दूरगामी प्रभाव हुए। बाद में, यूरोप के देशों और संयुक्त राज्य अमरीका में ऐसे ही परिवर्तन हुए और उन परिवर्तनों का उन देशों तथा शेष विश्व के समाज और अर्थव्यवस्था पर भी काफी प्रभाव पड़ा।*

ब्रिटेन में औद्योगिक विकास का यह चरण नयी मशीनों और तकनीकियों से गहराई से जुड़ा है। इन मशीनों तथा तकनीकों ने पहले की हस्तशिल्प और हथकरघा उद्योगों की तुलना में भारी पैमाने पर माल के उत्पादन को संभव बनाया। इस अध्याय में कपास और लोहा उद्योगों में हुए परिवर्तनों की रूपरेखा दी गई है। ब्रिटेन के उद्योगों में शक्ति के एक नए स्रोत के रूप में भाप का व्यापक रूप से प्रयोग होने लगा। इसके प्रयोग से जहाज़ों और रेलगाड़ियों द्वारा परिवहन की गति अधिक तेज़ हो गई। जिन आविष्कर्ताओं तथा व्यापारियों ने ये परिवर्तन लाने में योगदान दिया था उनमें से बहुत से लोग व्यक्तिगत रूप से न तो धनवान थे और न ही वे बुनियादी विज्ञानों, जैसे भौतिकी अथवा रसायन में शिक्षित थे, जैसाकि उनमें से कुछ वैज्ञानिकों की पृष्ठभूमि पर नज़र डालने से पता चलेगा।

आगे चलकर औद्योगीकरण की वजह से कुछ लोग तो समृद्ध हो गए, पर इसके प्रारंभिक दौर को लाखों लोगों के काम करने की खराब एवं बदतर रहन-सहन की परिस्थितियों से जोड़ा जाता है। इनमें स्त्रियाँ और बच्चे भी शामिल थे। इससे विरोध भड़क उठा फलस्वरूप सरकार को कार्य करने की परिस्थितियों के नियंत्रण के लिए कानून बनाने पड़े।

**वहाँ दूसरी औद्योगिक क्रांति लगभग 1850 के बाद आई और उसमें रसायन तथा बिजली जैसे नए औद्योगिक क्षेत्रों का विस्तार हुआ। उस दौरान, ब्रिटेन जो पहले विश्व-भर में औद्योगिक शक्ति के रूप में अग्रणी था, पिछड़ गया और जर्मनी तथा संयुक्त राज्य अमरीका उससे आगे निकल गए।*

'औद्योगिक क्रांति' शब्द का प्रयोग यूरोपीय विद्वानों जैसे फ्रांस में जॉर्जिस मिशले (Georges Michelet) और जर्मनी में फ्रॉइड्रिक एंजेल्स (Friedrich Engels) द्वारा किया गया। अंग्रेज़ी में इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम दार्शनिक एवं अर्थशास्त्री ऑरनॉल्ड टॉयनबी (Arnold Toynbee,1852-83) द्वारा उन परिवर्तनों का वर्णन करने के लिए किया गया जो ब्रिटेन के औद्योगिक विकास में 1760 और 1820 के बीच हुए थे। इस दौरान ब्रिटेन में जॉर्ज तृतीय का शासन था, जिसके बारे में टॉयनबी ने ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में कई व्याख्यान दिए थे। उनके व्याख्यान उनकी असामयिक मृत्यु के बाद, 1884 में एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुए जिसका नाम था *लेक्चर्स ऑन दि इंडस्ट्रियल रिवोल्यूशन इन इंग्लैंड : पॉपुलर एड्रसेज़, नोट्स एंड अदर फ्रैग्मेंट्स* (इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति पर व्याख्यान: लोकप्रिय अभिभाषण, टिप्पणियाँ और अन्य अंश)।

परवर्ती इतिहासकार टी.एस.एश्टन (T.S. Ashton), पॉल मंतू (Paul Mantoux) और एरिक हॉब्सबाम (Eric Hobsbawm) मोटे तौर पर टॉयनबी के विचारों से सहमत थे। 1780 के दशक से 1820 के दौरान कपास और लौह उद्योगों, कोयला खनन, सड़कों और नहरों के निर्माण और विदेशी व्यापार में उल्लेखनीय आर्थिक प्रगति हुई। एश्टन (1889-1968) ने तो इस औद्योगिक क्रांति का उत्सव मनाया, जब इंग्लैंड छोटी-छोटी मशीनों और कल-पुर्जों की बाढ़ से मानो आप्लावित हो गया।

© NCERT not to be republished

ब्रिटेन क्यों?

ब्रिटेन पहला देश था जिसने सर्वप्रथम आधुनिक औद्योगीकरण का अनुभव किया था। यह सत्रहवीं शताब्दी से राजनीतिक दृष्टि से सुदृढ़ एवं संतुलित रहा था और इसके तीनों हिस्सों – इंग्लैंड, वेल्स और स्कॉटलैंड – पर एक ही राजतंत्र यानी सम्राट का एकछत्र शासन रहा था। इसका अर्थ यह हुआ कि संपूर्ण राज्य में एक ही कानून व्यवस्था, एक ही सिक्का (मुद्रा–प्रणाली) और एक ही बाज़ार व्यवस्था थी। इस बाज़ार व्यवस्था में स्थानीय प्राधिकरणों का कोई हस्तक्षेप नहीं था, यानी वे अपने इलाके से होकर गुजरने वाले माल पर कोई कर नहीं लगा सकते थे जिससे कि उसकी कीमत बढ़ जाती। सत्रहवीं शताब्दी के अंत तक आते–आते, मुद्रा का प्रयोग विनिमय यानी आदान–प्रदान के माध्यम के रूप में व्यापक रूप से होने लगा था। तब तक बहुत से लोग अपनी कमाई, वस्तुओं की बजाय मज़दूरी और वेतन के रूप में पाने लगे। इससे लोगों को अपनी आमदनी से खर्च करने के लिए अधिक विकल्प प्राप्त हो गए और वस्तुओं की बिक्री के लिए बाज़ार का विस्तार हो गया।

अठारहवीं शताब्दी में इंग्लैंड एक बड़े आर्थिक परिवर्तन के दौर से गुज़रा था, जिसे बाद में 'कृषि–क्रांति' कहा गया है। यह एक ऐसी प्रक्रिया थी जिसके द्वारा बड़े ज़मींदारों ने अपनी ही संपत्तियों के आसपास छोटे–छोटे खेत (फार्म) खरीद लिए और गाँव की सार्वजनिक ज़मीनों को घेर लिया; इस प्रकार उन्होंने अपनी बड़ी–बड़ी भू–संपदाएँ बना लीं जिससे खाद्य उत्पादन की वृद्धि हुई। इससे भूमिहीन किसानों और गाँव की सार्वजनिक ज़मीनों पर अपने पशु चराने वाले चरवाहों एवं पशुपालकों को कहीं और काम–धंधा तलाशने के लिए मजबूर होना पड़ा। उनमें से अधिकांश लोग आसपास के शहरों में चले गए।

अंग्रेज़ी के सुप्रसिद्ध लेखक ओलिवर गोल्डस्मिथ (Oliver Goldsmith, 1728–74) ने अपनी कविता 'उजड़ा गाँव' (दि डेज़र्टेड विलेज़) में इस स्थिति का चित्रण किया है। कुछ पंक्तियाँ देखिए:

"वो इनसान जो अपने धन और अहंकार से पनप रहा है।
उस ज़मीन के लिए
गरीबों ने अपना सब कुछ हारा है;

वो ज़मीन जहाँ उसकी झील बनी है
वो ज़मीन जहाँ उसके बगीचे के आगे
चारों ओर फैली हुई है
उस जगह जहाँ उसके घोड़े बँधते हैं
और वहाँ जहाँ घोड़ों के साज़ो–सामान रखे जाते हैं
और वहीं जहाँ उनके कुत्ते रहा करते हैं;

वो रेशमी आलस्य जिसमें उसके अंग ढके हैं
न जाने कितने पड़ोसी खेतों की
आधी से ज़्यादा, उपजों को छीना है।"

शहर, व्यापार और वित्त

अठारहवीं शताब्दी से, यूरोप के बहुत–से शहर क्षेत्रफल और आबादी दोनों ही दृष्टियों से बढ़ने लगे थे। यूरोप के जिन उन्नीस शहरों की आबादी सन् 1750 से 1800 के बीच दोगुनी हो गई थी, उनमें से ग्यारह ब्रिटेन में थे। इन ग्यारह शहरों में लंदन सबसे बड़ा था जो देश के बाज़ारों का केंद्र था; बाकी बड़े–बड़े शहर भी लंदन के आस–पास ही स्थित थे।

लंदन ने संपूर्ण विश्व में भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया था। अठारहवीं शताब्दी तक आते–आते भूमंडलीय व्यापार का केंद्र, इटली तथा फ्रांस के भूमध्यसागरीय पत्तनों (बंदरगाह) से हटकर, हॉलैंड और ब्रिटेन के अटलांटिक पत्तनों पर आ गया था। इसके बाद तो लंदन ने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए ऋण प्राप्ति के प्रधान स्रोत के रूप में ऐम्सटर्डम का स्थान ले लिया। साथ ही, लंदन, इंग्लैंड, अफ़्रीका और वेस्टइंडीज के बीच स्थापित त्रिकोणीय व्यापार का केंद्र भी बन गया। अमरीका और एशिया में व्यापार करने वाली कंपनियों के कार्यालय भी लंदन में थे। इंग्लैंड में विभिन्न बाज़ारों के बीच माल की आवाजाही प्रमुख रूप से नदी मार्ग से और समुद्री तट की सुरक्षित खाड़ियों में पानी के जहाज़ों से होती थी। रेलमार्ग का प्रसार होने तक, जलमार्गों द्वारा परिवहन स्थलमार्गों की तुलना में सस्ता पड़ता था और उसमें समय भी कम लगता था। काफी पहले यहाँ तक कि सन् 1724 से इंग्लैंड के पास नदियों के ज़रिये लगभग 1,160 मील लंबा जलमार्ग था जिसमें नौकाएँ चल सकती थीं और पहाड़ी इलाकों को छोड़कर, देश के अधिकांश स्थान नदी से अधिक से अधिक 15 मील की दूरी पर थे। चूंकि इंग्लैंड की नदियों के सभी नौचालनीय भाग समुद्र से जुड़े हुए

थे, इसलिए नदी पोतों के ज़रिये ढोया जाने वाला माल समुद्रतटीय जहाज़ों तक जिन्हें 'तटपोत' (Coasters) कहा जाता था, आसानी से ले जाया और सौंपा जा सकता था। सन् 1800 तक इन कोस्टर तटपोतों पर काम करने वाले नाविकों की संख्या 100,000 तक पहुँच गई थी।

देश की वित्तीय प्रणाली का केंद्र बैंक ऑफ इंग्लैंड (1694 में स्थापित) था। 1784 तक, इंग्लैंड में कुल मिलाकर एक सौ से अधिक प्राँतीय बैंक थे और अगले दस वर्षों में इनकी संख्या बढ़कर तीन गुना हो गई थी। 1820 के दशक तक, प्राँतों में 600 से अधिक बैंक थे और अकेले लंदन में ही 100 से अधिक बैंक थे। बड़े-बड़े औद्योगिक उद्यम स्थापित करने ओर चलाने के लिए आवश्यक वित्तीय साधन इन्हीं बैंकों द्वारा उपलब्ध कराए जाते थे।

1780 के दशक से 1850 के दशक तक ब्रिटेन में जो औद्योगीकरण हुआ, उसके कुछ कारण ऊपर बताए जा चुके हैं – गाँवों से आए अनेक गरीब लोग नगरों में काम करने के लिए उपलब्ध हो गए, बड़े-बड़े उद्योग-धंधे स्थापित करने के लिए आवश्यक ऋण-राशि उपलब्ध कराने के लिए बैंक मौजूद थे, और परिवहन के लिए एक अच्छी व्यवस्था उपलब्ध थी।

आगे के पृष्ठों में दो नए कारकों का वर्णन किया गया है: प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों की शृंखला, जिसने उत्पादन के स्तरों में अचानक वृद्धि कर दी और एक नया परिवहन तंत्र जो रेल मार्गों के निर्माण से तैयार हो गया। इन दोनों विकासक्रमों के मामले में, यदि बीच के समय को सावधानीपूर्वक देखा जाए तो यही पता चलेगा कि इन विकासक्रमों और उनके व्यापक इस्तेमाल के बीच कुछ दशकों का अंतराल रहा था। इसलिए कोई यह न समझे कि प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में कोई नया आविष्कार होते ही उद्योग में तत्काल उसका प्रयोग शुरू हो गया।

अठारहवीं शताब्दी में कुल मिलाकर जो 26,000 आविष्कार हुए उनमें से आधे से अधिक आविष्कार 1782 से 1800 तक की अवधि में ही हुए थे। इन आविष्कारों के कारण अनेक परिवर्तन हुए। हम इन परिवर्तनों में से केवल चार बड़े परिवर्तनों अर्थात् लौह उद्योग का रूपांतरण, कपास की कताई और बुनाई, भाप की 'शक्ति' का विकास और रेलमार्गों की शुरुआत पर ही चर्चा करेंगे।

क्रियाकलाप 1

अठारहवीं शताब्दी में इंग्लैंड और विश्व के अन्य भागों में हुए उन परिवर्तनों एवं विकासक्रमों पर चर्चा कीजिए जिनसे ब्रिटेन में औद्योगीकरण को प्रोत्साहन मिला।

कोयला और लोहा

इंग्लैंड इस मामले में सौभाग्यशाली था कि वहाँ मशीनीकरण में काम आने वाली मुख्य सामग्रियाँ, कोयला और लौह-अयस्क, बहुतायत से उपलब्ध थीं। इसके अलावा, वहाँ उद्योग में काम आने वाले अन्य खनिज; जैसे- सीसा, ताँबा और राँगा (टिन) भी खूब मिलते थे। किंतु, अठारहवीं शताब्दी तक, वहाँ *इस्तेमाल योग्य लोहे* की कमी थी। लोहा प्रगलन* (smelting) की प्रक्रिया के द्वारा लौह खनिज में से शुद्ध तरल-धातु के रूप में निकाला जाता है। सदियों तक, इस प्रगलन

कोलब्रुकडेल (Coalbrookdale) का चित्र: धमन भट्टियाँ (बाएँ और मध्य भाग में) और काठकोयले की भट्टियाँ (दाएँ) एफ़ व्राइवेर्स (F. Vivares) द्वारा की गई चित्रकारी 1758।

प्रक्रिया के लिए काठ कोयले (चारकोल) का प्रयोग किया जाता था। लेकिन इस कार्य की कई समस्याएँ थीं: काठकोयला लंबी दूरी तक ले जाने की प्रक्रिया में टूट जाया करता था; इसकी अशुद्धताओं के कारण घटिया किस्म के लोहे का ही उत्पादन होता था; यह पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध भी नहीं था क्योंकि लकड़ी के लिए जंगल काट लिए गए थे; और यह उच्च तापमान पैदा नहीं कर सकता था।

इस समस्या का कई वर्षों से हल ढूँढ़ा जा रहा था अंततोगत्वा श्रोपशायर के एक डर्बी परिवार ने जो स्वयं लौह-उस्ताद थे, इस समस्या का हल निकाल लिया। आधी शताब्दी के दौरान, इस परिवार की तीन पीढ़ियों ने (दादा, पिता और पुत्र जो सभी अब्राहम डर्बी के नाम से पुकारे जाते थे) धातुकर्म उद्योग में क्रांति ला दी। इस क्रांति का प्रारंभ 1709 में प्रथम अब्राहम डर्बी (1677-1717) द्वारा किए गए आविष्कार से हुआ। यह धमनभट्ठी (Blast furance) का आविष्कार था जिसमें सर्वप्रथम 'कोक' का इस्तेमाल किया गया। कोक में उच्चताप उत्पन्न करने की शक्ति थी और वह (पत्थर के) कोयले से, गंधक तथा अपद्रव्य निकालकर तैयार किया जाता था। इस आविष्कार का फल यह हुआ कि तब से भट्ठियों को काठकोयले पर निर्भर नहीं रहना पड़ा। इन भट्ठियों से जो पिघला हुआ लोहा निकलता था उससे पहले की अपेक्षा अधिक बढ़िया और लंबी ढलाई की जा सकती थी।

कोलब्रुकडेल के पास ढलवाँ लोहे का पुल। विलियम विलियम्स द्वारा चित्रकारी, 1780

*आगे चलकर यह इलाका 'आइरनब्रिज' नामक गाँव के रूप में विकसित हो गया

इस प्रक्रिया में कुछ और आविष्कारों द्वारा आगे और सुधार किया गया। द्वितीय डर्बी (1711-68) ने ढलवाँ लोहे (pig-iron) से पिटवाँ लोहे (wrought-iron) का विकास किया जो कम भंगुर था। हेनरी कोर्ट (1740-1823) ने आलोड़न भट्ठी (puddling furance), (जिसमें पिघले लोहे में से अशुद्धि को दूर किया जा सकता था), और बेलन मिल (रोलिंग मिल) का आविष्कार किया, जिसमें परिशोधित लोहे से छड़ें तैयार करने के लिए भाप की शक्ति का इस्तेमाल किया जाता था। अब लोहे से अनेकानेक उत्पाद बनाना संभव हो गया। चूंकि लोहे में टिकाऊपन अधिक था इसलिए इसे मशीनें और रोज़मर्रा की चीज़ें बनाने के लिए लकड़ी से बेहतर सामग्री माना जाने लगा। लकड़ी तो जल या कट-फट सकती थी, लेकिन लोहे के भौतिक और रासायनिक गुण-धर्म को नियंत्रित किया जा सकता था। 1770 के दशक में, जोन विल्किनसन (1728-1808) ने सर्वप्रथम लोहे की कुर्सियाँ, आसव तथा शराब की भट्ठियों के लिए टंकियाँ (vats) और लोहे की सभी आकारों की नलियाँ (पाइपें) बनाईं। 1779 में तृतीय डर्बी (1750-91) ने विश्व में पहला लोहे का पुल कोलब्रुकडेल में सेवर्न* नदी पर बनाया। विल्किनसन ने पानी की पाइपें (पेरिस को पानी की आपूर्ति के लिए 40 मील लंबी) पहली बार ढलवाँ लोहे से बनाईं।

मानचित्र 1: ब्रिटेन: लौह उद्योग।

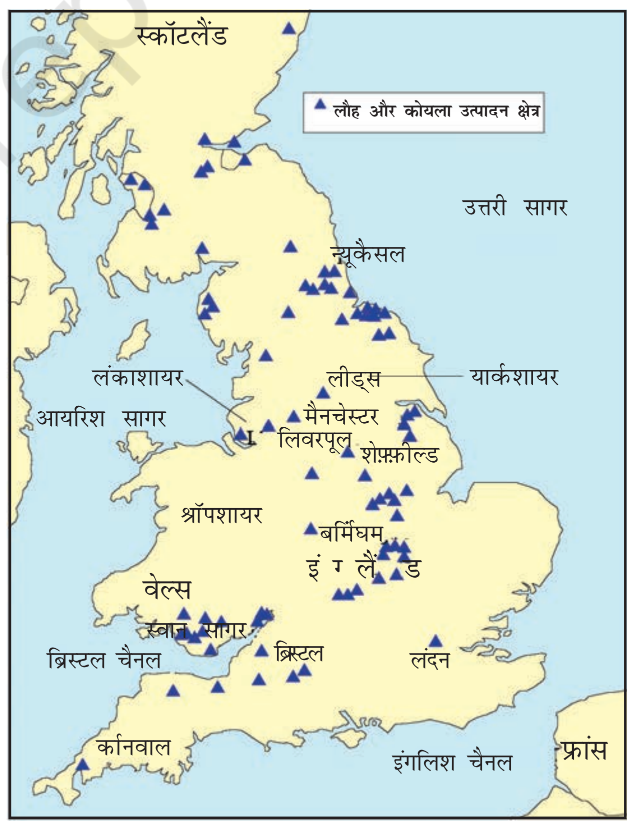

उसके बाद, लोहा उद्योग कुछ खास क्षेत्रों में कोयला खनन तथा लोहा प्रगलन की मिली-जुली इकाइयों के रूप में केंद्रित हो गया। यह ब्रिटेन का सौभाग्य ही था कि वहाँ एक ही द्रोणी-क्षेत्र (Basin) यहाँ तक कि एक ही पट्टियों में उत्तम कोटि का कोकिंग कोयला और उच्च-स्तर का लौह खनिज साथ-साथ पाया जाता था। ये द्रोणी-क्षेत्र पत्तनों के पास ही थे:

© NCERT not to be republished

क्रियाकलाप 2

आइरनब्रिज गोर्ज आज एक प्रमुख विरासत स्थल है; क्या आप बता सकते हैं क्यों?

वहाँ ऐसे पाँच तटीय कोयला-क्षेत्र थे जो अपने उत्पादों को लगभग सीधे ही जहाज़ों में लदवा सकते थे। चूँकि कोयला-क्षेत्र समुद्र तट के पास ही थे इसलिए जहाज़-निर्माण का कारोबार और नौपरिवहन का व्यापार खूब बढ़ा।

ब्रिटेन के लौह उद्योग ने 1800 से 1830 के दौरान अपने उत्पादन को चौगुना बढ़ा लिया और उसका उत्पादन पूरे यूरोप में सबसे सस्ता था। 1820 में, एक टन ढलवाँ लोहा बनाने के लिए 8 टन कोयले की ज़रूरत होती थी, किंतु 1850 तक आते-आते यह मात्रा घट गई और केवल 2 टन कोयले से ही एक टन ढलवाँ लोहा बनाया जाने लगा। 1848 तक यह स्थिति आई कि ब्रिटेन द्वारा पिघलाए जाने वाले लोहे की मात्रा बाकी सारी दुनिया द्वारा कुल मिलाकर पिघलाए जाने वाले लोहे से अधिक थी।

कपास की कताई और बुनाई

ब्रिटिश हमेशा ऊन और सन (लिनन बनाने के लिए) से कपड़ा बुना करते थे। सत्रहवीं शताब्दी से इंग्लैंड भारत से बड़ी लागत पर सूती कपड़े की गांठों का आयात करता रहा था। लेकिन जब भारत के हिस्सों पर ईस्ट इंडिया कंपनी का राजनीतिक नियंत्रण स्थापित हो गया, तब इंग्लैंड ने कपड़े के साथ-साथ कच्चे कपास (रूई) का आयात करना भी शुरू कर दिया जिसकी इंग्लैंड में आने पर कताई की जाती थी और उससे कपड़ा बुना जाता था।

अठारहवीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में कताई का काम इतनी धीमी गति और मेहनत से किया जाता था कि एक बुनकर को व्यस्त रखने के लिए आवश्यक धागा कातने के लिए 10 कातने वालों, अधिकतर स्त्रियाँ, (स्पिनर जिनसे अंग्रेज़ी भाषा में प्रयुक्त शब्द 'स्पिंस्टर' बना है) की ज़रूरत पड़ती थी। इसलिए, कातने वाले दिनभर कताई के काम में लगे रहते थे और बुनकर बुनाई के लिए धागे के इंतज़ार में समय बर्बाद करते रहते थे। लेकिन प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अनेक आविष्कार हो जाने के बाद कच्ची रूई को कात कर उसका धागा बनाने और उससे कपड़ा बनाने की रफ़्तार के बीच पहले जो अंतर था वह खत्म करने में सफलता मिल गई। इस कार्य को और अधिक कुशलतापूर्वक करने के लिए उत्पादन का काम धीरे-धीरे, कताईगरों और बुनकरों के घरों से हटकर फैक्ट्रियों यानी कारखानों में चला गया।

चित्र में एक स्त्री को खतरनाक स्थिति में अपने पाँवों से ट्रेडमिल (पाँव-चक्की) चलाते हुए दिखाया गया है।

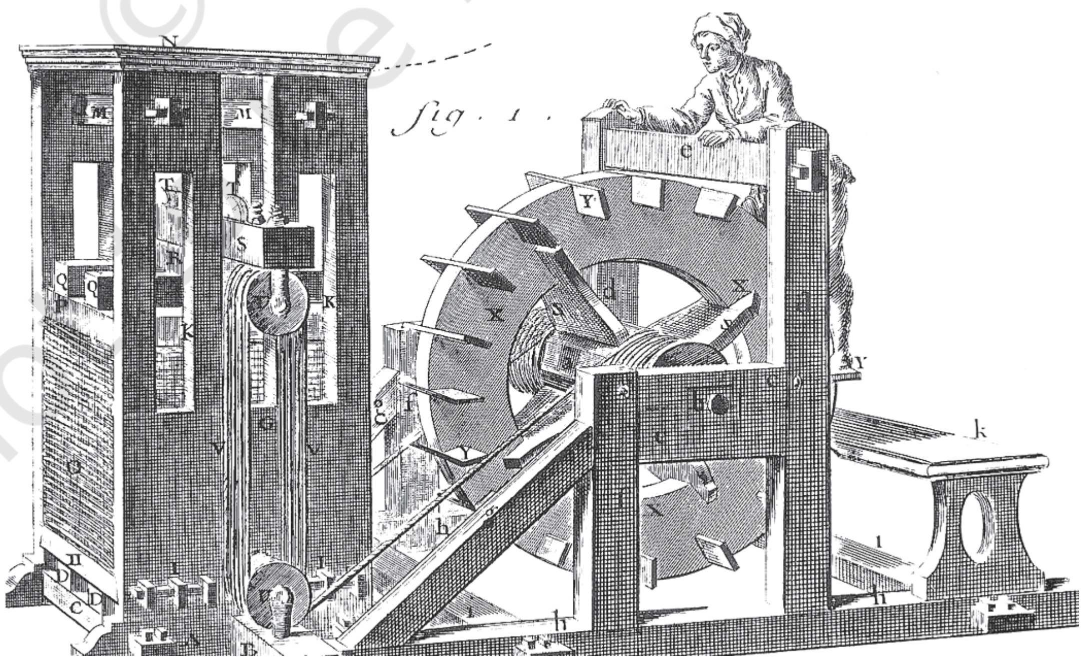

1. **उड़न तुरी करघे (Flying shuttle loom)** का आविष्कार जॉन के (1704-64) द्वारा 1733 में बनाए गए फ़्लाइंग शटल लूम यानी उड़न तुरी करघे की सहायता से कम समय में अधिक चौड़ा कपड़ा बनाना संभव हो गया। परिणामस्वरूप कताई की तत्कालीन रफ़्तार से जितना धागा बनता था उससे कहीं ज़्यादा मात्रा में धागे की ज़रूरत होने लगी।

2. जेम्स हरग्रीव्ज़ (1720-78) द्वारा 1765 में बनाई गई कताई मशीन **(Spinning jenny)** एक ऐसी मशीन थी जिसपर एक अकेला व्यक्ति एक साथ कई धागे कात सकता था। इससे बुनकरों को उनकी आवश्यकता से अधिक तेज़ी से धागा मिलने लगा।

3. रिचर्ड आर्कराइट (1732-92) द्वारा 1769 में आविष्कृत वॉटर फ्रेम **(Water frame)** नाम की मशीन द्वारा पहले से कहीं अधिक मज़बूत धागा बनाया जाने लगा। इससे लिनन और सूती धागा दोनों को मिलाकर कपड़ा बनाने की बजाय अकेले सूती धागे से ही विशुद्ध सूती कपड़ा बनाया जाने लगा।

4. **'म्यूल'** एक ऐसी मशीन का उपनाम था जो 1779 में सैम्यूअल क्रॉम्टन (1753-1827) द्वारा बनाई गई थी। इससे कता हुआ धागा बहुत मज़बूत और बढ़िया होता था।

5. कपड़ा उद्योग में उन मशीनों के आविष्कारों का दौर, जो कताई तथा बुनाई कार्यों के बीच संतुलन बनाने के लिए बनाई जा रही थीं, एडमंड कार्टराइट (1743-1823) द्वारा 1787 में पॉवरलूम यानी शक्तिचालित करघे के आविष्कार के साथ समाप्त हो गया। पावरलूम को चलाना बहुत आसान था। जब भी धागा टूटता वह अपने आप काम करना बंद कर देता और इससे किसी भी तरह के धागे से बुनाई की जा सकती थी। 1830 के दशक से, कपड़ा उद्योग में नयी-नयी मशीनें बनाने की बजाय श्रमिकों की उत्पादकता बढ़ाने पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा।

मानचित्र 2: ब्रिटेन: सूती कपड़ा उद्योग

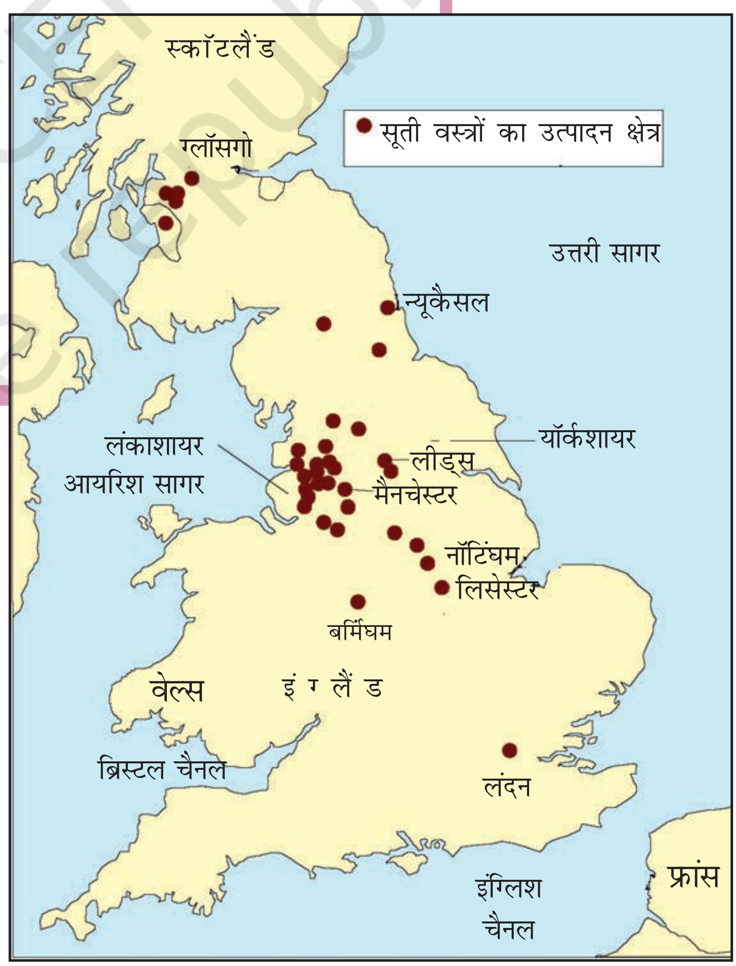

1780 के दशक से, कपास उद्योग कई रूपों में ब्रिटिश औद्योगीकरण का प्रतीक बन गया। इस उद्योग की दो प्रमुख विशेषताएँ थीं जो अन्य उद्योगों में भी दिखाई देती थीं।

कच्चे माल के रूप में आवश्यक कपास संपूर्ण रूप से आयात करना पड़ता था और जब उससे कपड़ा तैयार हो जाता तो उसका अधिकांश भाग बाहर निर्यात किया जाता था। इस संपूर्ण प्रक्रिया के लिए इंग्लैंड के पास अपने उपनिवेश होना ज़रूरी था जिससे कि इन उपनिवेशों से कच्ची कपास भरपूर मात्रा में मँगाई जा सके और फिर इंग्लैंड में उससे कपड़ा बनाकर उन्हीं उपनिवेशों के बाज़ारों में बेची जा सके।

यह उद्योग प्रमुख रूप से कारखानों में काम करने वाली स्त्रियों तथा बच्चों पर बहुत ज़्यादा निर्भर था। इससे औद्योगीकरण के प्रारंभिक काल की घिनौनी तस्वीर सामने आती है, जिसका वर्णन आगे किया गया है।

भाप की शक्ति

जब यह पता चल गया कि भाप अत्यधिक शक्ति उत्पन्न कर सकता है तो यह बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण के लिए निर्णायक सिद्ध हुआ। द्रवचालित शक्ति के रूप में जल भी सदियों से ऊर्जा का प्रमुख स्रोत बना रहा था; लेकिन इसका उपयोग कुछ खास इलाकों, मौसमों और चल प्रवाह की गति के अनुसार सीमित रूप में ही किया जाता था। लेकिन अब इसका एक अलग रूप में प्रयोग किया जाने लगा। भाप की शक्ति उच्च तापमानों पर दबाव पैदा करती जिससे अनेक प्रकार की मशीनें चलाई जा सकती थीं। इसका अर्थ यह हुआ कि भाप की शक्ति ऊर्जा का अकेला ऐसा स्रोत था जो मशीनरी बनाने के लिए भी भरोसेमंद और कम खर्चीला था।

भाप की शक्ति का इस्तेमाल सर्वप्रथम खनन उद्योगों में किया गया। जब कोयले और धातुओं की मांग बढ़ी तो उन्हें और भी अधिक गहरी खानों में से निकालने के प्रयासों में तेज़ी आई। खानों में अचानक पानी भर जाना भी एक गंभीर समस्या थी। थॉमस सेवरी (1650–1715) ने खानों से पानी बाहर निकालने के लिए 1698 में माइनर्स फ्रेंड (खनक-मित्र) नामक एक भाप के इंजन का मॉडल बनाया। ये इंजन छिछली गहराइयों में धीरे-धीरे काम करते थे, और अधिक दबाव हो जाने पर उनका वाष्पित्र (बॉयलर) फट जाता था।

भाप का एक और इंजन 1712 में थॉमस न्यूकॉमेन (1663–1729) द्वारा बनाया गया। इसमें सबसे बड़ी कमी यह थी कि संघनन बेलन (कंडेन्सिंग सिलिंडर) के लगातार ठंडा होते रहने से इसकी ऊर्जा खत्म होती रहती थी।

भाप के इंजन का इस्तेमाल 1769 तक केवल कोयले की खानों में ही होता रहा, जब जेम्सवाट (1736–1819) ने इसका एक और प्रयोग खोज निकाला। वाट ने एक ऐसी मशीन विकसित की जिससे भाप का इंजन केवल एक साधारण पंप की बजाय एक 'प्राइम मूवर' यानी प्रमुख चालक (मूवर) के रूप में काम देने लगा जिससे कारखानों में शक्तिचालित मशीनों को ऊर्जा मिलने लगी। एक धनी निर्माता मैथ्यू बॉल्टन (1728–1809) की सहायता से वॉट ने 1775 में बर्मिंघम में 'सोहो फाउंडरी' का निर्माण किया। इस फाउंडरी से वाट के स्टीम इंजन बराबर बढ़ती हुई संख्या में बनकर निकलने लगे। अठारहवीं शताब्दी के अंत तक वाट के भाप इंजन ने द्रवचालित शक्ति का स्थान लेना शुरू कर दिया था।

1800 के बाद, अधिक हलकी तथा मज़बूत धातुओं के इस्तेमाल से, अधिक सटीक मशीनी औज़ारों के निर्माण से और वैज्ञानिक जानकारी के अधिक व्यापक प्रसार से, भाप के इंजन की प्रौद्योगिकी और अधिक विकसित हो गई।

वॉट के आविष्कार भाप के इंजन तक ही सीमित नहीं थे। उसने दस्तावेज़ों की नकल तैयार करने के लिए एक रासायनिक प्रक्रिया का भी आविष्कार किया था। उसने नापने की एक इकाई बनाई थी जो पुराने सर्वत्र शक्ति स्रोत 'घोड़े' की शक्ति के साथ यांत्रिक शक्ति की तुलना पर आधारित थी। वाट की माप इकाई यानी अश्वशक्ति (horse power) एक घोड़े की एक मिनट में एक फुट (0.3 मीटर) तक 33,000 पौंड (14,969 कि.ग्रा.) वज़न उठाने की क्षमता के समकक्ष थी। अश्वशक्ति को विश्व में सर्वत्र यांत्रिक ऊर्जा के सूचक के रूप में काम में लाया जाता है।

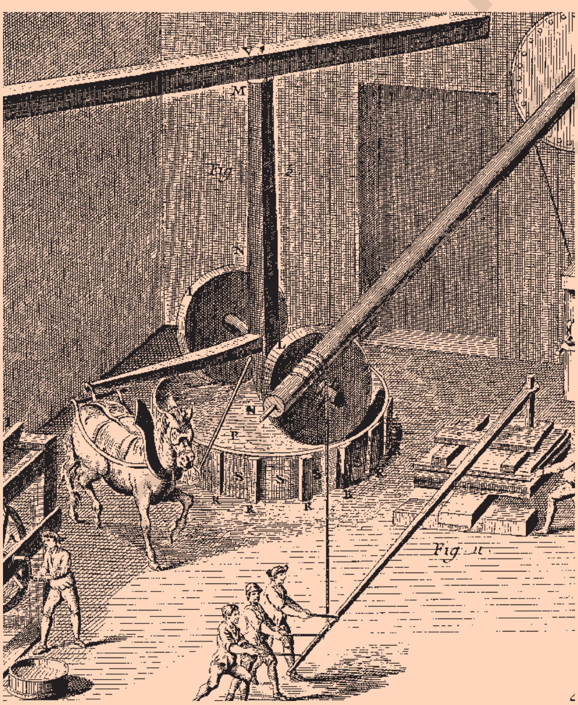

पहले धातु को पीसने के लिए चक्के चलाने का काम घोड़ों से लिया जाता था लेकिन बाद में भाप की शक्ति के इस्तेमाल से जनशक्ति तथा अश्वशक्ति पर मनुष्य की निर्भरता कम हो गई।

1840 में, स्थिति यह थी कि ब्रिटेन में बने भाप के इंजन ही संपूर्ण यूरोप में आवश्यक ऊर्जा की 70 प्रतिशत से अधिक अश्वशक्ति का उत्पादन कर रहे थे।

नहरें और रेलें

प्रारंभ में नहरें कोयले को शहरों तक ले जाने के लिए बनाई गईं। इसका कारण यह था कि कोयले को उसके परिमाण और भार के कारण सड़क मार्ग से ले जाने में समय बहुत लगता था और उस पर खर्च भी अधिक आता था जबकि उसे बजरों में भरकर नहरों के रास्ते ले जाने में समय और खर्च दोनों ही कम लगते थे। औद्योगिक ऊर्जा के लिए और शहरों में घर गर्म करने या उनमें रोशनी करने के लिए कोयले की माँग बराबर बढ़ती रही। इंग्लैंड में पहली नहर 'वर्सली कैनाल' 1761 में जेम्स ब्रिंडली (1716–72) द्वारा बनाई गई, जिसका प्रयोजन केवल यही था कि उसके ज़रिये वर्सले (मैनचेस्टर के पास) के कोयला भंडारों से शहर तक कोयला ले जाया जाए। इस नहर के बन जाने के बाद कोयले की कीमत घटकर आधी हो गई।

नहरें आमतौर पर बड़े-बड़े ज़मींदारों द्वारा अपनी ज़मीनों पर स्थित खानों, खदानों या जंगलों के मूल्य को बढ़ाने के लिए बनाई जाती थीं। नहरों के आपस में जुड़ जाने से नए-नए शहरों में बाज़ार बन गए। उदाहरण के लिए, बर्मिंघम शहर का विकास केवल इसीलिए तेज़ी से हुआ क्योंकि वह लंदन, ब्रिस्टल चैनल और मरसी तथा हंबर नदियों के साथ जुड़ने वाली नहर प्रणाली के मध्य में स्थित था। 1760 से 1790 के बीच, नहरें बनाने की पच्चीस नयी परियोजनाएँ शुरू की गईं। 1788 से 1796 तक की, 'नहरोन्माद' (Canal-mania) के नाम से पुकारे जाने वाली अवधि में 46 नयी परियोजनाएँ हाथ में ली गईं और उसके बाद अगले 60 वर्षों में अनेकानेक नहरें बनाई गईं जिनकी लंबाई कुल मिलाकर 4,000 मील से अधिक थी।

पहला भाप से चलने वाला रेल का इंजन-स्टीफेनसन का रॉकेट 1814 में बना। अब रेलगाड़ियाँ परिवहन का एक ऐसा नया साधन बन गईं, जो वर्षभर उपलब्ध रहती थीं, सस्ती और तेज़ भी थीं और माल तथा यात्री दोनों को ढो सकती थीं। इस साधन में एकसाथ दो आविष्कार सम्मिलित थे: लोहे की पटरी जिसने 1760 के दशक में लकड़ी की पटरी का स्थान ले लिया और भाप के इंजन द्वारा इस लोहे की पटरी पर रेल के डिब्बों की खिंचाई।

रेलवे के आविष्कार के साथ औद्योगीकरण की संपूर्ण प्रक्रिया ने दूसरे चरण में प्रवेश कर लिया। 1801 में, रिचर्ड ट्रेविथिक (1771–1833) ने एक इंजन का निर्माण किया जिसे 'पफ़िंग डेविल' यानी 'फुफकारने वाला दानव', कहते थे। यह इंजन ट्रकों को कॉर्नवाल में उस खान के चारों ओर खींचकर ले जाता था जहाँ रिचर्ड काम करता था। 1814 में, एक रेलवे इंजीनियर जॉर्ज स्टीफेनसन (1781–1848) ने एक रेल इंजन बनाया जिसे 'ब्लचर' (The Blutcher) कहा जाता था। यह इंजन 30 टन भार 4 मील प्रति घंटे की रफ़्तार से एक पहाड़ी पर ले जा सकता था। सर्वप्रथम 1825 में स्टॉकटन और डार्लिंगटन शहरों के बीच 9 मील लंबा रेलमार्ग 24 किलोमीटर प्रति घंटा (15 मील प्रति घंटा) की रफ़्तार से 2 घंटे में रेल द्वारा तय किया गया। इसके बाद 1830 में लिवरपूल और मैनचेस्टर को आपस में रेलमार्ग से जोड़ दिया गया। 20 वर्षों के भीतर, रेल का 30 से 50 मील प्रति घंटे की रफ़्तार से दौड़ना एक आम बात हो गई।

1830 के दशक में, नहरों के रास्ते परिवहन में अनेक समस्याएँ दिखाई दीं। नहरों के कुछ हिस्सों में जलपोतों की भीड़भाड़ के कारण परिवहन की रफ़्तार धीमी पड़ गई और पाले, बाढ़ या सूखे के कारण उनके इस्तेमाल का समय भी सीमित हो गया। अब रेलमार्ग ही परिवहन का सुविधाजनक विकल्प दिखाई देने लगा। 1830 से 1850 के बीच, ब्रिटेन में रेल पथ कुल मिलाकर दो चरणों में लगभग 6,000 मील लंबा हो गया। 1833–37 के 'छोटे रेलोन्माद' के दौरान, 1400 मील लंबी रेल लाइन बनी और 1844–47 के 'बड़े रेल उन्माद' के दौरान फिर 9,500 मील लंबी रेल लाइन बनाने की मंज़ूरी दी गई। इस संपूर्ण कार्य में कोयले और लोहे का भारी मात्रा में उपयोग किया गया, बड़ी संख्या में लोगों को काम पर लगाया गया और निर्माण तथा लोक कार्य उद्योगों के क्रियाकलापों में तेज़ी लाई गई। 1850 तक आते-आते, अधिकांश इंग्लैंड रेलमार्ग से जुड़ गया।

आविष्कारक कौन थे?

यह पता लगाना अवश्य ही रुचिकर होगा कि वे लोग कौन थे जिनके प्रयत्नों से ये परिवर्तन हुए। उनमें से कुछ लोग प्रशिक्षित वैज्ञानिक थे। भौतिकी तथा रसायन जैसे बुनियादी विज्ञानों की शिक्षा उन्नीसवीं सदी के आखिरी दशकों तक अत्यंत सीमित थी, और ऊपर बताए गए प्रौद्योगिकीय आविष्कार तब तक हो चुके थे। चूंकि इन आविष्कारों को संपन्न करने के लिए भौतिकी या रसायन विज्ञान के उन सिद्धांतों या नियमों की पूर्ण जानकारी होना ज़रूरी नहीं था जिन पर ये आविष्कार आधारित थे इसलिए ये वैज्ञानिक प्रगतियाँ प्रतिभाशाली लेकिन अंत:प्रज्ञ विचारकों तथा लगनशील प्रयोगकर्ताओं द्वारा की गईं। उन्हें इस तथ्य से भी सहायता मिली कि इंग्लैंड में कुछ ऐसी विशिष्टताएँ थीं जो अन्य यूरोपीय देशों में नहीं थीं। इंग्लैंड में, 1760 से 1800 के बीच दर्जनों वैज्ञानिक पत्रिकाएँ और अनेक वैज्ञानिक संस्थाओं द्वारा अनेक शोधपत्र प्रकाशित किए गए। यहाँ तक कि वहाँ छोटे कस्बों में भी ज्ञान-पिपासा सर्वत्र व्याप्त थी। इस प्यास को 'कला-समाज' (सोसाइटी ऑफ आर्ट्स, 1754 में स्थापित) के क्रियाकलापों द्वारा, घूमने-फिरने वाले व्याख्याताओं द्वारा अथवा उन कॉफ़ी हाउसों में जिनकी संख्या अठारहवीं शताब्दी में कई गुना बढ़ गई थी, विचार-विनिमय द्वारा बुझाया गया।

अधिकतर आविष्कार वैज्ञानिक ज्ञान के अनुप्रयोग की अपेक्षा दृढ़ता, रुचि, जिज्ञासा, यहाँ तक कि भाग्य के बल पर ही हुए। कपास उद्योग क्षेत्र के कुछ आविष्कारक, जैसे जॉन के तथा जेम्स हरग्रीव्ज़, बुनाई और बढ़ईगीरी से परिचित थे। किंतु रिचर्ड आर्कराइट एक नाई और बालों की विग बनाने वाला था, सैम्युअल क्रॉम्पटन तकनीकी दृष्टि से कुशल नहीं था, और एडमंड कार्टराइट ने साहित्य, आयुर्विज्ञान और कृषि का अध्ययन किया था, प्रारंभ में उसकी इच्छा पादरी बनने की थी और वह यांत्रिकी के बारे में बहुत कम जानता था।

इसके विपरीत, भाप के इंजनों के क्षेत्र में, थॉमस सेवरी एक सेना अधिकारी था, थॉमस न्यूकोमेन एक लुहार तथा तालासाज़ था और जेम्स वॉट का यंत्र संबंधी कामकाज की ओर बहुत झुकाव था। उन सबमें अपने-अपने आविष्कार के प्रति कुछ संगत ज्ञान अवश्य था। सड़क-निर्माता जॉन मेटकॉफ जिसने स्वयं व्यक्तिगत रूप से सड़कों की सतहों का सर्वेक्षण किया था और उनके बारे में योजना बनाई थी, अंधा था। नहर-निर्माता जेम्स ब्रिंडले तो लगभग निरक्षर था, शब्दों की वर्तनी के बारे में उसका ज्ञान इतना कमज़ोर था कि वह 'नौ चालन' (Navigation) शब्द की सही वर्तनी कभी न बता सका; लेकिन उसमें गज़ब की स्मरण शक्ति, कल्पना शक्ति और एकाग्रता थी।

परिवर्तित जीवन

इसलिए इन वर्षों के दौरान, प्रतिभाशाली व्यक्तियों के लिए क्रांतिकारी परिवर्तन लाना संभव हो पाया। इसी प्रकार, ऐसे धनवान लोग भी बहुत थे जिन्होंने जोखिम उठाकर उद्योग-धंधों में इस आशा से पूंजी-निवेश किया कि इससे उन्हें मुनाफ़ा होगा और उनके धन में कई गुना वृद्धि हो जाएगी। अधिकांश मामलों में यह धनराशि यानी पूँजी कई गुना बढ़ी। धन में, माल, आय, सेवाओं, ज्ञान और उत्पादक कुशलता के रूप में अचानक वृद्धि हुई। लेकिन इसका मनुष्यों को दूसरे रूप में भारी खामियाज़ा भी उठाना पड़ा। इससे परिवार टूट गए। पुराने पते बदल गए और लोगों को नयी जगहों पर रहना पड़ा। शहर विकृत होने लगे और कारखानों में काम करने की परिस्थितियाँ एकदम बिगड़ गईं। इंग्लैंड में 50,000 से अधिक की आबादी वाले नगरों की संख्या 1750 में केवल दो थीं जो बढ़ते-बढ़ते 1850 में 29 हो गई। आबादी में जिस रफ़्तार से बढ़ोतरी हुई उस रफ़्तार से रहन-सहन के अन्य साधनों में वृद्धि नहीं हो पाई। वहाँ रहने के लिए पर्याप्त व्यवस्था नहीं थी। सफ़ाई और स्वच्छ पेय-जल की व्यवस्था में भी बढ़ती हुई शहरी आबादी के मुताबिक सुधार नहीं हुआ। बाहर

© NCERT not to be republished

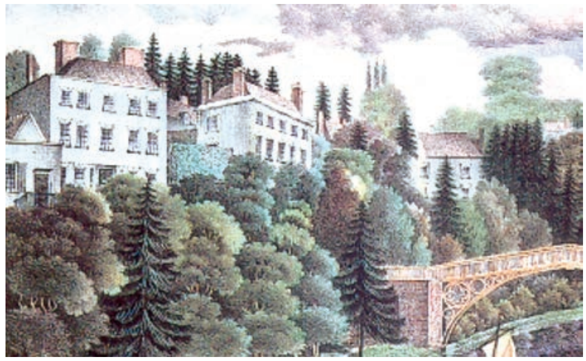

दूर बाईं ओर: कोलब्रुकडेल में बढ़ई और अन्य कामगारों के लिए 1783 में कंपनी द्वारा बनवाए गए आवास।
बाईं ओर: डर्बी परिवार के बंगले। विलियम वेस्टवुड द्वारा चित्रित, 1835।

से आकर नए बसे लोगों को नगरों में कारखानों के आसपास भीड़भाड़ वाली गंदी बस्तियों में रहना पड़ा, जबकि धनवान लोग नगर छोड़कर आसपास के उपनगरों में साफ-सुथरे मकान बनाकर रहने लगे, जहाँ की हवा स्वच्छ थी और पीने का पानी भी साफ एवं सुरक्षित था।

एडवर्ड कार्पेंटर ने 1881 के आसपास अपनी कविता 'एक विनिर्माणकारी नगर में' (इन ए मैन्यूफैक्चरिंग टाउन) में इस स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया था:

"जब मैं उस उदास शहर में बेचैन और निराश घूम रहा था, तो मैंने वहाँ अफ़रातफ़री में परेशान लोग देखे जो मानो नरक के किसी दरवाज़े (हेड्स)* में भूतों की तरह आ-जा रहे थे-

मैंने आकाश में ऊँची उठी चिमनियों की लंबी कतारें देखीं और देखे काले धुएँ के बादल जो सूरज, आकाश और धरती को अपने बोझ से ढक रहे थे-

और देखे कूड़े के बड़े-बड़े ढेर जिनपर बच्चे रद्दी बटोर रहे थे,

और फिर आधी छतों वाले काले, भद्दे मकान और देखी नीचे बहती काली नदी-

जब मैं इन सबको देख रहा था तभी मेरी नज़र दूरदराज़ के पूँजीपति मुहल्ले पर पड़ी जहाँ महलनुमा मकान-बंगले, ऊँची-ऊँची दीवारों वाले बगीचे, सुंदरसलोनी गाड़ियाँ और उनके मालिक मानो दूर-दूर तक पसरी गरीबी, जिसकी बदौलत वे धनवान बने थे, देखकर अपना मुँह बिचका रहे थे...

यह सब देखकर मेरी तो रूह ही काँप उठी।"

**नरक के द्वार।*

मज़दूर

1842 में किए गए एक सर्वेक्षण से यह पता चला कि वेतनभोगी मज़दूरों यानी कामगारों के जीवन की औसत अवधि शहरों में रहने वाले अन्य किसी भी सामाजिक समूह के जीवनकाल से कम थी: बर्मिंघम में यह 15 वर्ष, मैनचेस्टर में 17 वर्ष, डर्बी में 21 वर्ष थी। नए औद्योगिक नगरों में गाँव से आकर रहने वाले लोग ग्रामीण लोगों की तुलना में काफी छोटी आयु में मर जाते थे। वहाँ पैदा होने वाले बच्चों में से आधे तो पाँच साल की आयु प्राप्त करने से पहले ही चल बसते थे। शहरों की आबादी में वृद्धि वहाँ पहले से रह रहे परिवारों में नए पैदा हुए बच्चों से नहीं बल्कि बाहर से आकर बसने वाले नए लोगों से ही होती थी।

मौतें ज़्यादातर उन महामारियों के कारण होती थीं जो जल-प्रदूषण से, जैसे हैज़ा (Cholera) तथा आंत्रशोथ (Typhoid) से और वायु-प्रदूषण से, जैसे क्षयरोग (Tuberculosis) से होती थीं। 1832 में हैज़े का भीषण प्रकोप हुआ जिसमें 31,000 से अधिक लोग काल के गर्त में समा गए। उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों तक स्थिति यह थी कि नगर-प्राधिकारी जीवन की इन भयंकर परिस्थितियों की ओर कोई ध्यान नहीं देते थे और इन बीमारियों के निदान और उपचार के बारे में चिकित्सकों या अधिकारियों को कोई जानकारी नहीं थी।

© NCERT not to be republished

औरतें, बच्चे और औद्योगीकरण

औद्योगिक क्रांति एक ऐसा समय था जब औरतों और बच्चों के काम करने के तरीकों में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आए। ग्रामीण गरीबों के बच्चे हमेशा घर में, या खेत में अपने माता-पिता या संबंधियों की निगरानी में तरह-तरह के काम किया करते थे जो समय, दिन या मौसम के अनुसार बदलते रहते थे। इसी प्रकार, गाँवों में औरतें भी खेत के काम में सक्रिय रूप से हिस्सा लेती थीं; वे पशुओं का पालन-पोषण करती थीं, लकड़ियाँ इकट्ठी करती थीं और अपने घरों में चरखे चलाकर सूत कातती थीं।

कारखानों में काम करना इससे बिलकुल अलग किस्म का होता था, वहाँ लगातार कई घंटों तक एक ही तरह का काम कठोर अनुशासन तथा तरह-तरह के दंड की भयावह परिस्थितियों में कराया जाता था।

मर्दों की मज़दूरी मामूली होती थी, उससे अकेले घर का ख़र्च नहीं चल सकता था जिसे पूरा करने के लिए औरतों और बच्चों को भी कुछ कमाना पड़ता था। ज्यों-ज्यों मशीनों का इस्तेमाल बढ़ता गया, काम पूरा करने के लिए मज़दूरों की ज़रूरत कम होती गई। उद्योगपति मर्दों की बजाय औरतों और बच्चों को अपने यहाँ काम पर लगाना अधिक पसंद करते थे क्योंकि एक तो उनकी मज़दूरी कम होती थी और दूसरे वे अपने काम की घटिया परिस्थितियों के बारे में भी कम आंदोलित हुआ करते थे।

स्त्रियों और बच्चों को लंकाशायर और यॉर्कशायर नगरों के सूती कपड़ा उद्योग में बड़ी संख्या में काम पर लगाया जाता था। रेशम, फ़ीते बनाने और बुनने के उद्योग-धंधों में और बर्मिंघम के धातु उद्योगों में (बच्चों के साथ-साथ) औरतों को ही अधिकतर नौकरी दी जाती थी। कपास कातने की जेनी जैसी अनेक मशीनें तो कुछ इसी तरह की बनाई गई थीं कि उनमें बच्चे ही अपनी फुर्तीली उंगलियों और छोटी-सी कद-काठी के कारण आसानी से काम कर सकते थे। बच्चों को अक्सर कपड़ा मिलों में रखा जाता था क्योंकि वहाँ सटाकर रखी गई मशीनों के बीच से छोटे बच्चे आसानी

बर्मिंघम की गिल्ट-बटन फैक्ट्री में काम करती हुई औरत का चित्र। 1850 के दशक में बटनों के निर्माण एवं व्यापार में काम करने वाले कुल मज़दूरों में से दो-तिहाई मज़दूर स्त्रियाँ और बच्चे थे। मर्दों को प्रति सप्ताह 25 शिलिंग मज़दूरी मिलती थी जबकि उतने ही घंटे काम करने के लिए बच्चों को सिर्फ़ एक शिलिंग और औरतों को 7 शिलिंग मज़दूरी दी जाती थी।

से आ–जा सकते थे। बच्चों से कई घंटों तक काम लिया जाता था, यहाँ तक कि उन्हें हर रविवार को भी मशीनें साफ़ करने के लिए काम पर आना पड़ता था, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें ताज़ी हवा खाने या व्यायाम करने का कभी कोई मौका नहीं मिलता था। कई बार तो बच्चों के बाल मशीनों में फँस जाते थे या उनके हाथ कुचल जाते थे; यहाँ तक कि बच्चे काम करते–करते इतने थक जाते थे कि उन्हें नींद की झपकी आ जाती थी और वे मशीनों में गिरकर मौत के मुँह में चले जाते थे।

कोयले की खानें भी काम करने के लिहाज़ से बहुत खतरनाक होती थीं। खानों की छतें धँस जाती थीं अथवा वहाँ विस्फोट हो जाता था, और चोटें लगना तो वहाँ आम बात थी। कोयला खानों के मालिक कोयले के गहरे अंतिम छोरों को देखने के लिए अथवा जहाँ जाने का रास्ता वयस्कों के लिए बहुत संकरा होता था, वहाँ बच्चों को ही भेजते थे। छोटे बच्चों को कोयला खानों में 'ट्रैपर' का काम भी करना पड़ता था। कोयला खानों में जब कोयला भरे डिब्बे इधर–उधर ले जाये जाते थे तो वे आवश्यकतानुसार उन दरवाज़ों को खोलते और बंद करते थे। यहाँ तक कि वे 'कोल बियरर्स' के रूप में अपनी पीठ पर रखकर कोयले का भारी वज़न भी ढोते थे।

कारखानों के मालिक बच्चों से काम लेना बहुत ज़रूरी समझते थे, ताकि वे अभी से काम सीखकर बड़े होकर उनके लिए अच्छा काम कर सकें। ब्रिटिश फैक्ट्रियों के अभिलेखों से प्राप्त साक्ष्यों से पता चलता है कि फैक्ट्री मज़दूरों में से लगभग आधों ने तो वहाँ दस साल से भी कम उम्र में और 28 प्रतिशत मज़दूरों ने वहाँ 14 साल से कम की आयु में काम करना शुरू किया था। औरतों को मज़दूरी मिलने से न केवल वित्तीय स्वतंत्रता मिली बल्कि उनके आत्मसम्मान में भी बढ़ोतरी हुई। लेकिन इससे उन्हें जितना लाभ हुआ उससे कहीं ज़्यादा हानि काम की अपमानजनक परिस्थितियों के कारण हुई। अक्सर उनके बच्चे पैदा होते ही या शैशवावस्था में ही मर जाते थे और उन्हें अपने औद्योगिक काम की वजह से मजबूर होकर शहर की घिनौनी व गंदी बस्तियों में रहना पड़ता था।

लंदन के गरीब मुहल्ले की एक गली, फ्रांसीसी कलाकार डोरे द्वारा उकेरा गया चित्र, 1876।

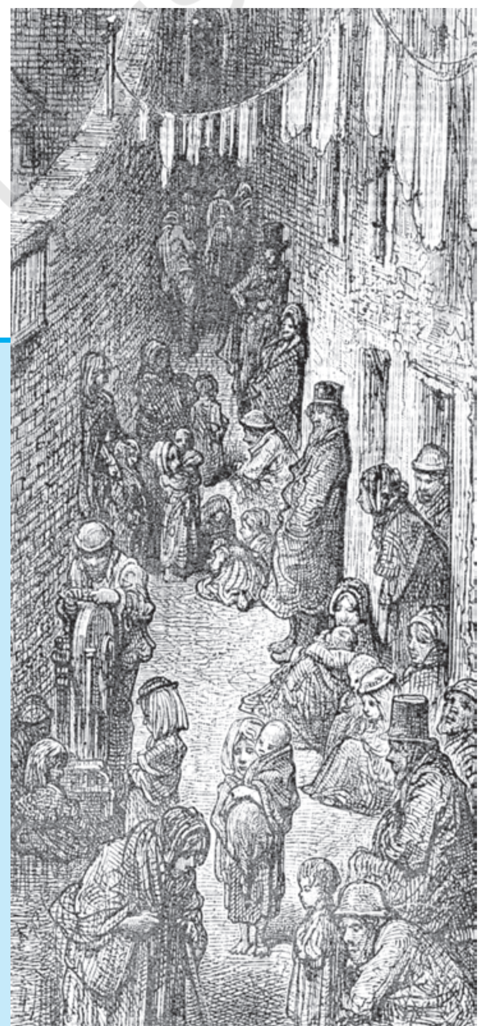

चार्ल्स डिकन्स (1812–70) औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप गरीबों के लिए जो भयंकर स्थिति उत्पन्न हुई उसका संभवत: सबसे कठोर समकालीन आलोचक थे। उन्होंने अपने उपन्यास *हार्ड टाइम्स* में एक काल्पनिक औद्योगिक नगर 'कोकटाउन' का बड़ा सटीक वर्णन किया है। "यह एक लाल ईंटों से बना नगर था, लेकिन उसकी ईंटों का रंग लाल तभी रह सकता था यदि धुएँ और राख ने उसे पोतकर बदरंग न कर दिया होता; लेकिन हालत यह थी कि यह कस्बा अजीब लाल और काले रंग के मिश्रण से पुता था मानो वह किसी खूंखार आदमी का चेहरा हो। यह मशीनों और उन लंबी गगनचुंबी चिमनियों का शहर था जिनमें से धुएँ के साँपों की अटूट पंक्तियाँ कभी कुंडलित न होकर, लगातार निकलती रहती थीं। इस नगर मे एक काली नहर थी और एक नदी भी थी जिसका पानी बदबूदार रंजक गंदगी से भरकर बैंगनी रंग का हो गया था। वहाँ ढेरों इमारतें थीं जो उनके भीतर चलने वाली मशीनों के कारण हरदम काँपती रहती थीं और उनकी खिड़कियाँ हमेशा ही खड़कती रहती थीं और वहाँ भाप के इंजन का पिस्टन उकताहट के साथ ऊपर–नीचे होता रहता था, मानो किसी हाथी का सिर हो जो अपने दु:खभरे पागलपन में आँखे फाड़े एक ही ओर देख रहा हो।"

क्रियाकलाप 3

औद्योगीकरण के प्रारंभ में ब्रिटिश शहरों और गाँवों पर पड़ने वाले प्रभावों पर विचार करें और इसकी तुलना ठीक उसी प्रकार की परिस्थितियों में भारत के संदर्भ में करें।

ब्रिटेन के निबंधकार और उपन्यासकार डी.एच. लॉरेन्स ने (1885–1930), डिकेन्स के सत्तर साल बाद, कोयला क्षेत्र में स्थित एक गाँव में आए ऐसे परिवर्तन का इस प्रकार वर्णन किया जिसे उन्होंने स्वयं अनुभव नहीं किया था, लेकिन जिसके बारे में उन्होंने अपने बड़े-बुज़ुर्गों से सुना था।

"ईस्टवुड... उन्नीसवीं सदी की शुरुआत में अवश्य ही एक छोटा गाँव रहा होगा जहाँ छोटी-छोटी झोपड़ियाँ थीं, खान मजदूरों के चार कमरों वाले छोटे-छोटे घरों की छिटपुट कतारें थीं और पुराने खान मालिकों के आवास थे... लेकिन 1820 के आसपास किसी समय कंपनी ने पहला बड़ा शैफ़्ट लगाया होगा... और औद्योगिक कोयला खान की पहली वास्तविक मशीनरी लगाई... मज़दूरों के रहने के छोटे-छोटे घरों की कतारें अधिकतर गिरा दी गईं और फिर नाटिंघम रोड के साथ-साथ छोटी-छोटी दुकानें खुलने लगीं और नीचे ढलान में कंपनी ने कुछ इमारतें बनाईं जिन्हें आज भी 'नयी इमारतें' कहा जाता है... भट्ठी, काली गली में खुलने वाली छोटे-छोटे चार कमरों वाले घरों की कतारें जिनकी पीठ चौकोर निर्जन स्थल की ओर थी, बेरकों के बाड़े की तरह बंद कर दी गई, बड़ा अजीब लगता है यह सब।"

विरोध आंदोलन

औद्योगीकरण के प्रारंभिक दशकों का समय वही था जब फ्रांसीसी क्रांति (1789–94) द्वारा उद्भूत नए-नए राजनीतिक विचारों का प्रचार-प्रसार हो रहा था। 'स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व' स्थापित करने के आंदोलनों ने यह दिखा दिया कि सामूहिक जन आंदोलन चलाना संभव है। इनसे 1790 के दशक की फ्रांसीसी संसदीय सभाओं जैसी लोकतांत्रिक संस्थाएँ बनाई जा सकती हैं और रोटी जैसी आवश्यक वस्तुओं की कीमतों को नियंत्रित करके युद्ध की कठिनाइयों को भी रोका जा सकता है। इंग्लैंड में, फैक्ट्रियों में काम करने की कठोर परिस्थितियों के विरुद्ध राजनीतिक विरोध बढ़ता जा रहा था और श्रमजीवी लोग मताधिकार प्राप्त करने के लिए आंदोलन कर रहे थे। इसकी प्रतिक्रिया में, सरकार ने दमनकारी रुख अपनाया और कानून बनाकर, लोगों से विरोध प्रदर्शन करने का अधिकार ही छीन लिया।

इंग्लैंड का फ्रांस के साथ लंबे अरसे (1792 से 1815) तक युद्ध चलता रहा। इंग्लैंड और यूरोप के बीच चलने वाला व्यापार छिन्न-भिन्न हो गया। फैक्ट्रियों को मजबूरन बंद करना पड़ा, बेरोज़गारी में बढ़ोतरी हुई और रोटी, मांस जैसे आवश्यक खाद्य पदार्थों की कीमतें औसत मजदूरी स्तर से कहीं ज़्यादा बढ़ गईं।

ब्रिटेन की संसद ने 1795 में दो जुड़वाँ अधिनियम पारित किए, जिनके अंतर्गत 'लोगों को भाषण या लेखन द्वारा सम्राट, संविधान, या सरकार के विरुद्ध घृणा या अपमान करने के लिए उकसाना' अवैध घोषित कर दिया गया और 50 से अधिक लोगों की अनधिकृत सार्वजनिक बैठकों पर रोक लगा दी गई। लेकिन 'पुराने भ्रष्टाचार' (Old Corruption) के विरुद्ध आंदोलन बराबर चलता रहा। 'पुराना भ्रष्टाचार' शब्द का प्रयोग राजतंत्र और संसद के संबंध में किया जाता था। संसद के सदस्य जिनमें भू-स्वामी, उत्पादक तथा पेशेवर लोग शामिल थे, कामगारों को वोट का अधिकार दिए जाने के खिलाफ़ थे। उन्होंने 'कार्न लॉज़' (अनाज के कानून) का समर्थन किया। इस कानून के अंतर्गत विदेश से सस्ते अनाज के आयात पर रोक लगा दी गई थी जब तक कि ब्रिटेन में इन अनाजों की कीमत में एक स्वीकृत स्तर तक वृद्धि न हो गई हो।

जैसे-जैसे श्रमिकों की तादाद शहरों और कारखानों में बढ़ी, वे अपने गुस्से और हताशा को हर तरह के विरोध में प्रकट करने लगे। 1790 के दशक से पूरे देश भर में ब्रैड अथवा खाद्य के लिए

दंगे होने लगे। गरीबों का मुख्य आहार ब्रैड ही था और इसकी कीमत पर ही उनके रहन-सहन का स्तर निर्भर करता था। ब्रैड के भंडारों पर कब्ज़ा कर लिया गया और उन्हें मुनाफ़ाखोरों द्वारा लगाई गई ऊँची कीमतों से काफ़ी कम मूल्य में बेचा जाने लगा जो आम आदमी के लिए वाजिब थीं और नैतिक दृष्टि से भी सही थीं। ऐसे दंगे ख़ासतौर पर युद्ध के बदतरीन वर्ष (1795) में बार-बार हुए, लेकिन उनका सिलसिला 1840 के दशक तक चलता रहा।

परेशानी का एक कारण और भी था जिसे चकबंदी या बाड़ा पद्धति कहते हैं, जिसके द्वारा 1770 के दशक से छोटे-छोटे सैकड़ों फार्म (खेत) शक्तिशाली ज़मींदारों के बड़े फार्मों में मिला दिए गए। इस पद्धति से बुरी तरह से प्रभावित हुए गरीब परिवारों ने औद्योगिक काम देने की मांग की। लेकिन कपड़ा उद्योग में मशीनों के प्रचलन से हज़ारों की संख्या में हथकरघा बुनकर बेरोजगार होकर गरीबी की मार झेलने को मजबूर हो गए, क्योंकि उनका करघा मशीनों का मुकाबला नहीं कर सकता था। 1790 के दशक से बुनकर लोग अपने लिए न्यूनतम वैध मजदूरी की माँग करने लगे। संसद ने इस माँग को ठुकरा दिया। जब वे हड़ताल पर चले गए तो उन्हें जबरदस्ती तितर-बितर कर दिया गया। हताश होकर सूती कपड़े के बुनकरों ने लंकाशायर में पावरलूमों को नष्ट कर दिया क्योंकि वे समझते थे कि इन बिजली के करघों ने ही उनकी रोजी-रोटी छीनी है। नोटिंघम में ऊनी कपड़ा उद्योग में भी मशीनों के चलन का प्रतिरोध किया गया, इसी प्रकार लैसेस्टरशायर (Leicestershire) और डर्बीशायर (Derbyshire) में भी विरोध प्रदर्शन हुए।

यार्कशायर (Yorkshire) में, ऊन कतरने वालों ने ऊन कतरने के ढाँचों (शीयरिंग फ्रेम) को तोड़ दिया। ये लोग परंपरागत रूप से अपने हाथों से भेड़ों के बालों की कटाई करते थे। 1830 के दंगों में फार्मों में काम करने वाले श्रमिकों को भी लगा कि उनका धंधा तो चौपट होने वाला है क्योंकि खेती में भूसी से दाना अलग करने के लिए नयी खलिहानी मशीनों (थ्रेशिंग मशीन) का इस्तेमाल शुरू हो गया था। दंगाइयों ने इन मशीनों को तोड़ डाला। परिणामस्वरूप नौ दंगाइयों को फाँसी की सजा हुई और 450 लोगों को कैदियों के रूप में आस्ट्रेलिया भेज दिया गया। (देखिए विषय 10)

एक करिश्माई व्यक्तित्व वाले जनरल नेड लुड के नेतृत्व में लुडिज्म (1811-17) नामक अन्य आंदोलन चलाया गया। यह एक अन्य किस्म के विरोध प्रदर्शन का उदाहरण था। लुडिज्म के अनुयायी मशीनों की तोड़फोड़ में ही विश्वास नहीं करते थे, बल्कि न्यूनतम मजदूरी, नारी एवं बाल श्रम पर नियंत्रण, मशीनों के आविष्कार से बेरोजगार हुए लोगों के लिए काम और कानूनी तौर पर अपनी माँगें पेश करने के लिए मजदूर संघ (ट्रेड यूनियन) बनाने के अधिकार की भी माँग करते थे।

औद्योगीकरण के प्रारंभिक वर्षों में श्रमजीवियों के पास उन कठोर कार्यवाहियों, जिनसे उनके जीवन में फ़ेरबदल हो रही थी, के खिलाफ़ अपना गुस्सा जाहिर करने के लिए न तो वोट देने का अधिकार था और न ही कोई कानूनी तरीका। अगस्त 1819 में 80,000 लोग अपने लिए लोकतांत्रिक अधिकारों, अर्थात् राजनीतिक संगठन बनाने, सार्वजनिक सभाएँ करने और प्रेस की स्वतंत्रता के अधिकारों की मांग करने के लिए मैनचेस्टर में सेंट पीटर्स (St. Peter's Field) मैदान में शांतिपूर्वक इकट्ठे हुए। लेकिन उनका बर्बरतापूर्वक दमन कर दिया गया। इसे पीटर लू* के नरसंहार (Peterloo Massacre) के नाम से जाना जाता है। उन्होंने जिन अधिकारों की माँग की थी उन्हें उसी वर्ष संसद द्वारा पारित छः अधिनियमों द्वारा नकार दिया गया। इन अधिनियमों के द्वारा उन राजनीतिक कार्यकलापों पर रोक बढ़ा दी गई। इस रोक की शुरुआत 1795 के दो जुड़वाँ अधिनियमों के तहत की गई थी। परन्तु इससे कुछ लाभ भी हुए। पीटर लू के बाद ब्रिटिश संसद के निचले सदन 'हाउस ऑफ कॉमन्स' को अधिक प्रतिनिधित्वकारी बनाए जाने की आवश्यकता उदारवादी राजनीतिक दलों द्वारा महसूस की गई और जुड़वाँ अधिनियमों को 1824-25 में निरस्त कर दिया गया।

*इस शब्द को वाटर लू शब्द से मेल खाते हुए बनाया गया था। 1815 में वाटर लू में फ्रांसीसी सेना पराजित हुई।

© NCERT not to be republished

कानूनों के जरिये सुधार

सरकार औरतों और बच्चों के काम की परिस्थितियों के प्रति कितनी जागरूक थी? 1819 में कुछ कानून बनाए गए जिनके तहत नौ वर्ष से कम की आयु वाले बच्चों से फैक्ट्रियों में काम करवाने पर पाबंदी लगा दी गई और नौ से सोलह वर्ष की आयु वाले बच्चों से काम कराने की सीमा 12 घंटे तक सीमित कर दी गई लेकिन इस कानून में इसका प्रवर्तन यानी पालन कराने के लिए आवश्यक अधिकारों की व्यवस्था नहीं की गई थी। संपूर्ण उत्तरी इंग्लैंड में कामगारों द्वारा इस स्थिति का भारी विरोध किए जाने के बाद, 1833 में एक अधिनियम पारित किया गया जिसके अंतर्गत नौ वर्ष से कम आयु वाले बच्चों को केवल रेशम की फैक्ट्रियों में काम पर लगाने की अनुमति दी गई, बड़े बच्चों के लिए काम के घंटे सीमित कर दिए गए और कुछ फैक्ट्री निरीक्षकों की व्यवस्था कर दी गई जिससे कि अधिनियम के प्रवर्तन तथा पालन को सुनिश्चित किया जा सके। अंततः 1847 में, 30 वर्ष से भी अधिक लंबे अरसे तक आंदोलन चलने के बाद, दस घंटा विधेयक पारित कर दिया गया। इस कानून ने स्त्रियों और युवकों के लिए काम के घंटे सीमित कर दिए और पुरुष श्रमिकों के लिए 10 घंटे का दिन निश्चित कर दिया।

क्रियाकलाप 4

उद्योगों में काम की परिस्थितियों के बारे में बनाए गए सरकारी विनियमों के पक्ष और विपक्ष में अपनी दलीलें दें।

ये अधिनियम कपड़ा उद्योगों पर ही लागू होते थे, खनन उद्योग पर नहीं। सरकार द्वारा स्थापित, 1842 के खान आयोग ने यह उजागर कर दिया कि खानों में काम करने की परिस्थितियाँ वास्तव में, 1833 के अधिनियम के लागू होने से पहले कहीं अधिक खराब हो गई हैं, क्योंकि पहले से अधिक संख्या में बच्चों को कोयला खानों में काम पर लगाया जा रहा था। 1842 के खान और कोयला खान अधिनियम ने दस वर्ष से कम आयु के बच्चों और स्त्रियों से खानों में नीचे काम लेने पर पाबंदी लगा दी। फील्डर्स फैक्ट्री अधिनियम ने 1847 में यह कानून बना दिया कि अठारह साल से कम उम्र के बच्चों और स्त्रियों से 10 घंटे प्रतिदिन से अधिक काम न लिया जाए। इन कानूनों का प्रवर्तन फैक्ट्री निरीक्षकों के द्वारा किया जाना था, लेकिन यह एक कठिन काम था। निरीक्षकों का वेतन बहुत कम था और प्रबंधक उन्हें रिश्वत देकर आसानी से उनका मुँह बंद कर देते थे। दूसरी ओर, बच्चों के माता-पिता भी उनकी आयु के बारे में झूठ बोलकर उन्हें काम पर लगवा देते थे, ताकि उनकी मजदूरी से घर का खर्च चलाने में सहायता मिले।

औद्योगिक क्रांति के विषय में तर्क-वितर्क

1970 के दशक तक, इतिहासकार 'औद्योगिक क्रांति' शब्द का प्रयोग ब्रिटेन में 1780 के दशक से 1820 के दशक के बीच हुए औद्योगिकी विकास व विस्तारों के लिए करते थे। लेकिन उसके बाद इस शब्द के प्रयोग को अनेक आधार पर चुनौती दी जाने लगी।

दरअसल औद्योगीकरण की क्रिया इतनी धीमी गति से होती रही कि इसे 'क्रांति' कहना ठीक नहीं होगा। इसके द्वारा पहले से मौजूद प्रक्रियाओं को ही आगे नए स्तरों तक लाया गया। इस प्रकार, फैक्ट्रियों में श्रमिकों का जमावड़ा पहले की अपेक्षा अधिक हो गया और धन का प्रयोग भी पहले से अधिक व्यापक रूप से होने लगा।

उन्नीसवीं शताब्दी शुरू होने के काफी समय बाद तक भी इंग्लैंड के बड़े-बड़े क्षेत्रों में कोई फैक्ट्रियाँ या खानें नहीं थीं, इसलिए 'औद्योगिक क्रांति' शब्द 'अनुपयुक्त' समझा गया। इंग्लैंड में परिवर्तन क्षेत्रीय तरीके से हुआ, प्रमुख रूप से लंदन, मैनचेस्टर, बर्मिंघम (Birmingham) या न्यूकासल (Newcastle) नगरों के चारों ओर न कि संपूर्ण देश में।

© NCERT not to be republished

क्या कपास या लोहा उद्योगों में अथवा विदेशी व्यापार में 1780 के दशक से 1820 के दशक तक हुए विकास या संवृद्धि को क्रांतिकारी कहा जा सकता है? नयी मशीनों के कारण सूती कपड़ा उद्योग में जो ध्यानाकर्षणकारी संवृद्धि हुई वह भी एक ऐसे कच्चे माल (कपास) पर आधारित थी जो ब्रिटेन में बाहर से मँगाया जाता था और तैयार माल भी दूसरे देशों में (विशेषत: भारत में) बेचा जाता था। धातु से बनी मशीनें और भाप की शक्ति तो उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक दुर्लभ रहीं। ब्रिटेन के आयात और निर्यात में 1780 के दशक से जो तेज़ी से वृद्धि हुई उसका कारण यह था कि अमरीकी स्वतंत्रता संग्राम के कारण उत्तरी अमरीका के साथ जो व्यापार बाधित हो गया था वह फिर से शुरू हो गया। इस वृद्धि को तीव्र कहकर अंकित किया गया क्योंकि जिस बिन्दु से उसका प्रारंभ हुआ था वह काफी नीचे था।

आर्थिक परिवर्तनों के सूचकांक यह दर्शाते हैं कि सतत् औद्योगीकरण 1815-20 से पहले की बजाय बाद में दिखाई दिया था। 1793 के बाद के दशकों में फ्रांसीसी क्रांति और नेपोलियन के युद्धों के विघटनकारी प्रभावों का अनुभव किया गया था। औद्योगीकरण को देश के धन के पूँजी निर्माण में या आधारभूत ढाँचा तैयार करने में अथवा नयी-नयी मशीनें लगाने के लिए अधिकाधिक निवेश करने में इन सुविधाओं के कुशलतापूर्ण उपयोग के स्तरों को बढ़ाने और उत्पादकता में वृद्धि करने के साथ जोड़ा जाता है। यानि लाभदायक निवेश इन मायनों में उत्पादकता के स्तरों के साथ-साथ 1820 के बाद धीरे-धीरे बढ़ने लगा। 1840 के दशक तक कपास, लोहा और इंजीनियरिंग उद्योगों से आधे से भी कम औद्योगिक उत्पादन होता था। तकनीकी प्रगति इन्हीं शाखाओं तक ही सीमित नहीं थी; बल्कि वह कृषि-संसाधन तथा मिट्टी के बर्तन बनाने (पौटरी) जैसे अन्य उद्योग-धंधों में भी देखी जा सकती थी।

ब्रिटेन में औद्योगिक विकास 1815 से पहले की अपेक्षा उसके बाद अधिक तेजी से क्यों हुआ? इस प्रश्न का उत्तर ढूँढ़ने के लिए इतिहासकारों ने इस तथ्य की ओर इशारा किया है कि 1760 के दशक से 1815 तक ब्रिटेन ने एक साथ दो काम करने की कोशिश की– पहला औद्योगिकरण और दूसरा यूरोप, उत्तरी अमरीका और भारत में युद्ध लड़ना; और शायद वह उनमें से एक काम में असफल रहा। ब्रिटेन 1760 के बाद अगले 60 वर्षों में से 36 वर्ष तक लड़ाई में व्यस्त रहा। जो पूंजी निवेश के लिए उधार ली गई थी वह युद्ध लड़ने में खर्च की गई। यहाँ तक कि युद्ध का 35 प्रतिशत तक खर्च लोगों की आमदनियों पर कर लगाकर पूरा किया जाता था। कामगारों और श्रमिकों को कारखानों तथा खेतों में से निकालकर सेना में भर्ती कर दिया जाता था। खाद्य सामग्रियों की कीमतें तो इतनी तेज़ी से बढ़ीं कि गरीबों के पास अपनी उपभोक्ता सामग्री खरीदने के लिए भी बहुत कम पैसा बचता था। नेपोलियन की नाकाबंदी की नीति और ब्रिटेन द्वारा उसे नाकाम करने की कोशिशों ने यूरोप महाद्वीप को व्यापारिक दृष्टि से अवरुद्ध कर दिया। इससे ब्रिटेन से निर्यात होने वाले अधिकांश लक्ष्यस्थल ब्रिटेन के व्यापारियों की पहुँच से बाहर हो गए।

'क्रांति' के साथ प्रयुक्त 'औद्योगिक' शब्द अर्थ की दृष्टि से बहुत सीमित है। इस दौरान जो रूपांतरण हुआ वह आर्थिक तथा औद्योगिक क्षेत्रों तक ही सीमित नहीं रहा, बल्कि उसका विस्तार इन क्षेत्रों से परे तथा समाज के भीतर भी हुआ और इसके फलस्वरूप दो वर्गों को प्रधानता मिली: पहला था बुर्जुआ वर्ग यानी मध्यम वर्ग और दूसरा था नगरों और देहाती इलाकों में रहने वाला मजदूरों का सर्वहारा वर्ग।

1851 में लंदन में विशेष रूप से निर्मित स्फटिक प्रासाद (क्रिस्टल पैलेस) में ब्रिटिश उद्योग की उपलब्धियों को दर्शाने के लिए एक विशाल प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसे देखने

© NCERT not to be republished

1851 की महान प्रदर्शनी ने सभी राष्ट्रों की औद्योगिक उपलब्धियों, विशेष रूप से ब्रिटेन की उल्लेखनीय प्रगति की झाँकी प्रस्तुत की। यह प्रदर्शनी लंदन के हाइड पार्क में स्थित क्रिस्टल पैलेस में लगाई गई थी। यह पैलेस विशेष रूप से इसी प्रयोजन के लिए बर्मिंघम में उत्पादित लोहे फलकों में जड़ी शीशे की चादरों से बनाया गया था

के लिए दर्शकों की भारी भीड़ उमड़ पड़ी। उस समय देश की आधी जनसंख्या शहरों में रहती थी, लेकिन शहरों में रहने वाले कामगारों में से जितने लोग हस्तशिल्प की इकाइयों में काम करते थे, लगभग उतने ही फैक्ट्रियों या कारखानों में कार्यरत थे। 1850 के दशक से, शहरी इलाकों में रहने वाले लोगों का अनुपात अचानक बढ़ गया, और उनमें से अधिकांश लोग उद्योगों में काम करते थे, यानी वे श्रमजीवी वर्ग के थे। अब ब्रिटेन के समूचे कार्य-बल का केवल 20 प्रतिशत भाग ही देहाती इलाकों में रहता था। औद्योगीकरण की यह रफ्तार अन्य यूरोपीय देशों में हो रहे औद्योगीकरण के मुकाबले बहुत ज्यादा तेज़ थी। ब्रिटिश उद्योग के विस्तृत अध्ययन में इतिहासकार ए.ई. मस्सन ने कहा है कि "1850 से 1914 तक की अवधि को एक ऐसा काल मानने के लिए पर्याप्त आधार हैं जिसमें औद्योगिक क्रांति वास्तव में अत्यंत व्यापक पैमाने पर हुई, जिससे संपूर्ण अर्थव्यवस्था और समाज की कायापलट, अन्य किसी भी परिवर्तन के मुकाबले बड़ी तेज़ी से और व्यापक रूप से हुआ था।"

अभ्यास

संक्षेप में उत्तर दीजिए

1. ब्रिटेन 1793 से 1815 तक कई युद्धों में लिप्त रहा, इसका ब्रिटेन के उद्योगों पर क्या प्रभाव पड़ा?
2. नहर और रेलवे परिवहन के सापेक्षिक लाभ क्या-क्या हैं?
3. इस अवधि में किए गए 'आविष्कारों' की दिलचस्प विशेषताएँ क्या थीं?
4. बताइए कि ब्रिटेन के औद्योगीकरण के स्वरूप पर कच्चे माल की आपूर्ति का क्या प्रभाव पड़ा?

संक्षेप में निबंध लिखिए

5. ब्रिटेन में स्त्रियों के भिन्न-भिन्न वर्गों के जीवन पर औद्योगिक क्रांति का क्या प्रभाव पड़ा?
6. विश्व के भिन्न-भिन्न देशों में रेलवे आ जाने से वहाँ के जनजीवन पर क्या प्रभाव पड़ा? तुलनात्मक विवेचना कीजिए।

विषय

10

मूल निवासियों का विस्थापन

11091CH10

इस अध्याय में अमरीका और ऑस्ट्रेलिया के मूल निवासियों के इतिहास के कुछ पहलू पेश किए गए हैं। विषय 8 में हमने दक्षिण अमरीका में स्पेनी और पुर्तगाली औपनिवेशीकरण के इतिहास की झाँकी देखी थी। 18वीं सदी से दक्षिणी अमरीका के और भी हिस्सों में, तथा मध्य, उत्तरी अमरीका, दक्षिणी अफ़्रीका, ऑस्ट्रेलिया तथा न्यूज़ीलैंड के इलाकों में यूरोप से आए आप्रवासी बसने लगे। इस प्रक्रिया ने वहाँ के बहुत से मूल निवासियों को दूसरे इलाकों में जाने पर मजबूर किया। यूरोपीय लोगों की ऐसी बस्तियों को 'कॉलोनी' (उपनिवेश) कहा जाता था। जब यूरोप से आए इन उपनिवेशों के बाशिंदे यूरोपीय 'मातृदेश' से स्वतंत्र हो गए, तो उन्हें 'राज्य' या देश का दर्ज़ा हासिल हो गया।

19वीं और 20वीं सदी में एशियाई देशों के लोग भी इनमें से कुछ देशों में आ बसे। आज ये यूरोपीय और एशियाई लोग इन देशों में बहुसंख्यक हैं, और वहाँ के मूल निवासियों की संख्या कम रह गई है। वे शहरों में मुश्किल से ही नज़र आते हैं, और लोग भूल गए हैं कि कभी देश का अधिकतर हिस्सा उन्हीं के कब्ज़े में था, और यह भी कि कई नदियों, शहरों इत्यादि के नाम 'देसी' नामों से बने हैं [(मसलन, संयुक्त राज्य अमरीका में ओहियो (Ohio), मिसीसिपी (Mississippi) और सिएटल (Seattle) व कनाडा में सस्कातचेवान (Saskatchewan), ऑस्ट्रेलिया में वॉलान्गॉन्ग (Wollongong) और परामत्ता (Parramatta)]।

बीसवीं सदी के मध्य तक अमरीका और ऑस्ट्रेलिया की इतिहास की पाठ्यपुस्तकों में यह बताया जाता था कि किस तरह यूरोपवासियों ने उत्तरी और दक्षिणी अमरीका तथा ऑस्ट्रेलिया की 'खोज' की। उनमें यहाँ के मूल बाशिंदों का शायद ही कभी ज़िक्र होता था, सिवाय यह बताने के कि यूरोपीय लोगों के प्रति उनका रवैया शत्रुतापूर्ण था। पर 1840 के दशक से ही अमरीका में मानवविज्ञानियों ने उन पर अध्ययन आरंभ कर दिया था। बहुत बाद में, 1960 के दशक से, इन मूल निवासियों को अपने इतिहास को लिखने या बयान करने (मौखिक इतिहास) के लिए प्रेरित किया गया।

आज इन मूल निवासियों द्वारा लिखे गए इतिहास और कथाकृतियों को पढ़ना संभव है। इन देशों में जानेवाले लोग वहाँ के संग्रहालयों में 'देसी कला' की दीर्घाएँ तथा आदिवासी जीवन-शैली को दिखलानेवाले विशेष संग्रहालय भी देख सकते हैं। संयुक्त राज्य अमरीका में नया अमरीकी इंडियन राष्ट्रीय संग्रहालय खुद अमरीकी इंडियनों की देख-रेख में बना है।

यूरोपीय साम्राज्यवाद

स्पेन और पुर्तगाल के अमरीकी साम्राज्य (देखिए, विषय 8) का सत्रहवीं सदी के बाद विस्तार नहीं हुआ। तब तक फ्रांस, हॉलैंड और इंग्लैंड जैसे दूसरे देशों ने अपनी व्यापारिक गतिविधियों का विस्तार करना और अमरीका, अफ़्रीका तथा एशिया में अपने उपनिवेश बसाना शुरू कर दिया;

© NCERT not to be republished

आयरलैंड भी कमोबेश इंग्लैंड का उपनिवेश ही था, क्योंकि वहाँ बसे हुए ज़्यादातर भूस्वामी अंग्रेज़ ही थे।

अठारहवीं सदी से यह बहुत साफ़-साफ़ दिखने लगा कि यद्यपि मुनाफ़े की संभावना ने ही लोगों को यहाँ उपनिवेश बसाने के लिए प्रेरित किया था, लेकिन जो नियंत्रण स्थापित किया गया, उसकी 'प्रकृति' में महत्त्वपूर्ण विविधताएँ थीं।

दक्षिण एशिया में व्यापारिक कंपनियों ने अपने को राजनीतिक सत्ता का रूप दिया, स्थानीय शासकों को हराया और अपने इलाके का विस्तार किया। उन्होंने पुरानी सुविकसित प्रशासकीय व्यवस्था को जारी रखा और भूस्वामियों से कर वसूलते रहे। बाद में उन्होंने व्यापार को सुगम बनाने के लिए रेलवे का निर्माण किया, खदानें खुदवाईं और बड़े-बड़े बाग़ान स्थापित किए।

दक्षिणी अफ़्रीका को छोड़ कर शेष पूरे अफ़्रीका में यूरोपीय लोग सर्वत्र समुद्र तटों पर ही व्यापार करते रहे। 19वीं सदी के आख़िरी दौर में ही वे अंदरूनी इलाकों में जाने का साहस कर सके। इसके बाद कुछ यूरोपीय मुल्कों के बीच अपने उपनिवेशों के रूप में अफ़्रीका का बँटवारा करने का समझौता हुआ।

'सेटलर' (Settler/आबादकार) शब्द दक्षिण अफ़्रीका में डच के लिए, आयरलैंड, न्यूज़ीलैंड और ऑस्ट्रेलिया में ब्रिटिश के लिए और अमरीका में यूरोपीय लोगों के लिए इस्तेमाल होता है। इन उपनिवेशों की राजभाषा अंग्रेज़ी थी (कनाडा को छोड़ कर, जहाँ फ्रांसीसी भी एक राजभाषा है)।

'नयी दुनिया' के देशों को यूरोपवासियों द्वारा दिए गए नाम

'अमरीका'	पहली बार अमेरिगो वेसपुकी (1451-1512) का यात्रा-वृत्तांत छपने के बाद प्रयुक्त
'कनाडा'	*कनाटा* से निकला शब्द (1535 में खोजी ज़ाक कार्टियर को मिली जानकारी के मुताबिक, ह्यूरों-इरोक्यूइस की भाषा में कनाटा का मतलब था, 'गाँव')
'ऑस्ट्रेलिया'	महान दक्षिणी महासागर में स्थित भूमि के लिए सोलहवीं सदी में प्रयुक्त नाम (लातिनी में 'दक्षिण' को *ऑस्ट्रल* कहते हैं।)
'न्यूज़ीलैंड'	हॉलैंड के तासमान द्वारा दिया गया नाम, जिसने सबसे पहले 1642 में इन टापुओं को देखा था (डच भाषा में 'समुद्र' को ज़ी कहते हैं।)

जियोग्रॉफ़िकल डिक्शनरी (पृ. 805-822) में अमरीका और ऑस्ट्रेलिया के ऐसे सौ से ज़्यादा स्थान-नामों की सूची दी गई है, जो 'न्यू' से शुरू होते हैं।

© NCERT not to be republished

उत्तरी अमरीका

उत्तरी अमरीका का महाद्वीप उत्तरध्रुवीय वृत्त से लेकर कर्क रेखा तक और प्रशांत महासागर से अटलांटिक महासागर तक फैला है। पथरीले पहाड़ों की शृंखला के पश्चिम में अरिज़ोना और नेवाडा की मरुभूमि है। थोड़ा और पश्चिम में सिएरा नेवाडा पर्वत हैं। पूरब में ग्रेट (विस्तृत) मैदानी इलाके, ग्रेट (विस्तृत) झीलें, मिसीसिपी और ओहियो और अप्पालाचियाँ पर्वतों की घाटियाँ हैं। दक्षिण दिशा में मेक्सिको है। कनाडा का 40 फीसदी इलाका जंगलों से ढँका है। कई क्षेत्रों में तेल, गैस और खनिज संसाधन पाए जाते हैं, जिनके चलते संयुक्त राज्य अमरीका और कनाडा में ढेरों बड़े उद्योग हैं। आजकल कनाडा में गेहूँ, मकई और फल बड़े पैमाने पर पैदा किए जाते हैं और मत्स्य-उद्योग वहाँ का एक महत्त्वपूर्ण उद्योग है।

खनन, उद्योग और बड़े पैमाने की खेती का विकास पिछले 200 सालों में ही यूरोप, अफ़्रीका और चीन के आप्रवासियों के हाथों हुआ है। लेकिन यूरोपवासियों की जानकारी में आने से पहले हज़ारों सालों से उत्तरी अमरीका में लोग रह रहे थे।

मूल निवासी

उत्तरी अमरीका के सबसे पहले बाशिंदे 30,000 साल पहले बेरिंग स्ट्रेट्स के आरपार फैले भूमि-सेतु के रास्ते एशिया से आए, और 10,000 साल पहले आखिरी हिमयुग के दौरान वे और दक्षिण की तरफ़ बढ़े। अमरीका में मिलनेवाली सबसे पुरानी मानव कृति- एक तीर की नोक - 11,000 साल पुरानी है। तकरीबन 5000 साल पहले जब जलवायु में ज़्यादा स्थिरता आई, तब आबादी बढ़नी शुरू हुई।

'नेटिव' (मूल बाशिंदा) का मतलब होता है ऐसा व्यक्ति, जो अपने मौजूदा निवास-स्थान में ही पैदा हुआ था। बीसवीं सदी के आरंभिक वर्षों तक यह पद यूरोपीय लोगों द्वारा अपने उपनिवेशों के बाशिंदों के लिए इस्तेमाल होता था।

> ''अमरीका की पूर्वसंध्या (यानी जब यूरोपीय लोग आए और इस महाद्वीप को उन्होंने अमरीका नाम दिया) से ठीक पहले तक विविधता हर जगह पसरी हुई थी। लोग सौ से भी ज़्यादा ज़बानें बोलते थे। वे शिकार, मछली पकड़ना, संग्रहण, बागवानी और खेती में से जो-जो मुमकिन हो, वह सब आज़माते हुए अपनी जीविका कमाते थे। मिट्टी की गुणवत्ता कैसी है और उसके इस्तेमाल तथा देख-भाल के लिए कितने प्रयास की दरकार है, इसी पर जीने के तरीके का उनका चुनाव निर्भर करता था। सांस्कृतिक और सामाजिक पूर्वग्रह के आधार पर कुछ दूसरी चीज़ें तय होती थीं। मछली, अनाज, बाग़ के पेड़-पौधे, मांस - इनके अधिशेष हमारे यहाँ ताकतवर, श्रेणीबद्ध समाजों की रचना में मददगार बने, लेकिन वहाँ नहीं। कुछ संस्कृतियाँ सहस्राब्दियों तक कायम रहीं। . . .''
>
> – विलियम मैकलिश, *अमरीका से पहले का दिन*

ये लोग नदी घाटी के साथ-साथ बने गाँवों में समूह बना कर रहते थे। वे मछली और मांस खाते थे, और सब्ज़ियाँ तथा मकई उगाते थे। वे अक्सर मांस की तलाश में लंबी यात्राओं पर जाया करते थे। मुख्य रूप से उन्हें 'बाइसन' यानी उन जंगली भैंसों की तलाश रहती थी, जो घास के मैदानों में घूमते थे। (यह सत्रहवीं सदी से आसान हो गया, जब इन मूल निवासियों ने घुड़सवारी शुरू कर दी। वे घोड़े स्पेनी आबादकारों से ख़रीदते थे।) लेकिन वे उतने ही जानवर मारते, जितने की उन्हें भोजन के लिए ज़रूरत होती थी।

उन्होंने बड़े पैमाने पर खेती करने की कोई कोशिश नहीं की और चूंकि वे अपनी आवश्यकताओं से अधिक उत्पादन नहीं करते थे, इसलिए उन्होंने केंद्रीय तथा दक्षिणी अमरीका की तरह राजशाही और साम्राज्य का विकास नहीं किया। इलाके को लेकर कबीलों के बीच झगड़े की कुछ मिसालें मिलती हैं, पर कुल मिलाकर ज़मीन पर नियंत्रण कोई मुद्दा नहीं था। वे ज़मीन पर अपनी 'मिल्कियत' की कोई ज़रूरत महसूस किए बग़ैर उससे मिलनेवाले भोजन और आश्रय से संतुष्ट थे। उनकी परंपरा की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता थी, औपचारिक संबंध और दोस्तियाँ कायम करना तथा उपहारों का आदान-प्रदान करना। चीज़ें उन्हें ख़रीदने की बजाय उपहार के तौर पर हासिल होती थीं।

रंगीन सीपियों को आपस में सिलकर बनायी जाने वाली वेमपुम बेल्ट; किसी समझौते के बाद स्थानीय कबीलों के बीच इसका आदान-प्रदान होता था।

उत्तरी अमरीका में अनेक भाषाएँ बोली जाती थीं, हालांकि वे लिखी नहीं जाती थीं। उनका विश्वास था कि समय की गति चक्रीय है, और हर कबीले के पास अपनी उत्पत्ति और इतिहास के बारे में ब्यौरे थे जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलते आ रहे थे। वे कुशल कारीगर थे और खूबसूरत कपड़े बुनते थे। वे धरती को पढ़ सकते थे - जलवायु और विभिन्न भू-दृश्यों को वे उसी तरह समझ सकते थे, जैसे पढ़े-लिखे लोग लिखी हुई चीज़ें पढ़ते हैं।

यूरोपियनों से मुकाबला

मूल निवासियों के नाम ऐसी चीज़ों को दिये गये जिनका इन क़बीलों से कोई संबंध नहीं था।
डकोटा (हवाईजहाज़)
चिरोकी (जीप)
पोंटिआक (कार)
मोहॉक (बाल-कटाई)!

'नयी दुनिया' के मूल बाशिंदों के लिए अंग्रेज़ी में प्रयुक्त पद

aborigine – native people of Australia (लैटिन में ऐब का मतलब है, 'से' और ओरिजिन का, 'शुरुआत')

Aboriginal – एक विशेषण, जिसे संज्ञा की तरह इस्तेमाल करने की ग़लती अक्सर की जाती है

American Indian/Amerind/Amerindian-उत्तरी और दक्षिणी अमरीका तथा कैरेबियन के मूल निवासी

First Nations peoples – मूल निवासियों के संगठित समूह, जिन्हें कनाडाई सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त थी (1876 के इंडियन्स एक्ट में 'बैंड्स' पद का इस्तेमाल किया गया था, लेकिन 1980 के दशक से 'नेशन्स' शब्द प्रयुक्त होने लगा)

indigenous people – ऐसे लोग, जो किसी जगह में हमेशा से रहते आए हैं

native American – उत्तरी और दक्षिणी अमरीका के देसी लोग (यह पद अब बहुप्रचलित है)

'*Red Indian*' – गेहुंए वर्ण के लोग, जिनके निवास-स्थान को कोलंबस ने ग़लती से इंडिया समझ लिया था

विस्कान्सिन के विनेबागो कबीले की एक महिला। 1860 के दशक में इस कबीले के लोग नेबरास्का स्थानांतरित कर दिए गए।

© NCERT not to be republished

*होपी अब कैलीफोर्निया के निकट रहने वाले आदिवासी हैं।

"प्रस्तर की पट्टी पर यह खुदा था कि *होपी यह मानते थे कि उनके पास वापस आने वाले पहले भाई और बहन धरती के पार से कछुओं के रूप में आएँगे। वे इनसान होंगे, पर कछुओं के रूप में आएँगे। इसलिए जब समय आया, तो होपी लोग धरती के उस पार से आनेवाले उन कछुओं का स्वागत करने के लिए एक खास गाँव में इकट्ठा हुए। वे सुबह-सुबह उठ गए और उन्होंने सूर्योदय देखा। उन्होंने मरुभूमि के पार निगाह दौड़ाई और उन्हें बख़्तरबंद स्पेनी कॉन्क्विस्टाडोर दिखलाई पड़े, जो धरती के उस छोर से आते कछुओं की तरह लग रहे थे। सो, उन्होंने समझा, ये वही हैं जिनका इंतज़ार था। इसलिए वे स्पेनी इनसान के पास गए और हाथ मिलाने की उम्मीद में अपना हाथ बढ़ाया, लेकिन स्पेनी ने उनके हाथ में कोई सस्ती-सी चीज़ पकड़ा दी। और इससे पूरे उत्तरी अमरीका में यह बात फैल गई कि बहुत कठिन समय आनेवाला है, कि शायद कुछ भाइयों और बहनों ने सभी चीज़ों की पवित्रता को भुला दिया है और इसकी वजह से धरती पर सभी इनसान काफी कष्ट पानेवाले हैं।"

-ली ब्राउन की एक वार्ता से, 1986

सत्रहवीं सदी में दो महीने के कठिन समुद्री अभियान के बाद उत्तरी अमरीका के उत्तरी तट पर पहुँचे यूरोपीय व्यापारियों को यह देख कर सुकून मिला कि वहाँ के स्थानीय लोगों का व्यवहार दोस्ताना और गर्मजोशी-भरा है। दक्षिण अमरीका गए स्पेनियों के विपरीत, जो वहाँ की सोने की प्रचुरता से अभिभूत हो गए थे, ये लोग मछली और रोंएदार खाल के व्यापार के लिए आए थे, जिसमें उन्हें शिकार-कुशल देसी लोगों की ओर से अपेक्षित मदद मिली।

थोड़ा और दक्षिण में, मिसीसिपी के किनारे-किनारे, फ्रांसीसियों ने पाया कि देसी लोग नियमित रूप से जमा होते थे। इसका मक़सद था, ऐसे हस्तशिल्पों का आदान-प्रदान करना जो किसी खास कबीले में ही बनते थे, या ऐसे खाद्य पदार्थों का आदान-प्रदान जो अन्य इलाक़ों में उपलब्ध नहीं थे। स्थानीय उत्पादों के बदले में यूरोपीय लोग वहाँ के बाशिंदों को कंबल, लोहे के बर्तन (जिसे वे कभी-कभी अपने मिट्टी के पात्रों की जगह इस्तेमाल करते थे), बंदूकें (जो जानवरों को मारने में तीर-धुनष की अच्छी पूरक साबित हुईं) और शराब देते थे। वहाँ के बाशिंदों का पहले शराब से परिचय नहीं था। वे जल्दी ही इसकी आदत के शिकार हो गए, जो कि यूरोपीय लोगों के लिए अच्छा साबित हुआ, क्योंकि इसने उन्हें व्यापार के लिए अपनी शर्तें थोपने में सक्षम बनाया। (यूरोपीय लोगों ने उन मूल निवासियों से तंबाकू की आदत ग्रहण की।)

क्यूबेक	अमरीकी उपनिवेश
1497 में जॉन कैबोट 'न्यूफ़ाउंडलैंड' पहुँचा	1507 अमेरिगो डे वेसपुकी की '*ट्रैवेल्स*' प्रकाशित हुई
1534 जैक कार्टियर ने सेंट लॉरेंस नदी के किनारे-किनारे यात्रा की और मूल बाशिंदों से मिला	–
1608 फ्रांसीसियों ने क्यूबेक उपनिवेश की खोज की	1607 ब्रिटिश लोगों ने वर्जीनिया उपनिवेश की खोज की
	1620 ब्रिटिश लोगों ने प्लाइमाउथ (मेसाचुसैट्स में) की खोज की

पारस्परिक धारणाएँ

अठारहवीं सदी में पश्चिमी यूरोप के लोग 'सभ्य' मनुष्य की पहचान साक्षरता, संगठित धर्म और शहरीपन के आधार पर ही करते थे। उन्हें अमरीका के मूल निवासी 'असभ्य' प्रतीत हुए। फ्रांसीसी दर्शनशास्त्री ज्यां जैक रूसो जैसे कुछ यूरोपीयों के लिए ऐसे लोग तारीफ़ के काबिल थे, क्योंकि वे 'सभ्यता' की विकृतियों से अछूते थे। इसके लिए एक प्रचलित पद था, 'उदात्त उत्तम जंगली' (The noble savage)। एक दूसरा नज़रिया अंग्रेज़ी के कवि विलियम वड्र्सवर्थ की कुछ पंक्तियों में मिलता है। वड्र्सवर्थ और रूसो में से कोई भी किसी अमरीकी मूल निवासी से नहीं मिला था, लेकिन वड्र्सवर्थ ने उनका वर्णन करते हुए कहा कि वे ''जंगलों में'' रहते हैं, ''जहाँ कल्पनाशक्ति के पास उन्हें भावसंपन्न करने, उन्हें ऊँचा उठाने या परिष्कृत करने के अवसर बहुत कम हैं'', जिसका मतलब यह कि प्रकृति के निकट रहनेवालों की कल्पनाशक्ति और भावना अत्यंत सीमित होती है !

संयुक्त राज्य अमरीका के तीसरे प्रेसिडेंट और वड्र्सवर्थ के समकालीन, थॉमस जैफ़र्सन ने मूल निवासियों के बारे में ऐसे शब्द कहे हैं, जिन पर आज के समय में कड़ा विरोध ज़ाहिर किया जाता : ''यह अभागी नस्ल, जिसे सभ्य बनाने के लिए हमने इतनी ज़हमत उठाई . . . अपने उन्मूलन का औचित्य सिद्ध करती है।''

यह दिलचस्प है कि एक दूसरे लेखक, वाशिंगटन इरविंग ने, जो वड्र्सवर्थ से खासे छोटे थे और जो मूल निवासियों से सचमुच मिले थे, उनका वर्णन बिलकुल भिन्न रूप में किया। ''जिन इंडियन्स की असली ज़िंदगी को देखने का मुझे मौका मिला, वे कविताओं में वर्णित अपने रूप से काफ़ी भिन्न हैं। यह सच है कि गोरे लोगों, जिनकी नीयत पर वे भरोसा नहीं करते और जिनकी भाषा भी नहीं समझते, की संगत में रहने पर वे काफ़ी कम बोलते हैं। पर परिस्थितियाँ वैसी ही हों, तो गोरा आदमी भी उन्हीं की तरह अल्पभाषी हो जाता है। ये इंडियन्स जब अपनों के बीच होते हैं, तो वे नकल उतारने के उस्ताद साबित होते हैं और गोरों की नकल उतार कर अपना खूब मनोरंजन करते हैं... वही गोरे, जो समझते हैं कि इंडियन्स को वे अपनी भव्यता और गरिमा के प्रति गहरे आदरभाव से ओत-प्रोत कर चुके हैं। . . . गोरे लोग ग़रीब इंडियन्स के साथ ऐसे पेश आते हैं (मैं इसका साक्षी हूँ), मानो उनमें और जानवरों में बहुत कम फ़र्क हो।''

मूल बाशिंदे यूरोपीय लोगों के साथ जिन चीज़ों का आदान-प्रदान करते थे, वे उनके लिए दोस्ती में दिए गए 'उपहार' थे। दूसरी ओर अमीरी का सपना देखने वाले यूरोपीय लोगों के लिए मछली और रोएँदार खाल 'माल' थे, जिसे उन्हें मुनाफ़ा कमाने के लिए यूरोप में बेचना था, इन बेची जानेवाली चीज़ों के दाम, पूर्ति के आधार पर, साल-दर-साल बदलते रहते थे। मूल निवासी इसे समझ नहीं सकते थे – उन्हें सुदूर यूरोप में स्थित 'बाज़ार' का ज़रा भी बोध नहीं था। उनके लिए तो यह सब पहेली की तरह था कि यूरोपीय व्यापारी उनकी चीज़ों के बदले में कभी तो बहुत सारा सामान देते थे और कभी बहुत कम। वे यूरोपीय लोगों के लालच को देख कर भी दुखी होते थे।* प्रचुर मात्रा में रोएँदार खाल हासिल करने के लिए उन्होंने सैकड़ों ऊदबिलावों को हलाल किया था, और मूल बाशिंदे इससे काफ़ी विचलित थे। उन्हें डर था कि जानवर उनसे इस विध्वंस का बदला लेंगे।

शुरुआत में आए यूरोपीय लोगों, जो कि व्यापारी थे, के पीछे-पीछे अमरीका में 'बसने' के लिए भी लोग आए। 17वीं सदी से यूरोपीय लोगों के कुछ समूह ईसाइयत के भिन्न संप्रदाय से ताल्लुक रखने की वजह से उत्पीड़न के शिकार थे (कैथलिक प्रभुत्व के देशों में रहनेवाले प्रोटैस्टेंट, या प्रोटैस्टेंटवाद को राजधर्म का दर्ज़ा देनेवाले देशों के कैथलिक)। उनमें से बहुतेरों ने यूरोप छोड़ दिया और एक नयी ज़िंदगी शुरू करने के लिए अमरीका चले गए। जब तक वहाँ खाली ज़मीनें थीं, कोई समस्या नहीं आई, लेकिन धीरे-धीरे वे और अंदर,

*मूल निवासियों की कई लोककथाओं में यूरोपीय जनों का मज़ाक उड़ाया गया था और उनका वर्णन लालची और धूर्त के रूप में किया गया था, लेकिन चूंकि वे काल्पनिक कथाओं की शक्ल में थीं, इसलिए यूरोपीय लोग उनके सही संदर्भ को काफ़ी बाद में जाकर समझ पाए।

मूल निवासियों के गाँवों की ओर बढ़े। उन्होंने जंगलों की सफ़ाई के लिए अपने लोहे के औज़ारों का इस्तेमाल किया, ताकि खेती की जा सके।

मूल निवासी और यूरोपीय लोग जब जंगल को देखते, तो उनकी निग़ाह में अलग-अलग चीज़ें आती थीं – मूल निवासियों ने उन रास्तों की पहचान की, जो यूरोपीय लोगों के लिए अदृश्य थे। यूरोपीय लोगों की कल्पना में कटे हुए जंगल की जगह मक्के के खेत उभरते थे। जैफ़र्सन का सपना एक ऐसे देश का था जो छोटे-छोटे खेतों वाले यूरोपीय लोगों से आबाद था। मूल निवासी – जो अपनी ज़रूरतों के लिए फ़सलें उगाते, न कि बिक्री और मुनाफे के लिए, और जो ज़मीन का 'मालिक' बनने को ग़लत मानते थे – इस बात को नहीं समझ सकते थे। यही चीज उन्हें जैफ़र्सन की निग़ाह में 'असभ्य' बनाती थी।

क्रियाकलाप 1

यूरोपीय लोगों और अमरीकी मूल निवासियों के मन में एक-दूसरे की जो छवि थी तथा प्रकृति को देखने के जो उनके अलग-अलग तरीके थे, उन पर विचार करें।

कनाडा		संयुक्त राज्य अमरीका
1701	क्यूबेक के मूल निवासियों के साथ फ्रांसीसियों का समझौता	
1763	क्यूबेक पर ब्रिटिशों की विजय	1781 ब्रिटेन ने संयुक्त राज्य अमरीका को एक स्वतंत्र देश के रूप में मान्यता दी
1774	क्यूबेक एक्ट	1783 ब्रिटिश लोगों ने संयुक्त राज्य अमरीका को मध्य-पश्चिम सौंपा
1791	कनाडा संवैधानिक एक्ट	

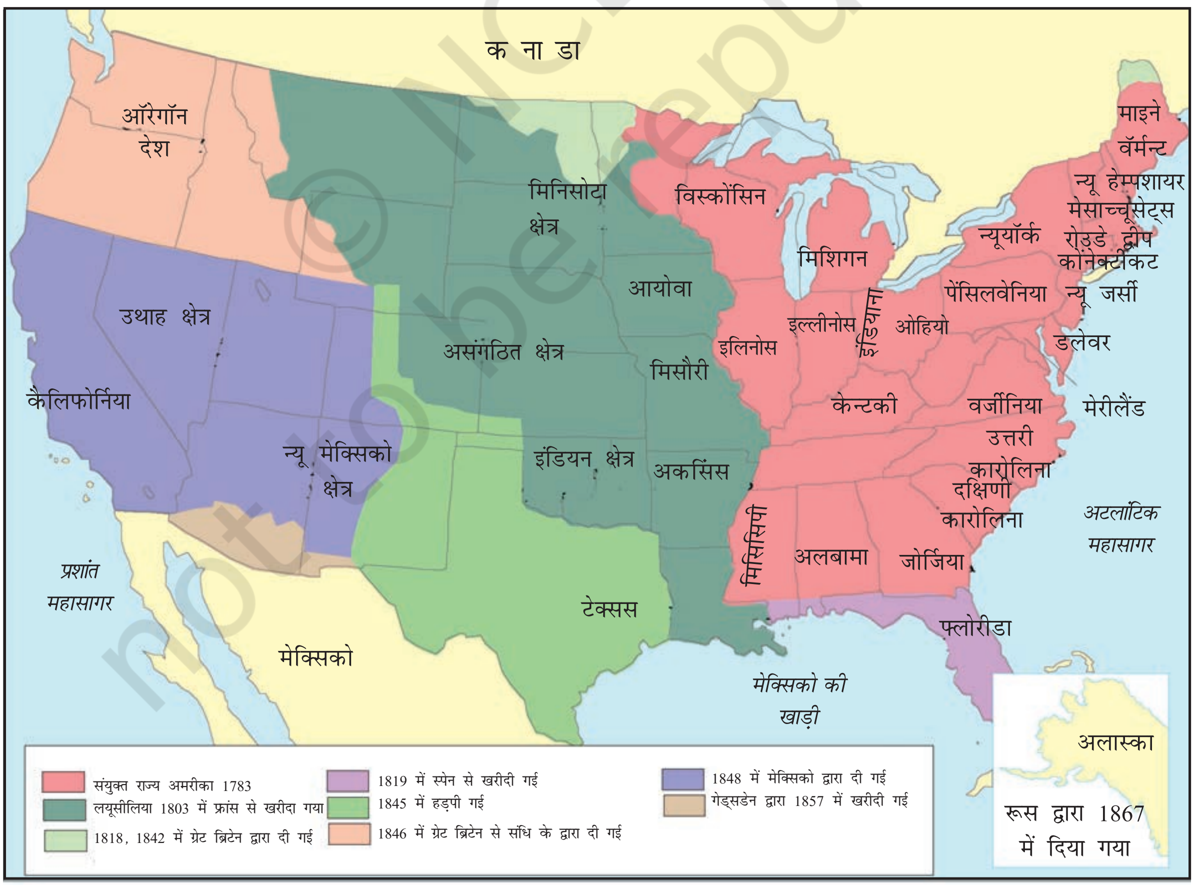

मानचित्र 1: संयुक्त राज्य अमरीका का विस्तार।

© NCERT not to be republished

जिन मुल्कों को हम कनाडा और संयुक्त राज्य अमरीका के नाम से जानते हैं, वे 18वीं सदी के अंत में वजूद में आए। अपने वर्तमान क्षेत्रफल का एक छोटा हिस्सा ही उस समय उनके कब्ज़े में था। मौजूदा आकार तक पहुँचने के लिए अगले सौ सालों में उन्होंने अपने नियंत्रण वाले इलाके में काफ़ी इज़ाफ़ा किया। संयुक्त राज्य अमरीका ने कई विशाल क्षेत्रों की खरीद की – उन्होंने दक्षिण में फ्रांस (लुइसियाना परचेज़) और रूस (अलास्का) से ज़मीन खरीदी, साथ ही, उसने युद्ध में भी ज़मीन जीती– दक्षिणी सं.रा.अ. का अधिकतर हिस्सा मेक्सिको से ही जीता गया है। किसी के मन में यह खयाल नहीं आया कि उन इलाकों में रहने वाले मूल बाशिंदों की भी रज़ामंदी ली जाए। संयुक्त राज्य अमरीका की पश्चिमी 'सरहद' (फ्रंटियर) खिसकती रहती थी, और जैसे-जैसे यह खिसकती जाती, मूल निवासी भी पीछे खिसकने के लिए बाध्य किए जाते थे।

कनाडा		संयुक्त राज्य अमरीका	
		1803	फ्रांस से लुइसियाना की खरीद
	गए	1825-58	संयुक्त राज्य अमरीका के मूल निवासी आरक्षित क्षेत्रों में पहुंचाए
1837	फ्रांसीसी कनाडाई विद्रोह	1832	जस्टिस मार्शल का फ़ैसला
1840	उच्चतर और निम्नतर कनाडा की कैनेडियन यूनियन	1849	अमरीकी गोल्ड रश
1859	कनाडा गोल्ड रश	1861-65	अमरीकी गृहयुद्ध
1867	कनाडा महासंघ	1865-90	अमरीकी इंडियन युद्ध
1869-85	कनाडा में मेटिसों द्वारा रेड रिवर विद्रोह	1870	पारमहाद्वीपीय रेलवे
1876	कनाडा इंडियन्स एक्ट	1890	अमरीका में जंगली भैंसे का प्रायः उन्मूलन
1885	पारमहाद्वीपीय रेलवे के ज़रिए पूर्वी और पश्चिमी तटों का जुड़ाव	1892	अमरीकी फ्रंटियर का 'अंत'

19वीं सदी में अमरीका के भूदृश्य में ज़बर्दस्त बदलाव आए। ज़मीन के प्रति यूरोपीय लोगों का रवैया मूल निवासियों से अलग था। ब्रिटेन और फ्रांस से आए कुछ प्रवासी ऐसे थे, जो छोटे बेटे होने के कारण पिता की संपत्ति के उत्तराधिकारी नहीं बन सकते थे और इसी वजह से अमरीका में ज़मीन के मालिक बनना चाहते थे। बाद में जर्मनी, स्वीडन और इटली जैसे मुल्कों से ऐसे आप्रवासी उमड़ पड़े, जिनकी ज़मीनें बड़े किसानों के हाथ चली गई थीं और वे ऐसी ज़मीन चाहते थे, जिसे अपना कह सकें। पोलैंड से आए लोगों को प्रेयरी (prairie) चारागाहों में काम करना अच्छा लगता था, जो उन्हें अपने घरों के स्टेपीज़ (घास के मैदानों) की याद दिलाते थे, और यहाँ बहुत कम कीमत पर बड़ी संपत्तियाँ खरीद पाना उन्हें बहुत रास आ रहा था। उन्होंने ज़मीन की सफ़ाई की और खेती का विकास किया। उन्होंने ऐसी फ़सलें (धान और कपास) उगाईं, जो यूरोप में नहीं उगाई जा सकती थीं और इसीलिए वहाँ उन्हें ऊँचे मुनाफ़े पर बेचा जा सकता था। अपने विस्तृत खेतों को जंगली जानवरों – भेड़िए और पहाड़ी शेरों – से बचाने के लिए उन्होंने शिकार

© NCERT not to be republished

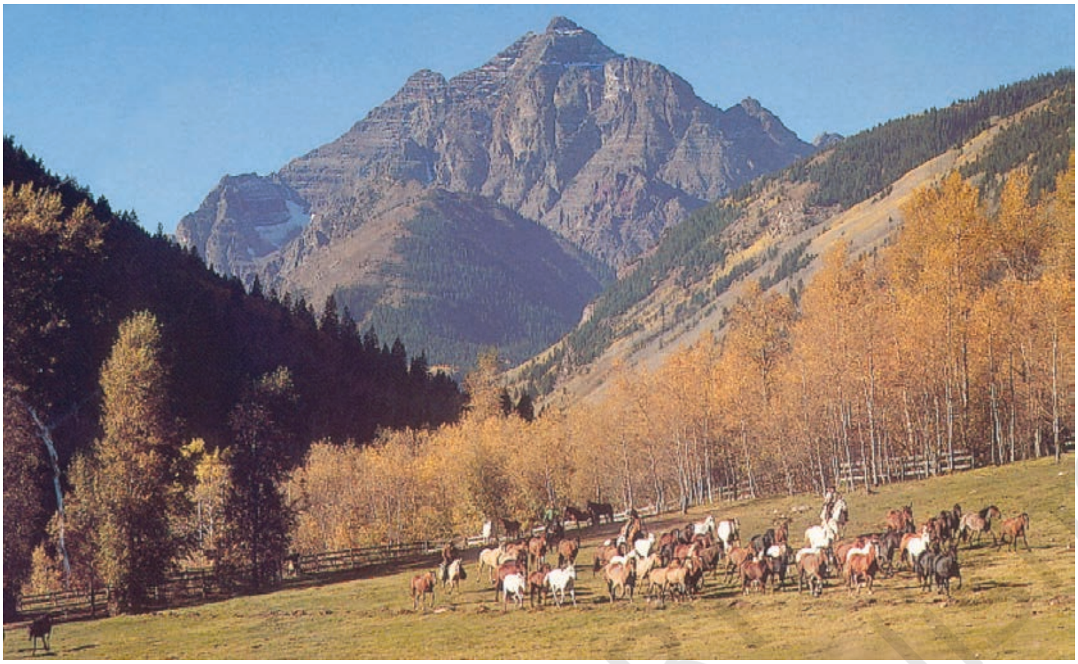

कोलोरेडो का एक पशु-फार्म।

के ज़रिए उनका सफ़ाया ही कर दिया। 1873 में कँटीले तारों की खोज के बाद ही वे अपने को पूरी तरह सुरक्षित महसूस कर पाए।

घर के बाहर काम करने के लिहाज़ से दक्षिणी इलाके की जलवायु यूरोपीय जनों के लिए काफ़ी गर्म थी, और दक्षिण अमरीकी उपनिवेशों का यह अनुभव रहा था कि दास बनाए गए मूल निवासी बहुत बड़ी संख्या में मौत के शिकार हुए थे। इसीलिए बाग़ान-मालिकों ने अफ़्रीका से दास ख़रीदे। दासप्रथा-विरोधी समूहों के विरोध के चलते दासों के व्यापार पर तो रोक लग गई, लेकिन जो अफ़्रीकी संयुक्त राज्य अमरीका में थे, वे और उनके बच्चे दास ही बने रहे।

संयुक्त राज्य अमरीका के उत्तरी राज्यों ने, जहाँ अर्थतंत्र बग़ानों पर (और इसीलिए दासप्रथा पर) टिका हुआ नहीं था, दासप्रथा को खत्म करने के पक्ष में दलीलें दीं और उसे एक अमानवीय प्रथा बताया। 1861-65 में दासप्रथा को जारी रखनेवाले और उसके खात्मे की वकालत करने वाले राज्यों के बीच युद्ध हुआ। दासता विरोधियों की जीत हुई। दासप्रथा खत्म कर दी गई, हालांकि अफ़्रीकी मूल के अमरीकियों को नागरिक स्वतंत्रताओं के लिए अपने संघर्ष में विजय 20वीं सदी में आकर ही मिल पाई और तभी स्कूलों तथा ट्रेनों-बसों में उन्हें अलग रखने की व्यवस्था समाप्त हुई।

कनाडाई सरकार के सामने एक समस्या थी, जो लंबे समय तक हल नहीं हो पाई थी, और जो मूल निवासियों के सवाल के मुकाबले ज़्यादा ज़रूरी प्रतीत होती थी - 1763 में ब्रिटिश लोगों ने फ्रांस के साथ हुई लड़ाई में कनाडा को जीता था। वहाँ फ्रांसीसी आबादकार लगातार स्वायत्त राजनीतिक दर्ज़े की मांग कर रहे थे। 1867 में कनाडा को स्वायत्त राज्यों के एक महासंघ के रूप में संगठित करके ही इस समस्या का हल निकल पाया।

अपनी ज़मीन से मूल बाशिंदों की बेदख़ली

जैसे-जैसे संयुक्त राज्य अमरीका ने अपनी बस्तियों का विस्तार किया, ज़मीन की बिक्री के समझौते पर दस्तख़त कराने के बाद मूल निवासियों को वहाँ से हटने के लिए प्रेरित या बाध्य किया गया। उन्हें दी गई कीमतें बहुत कम थीं, और इसके भी उदाहरण मिलते हैं कि

अमरीकियों (संयुक्त राज्य अमरीका में रहनेवाले यूरोपीय लोगों के लिए प्रयुक्त पद) ने धोखे से उनसे ज़्यादा ज़मीन ले ली या पैसा देने के मामले में वायदाखिलाफ़ी की।

उच्च अधिकारी भी मूल बाशिंदों की बेदख़ली को ग़लत नहीं मानते थे। यह जॉर्जिया के एक प्रकरण में देखा जा सकता है। जॉर्जिया संयुक्त राज्य अमरीका का एक राज्य है। यहाँ के अधिकारियों की दलील थी कि चिरोकी कबीला राज्य के कानून से शासित तो होता है, लेकिन वे नागरिक अधिकारों का उपयोग नहीं कर सकते। (ध्यान देने की बात है कि मूल निवासियों में से चिरोकी ही ऐसे थे, जिन्होंने अंग्रेज़ी सीखने और अमरीकी जीवन-शैली को समझने की सबसे ज़्यादा कोशिश की थी, और तब भी उन्हें नागरिक अधिकार नहीं दिए गए।)

1832 में संयुक्त राज्य के मुख्य न्यायाधीश, जॉन मार्शल ने एक महत्त्वपूर्ण फैसला सुनाया। उन्होंने कहा कि चिरोकी कबीला ''एक विशिष्ट समुदाय है और उसके स्वत्वाधिकार वाले इलाके में जॉर्जिया का कानून लागू नहीं होता'' और वे कुछ मामलों में संप्रभुतासंपन्न हैं। संयुक्त राज्य के राष्ट्रपति, एंड्रिउ जैकसन, जिनकी छवि आर्थिक और राजनीतिक पक्षपात के खिलाफ़ लड़नेवाले की थी, इंडियन्स का मामला आने पर वह बिलकुल उलट गए। उन्होंने मुख्य न्यायाधीश की इस बात का मान रखने से इनकार कर दिया और चिरोकियों को अपनी ज़मीन से हाँक कर विस्तृत अमरीकी मरुभूमि (Great American Desert) की ओर खदेड़ने के लिए अमरीकी फ़ौज भेज दी। जिन 15000 लोगों को वहाँ से हटने पर मजबूर किया गया, उनमें से एक चौथाई अपने 'आँसुओं की राह' (Trail of Tears) के सफर में ही मर-खप गए।

जिन लोगों ने पहले से रहनेवाले कबीलों की ज़मीनें ले लीं, वे इस आधार पर अपने को उचित ठहराते थे कि चूंकि मूल निवासी ज़मीन का अधिकतम इस्तेमाल करना नहीं जानते, इसलिए वह उनके कब्ज़े में रहनी ही नहीं चाहिए। वे इस बिना पर भी मूल निवासियों की आलोचना करते कि वे आलसी हैं– इसलिए बाज़ार हेतु उत्पादन करने में अपने शिल्प-कौशल का इस्तेमाल नहीं करते हैं, अंग्रेज़ी सीखने और 'ढंग के' कपड़े (जिसका मतलब था, यूरोपीयों जैसे कपड़े) पहनने में उनकी दिलचस्पी नहीं है। कुल मिलाकर उनका कहना यह था कि वे 'मर-खपने' लायक ही हैं। खेती की ज़मीन निकालने के लिए प्रेयरीज़ साफ़ की गईं, और जंगली भैंसों को मारा गया। एक फ्रांसीसी आगंतुक ने लिखा, ''आदिम जानवरों के साथ-साथ आदिम मनुष्य लुप्त हो जाएगा''।

क्रियाकलाप 2

इन दो तरह के जनसांख्यिक आंकड़ों पर टिप्पणी करें

	सं.रा.अ. – 1820	*स्पेनी अमरीका – 1800*
मूल निवासी	6 लाख	75 लाख
गोरे	90 लाख	33 लाख
मिले-जुले यूरोपीय	1 लाख	53 लाख
काले	19 लाख	8 लाख
कुल	**1 करोड़ 16 लाख**	**1 करोड़ 69 लाख**

इस बीच मूल निवासी पश्चिम की ओर धकेल दिए गए थे। उन्हें 'स्थायी तौर पर अपनी' ज़मीन दे दी गई थी, लेकिन अक्सर उन्हें उस जगह से भी बेदख़ल होना पड़ता, जब उनकी ज़मीन के अंदर सीसा, सोना या तेल जैसे खनिज के होने का पता चलता। प्रायः कई समूहों को मूलतः किसी एक के कब्ज़े वाली ज़मीन में ही साझा करने के लिए बाध्य किया जाता, जिससे उनके बीच झगड़े हो जाते थे। मूल निवासी छोटे इलाकों में कैद कर दिए गए थे,

© NCERT not to be republished

जिन्हें 'रिज़र्वेशन्स' (आरक्षण) कहा जाता था। ये प्राय: ऐसी ज़मीन होती थी, जिसके साथ उनका पहले से कोई रिश्ता नहीं होता था। ऐसा नहीं है कि अपनी ज़मीनें उन्होंने बिना लड़े छोड़ दी हों। संयुक्त राज्य की फ़ौज ने 1865 से 1890 के बीच विद्रोहों की एक पूरी शृंखला का दमन किया था। कनाडा में 1869 से 1885 के बीच मेटिसों (यूरोपीय मूल निवासियों के वंशज) के सशस्त्र विद्रोह हुए थे। लेकिन इन लड़ाइयों के बाद उन्होंने हार मान ली।

1854 में, संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति को मूल निवासियों के एक नेता, सिएटल के प्रधान का खत मिला। राष्ट्रपति ने प्रधान से एक समझौते पर दस्तखत करने के लिए कहा था। समझौते के अनुसार सिएटल के लोगों की रिहाइशी ज़मीन का एक बड़ा हिस्सा अमरीकी सरकार को सौंपा जाना था। प्रधान ने जवाब दिया :

"आप आकाश को, भूमि की ऊष्मा को कैसे खरीद या बेच सकते हैं? यह खयाल ही हम लोगों के लिए बहुत अजूबा है। अगर आप हवा की ताज़गी और पानी की चमक के स्वामी नहीं हैं, तो आप उसे खरीद कैसे सकते हैं? धरती का हर हिस्सा मेरी जनता के लिए पुण्य-पावन है। चीड़ की चमकती हुई हर सुई, हर बालुका-तट, घने जंगलों में पसरा हर कुहरा, सफ़ाई करनेवाला और गुनगुनाने वाला हर कीड़ा मेरे लोगों की स्मृति और अनुभवों में पवित्र है। पेड़ों में दौड़ता हुआ रस 'रेड मैन' की स्मृतियों का वाहक है। . . . .

इसलिए वाशिंगटन में बैठा महान मुखिया (ग्रेट चीफ़) जब यह संदेश भेजता है कि वह हमारी ज़मीन खरीदना चाहता है, तो वह हमसे कुछ ज़्यादा ही उम्मीद करता है। महान मुखिया का संदेश है कि वह हमारे लिए कोई जगह मुकर्रर कर देंगे, ताकि हम आराम से रह सकेंगे। वह हमारे पिता होंगे और हम उनके बच्चे होंगे। इसलिए हम इस ज़मीन को खरीदे जाने के प्रस्ताव पर विचार करेंगे। लेकिन यह आसान न होगा। क्योंकि यह ज़मीन हमारे लिए पावन है। धाराओं और नदियों में बहता हुआ चमकीला पानी सिर्फ़ पानी नहीं है, वह हमारे पुरखों का लहू है। अगर हम आपको ज़मीन बेच दें, तो आपको यह याद रखना होगा कि वह पवित्र है और अपने बच्चों को सिखाना होगा कि वह पवित्र है और उसके तालाबों के निथरे हुए पानी में दिखता हर भूतहा प्रतिबिंब मेरी जनता के जीवन की घटनाओं और स्मृतियों का बयान करता है। पानी की कलकल मेरे पिता के पिता की आवाज़ है . . ."

गोल्ड रश और उद्योगों की वृद्धि

यह उम्मीद हमेशा से की जाती थी कि उत्तरी अमरीका में धरती के नीचे सोना है। 1840 में संयुक्त राज्य अमरीका के कैलीफ़ोर्निया में सोने के कुछ चिह्न मिले। इसने 'गोल्ड रश' को जन्म दिया। यह उस आपाधापी का नाम है, जिसमें हज़ारों की संख्या में आतुर यूरोपीय लोग चुटकियों में अपनी तकदीर सँवार लेने की उम्मीद में अमरीका पहुँचे। इसके चलते पूरे महाद्वीप में रेलवे-लाइनों का निर्माण हुआ जिसके लिए हज़ारों चीनी श्रमिकों की नियुक्ति हुई। संयुक्त राज्य अमरीका रेलवे का काम 1870 में पूरा हुआ और कनाडा की रेलवे का 1885 में। एंड्रिउ कार्नेगी ने, जो स्कॉटलैंड से आया हुआ एक गरीब आप्रवासी और सं.रा.अ. के पहले करोड़पति उद्योग-स्वामियों में से एक

मानवशास्त्र

यह महत्त्वपूर्ण है कि इसी समय (1840 के दशक से) उत्तरी अमरीका में 'मानवशास्त्र' विषय (जो कि फ्रांस में विकसित हुआ था) की शुरुआत हुई। यह शुरुआत स्थानीय 'आदिम' समुदायों और यूरोप के 'सभ्य' समुदायों के बीच के अंतर के अध्ययन के लिए हुई थी। कुछ मानवशास्त्रियों ने यह स्थापित किया कि जिस तरह यूरोप में 'आदिम' लोग नहीं पाए जाते, उसी तरह अमरीकी मूल निवासी भी 'समाप्त हो जाएँगे'।

मूल निवासी का एक घर, 1862 पुरातत्त्वविदों ने इसे पहाड़ों के बीच से ले जाकर व्योमिंग के एक संग्रहालय में रखा।

© NCERT not to be republished

'गोल्ड रश' के दौरान कैलीफोर्निया जाते लोग, कैमराचित्र

था, कहा – ''पुराने राष्ट्र घोंघे की चाल से सरकते हैं, नया गणराज्य किसी एक्सप्रेस की गति से दौड़ रहा है।''

इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति के एक खास समय में होने के पीछे एक कारण यह भी था कि छोटे खेतिहर बड़े किसानों के हाथों अपनी ज़मीन से वंचित होकर कारखानों की नौकरी की ओर मुड़ रहे थे (देखिए विषय 9)। उत्तरी अमरीका में उद्योग कई अलग तरह के कारणों से विकसित हुए – रेलवे के साज़-सामान बनाने के लिए ताकि दूर-दूर की जगहों को तीव्र परिवहन के द्वारा जोड़ा जा सके, और ऐसे यंत्रों का उत्पादन करने के लिए जिनसे बड़े पैमाने की खेती को आसान बनाया जा सके। सं.रा.अ. और कनाडा, दोनों जगहों पर औद्योगिक नगरों का विकास हुआ, और कारखानों की संख्या तेज़ी से बढ़ी। 1860 में सं.रा.अ. का अर्थतंत्र अविकसित अवस्था में था। 1890 में वह दुनिया की अग्रणी औद्योगिक शक्ति बन चुका था।

बड़े पैमाने की खेती का भी विस्तार हुआ। बड़े-बड़े इलाके साफ़ किए गए और खेतों के रूप में उनके टुकड़े किए गए। 1890 तक आते-आते जंगली भैंसों का लगभग पूरी तरह उन्मूलन किया जा चुका था, और इस तरह शिकार वाली वह जीवनचर्या भी समाप्त हुई, जिसे मूल बाशिंदे सदियों से जीते आ रहे थे। 1892 में संयुक्त राज्य अमरीका का महाद्वीपीय विस्तार पूरा हो चुका था। प्रशांत महासागर और अटलांटिक महासागर के बीच का क्षेत्र राज्यों में विभाजित किया जा चुका था। अब कोई 'फ्रंटियर' नहीं रहा, जो कई दशकों तक यूरोपीय आबादकारों को पश्चिम की ओर खींचता रहा था। कुछ ही वर्षों के भीतर संयुक्त राज्य अमरीका हवाई और फिलिपीन्स में अपने उपनिवेश बसा रहा था। वह एक साम्राज्यवादी शक्ति बन चुका था।

संवैधानिक अधिकार

आबादकारों ने 1770 के दशक में आज़ादी के अपने संघर्ष में 'लोकतांत्रिक भावना' के जिस नारे के तहत एकजुटता बनाई थी, वही पुरानी दुनिया

ऊपर: सं.रा.अ. द्वारा आप्रवासियों का स्वागत, रंगीन छपाई, 1909
नीचे: प्रेयरी पर एक पशु-फार्म जो कि गरीब यूरोपीय आप्रवासी का सपना होता था, कैमराचित्र

की राजशाही और अभिजात तंत्र के खिलाफ़ संयुक्त राज्य अमरीका की पहचान बनी। उनके लिए यह भी अहम था कि उनके संविधान में व्यक्ति के 'संपत्ति के अधिकार' को शामिल किया गया, जिसे रद्द करने की छूट राज्य को नहीं थी।

लेकिन लोकतांत्रिक अधिकार (राष्ट्रपति और कांग्रेस के प्रतिनिधियों के चुनाव में वोट देने का अधिकार) और संपत्ति का अधिकार, दोनों सिर्फ़ गोरे लोगों के लिए थे। एक कनाडाई मूल निवासी, डेनियल पॉल ने 2000 में इस ओर ध्यान खींचा कि अमरीकी स्वाधीनता संग्राम और फ्रांसीसी क्रांति के समय लोकतंत्र के पक्ष में आवाज़ बुलंद करने वाले थॉमस पाइन ने ''समाज का संगठन करने के लिए इंडियन्स का इस्तेमाल एक मॉडल के तौर पर किया था।" इसके आधार पर उसने दलील दी कि ''अमरीकी मूल निवासियों ने मिसाल बन कर यूरोपीय लोगों के लंबे लोकतंत्रोन्मुखी आंदोलन के बीज बोये थे''। (*वी वर नॉट द सेवेजेज़,* पृष्ठ 333)

> महान जर्मन दार्शनिक कार्ल मार्क्स (1818-83) ने अमरीकी फ्रंटियर को ''आख़िरी सकारात्मक पूँजीवादी यूटोपिया'' के रूप में देखा है . . . ''सीमाहीन प्रकृति और स्थान, जिसके अनुरूप अपने को ढालती है मुनाफ़े की सीमाहीन चाहत।''
>
> – *'बस्तियात एंड कैरे', ग्रुंद्रिसे'*

बदलाव की लहर...

1920 के दशक तक संयुक्त राज्य अमरीका और कनाडा के मूल निवासियों के लिए कुछ भी बेहतर होना शुरू नहीं हुआ। संयुक्त राज्य अमरीका की समस्त जनता को प्रभावित करनेवाली बड़ी आर्थिक मंदी से कुछ साल पहले, 1928 में समाजवैज्ञानिक लेवाइस मेरिअम के निर्देशन में संपन्न हुआ एक सर्वेक्षण प्रकाशित हुआ – *दि प्रॉब्लम ऑफ़ इंडियन एडमिनिस्ट्रेशन* – जिसमें रिज़र्वेशन्स में रह रहे मूल निवासियों की स्वास्थ्य एवं शिक्षा सुविधाओं की दरिद्रता का बड़ा ही दारुण चित्र प्रस्तुत किया गया था।

गोरे अमरीकियों के मन में उन मूल निवासियों के प्रति सहानुभूति जागी, जिन्हें अपनी संस्कृति को पूरा-पूरा निभाने से रोका जाता था और साथ-ही-साथ नागरिकता के लाभों से भी वंचित रखा जाता था। इसने संयुक्त राज्य अमरीका में एक युगांतरकारी कानून को जन्म दिया – 1934 का इंडियन रीऑर्गनाईज़ेशन एक्ट – जिसके द्वारा रिज़र्वेशन्स में मूल निवासियों को ज़मीन खरीदने और ऋण लेने का अधिकार हासिल हुआ।

1950 और 60 के दशकों में संयुक्त राज्य और कनाडा की सरकारों ने मूल बाशिंदों के लिए किए गए विशेष प्रावधानों को खत्म करने पर इस उम्मीद से विचार किया, कि इससे वे 'मुख्यधारा में शामिल' होंगे, अर्थात वे यूरोपीय संस्कृति को अपनाएँगे। लेकिन मूल बाशिंदे ऐसा नहीं चाहते थे। 1954 में अनेक मूल निवासियों ने अपने द्वारा तैयार किए गए 'डिक्लेरेशन ऑफ़ इंडियन राइट्स' में इस शर्त के साथ सं.रा.अ. की नागरिकता स्वीकार की कि उनके रिज़र्वेशन्स वापस नहीं लिए जाएँगे और उनकी परंपराओं में दखलंदाज़ी नहीं की जाएगी। कुछ ऐसी ही चीज़ें कनाडा में भी हुईं। 1969 में सरकार ने घोषणा की कि वह ''आदिवासी अधिकारों को मान्यता नहीं'' देगी। मूल निवासियों ने सुसंगठित तरीके से इसका विरोध करते हुए धरना-प्रदर्शनों और वाद-विवादों की एक पूरी श्रृंखला आयोजित की। 1982 में एक संवैधानिक धारा के तहत मूल निवासियों के मौजूदा आदिवासी अधिकारों और समझौता-आधारित अधिकारों को स्वीकृति मिलने तक यह सवाल हल नहीं हो पाया। परन्तु इन अधिकारों की बारीकियों के बारे में बहुत से फैसले बाकी हैं पर अब यह बहुत साफ़ है कि दोनों मुल्कों के मूल निवासियों ने, 18वीं सदी के मुकाबले अपनी संख्या बहुत कम हो जाने के बावजूद, अपनी संस्कृति को निभाने के अपने अधिकारों को लेकर पुरज़ोर दावेदारी की है और, खास तौर से कनाडा में, अपनी पवित्र भूमि पर अधिकार की भी दावेदारी की है। ऐसी दावेदारी 1880 के दशक में उनके पुरखे नहीं कर सकते थे।

क्रियाकलाप 3

अमरीकी इतिहासकार होवर्ड स्पॉडेक के इस कथन पर टिप्पणी करें: ' अमरीकी क्रांति का जो प्रभाव (गोरे) आबादकारों के लिए था, उससे ठीक विपरीत मूल निवासियों के लिए था – फैलाव सिकुड़न बन गया, लोकतंत्र तानाशाही बन गया, संपन्नता विपन्नता बन गई, और मुक्ति कैद बन गई।

ब्रिटिश राज के अधीन भारतीय	मनमाने ढंग से इन पर कर लगाये गए; उन्हें बराबर नहीं माना गया (तर्क यह दिया गया – कि अभी प्रतिनिधित्व की सरकार की ज़िम्मेदारी के लिए तैयार नहीं है)
अमरीका और ऑस्ट्रेलिया के मूल निवासी	इन्हें नागरिक के रूप में नहीं देखा गया; असमान माना गया (तर्क यह दिया गया – कि ये 'पिछड़े हुए आदिमानव' हैं जिनकी कोई स्थानबद्ध कृषि नहीं थी; भविष्य के बारे में न ज्यादा सोचते थे न बचत करते थे; उनके पास शहर नहीं थे)
अमरीका में अफ़्रीकी मूल के दास	व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित, बराबर नहीं माना गया (तर्क – "दासप्रथा उनकी अपनी सामाजिक व्यवस्था का हिस्सा" है, काले लोग निकृष्ट हैं)

आस्ट्रेलिया

उत्तरी और दक्षिण अमरीका की तरह ही ऑस्ट्रेलिया में भी मानव निवास का इतिहास लंबा है। शुरुआती मनुष्य या आदिमानव जिन्हें 'ऐबॉरिजिनीज़' कहते हैं(यह कई भिन्न-भिन्न समाजों के लिए प्रयुक्त एक सामान्य नाम है) ऑस्ट्रेलिया में 40,000 साल पहले आने शुरू हुए (संभवत: उससे भी पहले से)। वे ऑस्ट्रेलिया के साथ एक भू-सेतु से जुड़े न्यू गिनी से आए थे। मूल निवासियों की अपनी परंपराओं के हिसाब से वे ऑस्ट्रेलिया आए नहीं थे, बल्कि हमेशा से यहीं थे। बीती सदियाँ 'स्वप्नकाल' कही जाती थीं। इस कथन को समझना यूरोपीय लोगों के लिए मुश्किल था, क्योंकि इसमें अतीत और वर्तमान का अंतर धुँधला हो जाता था।

18वीं सदी के आखिरी दौर में ऑस्ट्रेलिया में मूल निवासियों के 350 से 750 तक समुदाय थे। हर समुदाय की अपनी भाषा थी (इनमें से 200 भाषाएँ आज भी बोली जाती हैं)। देसी लोगों का एक और विशाल समूह उत्तर में रहता है(इसे टॉरस स्ट्रेट टापूवासी कहते हैं। 'ऐबॉरिजिनी' शब्द इनके लिए इस्तेमाल नहीं होता, क्योंकि यह माना जाता है कि वे कहीं और से आए हैं और एक अलग नस्ल के हैं। 2005 में कुल मिला कर वे ऑस्ट्रेलिया की आबादी का 2.4 फ़ीसदी हिस्सा थे।

ऑस्ट्रेलिया की आबादी बहुत छितरायी हुई है, और आज भी वहाँ के ज़्यादातर शहर समुद्रतट के साथ-साथ बसे हैं (जहाँ 1770 में ब्रिटिश लोग पहली बार पहुँचे थे), क्योंकि बीच का इलाका शुष्क मरुभूमि है।

यूरोपियों का आस्ट्रेलिया पहुँचना

1606	डच यात्रियों ने ऑस्ट्रेलिया को देखा
1642	तास्मान इस टापू पर पहुँचा। बाद में टापू का नाम तस्मानिया रखा गया
1770	जेम्स कुक बॉटनी खाड़ी पहुँचता है, जिसका नामकरण हुआ, न्यू साउथ वेल्स
1788	ब्रिटेन के दंडितों की बस्ती बनायी गईं। सिडनी की स्थापना हुई

not to be republished © NCERT

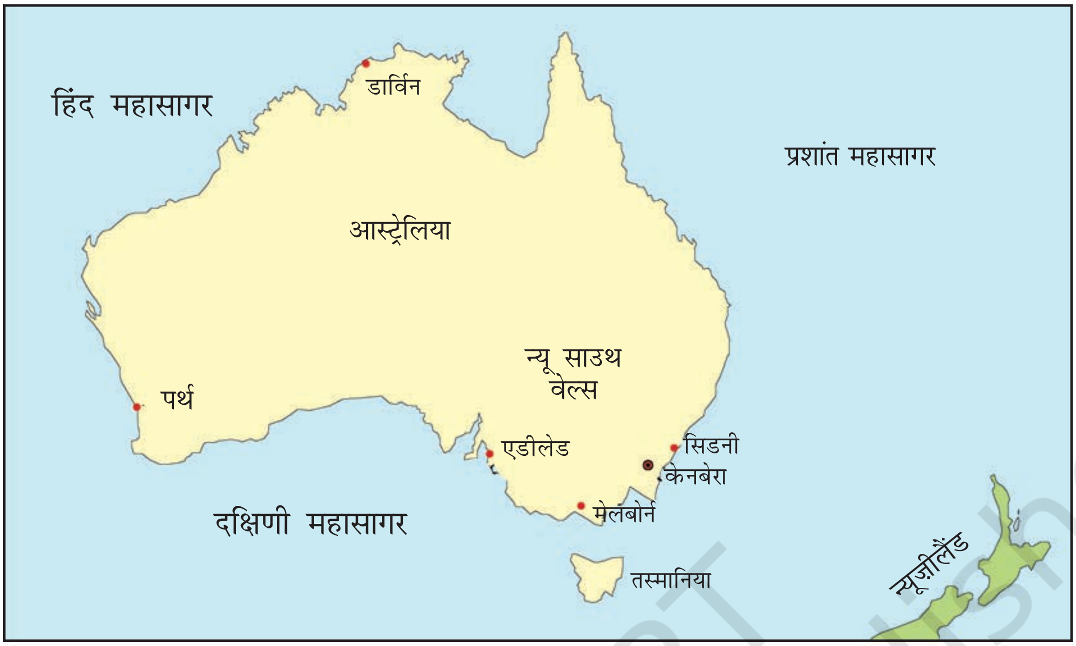

मानचित्र 2: आस्ट्रेलिया।

ऑस्ट्रेलिया में यूरोपीय आबादकारों, मूल निवासियों और ज़मीन के बीच आपसी रिश्तों का किस्सा उत्तरी और दक्षिणी अमरीका के किस्से से कई बिंदुओं पर मिलता-जुलता है, हालांकि इसकी शुरुआत 300 साल बाद हुई। मूल निवासियों के साथ हुई मुलाक़ात को लेकर कैप्टन कुक और उसके जत्थे के आरंभिक ब्यौरे मूल निवासियों के दोस्ताना व्यवहार के बारे में उत्साहपूर्ण हैं। लेकिन जब एक मूल निवासी ने कुक की हत्या कर दी – हवाई में, ऑस्ट्रेलिया में नहीं – तब ब्रिटिशों का रवैया पूरी तरह से उलट गया। जैसा कि प्राय: होता आया है, इस तरह की एक घटना औपनिवेशिक ताकतों द्वारा बाद में दूसरों के खिलाफ़ किए गए हिंसक व्यवहार का औचित्य साबित करने के लिए इस्तेमाल की गई।

सिडनी के इलाके का एक वर्णन, 1790

"ब्रिटिशों की उपस्थिति ने आदिवासियों के उत्पादन को नाटकीय ढंग से अस्त-व्यस्त कर दिया। हज़ारों भूखे मुखों के आने से, जिनके पीछे-पीछे सैकड़ों और आए, स्थानीय खाद्य संसाधनों पर अभूतपूर्व दबाव पड़ा।

तो दारूक लोगों ने इन सबके बारे में क्या सोचा होगा? उनके लिए पवित्र स्थानों का इतने बड़े पैमाने पर विनाश और अपनी ज़मीन के प्रति विचित्र, हिंसक बरताव समझ से परे था। ये नवागंतुक बिना वजह पेड़ों को काटते जाते। यह बिना वजह इसलिए जान पड़ता था कि उन्हें न डोंगी बनानी थीं, न जंगली शहद इकट्ठा करना था और न ही जानवर पकड़ने थे। पत्थरों को हटाकर उनका चट्टा लगा दिया गया, मिट्टी खोद कर उसे आकार देकर पका दिया गया, ज़मीन में गड्ढे बना दिए गए, बहुत भारी-भरकम इमारतें तैयार कर दी गईं। पहले-पहल उन्होंने इस सफ़ाई की तुलना किसी पवित्र आनुष्ठानिक भूमि के निर्माण से की होगी . . . संभवत: उन्होंने सोचा कि एक विशाल कर्मकांडी जलसा होने जा रहा है और यह एक खतरनाक धंधा होगा, जिससे उन्हें पूरी तरह दूर रहना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं कि इसके बाद दारूक उन बस्तियों से बच कर रहने लगे, और राजकीय अपहरण ही उन्हें वापस लाने का एकमात्र तरीका था।"

– (पी.ग्रिमशॉ, एम.लेक, ए.मैक्ग्राथ, एम.क्वार्टली, *क्रिएटिंग ए नेशन*)

यूरोपीय लोगों के आगमन को सभी मूल बाशिंदों ने खतरे की तरह नहीं देखा। वह यह अनुमान नहीं लगा पाए कि 19वीं और 20वीं सदी के दरम्यान कीटाणुओं के असर से, अपनी ज़मीनें खोने के चलते और आबादकारों के साथ हुई लड़ाइयों में लगभग 90 फ़ीसदी मूल बाशिंदों को अपनी जान गँवानी पड़ेगी। ब्राज़ील में पुर्तगाली कैदियों को बसाने का प्रयोग तब जाकर बंद कर दिया गया, जब उनके हिंसक बरताव ने मूल निवासियों को प्रतिहिंसा पर उतारू कर दिया। ब्रिटिशों ने स्वतंत्र होने तक अमरीकी उपनिवेशों में यही तरीका अपनाया, और फिर उसे ऑस्ट्रेलिया में भी जारी रखा। ऑस्ट्रेलिया के ज़्यादातर शुरुआती आबादकार इंग्लैंड से निर्वासित होकर आए थे और उनके कारावास पूरा होने पर ब्रिटेन वापस न लौटने की शर्त पर उन्हें ऑस्ट्रेलिया में स्वतंत्र जीवन जीने की इजाज़त दे दी गई। अपने क्षेत्र से इतने भिन्न इस इलाके में किसी भी तरह के सहारे के बग़ैर जीवनयापन करने के लिए उन्होंने खेती के लिए ली गई ज़मीन से मूल निवासियों को निकाल बाहर करने में कोई झिझक नहीं दिखलाई।

आस्ट्रेलिया का विकास

1850	आस्ट्रेलियाई बस्तियों को स्वशासन का अधिकार
1851	चीनी कुलियों का आप्रवास। 1855 में कानून बना कर इसे रोका गया
1851-1961	गोल्ड रश
1901	छह राज्यों को लेकर ऑस्ट्रेलियाई संघ का निर्माण
1911	कैनबरा राजधानी बनाई गई
1948-75	20 लाख यूरोपीय लोग ऑस्ट्रेलिया में आकर बस गए

क्रियाकलाप 4

1911 में यह घोषणा हुई कि नयी दिल्ली और कैनबरा को क्रमशः ब्रिटिश भारत और ऑस्ट्रेलियाई राष्ट्रमण्डल की राजधानी बनाया जाएगा। उस समय में इन देशों के मूल निवासियों की राजनीतिक स्थितियों की तुलना कीजिए और उसकी विषमता को रेखांकित कीजिए।

यूरोपीय बस्तियों के तहत ऑस्ट्रेलिया का आर्थिक विकास अमरीका जितना भिन्नतापूर्ण नहीं था। भेड़ों के विशाल फ़ार्म और खानें उसके पश्चात, मदिरा बनाने हेतु अंगूर के बाग़ और गेहूँ की खेती एक लंबी अवधि में और काफ़ी परिश्रम से विकसित हो पाईं, इन्होंने ऑस्ट्रेलिया की संपन्नता की बुनियाद तैयार की। जब राज्यों को मिलाया गया और 1911 में ऑस्ट्रेलिया की एक राजधानी बनाने की योजना चल रही थी, तब उसके लिए 'वूलव्हीटगोल्ड' (Woolwheat gold) नाम का सुझाव दिया गया था! अंततः उसका नाम कैनबरा रखा गया जो एक स्थानीय शब्द कैमबरा (Kamberra) से बना है, जिसका अर्थ है, 'सभा-स्थल')।

कुछ मूल निवासी ऐसे सख्त हालात में खेतों में काम करते थे कि उसका दासप्रथा से अंतर बहुत कम था। बाद में चीनी आप्रवासियों ने सस्ता श्रम मुहैया कराया, जैसा कि कैलिफ़ोर्निया में हुआ था। लेकिन ग़ैर-गोरों पर बढ़ती हुई निर्भरता से जन्मी घबराहट के चलते दोनों देशों की सरकारों ने चीनी आप्रवासियों को प्रतिबंधित कर दिया। 1974 तक लोगों के मन में यह भय घर कर गया था कि दक्षिण एशिया और दक्षिण-पूर्व एशिया के 'गहरी रंगत वाले' लोग बड़ी तादाद में ऑस्ट्रेलिया आ सकते हैं, और इसीलिए 'ग़ैर-गोरों' को बाहर रखने के लिए सरकार ने एक नीति अपनाई।

बदलाव की लहर...

1968 में एक मानवशास्त्री डब्ल्यू.ई.एच.स्टैनर के एक व्याख्यान से लोगों में बिजली की तरंग-सी दौड़ गई। व्याख्यान का शीर्षक, *दि ग्रेट ऑस्ट्रेलियन साइलेंस* (महान ऑस्ट्रेलियाई चुप्पी) - इतिहासकारों की मूल निवासियों के बारे में चुप्पी थी। 1970 के दशक से उत्तरी अमरीका की

तरह ही यहाँ भी मूल निवासियों को एक नए रूप में समझने की चाहत जग चुकी थी। उन्हें मानवशास्त्रीय जिज्ञासाओं के रूप में नहीं, बल्कि विशिष्ट संस्कृतियों वाले समुदायों के रूप में, प्रकृति और जलवायु को समझने की विशिष्ट पद्धतियों के रूप मे समझना था। उन्हें ऐसे समुदायों के रूप में समझना था, जिनके पास अपनी कथाओं और कपड़ासाज़ी-चित्रकारी-हस्तशिल्प के कौशल का विशाल भंडार था और वह भंडार सराहने, आदर तथा अभिलेखन के योग्य था। इन सबकी तह में वह ज़रूरी सवाल था, जिसे आगे चल कर हेनरी रेनॉल्ड्स ने अपनी प्रभावशाली पुस्तक, *व्हाइ वरंट वी टोल्ड*? (हमें बताया क्यों नहीं गया?), में सामने रखा। इस किताब में ऑस्ट्रेलियाई इतिहास लेखन के उस ढर्रे की भर्त्सना की गई थी, जिसमें कैप्टन कुक की 'खोज' से ही इतिहास की शुरुआत मानी जाती थी।

उसके बाद से मूल निवासियों की संस्कृतियों का अध्ययन करने के लिए विश्वविद्यालयी विभागों की स्थापना हुई है। कलादीर्घाओं (आर्ट गैलरीज़) में देसी कलाओं की दीर्घाएँ शामिल की गई हैं, देसी संस्कृति को समझानेवाले कल्पनाशील तरीके से सज्जित कमरों के लिए संग्रहालयों में जगह बनाई गई है, और मूल निवासियों ने अपने जीवन-इतिहासों को लिखना शुरू किया है। यह सब एक अद्‌भुत प्रयास है। यह प्रयास समय रहते शुरू हो गया। अगर मूल निवासियों की संस्कृतियों की अनदेखी बदस्तूर जारी रहती, तो इस समय तक उसका काफ़ी कुछ विस्मृति की गर्त में जा चुका होता। 1974 से 'बहुसंस्कृतिवाद' ऑस्ट्रेलिया की राजकीय नीति रही है, जिसने मूल निवासियों की संस्कृतियों और यूरोप तथा एशिया के आप्रवासियों की भांति-भांति की संस्कृतियों को समान आदर दिया है।

"विदीर्ण हृदय वाली मेरी बहन कैथी,
मैं नहीं जानती कि काग़ज की छाल पर लिखी
तुम्हारे सपनों के समय की हर्ष-विषादमय कहानियों के लिए
मैं तुम्हें कैसे धन्यवाद दूँ।
तुम गहरी रंगत वाले उन बच्चों में से एक थीं,
जिनके साथ खेलने की मुझे इजाज़त न थी -
नदी-तट पर अपना खेमा गाड़नेवाले, गलत रंग के लोग
(मैं तुम्हें गोरा न बना सकी।)
इसलिए काफ़ी देर से मैं तुम्हें मिली,
काफ़ी देर से शुरुआत हुई जानने की
उन्होंने मुझे नहीं बताया था कि जिस ज़मीन को मैं इतना प्यार करती हूँ
वह तुम्हारे ही हाथों से छीनी गई थी।"

–'दो स्वप्नसमय', ऊडगेरो नूनुक्कल (Oodgeroo Noonuccal) के लिए

ऑस्ट्रेलियाई लेखिका ज्यूडिथ राइट(Judith Wright) (1915-2000) ने ऑस्ट्रेलियाई मूल निवासियों के अधिकारों के लिए ज़ोरदार आवाज़ बुलंद की। उसने गोरे और मूल निवासियों को अलग-अलग रखने से होनेवाले कई नुकसानों को लेकर अत्यंत प्रभावशाली कविताएँ लिखीं।

1970 के दशक से, जब संयुक्त राष्ट्र संघ और दूसरी अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों की बैठकों में 'मानवाधिकार' शब्द सुनाई पड़ने लगा, ऑस्ट्रेलियाई जनता को यह अहसास हुआ कि संयुक्त राज्य अमरीका, कनाडा और न्यूज़ीलैंड के विपरीत ऑस्ट्रेलिया में यूरोपीय लोगों द्वारा किए गए भूमि-अधिग्रहण को औपचारिक बनाने के लिए मूल निवासियों के साथ कोई समझौता-पत्र तैयार नहीं किया गया है। सरकार हमेशा से ऑस्ट्रेलिया की ज़मीन को *टेरा न्यूलिअस* (terra nullius) कहती आई थी। इसका मतलब था, 'जो किसी की नहीं है'। इसके अलावा, वहाँ अपने आदिवासी रिश्तेदारों से छीने गए मिश्रित रक्तवाले (मूल निवासी-यूरोपीय) बच्चों का एक लंबा और यंत्रणापूर्ण इतिहास भी था।

इन सवालों पर खड़े हुए आंदोलन के कारण तहकीकातें शुरू हुई और दो महत्त्वपूर्ण निर्णय लिए गए - एक, इस बात को मान्यता देना कि मूल निवासियों का ज़मीन के साथ, जो कि उनके लिए 'पवित्र' है, मज़बूत ऐतिहासिक संबंध रहा है और इसका आदर किया जाना चाहिए; दो,

पिछली गलतियों को धोया तो नहीं जा सकता, लेकिन 'गोरों' और 'रंगबिरंगे लोगों' को अलग-अलग रखने की कोशिश करके बच्चों के साथ जो अन्याय किया गया है, उसके लिए सार्वजनिक रूप से माफ़ी माँगी जानी चाहिए।

1974	'गोरे ऑस्ट्रेलिया' की नीति का खात्मा, एशियाई आप्रवासियों को प्रवेश की इजाज़त
1992	ऑस्ट्रेलियाई हाई कोर्ट द्वारा (माबो केस में) *टेरा न्यूलिअस* की कानूनी अवैधता की घोषणा और 1770 के पहले से ज़मीन पर मूल निवासियों के दावों को मान्यता
1995	आदिवासी और टॉरस स्ट्रेट टापूवासी बच्चों को उनके परिवारों से अलग किए जाने के मामले में राष्ट्रीय जाँच
1999	1820 से 1970 के दशक के बीच 'गुम हुए' बच्चों से माफ़ीनामे के तौर पर 'राष्ट्रीय क्षमायाचना दिवस' (A National Sorry Day) (26 मई)

अभ्यास

संक्षेप में उत्तर दीजिए

1. दक्षिणी और उत्तरी अमरीका के मूल निवासियों के बीच के फ़र्कों से संबंधित किसी भी बिन्दु पर टिप्पणी करिए।
2. आप उन्नीसवीं सदी के संयुक्त राज्य अमरीका में अंग्रेज़ी के उपयोग के अतिरिक्त अंग्रेज़ों के आर्थिक और सामाजिक जीवन की कौन-सी विशेषताएँ देखते हैं?
3. अमरीकियों के लिए 'फ्रंटियर' के क्या मायने थे?
4. इतिहास की किताबों में ऑस्ट्रेलिया के मूल निवासियों को शामिल क्यों नहीं किया गया था?

संक्षेप में निबंध लिखिए

5. लोगों की संस्कृति को समझाने में संग्रहालय की गैलरी में प्रदर्शित चीज़ें कितनी कामयाब रहती हैं? किसी संग्रहालय को देखने के अपने अनुभव के आधार पर सोदाहरण विचार करिए।
6. कैलिफ़ोर्निया में चार लोगों के बीच 1880 में हुई किसी मुलाकात की कल्पना करिए। ये चार लोग हैं : एक अफ़्रीकी गुलाम, एक चीनी मज़दूर, गोल्ड रश के चक्कर में आया हुआ एक जर्मन और होपी कबीले का एक मूल निवासी। उनकी बातचीत का वर्णन करिए।

© NCERT not to be republished

विषय 11

आधुनिकीकरण के रास्ते

11091CH11

उन्नीसवीं सदी की शुरुआत में चीन का पूर्वी एशिया पर प्रभुत्व था। लंबी परंपरा के वारिस छींग राजवंश की सत्ता अक्षुण्ण जान पड़ती थी, जबकि नन्हा-सा द्वीप-देश जापान अलग-थलग पड़ा हुआ प्रतीत होता था। इसके बावजूद, कुछ ही दशकों के भीतर चीन अशांति की गिरफ़्त में आ गया और औपनिवेशिक चुनौती का सामना नहीं कर पाया। छींग राजवंश के हाथ से राजनीतिक नियंत्रण जाता रहा, वह कारगर सुधार करने में असफल रहा और देश गृहयुद्ध की लपटों में आ गया। दूसरी ओर जापान एक आधुनिक राष्ट्र-राज्य के निर्माण में, औद्योगिक अर्थतंत्र की रचना में और यहाँ तक कि ताइवान (1895) तथा कोरिया (1910) को अपने में मिलाते हुए एक औपनिवेशिक साम्राज्य कायम करने में सफल रहा। उसने अपनी संस्कृति और अपने आदर्शों की स्रोत-भूमि चीन को 1894 में हराया और 1905 में रूस जैसी यूरोपीय शक्ति को पराजित करने में कामयाब रहा।

चीनियों की प्रतिक्रिया धीमी रही और उनके सामने कई कठिनाइयाँ आईं। आधुनिक दुनिया का सामना करने के लिए उन्होंने अपनी परंपराओं को पुन: परिभाषित करने का प्रयास किया। साथ ही अपनी राष्ट्र-शक्ति का पुनर्निर्माण करने और पश्चिमी व जापानी नियंत्रण से मुक्त होने की कोशिश की। उन्होंने पाया कि असमानताओं को हटाने और अपने देश के पुनर्निर्माण के दुहरे मकसद को वे क्रांति के ज़रिये ही हासिल कर सकते हैं। 1949 में चीनी साम्यवादी पार्टी ने गृहयुद्ध में जीत हासिल की। लेकिन 1970 के दशक के आखिर तक चीनी नेताओं को लगने लगा कि देश की विचारधारात्मक व्यवस्था उसकी आर्थिक वृद्धि और विकास में बाधा डाल रही है। इस वजह से अर्थव्यवस्था में व्यापक सुधार किए गए। यद्यपि इससे पूँजीवाद और मुक्त बाज़ार की वापसी हुई, तथापि साम्यवादी दल का राजनीतिक नियंत्रण अब भी बरकरार रहा।

जापान उन्नत औद्योगिक राष्ट्र बन गया, लेकिन साम्राज्य की लालसा ने उसे युद्ध में झोंक दिया। 1945 में आंग्ल-अमरीकी सैन्यशक्ति के सामने उसे हार माननी पड़ी। अमरीकी आधिपत्य के साथ अधिक लोकतांत्रिक व्यवस्था की शुरुआत हुई और 1970 के दशक तक जापान अपनी अर्थव्यवस्था का पुनर्निर्माण करके एक प्रमुख आर्थिक शक्ति बनकर उभरा।

जापान का आधुनिकीकरण का सफ़र पूँजीवाद के सिद्धांतों पर आधारित था और यह सफ़र उसने ऐसी दुनिया में तय किया, जहाँ पश्चिमी उपनिवेशवाद का प्रभुत्व था। दूसरे देशों में जापान के विस्तार को पश्चिमी प्रभुत्व का विरोध करने और एशिया को आज़ाद कराने की माँग के आधार पर उचित ठहराया गया। जापान में जिस तेज़ी से विकास हुआ वह जापानी संस्थाओं और समाज में परंपरा की सुदृढ़ता, उनकी सीखने की शक्ति और राष्ट्रवाद की ताकत को दर्शाता है।

चीन और जापान में इतिहास लेखन की लंबी परंपरा रही है, क्योंकि इन देशों में यह माना जाता है कि इतिहास शासकों के लिए महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शक का काम करता है। ऐसा समझा जाता है कि अतीत वे मानक पेश करता है, जिनके आधार पर शासकों का आकलन किया

© NCERT not to be republished

जा सकता है। इसीलिए शासकों ने अभिलेखों की देखरेख और राजवंशों का इतिहास लिखने के लिए सरकारी विभागों की स्थापना की। सिमा छियन (Sima Qian, 145-90 ईसा पूर्व) को प्राचीन चीन का महानतम इतिहासकार माना जाता है। जापान में भी चीनी सांस्कृतिक प्रभाव के चलते इतिहास को ऐसा ही महत्त्व दिया जाने लगा। मेजी सरकार के शुरुआती अधि नियमों में से एक था, 1869 में एक ब्यूरो की स्थापना, जिसका काम था अभिलेखों को इकट्ठा करना। इसका एक अन्य उद्देश्य मेजी पुनर्स्थापना के बारे में मेजी विजेताओं के नज़रिये से लेखन करना था। लिखित शब्द का बहुत सम्मान था और साहित्यिक कौशल को बहुमूल्य समझा जाता था। इसका नतीजा यह रहा है कि भांति-भांति के लिखित स्रोत उपलब्ध हैं: सरकारी इतिहास, विद्वत्तापूर्ण लेखन, लोकप्रिय साहित्य और धार्मिक परचे। मुद्रांकन और प्रकाशन पूर्व आधुनिक काल में महत्त्वपूर्ण उद्योग थे और यह संभव है कि 18वीं शताब्दी के चीन और जापान की किसी किताब के वितरण का पता लगाया जा सके। आधुनिक विद्वानों ने इस सामग्री का इस्तेमाल नये और भिन्न तरीकों से किया है।

आधुनिक विद्वानों ने चीनी बौद्धिकों जैसे लिमांग छिचाओ (Lian Qichao) या जापान में आधुनिक इतिहास के पथप्रदर्शकों में से एक, कुमे कुनीताके (Kume Kunitake, 1839-1931) जैसे बौद्धिकों के काम को आगे बढ़ाया है। इसके अलावा इन्होंने पहले के यूरोपीय मुसाफ़िरों के लेखन, जैसे इटली के मार्को पोलो (1254-1324) जो चीन में 1274 से 1290 तक रहे, चीन में जैसूट पादरी मैटियो रिक्की (Mateo Ricci, 1552-1610) और जापान में लूई फ़रॉय (Luis Frois, 1532-1597) जैसे बुद्धिजीवियों के काम को भी आगे बढ़ाया है। इन सभी ने इन देशों के बारे में समृद्ध जानकारियाँ दी हैं। आधुनिक विश्व को 19वीं सदी के ईसाई मिशनरियों के लेखन से भी फ़ायदे हुए, जिनके काम से इन देशों के बारे में समझ बनाने के लिए बहुमूल्य सामग्री मिलती है।

अंग्रेज़ी में चीनी-जापानी इतिहास पर परिष्कृत पांडित्यपूर्ण काम का विशाल भंडार उपलब्ध है। चीनी सभ्यता में विज्ञान के इतिहास पर जोज़फ नीडहम (Joseph Needham) के अत्यंत महत्त्वपूर्ण कार्य और जापानी इतिहास और संस्कृति पर जॉर्ज सैन्सम के कार्य से इसकी शुरुआत हुई। हाल के वर्षों में चीनी और जापानी विद्वानों की लिखी चीज़ें अंग्रेज़ी में अनूदित हुई हैं। उनमें से कुछ विद्वान तो विदेशों में ही पढ़ाते हैं और अंग्रेज़ी में लिखते हैं। 1980 से कई चीनी विद्वान जापान में ही काम करते और जापानी में लिखते आए हैं। मतलब यह कि हमारे पास विश्व के कई हिस्सों से आनेवाला विद्वत्तापूर्ण लेखन उपलब्ध है, जो हमें इन देशों का अधिक विस्तृत और गहन परिचय देता है।

नाइतो कोनन* (Naito Konan) 1866-1934

ये चीन पर काम करने वाले प्रमुख जापानी विद्वान थे, जिनके लेखन ने अन्य जापानी लेखकों को प्रभावित किया। जापान में चीन का अध्ययन करने की लंबी परंपरा रही है। नाइतो ने अपने काम में पश्चिमी इतिहास-लेखन की नयी तकनीकों तथा अपने पत्रकारिता के अनुभवों का इस्तेमाल किया। उन्होंने 1907 में क्योतो विश्वविद्यालय में प्राच्य अध्ययन का विभाग बनाने में मदद की। *शिनारॉन* (Shinaron) (*चीन पर*, 1914) में उन्होंने तर्क दिया कि गणतांत्रिक सरकार के ज़रिये चीनी सुंग राजवंश (960-1279) के काल से चले आ रहे अभिजात वर्ग के नियंत्रण और केंद्रीय सत्ता को खत्म कर सकते हैं। उनका मानना था कि स्थानीय समाज को पुनर्जीवित करने का यही रास्ता है और सुधार यहीं से शुरू होने चाहिए थे। उन्हें चीनी इतिहास में ऐसी क्षमताएँ नज़र आईं जो चीन को आधुनिक और लोकतांत्रिक बना सकती थीं। उनके मुताबिक जापान चीन में एक अहम भूमिका निभा सकता था लेकिन वे चीनी राष्ट्रवाद की शक्ति का सही आकलन नहीं कर पाए।

*जापान में कुलनाम व्यक्तिगत नाम के पहले लिखा जाता है।

परिचय

चीन और जापान के भौतिक भूगोल में काफी अंतर है। चीन विशालकाय महाद्वीपीय देश है जिसमें कई तरह की जलवायु वाले क्षेत्र हैं: मुख्य क्षेत्र में 3 प्रमुख नदियाँ हैं: पीली नदी (हुआंग हे), यांग्त्सी नदी (छांग जिआंग – दुनिया की तीसरी सबसे लंबी नदी), और पर्ल नदी। देश का बहुत सा हिस्सा पहाड़ी है।

मानचित्र 1: पूर्व एशिया।

हान सबसे प्रमुख जातीय समूह है और प्रमुख भाषा है चीनी (पुतोंगहुआ) लेकिन कई और राष्ट्रीयताएँ हैं, जैसे कि उइघुर, हुई, मांचू और तिब्बती। कैंटनीज़ कैंटन (गुआंगज़ाओ) की बोली-उए और शंघाईनीज़ (शंघाई की बोली-वू) जैसी बोलियों के अलावा कई अल्पसंख्यक भाषाएँ भी बोली जाती हैं।

चीनी खानों में क्षेत्रीय विविधता की झलक मिलती है और इसमें कम से कम चार प्रमुख तरह के खाने देखे जा सकते हैं। सबसे प्रसिद्ध पाकप्रणाली दक्षिणी या केंटोनी है, जो कैंटन व उसके आंतरिक क्षेत्रों की है। इसकी प्रसिद्धि इस बात से है कि विदेशों में रहनेवाले ज़्यादातर चीनी कैंटन प्रांत से आते हैं। जाना-माना डिम सम (शाब्दिक अर्थ दिल को छूना) यहीं का खाना है जो गुंथे हुए आटे को सब्ज़ी आदि भरकर उबाल कर बनाए गए व्यंजन जैसा है। उत्तर में गेहूँ मुख्य आहार है, जबकि शेचुआँ (Szechuan) में प्राचीन काल में बौद्ध भिक्षुओं द्वारा लाए गए मसाले और रेशम मार्ग के ज़रिए पंद्रहवीं सदी में पुर्तगाली व्यापारियों द्वारा लाई गई मिर्च के चलते खासा झालदार और तीखा खाना मिलता है। पूर्वी चीन में चावल और गेहूँ, दोनों खाए जाते हैं।

इसके विपरीत, जापान एक द्वीप शृंखला है जिसमें चार सबसे बड़े द्वीप हैं होंशू (Honshu), क्यूशू (Kyushu), शिकोकू (Shikoku) और होकाइदो (Hokkaido)। ओकिनावा (Okinawan) द्वीपों की शृंखला सबसे दक्षिण में है, लगभग बहामास वाले ही अक्षांश पर। मुख्य द्वीपों की 50 प्रतिशत से अधिक ज़मीन पहाड़ी है। जापान बहुत ही सक्रिय भूकम्प क्षेत्र में है। इन भौगोलिक परिस्थितियों ने वहाँ की वास्तुकला को प्रभावित किया है। अधिकतर जनसंख्या जापानी है लेकिन कुछ आयनू (Ainu) अल्पसंख्यक और कुछ कोरिया के लोग हैं जिन्हें श्रमिक मज़दूर के रूप में उस समय जापान लाया गया था जब कोरिया जापान का उपनिवेश था।

जापान में पशुपालन की परंपरा नहीं है। चावल बुनियादी फसल है और मछली प्रोटीन का मुख्य स्रोत। कच्ची मछली साशिमी या सूशी अब दुनिया भर में बहुत लोकप्रिय हो गई है क्योंकि इसे बहुत सेहतमंद माना जाता है।

जापान

राजनीतिक व्यवस्था

जापान पर क्योतो में रहनेवाले सम्राट का शासन हुआ करता था, लेकिन बारहवीं सदी आते-आते असली सत्ता शोगुनों के हाथ में आ गई जो सैद्धांतिक रूप से राजा के नाम पर शासन करते थे। 1603 से 1867 तक तोकुगावा परिवार के लोग शोगुनपद पर कायम थे। देश 250 भागों में विभाजित था जिनका शासन *दैम्यो* चलाते थे। शोगुन दैम्यो पर नियंत्रण रखते थे। शोगुन दैम्यो को लंबे अरसे के लिए राजधानी एदो (आधुनिक तोक्यो) में रहने का आदेश देते थे ताकि उनकी तरफ़ से कोई खतरा न रहे। शोगुन प्रमुख शहरों और खदानों पर भी नियंत्रण रखते थे। सामुराई (योद्धा वर्ग) शासन करनेवाले कुलीन थे और वे शोगुन तथा दैम्यो की सेवा में थे।

16वीं शताब्दी के अंतिम भाग में तीन परिवर्तनों ने आगे के विकास की तैयारी की। पहला, किसानों से हथियार ले लिए गए, और अब केवल सामुराई तलवार रख सकते थे। इससे शान्ति और व्यवस्था बनी रही जबकि पिछली शताब्दी में इस वजह से अक्सर लड़ाइयाँ होती रहती थीं। दूसरा, दैम्यो को अपने क्षेत्रों की राजधानियों में रहने के आदेश दिए गए और उन्हें काफ़ी हद तक स्वायत्तता प्रदान की गई। तीसरा, मालिकों और करदाताओं का निर्धारण करने के लिए ज़मीन का सर्वेक्षण किया गया तथा उत्पादकता के आधार पर भूमि का वर्गीकरण किया गया। इन सबका मिलाजुला मकसद राजस्व के लिए स्थायी आधार बनाना था।

दैम्यो की राजधानियाँ बड़ी हुईं, जिसके चलते 17वीं शताब्दी के मध्य तक जापान में एदो दुनिया का सबसे अधिक जनसख्या वाला शहर बन गया। इसके अलावा ओसाका और क्योतो अन्य बड़े शहरों के रूप में उभरे। कम से कम छह ऐसे गढ़ वाले शहर उभरे जहाँ जनसंख्या 50,000 से अधिक थी। इसकी तुलना में उस समय के ज़्यादातर यूरोपीय देशों में केवल एक बड़ा शहर था। इससे वाणिज्यिक अर्थव्यवस्था का विकास हुआ और वित्त और ऋण की प्रणालियाँ स्थापित हुईं। व्यक्ति के गुण उसके पद से अधिक मूल्यवान समझे जाने लगे। शहरों में जीवंत संस्कृति खिलने लगी जहाँ तेज़ी से बढ़ते व्यापारी वर्ग ने नाटक और कलाओं को प्रोत्साहन दिया। चूंकि लोगों को पढ़ने का शौक था, होनहार लेखकों के लिए यह संभव हो सका कि वे केवल लेखन से अपनी जीविका चला लें। एदो में लोग नूडल की कटोरी की कीमत पर किताब किराये पर ले सकते थे। इससे यह पता चलता है कि छपाई* किस स्तर पर होती थी और पढ़ना कितना लोकप्रिय था।

* छपाई लकड़ी के ब्लॉकों से की जाती थी। जापानी लोग यूरोपीय छपाई को पसंद नहीं करते थे।

not to be republished © NCERT

जापान अमीर देश समझा जाता था, क्योंकि वह चीन से रेशम और भारत से कपड़ा जैसी विलासी वस्तुएँ आयात करता था। इन आयातों के लिए चाँदी और सोने में कीमत अदा करने से अर्थव्यवस्था पर भार ज़रूर पड़ा जिसकी वजह से तोकुगावा ने कीमती धातुओं के निर्यात पर रोक लगा दी। उन्होंने क्योतो के निशिजिन में रेशम उद्योग के विकास के लिए भी कदम उठाये जिससे रेशम का आयात कम किया जा सके। निशिजिन का रेशम दुनिया भर में बेहतरीन रेशम माना जाने लगा। मुद्रा का बढ़ता इस्तेमाल और चावल के शेयर बाज़ार का निर्माण जैसे अन्य विकास दिखाते हैं कि अर्थतंत्र नयी दिशाओं में विकसित हो रहा था।

सामाजिक और बौद्धिक बदलावों– मिसाल के लिए, प्राचीन जापानी साहित्य के अध्ययन – ने लोगों को यह सवाल उठाने पर मजबूर किया कि जापान पर चीन का प्रभाव किस हद तक है और यह तर्क पेश किया गया कि जापानी होने का सार चीन के संपर्क में आने से बहुत पहले का है। यह सार की कहानी जैसे उच्च प्राचीन साहित्य में और जापान की उत्पत्ति की पौराणिक कथाओं में देखी जा सकती है, ये मिथकीय कहानियाँ बताती हैं कि इन द्वीपों को भगवान ने बनाया था और सम्राट सूर्य देवी के उत्तराधिकारी थे।

निशिजिन क्योतो की एक बस्ती है। 16वीं शताब्दी में वहाँ 31 परिवारों का बुनकर संघ था। 17वीं शताब्दी के आखिर तक इस समुदाय में 70,000 लोग थे। रेशम उत्पादन फैला और 1713 में केवल देशी धागा इस्तेमाल करने के आदेश जारी किए गए जिससे उसे और प्रोत्साहन मिला। निशिजिन में केवल विशिष्ट प्रकार के महंगे उत्पाद बनाए जाते थे। रेशम उत्पादन से ऐसे क्षेत्रीय उद्यमी वर्ग का विस्तार हुआ जिन्होंने आगे चलकर तोकुगावा व्यवस्था को चुनौती दी। जब 1859 में विदेशी व्यापार की शुरुआत हुई, जापान से रेशम का निर्यात अर्थव्यवस्था के लिए मुनाफ़े का प्रमुख स्रोत बन गया, एक ऐसे समय में जबकि जापानी अर्थव्यवस्था पश्चिमी वस्तुओं से मुकाबला करने की कोशिश कर रही थी।

गेंजी की कथा

मुरासाकी शिकिबु (Murasaki Shikibu)) द्वारा लिखी गई हेआन (Heian) राजदरबार की यह काल्पनिक डायरी *दि टेल ऑफ दि गेंजी* जापानी साहित्य में प्रमुख कथाकृति बन गई। इस काल में मुरासाकी जैसी अनेक लेखिकाएँ उभरीं जिन्होंने जापानी लिपि का इस्तेमाल किया, जबकि पुरुषों ने चीनी लिपि का। चीनी लिपि का इस्तेमाल शिक्षा और सरकार में होता था। इस उपन्यास में कुमार गेंजी की रोमांचक ज़िंदगी दर्शायी गई और हेआन राजदरबार के अभिजात वातावरण की जीती जागती तस्वीर पेश की गई। इसमें यह भी दिखाया गया है कि औरतों को अपने पति चुनने और अपनी ज़िंदगी जीने की कितनी आज़ादी थी।

मेजी पुनर्स्थापना

1867–68 में मेजी वंश के नेतृत्व में तोकुगावा वंश का शासन समाप्त किया गया। मेजियों की पुनर्स्थापना के पीछे कई कारण थे। देश में तरह-तरह का असंतोष था, साथ ही अंतर्राष्ट्रीय व्यापार व कूटनीतिक संबंधों की भी माँग की जा रही थी। इसी बीच 1853 में अमरीका ने कॉमोडोर मैथ्यू पेरी (1794–1858) को जापानी सरकार से एक ऐसे समझौते पर हस्ताक्षर करने की मांग के साथ भेजा जिसमें जापान ने अमरीका के साथ राजनयिक और व्यापारिक संबंध बनाए। जापान ने अगले साल ऐसे समझौते पर हस्ताक्षर किए। जापान चीन के रास्ते में था और अमरीका चीन में एक बड़ा बाज़ार देखता था। इसके अलावा अमरीका को प्रशांत महासागर में अपने बेड़ों के लिए ईंधन लेने की जगह चाहिए थी। उस समय केवल एक ही पश्चिमी देश जापान के साथ व्यापार करता था। वह था, हॉलैंड।

पेरी के आगमन ने जापानी राजनीति पर महत्त्वपूर्ण असर डाला। सम्राट की अचानक अहमियत बढ़ गई, जिसे तब तक बहुत कम राजनैतिक सत्ता मिली हुई थी। 1868 में एक आंदोलन द्वारा

© NCERT not to be republished

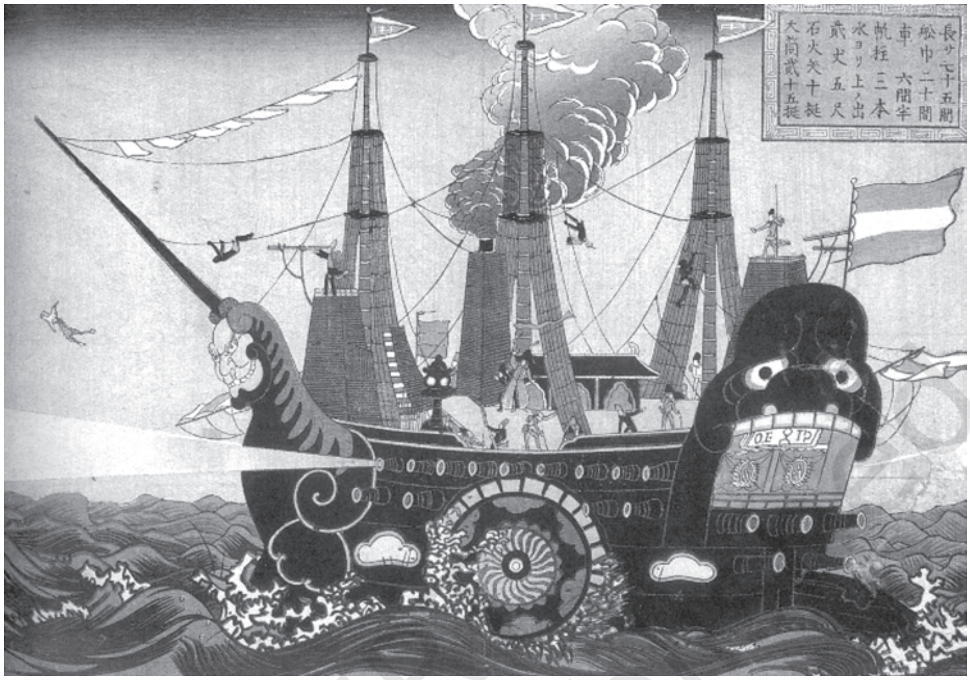

पेरी का जहाज़: लकड़ी के ब्लॉक का एक जापानी छापा

जापानी जिन्हें 'काले जहाज़' (इनकी लकड़ी के जोड़ों को कोलतार से सीलबंद किया जाता था) कहते थे। उन्हें ऐसे चित्रों और कार्टूनों में दिखाया गया है जिनमें 'अजीबोगरीब' विदेशियों और उनकी आदतों को दर्शाया गया है। ये चित्र जापान के 'खुलने' के शक्तिशाली प्रतीक बन गए (आज विद्वान यह तर्क देते हैं कि जापान कभी 'बंद' ही नहीं था चूँकि उसकी पूर्वी एशिया के व्यापार में भूमिका थी और उसके लोग हालैंड और चीन निवासियों के ज़रिए बाहरी दुनिया के बारे में जानते थे।)

कोमोडोर पेरी जापानियों की निगाह से

क्रियाकलाप 1

जापानियों और एज़टेकों का यूरोपीय लोगों से जो संपर्क/टकराव हुआ, उसके अंतरों की पहचान करिए।

शोगुन को ज़बरदस्ती सत्ता से हटा दिया गया और सम्राट मेजी को एदो ले आया गया। एदो को राजधानी बना दिया गया और इसका नया नामकरण हुआ, तोक्यो, जिसका मतलब है, 'पूर्वी राजधानी'।

अधिकारीगण और लोग यह जानते थे कि कुछ यूरोपीय देश भारत व अन्य जगहों पर औपनिवेशिक साम्राज्य बना रहे हैं। ब्रितानियों के हाथों चीन की हार (देखिए, पृ.244) की खबरें फैल रही थीं और इन्हें लोकप्रिय नाटकों में दर्शाया भी जा रहा था। इस सबके चलते लोगों में एक असली डर बन रहा था कि जापान भी उपनिवेश बनाया जा सकता है। बहुत से विद्वान और नेता यूरोप के नए विचारों से *सीखना* चाहते थे बजाए उनकी उपेक्षा करने के, जैसा कि चीन ने किया था। कुछ अन्य लोग यूरोपीय लोगों को ग़ैर मानते हुए अपने से दूर रखना चाहते थे हालाँकि वे उनकी नयी तकनीकों को अपनाने के लिए तैयार थे। कुछ ने देश को बाहरी दुनिया के लिए धीरे-धीरे और सीमित तरह से खोलने के लिए तर्क दिया।

सरकार ने *फुकोकु क्योहे* (समृद्ध देश, मज़बूत सेना) के नारे के साथ नयी नीति का ऐलान किया। उन्होंने यह समझ लिया कि उन्हें अपनी अर्थव्यवस्था का विकास और मज़बूत सेना का निर्माण करने की ज़रूरत है, अन्यथा उन्हें भी भारत की तरह पराधीनता का सामना करना पड़ सकता है। इस कार्य के लिए उन्हें जनता के बीच राष्ट्र की भावना का निर्माण करने और प्रजा को नागरिक की श्रेणी में बदलने की ज़रूरत महसूस हुई।

इसके साथ ही नयी सरकार ने 'सम्राट-व्यवस्था' के पुनर्निर्माण का काम शुरू किया। (सम्राट व्यवस्था से जापानी विद्वानों का अभिप्राय है एक ऐसी व्यवस्था जिसमें सम्राट, नौकरशाही और सेना इकट्ठे सत्ता चलाते थे और नौकरशाही व सेना सम्राट के प्रति उत्तरदायी होते थे।) राजतांत्रिक व्यवस्था के नमूनों को समझने के लिए कुछ अधिकारियों को यूरोप भेजा गया। सम्राट को सीधे-सीधे सूर्य देवी का वंशज माना गया, लेकिन साथ ही उसे पश्चिमीकरण का नेता भी बनाया गया। सम्राट का जन्मदिन राष्ट्रीय छुट्टी का दिन बन गया, वह पश्चिमी अंदाज़ के सैनिक कपड़े

पहनने लगा, और उसके नाम से आधुनिक संस्थाएँ स्थापित करने के अधिनियम जारी किए जाने लगे। 1890 की शिक्षासंबंधी राजाज्ञा ने लोगों को पढ़ने, जनता के सार्वजनिक एवं साझे हितों को बढ़ावा देने के लिए प्रेरित किया।

1870 के दशक से नयी विद्यालय-व्यवस्था का निर्माण शुरू हुआ। लड़के और लड़कियों के लिए स्कूल जाना अनिवार्य हो गया, और 1910 तक तकरीबन ऐसी स्थिति आ गई कि स्कूल जाने से कोई वंचित नहीं रहा। पढ़ाई की फ़ीस बहुत कम थी। शुरू में पाठ्यचर्या पश्चिमी नमूनों पर आधारित थी लेकिन 1870 के दशक के आते-आते आधुनिक विचारों पर ज़ोर देने के साथ-साथ राज्य के प्रति निष्ठा और जापानी इतिहास के अध्ययन पर बल दिया जाने लगा। शिक्षा मंत्रालय पाठ्यचर्या पर, किताबों के चयन और शिक्षकों के प्रशिक्षण पर नियंत्रण रखता था। जिसे नैतिक संस्कृति का विषय कहा गया उसे पढ़ना ज़रूरी था और किताबों में माता पिता के प्रति आदर, राष्ट्र के प्रति वफ़ादारी और अच्छे नागरिक बनने की प्रेरणा दी जाती थी।

जापानी भाषा एक साथ तीन लिपियों का प्रयोग करती है। इनमें से एक कांजी, जापानियों ने चीनियों से छठी शताब्दी में ली। चूँकि उनकी भाषा चीनी भाषा से बहुत अलग है, उन्होंने दो ध्वन्यात्मक वर्णमालाओं का विकास भी किया– *हीरागाना* और *कताकाना*। हीरागाना नारी सुलभ समझी जाती है क्योंकि हेआन काल में बहुत सी लेखिकाएँ इसका इस्तेमाल करती थीं– जैसे कि मुरासाकी। यह चीनी चित्रात्मक चिह्नों और ध्वन्यात्मक अक्षरों (हीरागाना अथवा कताकाना) को मिलाकर लिखी जाती है। शब्द का प्रमुख भाग कांजी के चिह्न से लिखा जाता है और बाकी का हीरागाना में।

ध्वन्यात्मक अक्षरमाला की मौजूदगी के चलते ज्ञान कुलीन वर्गों से व्यापक समाज में काफ़ी तेज़ी से फैल सका। 1880 के दशक में यह सुझाव दिया गया कि जापानी या तो पूरी तरह से ध्वन्यात्मक लिपि का विकास करें या कोई यूरोपीय भाषा अपना लें। दोनो में से कुछ भी नहीं किया गया।

राष्ट्र के एकीकरण के लिए मेजी सरकार ने पुराने गाँवों और क्षेत्रीय सीमाओं को बदल कर नया प्रशासनिक ढाँचा तैयार किया। प्रशासनिक इकाई में पर्याप्त राजस्व ज़रूरी था जिससे स्थानीय स्कूल और स्वास्थ्य सुविधाएँ जारी रखी जा सकें। साथ ही ये इकाइयाँ सेना के लिए भर्ती केंद्रों के काम आ सकें। 20 साल से अधिक उम्र के नौजवानों के लिए कुछ अरसे के लिए सेना में काम करना अनिवार्य हो गया। एक आधुनिक सैन्य बल तैयार किया गया। कानून व्यवस्था बनाई गई जो राजनीतिक गुटों के गठन को देख सके, बैठकें बुलाने पर नियंत्रण रख सके, और सख्त सेंसर व्यवस्था बना सके। इन तमाम उपायों में सरकार को विरोध का सामना करना पड़ा। सेना और नौकरशाही को सीधा सम्राट के निर्देश में रखा गया। यानि कि संविधान बनने के बावजूद यह दो गुट सरकारी नियंत्रण के बाहर रहे। लोकतांत्रिक संविधान और आधुनिक सेना– इन दो अलग आदर्शों को महत्व देने के दूरगामी नतीजे हुए। सेना ने और इलाके जीतने के मकसद से मज़बूत विदेश नीति के लिए दबाव डाला। इस वजह से चीन और रूस के साथ जंग हुई, दोनों में ही जापान विजयी रहा। अधिक जनवाद की लोकप्रिय माँग अक्सर सरकार की इन आक्रामक नीतियों के विरोध में जाती थी। जापान आर्थिक रूप से विकास करता गया और उसने अपना एक औपनिवेशिक साम्राज्य कायम किया। अपने देश में उसने लोकतंत्र के प्रसार को कुचला और साथ ही उपनिवेशीकृत लोगों के साथ टकराव का रिश्ता कायम किया।

जापानी लेख:
कांजी (चीनी चित्रात्मक चिह्न) – लाल;
कताकाना – नीला;
हीरागाना – हरा।

© NCERT not to be republished

अर्थव्यवस्था का आधुनिकीकरण

मेजी सुधारों का एक अन्य महत्त्वपूर्ण हिस्सा अर्थव्यवस्था का आधुनिकीकरण था। इसके लिए कृषि पर कर लगाकर धन इकट्ठा किया गया। जापान की पहली रेल लाइन 1870–72 में तोक्यो और योकोहामा बंदरगाह के बीच बिछाई गई। वस्त्र उद्योग के लिए मशीनें यूरोप से आयात की गईं। मज़दूरों के प्रशिक्षण के लिए विदेशी कारीगरों को बुलाया गया, साथ ही उन्हें जापानी विश्वविद्यालयों और स्कूलों में पढ़ाने के लिए भेजा गया। जापानी विद्यार्थियों को पढ़ने के लिए विदेश भी भेजा गया। 1872 में आधुनिक बैंकिंग संस्थाओं का प्रारंभ हुआ। मित्सुबिशी (Mitsubishi) और सुमितोमो (Sumitomo) जैसी कम्पनियों को सब्सिडी और करों में फ़ायदे के ज़रिये प्रमुख जहाज़ निर्माता बनने में मदद मिली। इससे जापानी व्यापार जापानी जहाज़ों में होने लगा। *ज़ायबात्सु* (Zaibatsu) (बड़ी व्यापारिक संस्थाएँ जिन पर विशिष्ट परिवारों का नियंत्रण था) का प्रभुत्व दूसरे विश्व युद्ध के बाद तक अर्थव्यवस्था पर बना रहा।

1872 में जनसंख्या 3.5 करोड़ थी जो 1920 में 5.5 करोड़ हो गई। जनसंख्या के दबाव को कम करने के लिए सरकार ने प्रवास को सक्रिय रूप से बढ़ावा दिया; पहले उत्तरी टापू होकाइदो की ओर, जो काफी हद तक स्वतंत्र इलाका था और जहाँ आयनू कहे जानेवाले देसी लोग रहते थे; फिर हवाई और ब्राज़ील और जापान के बढ़ते हुए औपनिवेशिक साम्राज्य की तरफ़। उद्योग के विकास के साथ लोग शहरों में आये। 1925 तक 21 प्रतिशत जनता शहरों में रहती थी। 1935 तक यह बढ़ कर 32 प्रतिशत हो गई (2.25 करोड़)।

औद्योगिक मज़दूर

औद्योगिक मज़दूरों की संख्या 1870 में 7,00,000 से बढ़कर 1913 में 40 लाख पहुँच गई। अधिकतर मज़दूर ऐसी इकाइयों में काम करते थे जिनमें 5 से कम लोग थे और जिनमें मशीनों और विद्युत-ऊर्जा का इस्तेमाल नहीं होता था। इन आधुनिक कारखानों में काम करने वालों में आधे से ज़्यादा महिलाएँ थीं। 1886 में पहली आधुनिक हड़ताल का आयोजन महिलाओं ने ही किया। 1900 के बाद कारखानों में पुरुषों की संख्या बढ़ने लगी लेकिन 1930 के दशक में आकर ही पुरुषों की संख्या महिलाओं से अधिक हुई।

कपड़ों के एक कारखाने में श्रमिक।

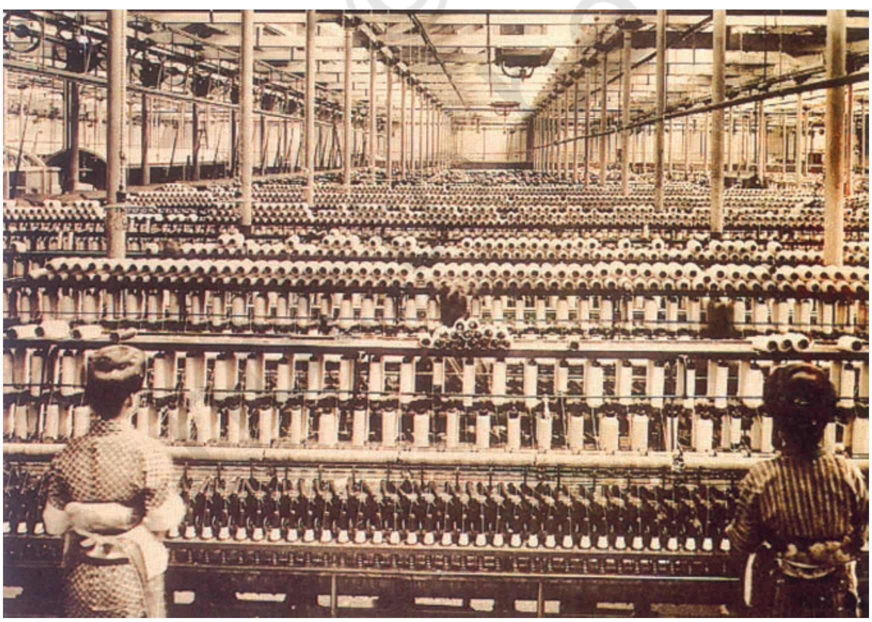

कारखानों में मज़दूरों की संख्या भी बढ़ने लगी। 100 से ज़्यादा मज़दूर वाले कारखानों की संख्या 1909 में 1000 थी। 1920 तक आते आते इनकी संख्या 2000 से ज़्यादा हो गई और 1930 के दशक में यह 4000 पहुँच गई। इसके बावजूद 1940 में

5,50,000 कारखानों में 5 से कम मज़दूर काम करते थे। इससे परिवार-केंद्रित विचारधारा बनी रही, उसी तरह जिस तरह राष्ट्रवाद को मज़बूत पैतृक व्यवस्था का सहारा था जहाँ सम्राट परिवार का कुलपति माना जाता था।

उद्योग के तेज़ और अनियंत्रित विकास और लकड़ी जैसे प्राकृतिक संसाधनों की माँग से पर्यावरण का विनाश हुआ। संसद के पहले निम्न सदन के सदस्य तनाको शोज़ो (Tanaka Shozo) ने 1897 में औद्योगिक प्रदूषण के खिलाफ़ पहला आंदोलन छेड़ा जब 800 गाँववासी जन विरोध में इकट्ठे हुए और उन्होंने सरकार को कार्रवाई करने के लिए मज़बूर किया।

आक्रामक राष्ट्रवाद

मेजी संविधान सीमित मताधिकार पर आधारित था और उसने डायट बनाई जिसके अधिकार सीमित थे (जापानियों ने संसद के लिए इस जर्मन शब्द का इस्तेमाल किया क्योंकि उनकी कानूनी सोच जर्मनी की सोच से प्रभावित थी)। शाही पुन:स्थापना करनेवाले नेता सत्ता में बने रहे और उन्होंने राजनीतिक पार्टियों का गठन किया। 1918 और 1931 के दरमियान जनमत से चुने गए प्रधानमंत्रियों ने मंत्रिपरिषद् बनाए। इसके बाद उन्होंने पार्टियों का भेद भुला कर बनाई गई राष्ट्रीय एकता मंत्रिपरिषदों के हाथों अपनी सत्ता खो दी। सम्राट सैन्यबलों का कमांडर था और 1890 से ये माना जाने लगा कि थलसेना और नौसेना का नियंत्रण स्वतंत्र है। 1899 में प्रधानमंत्री ने आदेश दिए कि केवल सेवारत जनरल और एडमिरल ही मंत्री बन सकते हैं। सेना को मज़बूत बनाने की मुहिम और जापान के उपनिवेश देशों की वृद्धि इस डर से जुड़े हुए थे कि जापान पश्चिमी शक्तियों की दया पर निर्भर है। इस डर को सैन्य-विस्तार के खिलाफ़ और सैन्यबलों को अधिक धन देने के लिए वसूले जानेवाले उच्चतर करों के खिलाफ़ उठनेवाली आवाज़ों को दबाने में इस्तेमाल किया गया।

एक पत्रिका का आवरण पृष्ठ: नवयुवकों को देश हेतु लड़ने के लिए प्रेरित किया जा रहा है।

छात्र-सैनिकों के चित्र

एक किसान के बेटे तनाका शोज़ो (1841-1913) ने अपनी पढ़ाई खुद की और एक मुख्य राजनैतिक हस्ती के रूप में उभरे। 1880 के दशक में उन्होंने जनवादी हकों के आंदोलन में हिस्सा लिया। इस आंदोलन ने संवैधानिक सरकार की माँग की। वह पहली संसद-डायट-में सदस्य चुने गए। उनका मानना था कि औद्योगिक प्रगति के लिए आम लोगों की बलि नहीं दी जानी चाहिए। आशियो (Ashio) खान से वातारासे (Watarase) नदी में प्रदूषण फैल रहा था जिसके कारण 100 वर्ग मील की कृषिभूमि बर्बाद हो रही थी और 1000 परिवार प्रभावित हो रहे थे। आंदोलन के चलते कंपनी को प्रदूषण-नियंत्रण के तरीके अपनाने पड़े जिससे 1904 तक फ़सल सामान्य हो गई।

© NCERT not to be republished

'पश्चिमीकरण' और 'परंपरा'

जापान के अन्य देशों के साथ संबंधों पर जापानी बुद्धिजीवियों की आनुक्रमिक पीढ़ियों के विचार अलग-अलग थे। कुछ के लिए, अमरीका और पश्चिमी यूरोपीय देश सभ्यता की ऊँचाइयों पर थे जहाँ जापान पहुँचने की आकांक्षा रखता था। फ़ुकुज़ावा यूकिची (Fukuzawa Yukichi) मेजी काल के प्रमुख बुद्धिजीवियों में से थे। उनका कहना था कि जापान को 'अपने में से एशिया को निकाल फेंकना' चाहिए। यानि जापान को अपने एशियाई लक्षण छोड़ देने चाहिए और पश्चिम का हिस्सा बन जाना चाहिए।

फ़ुकुज़ावा यूकिची (1835-1901)
इनका जन्म एक गरीब सामुराई परिवार में हुआ। इनकी शिक्षा नागासाकी और ओसाका में हुई। इन्होंने डच और पश्चिमी विज्ञान पढ़ा और बाद में अंग्रेज़ी भी। 1860 में वे अमरीका में पहले जापानी दूतावास में अनुवादक के रूप में गए। इससे इन्हें पश्चिम पर किताब लिखने के लिए बहुत कुछ मिला। उन्होंने अपने विचार क्लासिकी नहीं बल्कि बोलने चालने के अंदाज़ में लिखे। यह किताब बहुत ही लोकप्रिय हुई। इन्होंने एक शिक्षा संस्थान स्थापित किया जो आज केओ विश्वविद्यालय के नाम से जाना जाता है। वे मेरोकुशा (Meirokusha) संस्था के मुख्य सदस्यों में से थे। ये संस्था पश्चिमी शिक्षा का प्रचार करती थी।

अपनी एक किताब, *ज्ञान के लिए प्रोत्साहन* (गाकुनोन नो सुसुमे, 1872-76) में उन्होंने जापानी ज्ञान की कड़ी आलोचना की: "जापान के पास प्राकृतिक दृश्यों के अलावा गर्व करने के लिए कुछ भी नहीं है", उन्होंने आधुनिक कारखानों व संस्थाओं के अलावा पश्चिम के सांस्कृतिक सारतत्त्व को भी बढ़ावा दिया जो कि उनके मुताबिक सभ्यता की आत्मा है। उसके ज़रिये एक नया नागरिक बनाया जा सकेगा। इनका सिद्धांत था, "स्वर्ग ने इंसान को इंसान के ऊपर नहीं बनाया, न ही इंसान को इंसान के नीचे"।

अगली पीढ़ी ने पश्चिमी विचारों को पूरी तरह से स्वीकार करने पर सवाल उठाये और कहा कि राष्ट्रीय गर्व देसी मूल्यों पर निर्मित होना चाहिए। दर्शनशास्त्री मियाके सेत्सुरे (Miyake Setsurei, 1860-1945) ने तर्क पेश किया कि विश्व सभ्यता के हित में हर राष्ट्र को अपने खास हुनर का विकास करना चाहिए। "अपने को अपने देश के लिए समर्पित करना अपने को विश्व को समर्पित करना है"। इसकी तुलना में बहुत से बुद्धिजीवी पश्चिमी उदारवाद की तरफ़ आकर्षित थे और वे चाहते थे कि जापान अपना आधार सेना की बजाय लोकतंत्र पर बनाए। संवैधानिक सरकार की माँग करने वाले जनवादी अधिकारों के आंदोलन के नेता उएकी एमोरी (Ueki Emori, 1857-1892) फ्रांसीसी क्रांति में मानवों के प्राकृतिक अधिकार और जन प्रभुसत्ता के सिद्धांतों के प्रशंसक थे। वे उदारवादी शिक्षा के पक्ष में थे जो प्रत्येक व्यक्ति को विकसित कर सके : 'व्यवस्था से ज़्यादा कीमती चीज़ है, आज़ादी'। कुछ दूसरे लोगों ने तो महिलाओं के मताधिकार की भी सिफ़ारिश की। इस दबाव ने सरकार को संविधान की घोषणा करने पर बाध्य किया।

रोज़मर्रा की ज़िंदगी

जापान का एक आधुनिक समाज में रूपांतरण रोज़ाना की ज़िंदगी में आए बदलावों में भी देखा जा सकता है। पैतृक परिवार व्यवस्था में कई पीढ़ियाँ परिवार के मुखिया के नियंत्रण में रहती थीं। लेकिन जैसे-जैसे लोग समृद्ध हुए, परिवार के बारे में नए विचार फैलने लगे। नया घर (जिसे जापानी अंग्रेज़ी शब्द का इस्तेमाल करते हुए होमु कहते हैं) का संबंध मूल परिवार से था, जहाँ पति-पत्नी साथ रह कर कमाते और घर बसाते थे। पारिवारिक जीवन की इस नयी समझ ने नए तरह के घरेलू उत्पादों, नए क़िस्म के पारिवारिक मनोरंजन और नए प्रकार के घर की माँग पैदा की। 1920 के दशक में निर्माण कम्पनियों ने शुरू में 200 येन देने के बाद लगातार 10 साल के लिए 12 येन माहवार की किश्तों पर लोगों को सस्ते मकान मुहैया कराये- यह एक ऐसे समय में जब एक बैंक कर्मचारी (उच्च शिक्षाप्राप्त व्यक्ति) की तनख्वाह 40 येन प्रतिमाह थी।

बिजली से चलने वाली नवीन घरेलू वस्तुएँ: चावल पकाने वाला कुकर, अमरीकी भूनक (मांस व मछली भूनने वाला), ब्रेड सेंकने वाला टोस्टर।

कार क्लब

मोगा : 'आधुनिक लड़की' के लिए संक्षिप्त शब्द। यह 20वीं शताब्दी में लिंग बराबरी, विश्वजनीन (कॉस्मोपॉलिटन) संस्कृति और विकसित अर्थव्यवस्था के विचारों के एक साथ आने का सूचक है। नए मध्यम वर्ग परिवारों ने आवागमन और मनोरंजन के नए तरीकों का लुत्फ़ उठाया। शहरों में बिजली की ट्रामों के साथ परिवहन बेहतर हुआ। 1878 से जनता के लिए बाग़ बनाये गए और बड़ी दुकानें डिपार्टमेंट स्टोर बनने लगीं। तोक्यो में गिन्ज़ा गिनबुरा के लिए एक फ़ैशनेबुल इलाक़ा बन गया। गिनबुरा शब्द गिन्ज़ा और बुरबुरा मिला कर बनाया गया है। बुरबुरा का अर्थ है 'बिना किसी लक्ष्य के घूमना'। 1925 में पहला रेडियो-स्टेशन खुला। अभिनेत्री मात्सुई, सुमाको, इब्सन के नाटक *एक गुड़िया का घर* (A Doll's House) में नोरा का बेहतरीन किरदार निभा कर राष्ट्रीय स्तर की तारिका बन गई। 1899 में फ़िल्में बनने लगीं और जल्द ही दर्जन भर कंपनियाँ सैकड़ों की तादाद में फ़िल्में बनाने लगीं। यह दौर ओज से भरा हुआ था और इस दौरान सामाजिक और राजनीतिक व्यवहार के पारंपरिक मानकों पर सवाल उठाये गए।

औरतों का कार क्लब

© NCERT not to be republished

आधुनिकता पर विजय

सत्ता केंद्रित राष्ट्रवाद को 1930–40 के दौरान बढ़ावा मिला जब जापान ने चीन और एशिया में अपने उपनिवेश बढ़ाने के लिए लड़ाइयाँ छेड़ीं। ये लड़ाइयाँ दूसरे विश्व युद्ध में जाकर मिल गई जब जापान ने अमरीका के पर्ल हार्बर पर हमला किया।

इस दौर में सामाजिक नियंत्रण में वृद्धि हुई। असहमति प्रकट करने वालों पर ज़ुल्म ढाये गए और उन्हें जेल भेजा गया। देशभक्तों की ऐसी संस्थाएँ बनीं जो युद्ध का समर्थन करती थीं। इनमें महिलाओं के कई संगठन थे। 1943 में एक संगोष्ठी हुई 'आधुनिकता पर विजय'। इसमें जापान के सामने जो दुविधा थी उस पर चर्चा हुई, यानि आधुनिक रहते हुए पश्चिम पर कैसे विजय पाई जाए। संगीतकार मोरोइ साबुरो ने सवाल उठाया कि संगीत को ऐंद्रिक उद्दीपन की कला से वापस लाकर आत्मा की कला के रूप में उसका पुनर्वास कैसे कराया जाए। वे पश्चिमी संगीत को नकार नहीं रहे थे। वे ऐसी राह खोज रहे थे जहाँ जापानी संगीत को पश्चिमी वाद्यों पर बजाए या दुहराए जाने से आगे ले जाया जा सके। दर्शनशास्त्री निशितानी केजी ने 'आधुनिक' को तीन पश्चिमी धाराओं के मिलन और एकता से परिभाषित किया: पुनर्जागरण, प्रोटैस्टेंट सुधार, और प्राकृतिक विज्ञानों का विकास । उन्होंने कहा कि जापान की 'नैतिक ऊर्जा' (यह शब्द जर्मन दर्शनशास्त्री रांके से लिया गया है) ने उसे एक उपनिवेश बनने से बचा लिया और जापान का फ़र्ज़ बनता है एक नयी विश्व पद्धति, एक विशाल पूर्वी एशिया के निर्माण का। इसके लिए एक नयी सोच की ज़रूरत है जो विज्ञान और धर्म को जोड़ सके।

क्रियाकलाप 2

निशितानी ने 'आधुनिक' को जिस तरह परिभाषित किया, क्या आप उससे सहमत हैं?

हार के बाद–एक वैश्विक आर्थिक शक्ति के रूप में वापसी

जापान की औपनिवेशिक साम्राज्य की कोशिशें संयुक्त बलों के हाथों हारकर खत्म हो गईं। यह तर्क दिया गया है कि युद्ध जल्दी खत्म करने के लिए हिरोशिमा और नागासाकी पर नाभिकीय बम गिराये गये। लेकिन अन्य लोगों का मानना है कि इतने बड़े पैमाने पर जो विध्वंस और दुख-दर्द का तांडव हुआ, वह पूरी तरह से अनावश्यक था। अमरीकी नेतृत्व वाले कब्ज़े (1945-47) के दौरान जापान का विसैन्यीकरण कर दिया गया और एक नया संविधान लागू हुआ। इसके अनुच्छेद 9 के 'तथाकथित युद्ध न करने के वाक्यांश' के अनुसार युद्ध का राष्ट्रीय नीति के साधन के रूप में इस्तेमाल वर्जित है। कृषि सुधार, व्यापारिक संगठनों का पुनर्गठन और जापानी अर्थव्यवस्था में *ज़ायबात्सु* यानि बड़ी एकाधिकार कंपनियों की पकड़ को खत्म करने की भी कोशिश की गई। राजनीतिक पार्टियों को पुनर्जीवित किया गया और जंग के बाद पहले चुनाव 1946 में हुए। इसमें पहली बार महिलाओं ने भी मतदान किया।

अपनी भयंकर हार के बावजूद जापानी अर्थव्यवस्था का जिस तेज़ी से पुनर्निर्माण हुआ, उसे एक युद्धोत्तर 'चमत्कार' कहा गया है। लेकिन यह चमत्कार से कहीं अधिक था और इसकी जड़ें जापान के लंबे इतिहास में निहित थीं। संविधान को औपचारिक स्तर पर गणतांत्रिक रूप इसी समय दिया गया। लेकिन जापान में जनवादी आंदोलन और राजनीतिक भागेदारी का आधार बढ़ाने में बौद्धिक सक्रियता की ऐतिहासिक परंपरा रही है। युद्ध से पहले के काल की सामाजिक संबद्धता को गणतांत्रिक रूपरेखा के बीच सुदृढ़ किया गया। इसके चलते सरकार, नौकरशाही और उद्योग के बीच एक करीबी रिश्ता कायम हुआ। अमरीकी समर्थन और साथ ही कोरिया और वियतनाम में जंग से जापानी अर्थव्यवस्था को मदद मिली।

तोक्यो–द्वितीय विश्व युद्ध के पहले और बाद में।

1964 में तोक्यो में हुए ओलंपिक खेल जापानी अर्थव्यवस्था की परिपक्वता के प्रतीक बनकर सामने आये। इसी तरह तेज़ गति वाली *शिंकांसेन* यानि बुलेट ट्रेन का जाल भी 1964 में शुरू हुआ। इस पर रेलगाड़ियाँ 200 मील प्रति घंटे की रफ़्तार से चलती थीं (अब वे 300 मील प्रति घंटे की रफ़्तार से चलती हैं)। यह भी जापानियों की सक्षमता दर्शाती हैं कि वे नयी प्रौद्योगिकी के ज़रिये बेहतर और सस्ते उत्पाद बाज़ार में उतार सके।

1960 के दशक में नागरिक समाज आंदोलन का विकास हुआ। बढ़ते औद्योगीकरण की वजह से स्वास्थ्य और पर्यावरण पर पड़ रहे दुष्प्रभाव को पूरी तरह से नज़र अंदाज़ करने का विरोध किया गया। अरगजी (Cadmium) का ज़हर, जिसके चलते बड़ी ही कष्टप्रद बीमारी होती थी, एक आरंभिक सूचक था। इसके बाद 1960 के दशक में मिनामाता में पारे के ज़हर के फैलने और 1970 के दशक के उत्तरार्ध में हवा में प्रदूषण से भी समस्याएँ जन्मीं। जमीनी स्तरों पर दबाव बनाने वाले गुटों ने इन समस्याओं को पहचानने और साथ ही हताहतों के लिए मुआवज़ा देने की मांग की। सरकारी कार्रवाई और नए कानूनों से स्थिति बेहतर हुई। 1980 के दशक के मध्य से पर्यावरण संबंधी विषयों में लोगों की दिलचस्पी घटी है क्योंकि 1990 तक आते-आते जापान में विश्व के कुछ कठोरतम पर्यावरण-नियंत्रण अमल में लाए गए। आज एक विकसित देश के रूप में यह अग्रगामी विश्व-शक्ति की अपनी हैसियत को बनाए रखने के लिए अपनी राजनीतिक और प्रौद्योगिकीय क्षमताओं का इस्तेमाल करने की चुनौतियों का सामना कर रहा है।

चीन

चीन का आधुनिक इतिहास संप्रभुता की पुनर्प्राप्ति, विदेशी कब्ज़े के अपमान का अंत और समानता तथा विकास को संभव करने के सवालों के चारों ओर घूमता है। चीनी बहसों में तीन समूहों के नज़रिए झलकते हैं। कांग योवेल (1858-1927) या लियांग किचाउ (1873-1929) जैसे आरंभिक सुधारकों ने पश्चिम की चुनौतियों का सामना करने के लिए पारंपरिक विचारों को नये और अलग तरीके से इस्तेमाल करने की कोशिश की। दूसरे, गणतंत्र के पहले राष्ट्राध्यक्ष सन यात-सेन जैसे गणतांत्रिक क्रांतिकारी जापान और पश्चिम के विचारों से प्रभावित थे। तीसरे, चीन की कम्युनिस्ट पार्टी युगों-युगों की असमानताओं को खत्म करना और विदेशियों को खदेड़ देना चाहती थी।

आधुनिक चीन की शुरुआत सोलहवीं और सत्रहवीं सदी में पश्चिम के साथ उसका पहला सामना होने के समय से मानी जा सकती है, जबकि जेसुइट मिशनरियों ने खगोलविद्या और गणित जैसे पश्चिमी विज्ञानों को वहाँ पहुँचाया। इसका तात्कालिक असर तो सीमित था, पर इसने उन चीज़ों की शुरुआत कर दी, जिन्होंने उन्नीसवीं सदी में जाकर तेज़ गति पकड़ी, जब ब्रिटेन ने अफ़ीम के फ़ायदेमंद व्यापार को बढ़ाने के लिए सैन्य बलों का इस्तेमाल किया। इसी के चलते

© NCERT not to be republished

पहला अफ़ीम युद्ध (1839–1942) हुआ। इसने सत्ताधारी क्विंग राजवंश को कमज़ोर किया और सुधार तथा बदलाव की मांगों को मज़बूती दी।

अफ़ीम युद्ध (Opium War) एक यूरोपीय चित्रकारी।

अफ़ीम का व्यापार

चीनी उत्पादों जैसे चाय, रेशम और चीनी मिट्टी के बर्तनों की माँग ने व्यापार में असंतुलन की भारी समस्या खड़ी कर दी। पश्चिमी उत्पादों को चीन में बाज़ार नहीं मिला जिसकी वजह से भुगतान चाँदी में करना पड़ता था। ईस्ट इंडिया कंपनी ने एक विकल्प ढूँढ़ा – अफ़ीम। यह हिंदुस्तान के कई हिस्सों में बहुत आराम से उगती थी। चीन में अफ़ीम बेचने के ज़रिये वे चाँदी कमाकर केंटन में उधार पत्रों के बदले कंपनी के प्रतिनिधियों को देने लगे। इस तरह कंपनी उस चाँदी का इस्तेमाल ब्रिटेन के लिए चाय, रेशम और चीनी मिट्टी के बर्तन खरीदने के लिए करती थी। ब्रिटेन, भारत और चीन के बीच यह उत्पादों का 'त्रिकोणीय व्यापार' था।

क्रियाकलाप 3

क्या यह पेंटिंग अफ़ीम युद्ध की अहमियत का स्पष्ट बोध करा पाती है?

कांग यूवेई (Kang Youwei) और लियांग किचाउ (Liang Qichao) जैसे क्विंग सुधारकों ने व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने की ज़रूरत महसूस की और एक आधुनिक प्रशासकीय व्यवस्था, नयी सेना और शिक्षा व्यवस्था के निर्माण के लिए नीतियाँ बनाईं। साथ ही, संवैधानिक सरकार की स्थापना के लिए स्थानीय विधायिकाओं का भी गठन किया। उन्होंने चीन को उपनिवेशीकरण से बचाने की ज़रूरत भी महसूस की।

उपनिवेश बनाए गए देशों के नकारात्मक उदाहरणों ने चीनी विचारकों पर ज़बर्दस्त प्रभाव डाला। 18वीं सदी में पोलैंड का बँटवारा सर्वाधिक बहुचर्चित उदाहरण था। यहाँ तक कि 1890 के दशक में पोलैंड शब्द का इस्तेमाल क्रिया के रूप में किया जाने लगा : *बोलान वू* का मतलब था, 'हमें पोलेंड करने के लिए'। भारत का उदाहरण भी सामने था। विचारक लियांग किचाउ का मानना था कि चीनी लोगों में एक राष्ट्र की जागरूकता लाकर ही चीन पश्चिम का विरोध कर पाएगा। 1903 में उन्होंने लिखा कि भारत एक ऐसा देश है, जो किसी और देश नहीं, बल्कि एक कंपनी के हाथों बर्बाद हो गया – ईस्ट इंडिया कंपनी के। वे ब्रितानिया की ताबेदारी करने और

अपने लोगों के साथ क्रूर होने के लिए हिंदुस्तानियों की आलोचना करते थे। उनके तर्कों ने आम आदमी को खासा आकर्षित किया, क्योंकि चीनी देखते थे कि ब्रितानिया चीन के साथ युद्ध में भारतीय जवानों का इस्तेमाल करता है।

इन सबसे अधिक कइयों ने यह महसूस किया कि परंपरागत सोच को बदलने की ज़रूरत है। कन्फ़्यूशियसवाद चीन में प्रमुख विचारधारा रही है। यह विचारधारा कन्फ़यूशियस (551-479 ई.पू.) और उनके अनुयायियों की शिक्षा से विकसित की गई। इसका दायरा अच्छे व्यवहार, व्यावहारिक समझदारी और उचित सामाजिक संबंधों के सिद्धांतों का था। इसने चीनियों के जीवन के प्रति रवैये को प्रभावित किया, सामाजिक मानक दिये और चीनी राजनीतिक सोच और संगठनों को आधार दिया।

लोगों को नये विषयों में प्रशिक्षित करने के लिए विद्यार्थियों को जापान, ब्रिटेन और फ्रांस में पढ़ने भेजा गया ताकि वे नये विचार सीख कर वापस आएँ। 1890 के दशक में बड़ी तादाद में चीनी विद्यार्थी पढ़ने के लिए जापान गए। वे न केवल नये विचार वापस लेकर आए बल्कि गणतंत्र की स्थापना करने में उन्होंने अग्रणी भूमिका निभाई। चूंकि चीनी और जापानी भाषा एक ही चित्रलिपि का इस्तेमाल करती हैं, चीन ने जापान से न्याय, अधिकार और क्रांति के यूरोपीय विचारों के जापानी अनुवाद लिए। यह एक तरह से पारंपरिक संबंधों का उलट जाना था। 1905 में रूसी-जापानी युद्ध (एक ऐसा युद्ध जो चीन की ज़मीन पर और चीनी इलाके पर प्रभुत्व के लिए लड़ा गया था) के बाद सदियों पुरानी चीनी परीक्षा-प्रणाली समाप्त कर दी गई, जो प्रत्याशियों को अभिजात सत्ताधारी वर्ग में दाखिला दिलाने का काम करती थी।

परीक्षा प्रणाली

अभिजात सत्ताधारी वर्ग में प्रवेश (1850 तक लगभग 11 लाख) ज़्यादातर इम्तिहान के ज़रिये ही होता था। इसमें 8 भाग वाला निबंध निर्धारित प्रपत्र में (पा-कू वेन) शास्त्रीय चीनी में लिखना होता था। यह परीक्षा विभिन्न स्तरों पर हर 3 साल में 2 बार आयोजित की जाती थी। पहले स्तर की परीक्षा में केवल 1-2 प्रतिशत लोग 24 साल की उम्र तक पास हो पाते थे और वे (सुंदर प्रतिभा) बन जाते थे। इस डिग्री से उन्हें निचले कुलीन वर्ग में प्रवेश मिल जाता था। 1850 से पहले किसी भी समय 526,869 सिविल और 212,330 सैन्य प्रांतीय (शेंग हुआन) डिग्री वाले लोग पूरे देश में मौजूद थे। देश में केवल 27,000 राजकीय पद थे, इसलिए कई निचले दर्ज़े के डिग्रीधारकों के पास नौकरी नहीं होती थी। यह इम्तहान विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास में बाधक का काम करता था, क्योंकि इसमें सिर्फ़ साहित्यिक कौशल की माँग होती थी। चूंकि यह क्लासिक चीनी सीखने के हुनर पर ही आधारित था, जिसकी आधुनिक विश्व में कोई प्रासंगिकता नज़र नहीं आती थी, इसलिए 1905 में इस प्रणाली को खत्म कर दिया गया।

गणतंत्र की स्थापना

1911 में मांचू साम्राज्य समाप्त कर दिया गया और सन यात-सेन (1866-1925) के नेतृत्व में गणतंत्र की स्थापना की गई। वे निर्विवाद रूप से आधुनिक चीन के संस्थापक माने जाते हैं। वे एक गरीब परिवार से थे और उन्होंने मिशन स्कूलों में शिक्षा ग्रहण की जहाँ उनका परिचय लोकतंत्र और ईसाई धर्म से हुआ। उन्होंने डाक्टरी की पढ़ाई की लेकिन वे चीन के भविष्य को

© NCERT not to be republished

लेकर चिंतित थे। उनका कार्यक्रम तीन सिद्धांत (सन मिन चुई) के नाम से मशहूर है। ये तीन सिद्धांत हैं : राष्ट्रवाद – इसका अर्थ था मांचू वंश – जिसे विदेशी राजवंश के रूप में देखा जाता था – को सत्ता से हटाना, साथ ही अन्य साम्राज्यवादियों को हटाना (गणतंत्र या गणतांत्रिक सरकार की स्थापना करना) और समाजवाद, जो पूँजी का नियमन करे और भूस्वामित्व में बराबरी लाए।

सामाजिक और राजनीतिक हालात डाँवाडोल बने रहे। 4 मई 1919 में बीजिंग में युद्धोत्तर शांति सम्मेलन के निर्णय के विरोध में एक धुआँधार प्रदर्शन हुआ। हालांकि चीन ब्रितानिया के नेतृत्व में हुई जीत में विजयी देशों का सहयोगी था, पर उससे हथिया लिए गए उसके इलाके वापस नहीं मिले थे। यह विरोध आंदोलन में तब्दील हो गया। इसने एक पूरी पीढ़ी को परंपरा पर हमला करने के लिए प्रेरित किया और चीन को आधुनिक विज्ञान, लोकतंत्र और राष्ट्रवाद के ज़रिये बचाने की माँग की गई। क्रांतिकारियों ने देश के संसाधनों पर कब्ज़ा जमाए विदेशियों को भगाने, असमानताएँ हटाने और गरीबी कम करने का नारा दिया। उन्होंने लेखन में एक ही भाषा का इस्तेमाल, पैरों को बाँधने की प्रथा और औरतों की अधीनस्थता के खात्मे, शादी में बराबरी और गरीबी खत्म करने के लिए आर्थिक विकास जैसे सुधारों की वकालत की। गणतांत्रिक क्रांति के बाद देश में उथल-पुथल का एक दौर शुरू हुआ। कुओमीनतांग (नेशनल पीपुल्स पार्टी) और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी मुल्क को एकताबद्ध करने और स्थिरता लाने के लिए संघर्षरत दो महत्त्वपूर्ण ताक़तों के रूप में उभरीं।

सन यात-सेन के विचार कुओमीनतांग के राजनीतिक दर्शन का आधार बने। उन्होंने कपड़ा, खाना, घर और परिवहन – इन 'चार बड़ी ज़रूरतों' को रेखांकित किया। सन यात-सेन की मृत्यु के बाद चियांग काइशेक (Chiang Kaishek, 1887-1975) कुओमीनतांग के नेता बनकर उभरे और उन्होंने सैन्य अभियान के ज़रिये वारलार्ड्स को (स्थानीय नेता जिन्होंने सत्ता छीन ली थी) अपने नियंत्रण में किया और साम्यवादियों को खत्म कर डाला। उन्होंने सेक्युलर और विवेकपूर्ण 'इहलौकिक' कन्फूशियसवाद की हिमायत की, लेकिन साथ ही राष्ट्र का सैन्यकरण करने की भी कोशिश की। उन्होंने कहा कि लोगों को ' एकताबद्ध व्यवहार की प्रवृत्ति और आदत' का विकास करना चाहिए। उन्होंने महिलाओं को चार सद्गुण पैदा करने के लिए प्रोत्साहित किया: सतीत्व, रूप-रंग, वाणी और काम और उनकी भूमिका को घरेलू स्तर पर ही देखने पर ज़ोर दिया। यहाँ तक कि उनके कपड़ों की किनारियों की लंबाई भी प्रस्तावित की।

कुओमीनतांग का सामाजिक आधार शहरी इलाकों में था। औद्योगिक विकास धीमा और गिने चुने क्षेत्रों में था। शंघाई जैसे शहरों में 1919 में औद्योगिक मज़दूर वर्ग उभर रहा था और इनकी संख्या 500,000 थी। लेकिन इनमें से केवल कुछ प्रतिशत मज़दूर ही जहाज़ निर्माण जैसे आधुनिक उद्योगों में काम कर रहे थे। ज़्यादातर लोग 'नगण्य शहरी' (*शियाओ शिमिन*), व्यापारी और दुकानदार होते थे। शहरी मज़दूरों, खासतौर से महिलाओं, को बहुत कम वेतन मिलता था। काम करने के घंटे बहुत लंबे थे और काम करने की परिस्थितियाँ बहुत खराब। जैसे-जैसे व्यक्तिवाद बढ़ा, महिलाओं के अधिकार, परिवार बनाने के तरीके और प्यार-मुहब्बत की चर्चा – इन सब विषयों को लेकर सरोकार बढ़ते गए।

सामाजिक और सांस्कृतिक बदलाव में स्कूल और विश्वविद्यालयों के फैलने से मदद मिली। पीकिंग विश्वविद्यालय की स्थापना 1902 में हुई। पत्रकारिता फली-फूली जो कि इस नयी सोच के प्रति आकर्षण का आईना थी। शाओ तोआफ़ेन (Zao Taofen, 1895-1944) द्वारा संपादित लोकप्रिय *लाइफ़ वीकली* इस नयी विचारधारा की प्रतिनिधि थी। इसने अपने पाठकों को नए

© NCERT not to be republished

विचारों से, साथ ही गांधी और तुर्की के आधुनिकतापसंद नेता कमाल अतातुर्क (Kemal Ataturk) जैसे नेताओं से अवगत करवाया। इसका वितरण 1926 में केवल 2000 प्रतियों से बढ़कर 1933 में 200,000 हो गया।

क्रियाकलाप 4

भेदभाव का अहसास लोगों को कैसे एकताबद्ध करता है?

1935 का शंघाई : शंघाई में एक काला अमरीकन तुरेहीवादक, बक क्लेटन (Buck Clayton), अपने जैज़ और कैस्ट्रा के साथ विशेषाधिकारप्राप्त प्रवासी की ज़िंदगी जी रहे थे। लेकिन वह काला था और एक बार कुछ गोरे अमरीकियों ने उसे तथा उसके वाद्यमंडली के सदस्यों के साथ मारपीट करके उन्हें उनके गायन-वादन वाले होटल से बाहर निकाल दिया। सो, अमरीकी होने के बावजूद खुद नस्ली भेदभाव का शिकार होने के कारण चीनियों के दुख-दर्द के साथ उनकी बहुत सहानुभूति थी। गोरे अमरीकियों के साथ हुई अपनी लड़ाई, जिसमें वे जीत गए, के बारे में वह लिखते हैं, "चीनी तमाशबीनों ने हमारे साथ ऐसा बरताव किया जैसे हमने उनका अभीष्ट काम संपन्न किया हो और घर पहुँचने तक रास्ते भर वे किसी विजेता फुटबॉल टीम की तरह हमारा अभिनंदन करते रहे।"

चीनियों की ग़रीबी और कठोर जीवनचर्या के बारे में वह लिखते हैं, "मैं कभी-कभी देखता कि बीस या तीस कुली मिल कर किसी बड़े भारी ठेले को खींच रहे हैं, जो कि अमरीका में किसी ट्रक द्वारा या घोड़ों द्वारा खींचा जाता। ये लोग इनसानी घोड़ों से अलग कुछ नहीं लगते थे और पूरा काम करने के बाद उन्हें इतना ही मिलता था कि किसी तरह पेट भर चावल और सोने की एक जगह हासिल कर लें। मेरी समझ में नहीं आता, वे कैसे अपना काम चलाते थे।"

'रिक्शा खींचने वाला' – लान जिया द्वारा बनाया गया काष्ठ चित्र। लाओ शे (1936) द्वारा रचित उपन्यास 'रिक्शा' एक गौरव ग्रंथ बन गया।

देश को एकीकृत करने की अपनी कोशिशों के बावजूद कुओमीनतांग अपने संकीर्ण सामाजिक आधार और सीमित राजनीतिक दृष्टि के चलते असफल हो गया। सन यात-सेन के कार्यक्रम का बहुत अहम हिस्सा – पूँजी का नियमन और भूमि-अधिकारों में बराबरी लाना – कभी अमल में नहीं आया, क्योंकि पार्टी ने किसानों और बढ़ती सामाजिक असमानता की अनदेखी की। इसने लोगों की समस्याओं पर ध्यान देने की बजाय फ़ौजी व्यवस्था थोपने का प्रयास किया।

बढ़ती हुई कीमतों की कहानी।

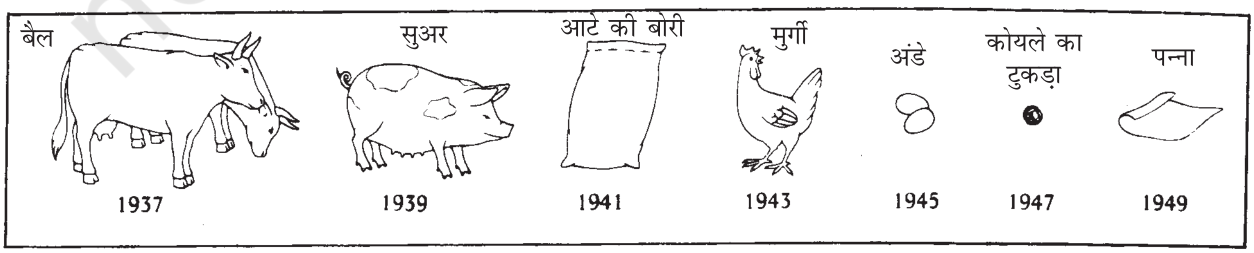

© NCERT not to be republished

समय-रेखा

	जापान		चीन
1603	तोकुगावा लियासु (Tokugawa leyasu) द्वारा ईडो शोगुनेट की स्थापना	1644-1911	छींग राजवंश
1630	डचों के साथ अपने सीमित व्यापार को छोड़ कर अन्य पश्चिमी शक्तियों के लिए जापान के दरवाज़े बंद	1839-60	दो अफ़ीम युद्ध
1854	जापान और संयुक्त राज्य अमरीका द्वारा शांति-समझौत को अंतिम रूप देना, जापान के अलगाव का अंत		
1868	मेज़ी पुनर्स्थापना		
1872	अनिवार्य शिक्षा व्यवस्था तोक्यो और योकोहामा के बीच पहली रेलवे लाइन		
1889	मेज़ी संविधान अमल में आया		
1894-95	चीन और जापान के बीच युद्ध		
1904-05	जापान और रूस के बीच युद्ध		
1910	कोरिया का समामेलन, 1945 तक उपनिवेश	1912	सन यात-सेन द्वारा कुओमीनतांग की स्थापना
1914-18	पहला विश्वयुद्ध	1919	चार मई का आंदोलन
1925	सभी पुरुषों को मताधिकार	1921	चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना
1931	चीन पर जापान का हमला	1926-49	चीन में गृहयुद्ध
1941-45	प्रशांत युद्ध	1934	लॉन्ग मार्च
1945	हिरोशिमा और नागासाकी पर अणुबम विस्फोट	1945	
1946-52	अमरीका के नेतृत्व में जापान पर कब्ज़ा, जापान का लोकतंत्रीकरण और असैन्यीकरण करने के लिए सुधार	1949	चीन का जनवादी गणतंत्र, चियांग काई-शेक ने ताइवान में चीनी गणतंत्र की स्थापना की
1956	जापान संयुक्त राष्ट्र का सदस्य बना	1962	सीमा-विवाद को लेकर भारत पर चीन का आक्रमण
1964	एशिया में पहली बार तोक्यो में ओलंपिक खेल	1966	सांस्कृतिक क्रांति
		1976	माओ त्सेतुंग (Mao Zedong) का और चाऊ एनलाई (Zhou Enlai) का निधन
		1997	ब्रिटेन द्वारा चीन को हांगकांग की वापसी

© NCERT not to be republished

चीनी साम्यवादी दल का उदय

1937 में जब जापानियों ने चीन पर हमला किया तो कुओमीनतांग पीछे हट गया। इस लंबे और थकाने वाले युद्ध ने चीन को कमज़ोर कर दिया। 1945 और 1949 के दरमियान कीमतें 30 प्रतिशत प्रति महीने की रफ़्तार से बढ़ीं। इससे आम आदमी की ज़िंदगी तबाह हो गई। ग्रामीण चीन में दो संकट थे: एक, पर्यावरण संबंधी, जिसमें बंजर ज़मीन, वनों का नाश और बाढ़ शामिल थे। दूसरा, सामाजिक-आर्थिक जो विनाशकारी ज़मीन-प्रथा, ऋण, आदिम प्रौद्योगिकी और निम्न स्तरीय संचार के कारण था।

चीन की साम्यवादी पार्टी की स्थापना 1921 में, रूसी क्रांति के कुछ समय बाद हुई थी। रूसी सफलता ने पूरी दुनिया पर ज़बर्दस्त प्रभाव डाला। लेनिन और ट्रॉट्स्की जैसे नेताओं ने मार्च 1918 में कौमिंटर्न या तृतीय अंतर्राष्ट्रीय (Third International) का गठन किया जिससे विश्व स्तरीय सरकार बनाई जाए जो शोषण को खत्म कर सके। कौमिंटर्न और सोवियत संघ ने दुनिया भर में साम्यवादी पार्टियों का समर्थन किया। उनकी परंपरागत मार्क्सवादी समझ थी, कि क्रांति शहरी इलाकों में मज़दूर वर्गों के ज़रिये आयेगी। शुरू में विभिन्न देशों के लोग इससे बहुत आकर्षित हुए लेकिन जल्द ही यह सोवियत यूनियन के स्वार्थों का हथियार बन गया और 1943 में इसे खत्म कर दिया गया। माओ त्सेतुंग (1893-1976) ने, जो सी. सी. पी. के प्रमुख नेता के रूप में उभरे, क्रांति के कार्यक्रम को किसानों पर आधारित करते हुए एक अलग रास्ता चुना। उनकी सफलता से चीनी साम्यवादी पार्टी एक शक्तिशाली राजनीतिक ताकत बनी जिसने अंततः कुओमीनतांग पर जीत हासिल की।

माओ त्सेतुंग के आमूलपरिवर्तनवादी तौर-तरीकों को जियांग्सी में देखा जा सकता है। यहाँ पहाड़ों मे 1928-1934 के बीच उन्होंने कुओमीनतांग के हमलों से सुरक्षित शिविर लगाए। मज़बूत किसान परिषद (सोवियत) का गठन किया, ज़मीन पर कब्ज़ा और पुनर्वितरण के साथ एकीकरण हुआ। दूसरे नेताओं से हटकर, माओ ने आज़ाद सरकार और सेना पर ज़ोर दिया। वे महिलाओं की समस्याओं से अवगत थे और उन्होंने ग्रामीण महिला संघों को उभरने में प्रोत्साहन दिया। उन्होंने शादी के नए कानून बनाए जिसमें आयोजित शादियों और शादी के समझौते खरीदने और बेचने पर रोक लगाई और तलाक को आसान बनाया।

1930 में जुनवू (Xunwu) में किए गए एक सर्वेक्षण में माओ त्सेतुंग ने नमक और सोयाबीन जैसी रोज़मर्रा की वस्तुओं, स्थानीय संगठनों की तुलनात्मक मज़बूतियों, छोटे व्यापारियों और दस्तकारों, लोहारों और वेश्याओं, धार्मिक संगठनों की मज़बूतियों, इन सबका परीक्षण किया ताकि शोषण के अलग-अलग स्तरों को समझा जा सके। उन्होंने ऐसे आंकड़े इकट्ठे किये कि कितने किसानों ने अपने बच्चों को बेचा है और इसके लिए उन्हें कितने पैसे मिले। लड़के 100-200 यूआन पर बिकते थे लेकिन लड़कियों की बिक्री के कोई उदाहरण नहीं मिले क्योंकि ज़रूरत मज़दूरों की थी लैंगिक शोषण की नहीं। इस अध्ययन के आधार पर उन्होंने सामाजिक समस्याओं को सुलझाने के तरीक़े पेश किए।

© NCERT not to be republished

मानचित्र 2: लाँग मार्च।

कम्युनिस्टों की सोवियत की कुओ मीन तांग द्वारा नाकेबंदी ने पार्टी को दूसरा आधार ढूँढ़ने पर मज़बूर किया। इसके चलते उन्हें लाँग मार्च (1934–35) पर जाना पड़ा, जो कि शांग्सी तक 6000 मील का मुश्किल सफ़र था। नये अड्डे येनान में उन्होंने युद्ध सामंतवाद (Warlordism) को खत्म करने, भूमि सुधार लागू करने और विदेशी साम्राज्यवाद से लड़ने के कार्यक्रम को आगे बढ़ाया। इससे उन्हें मज़बूत सामाजिक आधार मिला। युद्ध के मुश्किल सालों में साम्यवादियों और कुओमीनतांग ने मिलकर काम किया लेकिन युद्ध खत्म होने के बाद साम्यवादी सत्ता में आ गए और कुओमीनतांग की हार हो गई।

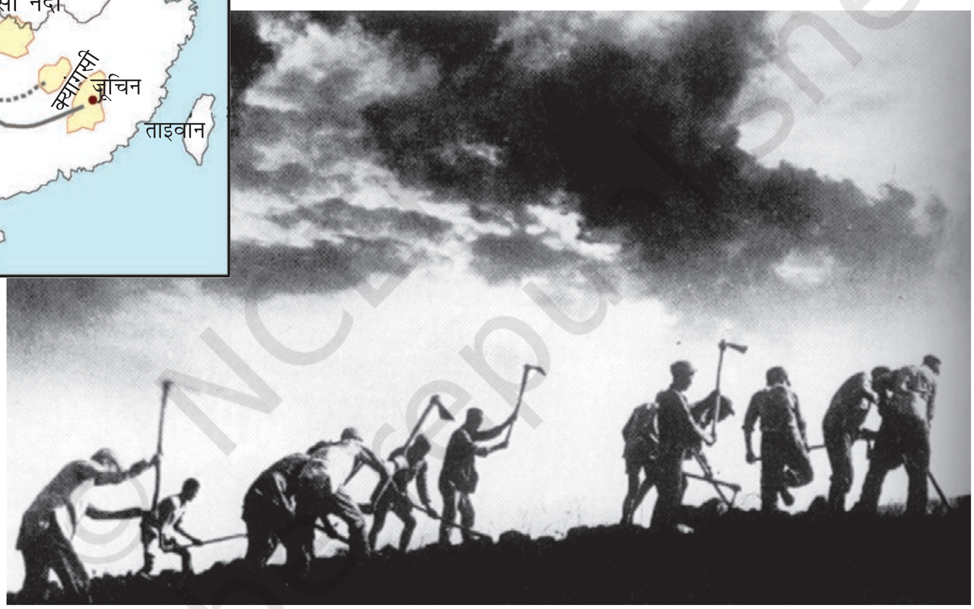

कैमरा चित्र – 1941 में लाँग मार्च पर सैनिकों द्वारा बंजर भूमि को कृषियोग्य बनाते हुए।

नए जनवाद की स्थापना : 1949-65

पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ़ चाइना की सरकार 1949 में कायम हुई। यह 'नए लोकतंत्र' के सिद्धांतों पर आधारित थी। 'सर्वहारा की तानाशाही'*, जिसे कायम करने का दावा सोवियत संघ का था, से भिन्न नया लोकतंत्र सभी सामाजिक वर्गों का गठबंधन था। अर्थव्यवस्था के मुख्य क्षेत्र सरकार के नियंत्रण में रखे गए और निजी कारखानों और भूस्वामित्व को धीरे-धीरे खत्म किया गया। यह कार्यक्रम 1953 तक चला जब सरकार ने समाजवादी बदलाव का कार्यक्रम शुरू करने की घोषणा की। 1958 में लंबी छलाँगवाले आंदोलन की नीति के ज़रिये देश का तेज़ी से औद्योगीकरण करने की कोशिश की गई। लोगों को अपने घर के पिछवाड़े में इस्पात की भट्ठियाँ लगाने के लिए प्रोत्साहित किया गया। ग्रामीण इलाकों में पीपुल्स कम्यून्स – जहाँ लोग इकट्ठे ज़मीन के मालिक थे और मिलजुलकर फसल उगाते थे – शुरू किये गए। 1958 तक 26,000 ऐसे समुदाय थे जो कि कृषक आबादी का 98 प्रतिशत था।

*यह शब्द कार्लमार्क्स द्वारा प्रयोग किया गया था जिसमें यह बल दिया गया था कि अमीर वर्ग की दमनकारी सरकार को श्रमिक वर्ग की क्रांतिकारी सरकार प्रतिस्थापित कर देगी और यह मौजूदा अर्थ में अधिनायक तंत्र नहीं होगा।

© NCERT not to be republished

माओ पार्टी द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को पाने के लिए जनसमुदाय को प्रेरित करने में सफल रहे। उनकी चिंता 'समाजवादी व्यक्ति' बनाने की थी जिसकी पाँच चीज़ें प्रिय होंगी: पितृभूमि, जनता, काम, विज्ञान और जन सम्पत्ति। किसानों, महिलाओं, छात्रों और अन्य गुटों के लिए जन संस्थाएँ बनाई गईं। उदाहरण के लिए ऑल चाइना डेमोक्रेटिक वीमेंस फ़ेडरेशन के 760 लाख सदस्य थे, ऑल चाइना स्टूडेंट्स फ़ेडरेशन के 32 लाख 90 हज़ार सदस्य थे। लेकिन ये लक्ष्य और तरीके पार्टी में सभी लोगों को पसंद नहीं थे। 1953-54 में कुछ लोग औद्योगिक संगठनों और आर्थिक विकास की तरफ ज़्यादा ध्यान देने के लिए कह रहे थे। लीऊ शाओछी (Liu Shaochi, 1896-1969) और तंग शीयाओफींग (Deng Xiaoping, 1904-97) ने कम्यून प्रथा को बदलने की कोशिश की क्योंकि यह बहुत कुशलता से काम नहीं कर रही थी। घरों के पिछवाड़ों में बनाई गई स्टील औद्योगिक लिहाज़ से अनुपयोगी था।

दर्शनों का टकराव: 1965-78

'समाजवादी व्यक्ति' की रचना के इच्छुक माओवादियों और दक्षता की बजाय विचारधारा पर माओ के बल देने की आलोचना करनेवालों के बीच संघर्ष चला। माओ द्वारा 1965 में छेड़ी गई महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति इसी संघर्ष का नतीजा था, जो उन्होंने अपने आलोचकों का सामना करने के लिए शुरू की। पुरानी संस्कृति, पुराने रिवाज़ों, और पुरानी आदतों के खिलाफ़ अभियान छेड़ने के लिए रेड गार्ड्स - मुख्यत: छात्रों और सेना - का इस्तेमाल किया गया। छात्रों और पेशेवर लोगों को जनता से ज्ञान हासिल करने के लिए ग्रामीण इलाकों में भेजा गया। विचारधारा (साम्यवादी होना) पेशेवर ज्ञान से ज़्यादा महत्त्वपूर्ण थी। दोषारोपण और नारेबाज़ी ने तर्कसंगत बहस की जगह ले ली।

सांस्कृतिक क्रांति से खलबली का दौर शुरू हो गया, पार्टी कमज़ोर हो गई और अर्थव्यवस्था और शिक्षा व्यवस्था में भारी रुकावट आई। 1960 के उत्तरार्ध से प्रवाह बदलने लगा। 1975 में एक बार फिर पार्टी ने अधिक सामाजिक अनुशासन और औद्योगिक अर्थव्यवस्था का निर्माण करने पर ज़ोर दिया ताकि चीन शताब्दी के खत्म होने से पहले एक शक्तिशाली देश बन सके।

1978 से शुरू होने वाले सुधार

साँस्कृतिक क्रांति के बाद राजनीतिक दाव-पेचों की प्रक्रिया शुरू हुई। तंग शीयाओफींग ने पार्टी पर नियंत्रण मज़बूत बनाए रखा और साथ ही देश में समाजवादी बाज़ार अर्थव्यवस्था की शुरुआत की। 1978 में पार्टी ने आधुनिकीकरण के अपने चार सूत्री लक्ष्य की घोषणा की। यह था, विज्ञान, उद्योग, कृषि और रक्षा का विकास। पार्टी से सवाल-जवाब न करने की हद तक बहस की इजाज़त थी।

इस नए और आज़ाद वातावरण में, जैसे कि 60 साल पहले 4 मई के आंदोलन के समय था, नये विचारों का रोमांचकारी भंडार फूट पड़ा। 5 दिसंबर 1978 को दीवार पर लगे एक पोस्टर ने पाँचवीं आधुनिकता का दावा किया कि लोकतंत्र के बिना अन्य आधुनिकताएँ कुछ भी नहीं बन पाएँगी। उसने गरीबी न हटाने और लैंगिक शोषण खत्म न कर पाने के लिए सी. सी. पी. की

1978 के सुधारों के बाद चीनी लोग स्वच्छंद रूप से उपभोक्ता सामग्री खरीदने में समर्थ होने लगे।

आलोचना की। इसके लिए उसने पार्टी के अंदर से ही ऐसे दुर्व्यवहारों के उदाहरण पेश किए।

इन मांगों को दबाया गया लेकिन 1989 में, 4 मई के आंदोलन की 70वीं सालगिरह पर बहुत से बुद्धिजीवियों ने ज़्यादा खुलेपन के और कड़े सिद्धांतों (*शू-शाओझी*) को खत्म करने की माँग की। बीजिंग के तियानमेन चौक पर छात्रों के प्रदर्शन को क्रूरतापूर्वक दबाया गया। दुनिया भर में इसकी कड़ी आलोचना हुई।

सुधार के बाद के समय में चीन के विकास के विषय पर दुबारा बहस शुरू हुई। पार्टी द्वारा समर्थित प्रधान मत मज़बूत राजनीतिक नियंत्रण, आर्थिक खुलेपन और विश्व बाज़ार से जुड़ाव पर आधारित है। आलोचकों का कहना है कि सामाजिक गुटों, क्षेत्रों, पुरुषों और महिलाओं के बीच बढ़ती हुई असमानताओं से सामाजिक तनाव बढ़ रहा है और बाज़ार पर जो भारी महत्त्व दिया जा रहा है उस पर सवाल खड़े कर रहा है। अंत में, पहले के पारंपरिक विचार पुनर्जीवित हो रहे हैं। जैसे कि कंफ्यूशियसवाद और यह तर्क कि पश्चिम की नकल करने के बजाए चीन अपनी परंपरा पर चलते हुए एक आधुनिक समाज बना सकता है।

ताइवान का किस्सा

चीनी साम्यवादी दल द्वारा पराजित होने के बाद चियांग काई-शेक 30 करोड़ से अधिक अमरीकी डॉलर और बेशकीमती कलाकृतियाँ लेकर 1949 में ताइवान भाग निकले। वहाँ उन्होंने चीनी गणतंत्र की स्थापना की। 1894-95 में जापान के साथ हुई लड़ाई में यह जगह चीन को जापान के हाथ में सौंपनी पड़ी थी और तब से वह जापानी उपनिवेश बनी हुई थी। कायरो घोषणापत्र (1943) और पोट्सडैम उद्घोषणा (1949) के द्वारा चीन को संप्रभुता वापस मिली।

फरवरी 1947 में हुए ज़बर्दस्त प्रदर्शनों के बाद कुओमीनतांग ने नेताओं की एक पूरी पीढ़ी की निर्ममतापूर्वक हत्या करवा दी। चियांग काई-शेक के नेतृत्व में कुओमीनतांग ने एक दमनकारी सरकार की स्थापना की, बोलने की और राजनीतिक विरोध करने की आज़ादी छीन ली और सत्ता की जगहों से स्थानीय आबादी को पूरी तरह बाहर कर दिया। फिर भी उन्होंने भूमि सुधार लागू किया, जिसके चलते खेती की उत्पादकता बढ़ी। उन्होंने अर्थव्यवस्था का भी आधुनिकीकरण किया, जिसके चलते 1973 में कुल राष्ट्रीय उत्पाद के मामले में ताइवान पूरे एशिया में जापान के बाद दूसरे स्थान पर रहा। अर्थव्यवस्था, जो मुख्यत: व्यापार पर आधारित थी, लगातार वृद्धि करती गई। लेकिन अहम बात यह है कि अमीर और गरीब के बीच का भी अंतराल लगातार घटता गया है।

ताइवान का एक लोकतंत्र में रूपांतरण और भी नाटकीय रहा है। यह 1975 में चियांग की मौत के बाद धीरे-धीरे शुरू हुआ और 1887 में जब फौजी कानून हटा लिया गया तथा विरोधी दलों को कानूनी इजाज़त मिल गई, तब इस प्रक्रिया ने गति पकड़ी। पहले स्वतंत्र मतदान ने स्थानीय ताइवानियों को सत्ता में लाने की प्रक्रिया शुरू कर दी। राजनयिक स्तर पर अधिकांश देशों के

© NCERT not to be republished

व्यापार मिशन केवल ताइवान में ही हैं। उनके द्वारा ताइवान में पूर्ण राजनयिक संबंध और दूतावास रखना संभव नहीं, क्योंकि ताइवान को चीन का ही एक हिस्सा माना जाता है।

मुख्य भूमि के साथ पुनःएकीकरण का प्रश्न अभी भी विवादास्पद मुद्दा होकर रहा है यद्यपि 'खाड़ी-पार' के संबंध (चीन और ताइवान के मध्य) सुधर रहे हैं, ताइवानी व्यापार और निवेश मुख्य भूमि में बड़े पैमाने पर हो रहा है और आवागमन कहीं अधिक सहज हो गया है। संभवतः चीन ताइवान को एक अर्धस्वायत्त क्षेत्र के रूप में स्वीकार कर लेने में सहमत हो जाएगा अगर ताइवान पूर्ण स्वतंत्रता के लिए कोई कदम उठाने से परहेज़ करता है।

कोरिया की कहानी

आधुनिकीकरण की शुरुआत

उन्नीसवीं सदी के अंत में, कोरिया के जोसोन वंश (1392-1910) ने आंतरिक और सामाजिक संघर्ष का सामना किया और इसके साथ ही उसे चीन, जापान और पश्चिमी देशों का विदेशी दबाव भी सहना पड़ा। इन सबके बीच कोरिया ने अपनी सरकारी संरचनाओं, राजनयिक संबंधों, बुनियादी ढाँचे एवं समाज के आधुनिकीकरण के लिए सुधार नीतियाँ लागू कीं। दशकों के राजनीतिक हस्तक्षेप के बाद, साम्राज्यवादी जापान ने 1910 में अपनी कॉलोनी के रूप में कोरिया पर जबरन कब्ज़ा कर लिया, जिससे 500 वर्ष से अधिक समय से चले आ रहे जोसोन राजवंश का अंत हो गया, किंतु कोरियाई लोग जापानियों द्वारा किए जा रहे कोरियाई संस्कृति एवं नैतिक मूल्यों के दमन से काफ़ी नाराज़ थे। आज़ादी के इच्छुक कोरियाई लोगों ने जापानी औपनिवेशिक शासन के खिलाफ़ प्रदर्शन किया, उन्होंने एक अस्थायी सरकार की स्थापना की और कैरो, याल्टा और पॉट्सडैम सम्मेलनों जैसी अंतर्राष्ट्रीय बैठकों में विदेशी नेताओं से अपील करने के लिए प्रतिनिधि मंडल भेजे।

जापानी औपनिवेशिक शासन 35 साल के बाद अगस्त 1945 में द्वितीय विश्व युद्ध में जापान की हार के साथ समाप्त हुआ, हालाँकि यह कोरिया के भीतरी और बाहरी स्वतंत्रता कार्यकर्ताओं का लगातार प्रयास था, जो जापान की हार के बाद कोरिया की स्वतंत्रता सुनिश्चित कर पाया। मुक्ति के बाद कोरियाई उपद्वीप को अस्थायी रूप से 38वीं समानांतर रेखा से दो हिस्सों में विभाजित कर दिया गया। जिसमें उत्तरी क्षेत्र में सोवियत संघ और दक्षिण क्षेत्र में यू.एन. द्वारा संचालन किया गया, किंतु दोनों ही क्षेत्र जापानी सेना को भंग करने के लिए परिश्रम करते रहे, हालाँकि 1948 में उत्तर और दक्षिण में अलग-अलग सरकारें स्थापित होने के साथ, यह विभाजन स्थायी रूप से स्थापित हो गया।

जापान से स्वतंत्रता का जश्न मनाते हुए कोरियाई

युद्धोत्तर राष्ट्र

जून 1950 में कोरियाई युद्ध शुरू हुआ। दक्षिण कोरिया में अमेरिकी अगुवाई वाली संयुक्त राष्ट्र सेना और उत्तर कोरिया में कम्युनिस्ट चीन सेना के समर्थन से शीत युद्ध काल का एक छद्म युद्ध

शुरू हुआ। जुलाई 1953 में तीन साल बाद, यह युद्ध युद्धविराम समझौते से समाप्त हुआ। कोरिया हमेशा के लिए विभाजित हो गया था। कोरियाई युद्ध से न केवल बड़े पैमाने पर जीवन और संपत्ति का नुकसान हुआ, बल्कि मुक्त बाज़ार आर्थिक विकास और लोकतंत्रीकरण भी धीमी गति से हुआ। युद्ध के दौरान जारी की गई मुद्रा एवं राष्ट्रीय खर्च के कारण मुद्रास्फ़ीति से कीमतें अचानक बढ़ गईं। इसके अलावा, औपनिवेशिक काल के दौरान निर्मित औद्योगिक सुविधाओं को पूरी तरह से नष्ट कर दिया गया। नतीजन, दक्षिण कोरिया को अमेरिका की आर्थिक सहायता लेने के लिए मजबूर होना पड़ा।

यद्यपि, दक्षिण कोरिया के पहले राष्ट्रपति सिन्गमैन री, 1948 में कोरियाई युद्ध के बाद लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के माध्यम से चुने गए थे, लेकिन उन्होंने अवैध संवैधानिक संशोधन के माध्यम से दो बार अपना प्रशासन काल बढ़ाया। अप्रैल 1960 में नागरिकों ने इस तरह की धाँधली से होने वाले चुनावों के खिलाफ़ विरोध किया और री को इस्तीफ़ा देने के लिए मजबूर होना पड़ा, जिसको कोरिया में 'अप्रैल क्रांति' के नाम से भी जाना जाता है।

एक प्रोत्साहन के रूप में शुरू हुई इस क्रांति से री के प्रशासन काल के दौरान लोगों की दबी हुई भावनाएँ, प्रदर्शनों और माँगों के रूप में उठने लगीं। हालाँकि, री प्रशासन के इस्तीफ़े के बाद स्थापित हुई लोकतांत्रिक पार्टी की सत्ता, आंतरिक विभाजन और संघर्ष के चलते नागरिकों की माँगों का उचित उत्तर नहीं दे पाई, बल्कि सुधारवादी राजनीतिक शक्तियाँ उभरीं और छात्र आंदोलनों ने एकीकरण आंदोलनों का रूप ले लिया। सेना के अधिकारियों द्वारा इसको समर्थन नहीं मिला। मई 1961 में जनरल, 'पार्क चुंग-ही' और अन्य सैन्य अधिकारियों के सैन्य तख्तापलट द्वारा लोकतांत्रिक पार्टी की सरकार को उखाड़ फेंका गया।

तीव्र औद्योगिकीकरण एवं मज़बूत नेतृत्व

अक्तूबर 1963 के चुनाव में सैन्य नेता 'पार्क चुंग-ही' राष्ट्रपति बने। पार्क-प्रशासन ने देश में आर्थिक विकास के लिए, एक राज्य-आधारित, निर्यात-उन्मुख नीति अपनाई। सरकार की पाँच वर्षीय आर्थिक योजनाओं ने बड़े कॉरपोरेट फ़र्मों का समर्थन किया, रोज़गार के विस्तार पर भारी ज़ोर दिया और कोरिया की प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ावा दिया।

1960 के दशक से कोरिया का अभूतपूर्व आर्थिक विकास शुरू हुआ, जब राज्य नीति आयात प्रतिस्थापन औद्योगिकी (आई.एस.आई.) से निर्यात पर केंद्रित हो गई। निर्यात उन्मुख नीति के तहत सरकार ने श्रम घनिष्ठ हलके औद्योगिक उत्पादों, जैसे वस्त्रों पर अपना ध्यान केंद्रित किया, जिसमें कोरिया का तुलनात्मक लाभ था। 1960 और 1970 के दशक के दौरान, पुनः लघु उद्योगों से उच्च मूल्यवर्धित भारी और रासायनिक उद्योगों पर ध्यान केंद्रित किया गया। इस्पात, अलौह धातु, मशीनरी, जहाज़ निर्माण, इलैक्ट्रॉनिक्स और रासायनिक उत्पादन को आर्थिक विकास की दौड़ में सबसे महत्वपूर्ण उद्योगों के रूप में चुना गया।

1970 में ग्रामीण जनसंख्या को प्रोत्साहन और कृषि क्षेत्र के आधुनिकीकरण के लिए नया गाँव (सैमौल) आंदोलन की शुरुआत हुई। इस अभियान का उद्देश्य लोगों को निष्क्रिय और निराशावान जीवन से सक्रिय और आशावान बनाना था। इस अभियान द्वारा ग्रामीण लोगों को अपने गाँवों के विकास और समुदाय की जीवन शैली को सुधारने के लिए सशक्त किया गया। आगे जाकर इस अभियान का औद्योगिक संयंत्रों और शहरी क्षेत्रों के

© NCERT not to be republished

आस-पास के इलाकों के विकास के लिए विस्तार किया गया। आज कोरिया अन्य विकासशील देशों के साथ जो अपने विकास प्रयासों में सैमौल आंदोलन के सिद्धांतों को अपनाना चाहते हैं, इस आंदोलन से प्राप्त ज्ञान और अनुभव बाँट रहा है।

मज़बूत नेताओं, प्रशिक्षित अफ़सरों, आक्रामक उद्योगपतियों और सक्षम श्रम बल के संयोजन से कोरिया आज सारे विश्व को अपनी आर्थिक वृद्धि से चौंका रहा है। महत्वाकांक्षी उद्यमी, सरकारी प्रोत्साहनों से निर्यात को बढ़ाने और नए उद्योगों के विकास में सक्षम रहे।

उच्च स्तर की शिक्षा ने भी कोरिया के आर्थिक विकास में योगदान दिया। कोरिया के औद्योगिकीकरण की शुरुआत से ही, लगभग सभी कोरियाई श्रमिक दल पहले से ही साक्षर थे और प्रगति के नए कौशल प्राप्त करने के लिए तैयार थे। इसके साथ-साथ, कोरिया ने अपनी खुली आर्थिक नीति के द्वारा अन्य देशों के अधिक उन्नत संस्थानों और तकनीकों को अपने देश में लाना शुरू कर दिया था। विदेशी निवेश और कोरिया की उच्च घरेलू बचत दर ने औद्योगिक क्षेत्रों को विकसित करने में मदद की, जबकि विदेशों में दक्षिण कोरियाई श्रमिकों के प्रेषण ने भी समग्र आर्थिक विकास में योगदान दिया।

पार्क प्रशासन की दीर्घकालिक शक्ति का आधार कोरिया का आर्थिक विकास था। पार्क के द्वारा किए गए संविधान संशोधन से वह तीसरे कार्यकाल के लिए चुनाव में खड़े हुए और 1971 में उन्हें पुनः चुना गया। अक्तूबर 1972 में, पार्क ने यूसिन संविधान घोषित करके कार्यान्वित किया, जिसने स्थायी अध्यक्षता को संभव बनाया। यूसिन संविधान के तहत, राष्ट्रपति को कानून के क्षेत्राधिकार और प्रशासन पर पूर्ण अधिकार था और किसी भी कानून को ''आपातकालीन नियम'' के रूप में निरस्त करने का भी एक संवैधानिक अधिकार था।

राष्ट्रपति को पूर्ण अधिकार प्रणाली के साथ, देश के आर्थिक विकास में प्रगति के लिए लोकतंत्र एक तरह से अस्थायी रूप में निलंबित हो गया। हालाँकि 1979 में दूसरे तेल संकट से देश की आर्थिक नीतियों जोकि भारी रासायनिक उद्योग में मुख्य निवेश रखती थीं, में काफ़ी बाधाएँ आईं। इसके साथ-साथ, छात्रों, विद्वानों और विपक्ष ने लगातार यूसिन संविधान के खिलाफ़ प्रदर्शन किया, क्योंकि पार्क प्रशासन ने आपातकालीन उपायों के आह्वान और राजनैतिक अस्थिरता का दमन कर दिया था। इस आर्थिक संकट और राजनीतिक अस्थिरता के बीच पार्क का प्रशासन अक्तूबर 1979 में 'पार्क चुंग-ही' की हत्या के साथ खत्म हो गया।

लोकतंत्रीकरण की माँग और निरंतर आर्थिक विकास

लोकतंत्रीकरण की इच्छा 'पार्क चुंग-ही' की मृत्यु के साथ बढ़ी, लेकिन दिसंबर 1979 में फिर एक बार, एक सैन्य नेता 'चुन डू-हवन' की अगुवाई में सैन्य तख्तापलट का मंच तैयार हुआ। मई 1980 में, चुन के सैन्य गुट के विरुद्ध लोकतंत्र की माँग करने वाले छात्रों और नागरिकों द्वारा राष्ट्र के प्रमुख शहरों में विभिन्न विरोध प्रदर्शन हुए। सैन्य दल ने पूरे देश में मार्शल कानून को लागू करके लोकतंत्र आंदोलन को दबा दिया। किंतु ग्वांगजू शहर में, विशेष रूप से, छात्र और नागरिक लगातार मार्शल कानून को समाप्त करने की माँग करते रहे। हालाँकि, चुन के सैन्य दल ने लोकतंत्रीकरण के लिए विरोध प्रदर्शन कर रहे लोगों की आवाज़ को दबा दिया। उसी वर्ष के अंत में, चुन यूसुइन संविधान के तहत एक अप्रत्यक्ष चुनाव के माध्यम से राष्ट्रपति बने।

चुन प्रशासन ने अपनी सरकार को स्थिर बनाने के लिए, लोकतांत्रिक प्रभाव का मज़बूती से दमन किया। हालाँकि, चुन प्रशासन ने अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक दृष्टिकोण से, कोरिया के आर्थिक विकास को 1980 के 1.7 प्रतिशत से बढ़ाकर 1983 तक 13.2 प्रतिशत कर दिया और मुद्रास्फ़ीति को भी कम कर दिया। आर्थिक विकास ने शहरीकरण, शिक्षा के स्तर में सुधार और मीडिया की प्रगति को जन्म दिया। इसके फलस्वरूप नागरिकों में अपने राजनीतिक अधिकारों की आत्म-जागरूकता बढ़ी, जिससे राष्ट्रपति के प्रत्यक्ष चुनाव के लिए संवैधानिक संशोधन की माँग की गई।

मई 1987 में, एक विश्वविद्यालय के छात्र की अत्याचारों से हुई मौत की घटना के बाद नागरिकों ने लोकतंत्रीकरण के लिए बड़े पैमाने पर प्रदर्शन किए, जिसको चुन प्रशासन ने दबाने की कोशिश की। इसके बाद चुन सरकार के खिलाफ़ लोकतंत्रीय आंदोलन में न केवल छात्रों, बल्कि मध्यवर्ग के नागरिकों ने भी भाग लिया। इन प्रयासों के चलते, चुन प्रशासन को संविधान में संशोधन करने के लिए मजबूर होना पड़ा और नागरिकों को सीधे चुनाव का अधिकार मिला। कोरियाई लोकतंत्र का एक नया अध्याय इस प्रकार से शुरू हुआ।

कोरियाई लोकतंत्र और आई.एम.एफ़. संकट

नए संविधान के अनुसार, 1971 के बाद से पहला प्रत्यक्ष चुनाव दिसंबर 1987 में हुआ, लेकिन विपक्षी पार्टियों की एकजुटता में विफलता के कारण, चुन के सैन्य दल के एक साथी सैन्य नेता, 'रोह ताए-वू' का चुनाव हुआ। हालाँकि, कोरिया में लोकतंत्र जारी रहा। 1990 में, लंबे समय से विपक्षी नेता रह चुके, 'किम यंग-सैम' ने एक बड़ी सत्तारूढ़ पार्टी बनाने के लिए रोह की पार्टी से समझौता किया। दिसंबर 1992 में, दशकों से चल रहे सैन्य शासन के बाद, एक नागरिक नेता, किम को राष्ट्रपति पद के लिए चुना गया। नए चुनावों एवं सत्तावादी सैन्य शक्ति के विघटन के फलस्वरूप, एक बार फिर लोकतंत्र की शुरुआत हुई।

जून, 1987 के लोकतंत्र आंदोलन के दौरान प्रदर्शनकारी

नए प्रशासन की निर्यात नीति के तहत, सैमसंग, हुंडई और एलजी सहित कुछ कंपनियाँ, 1990 की शुरुआत तक वैश्विक प्रमुखता के स्तर तक पहुँच चुकी थीं। सरकारी समर्थन के साथ, कोरियाई कंपनियों ने पूंजी प्रधान व्यवसाय और रासायनिक उद्योगों के साथ-साथ इलैक्ट्रॉनिक उद्योगों में भी निवेश करना शुरू किया, दूसरी ओर सरकार ने औद्योगिक और सामाजिक बुनियादी ढाँचे के निर्माण पर ध्यान देना जारी रखा।

इस बीच, कोरिया के बाज़ार को अन्य देशों के लिए, खोलने के लिए नव-उदारवादी दबाव में किम प्रशासन ने 1996 में आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओ.ई.सी.डी.) में शामिल होने का निर्णय लिया और कोरिया की अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा को मज़बूत करने का प्रयास शुरू किया, लेकिन व्यापार घाटे में बढ़ोतरी, वित्तीय संस्थानों द्वारा खराब प्रबंधन, संगठनों द्वारा बेईमान व्यापारिक संचालन के कारण कोरिया को 1997 में विदेशी मुद्रा संकट का सामना करना पड़ा। इस संकट को अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आई.एम.एफ़.) द्वारा आपात वित्तीय सहायता के ज़रिए संभालने की कोशिश की गई। यही नहीं, इस आर्थिक संकट में पूरे देश ने एक साथ प्रयास किए, नागरिकों ने गोल्ड कलेक्शन मूवमेंट के माध्यम से विदेशी ऋण भुगतान के लिए सक्रिय रूप से योगदान दिया।

not to be republished

वर्तमान कालीन सियोल शहर

दिसंबर 1997 में, एक लंबे समय के बाद कोरिया में पहली बार शांतिपूर्ण हस्तांतरण के द्वारा विपक्षी पार्टी के नेता किम डे-जुंग सत्ता में आए। सत्ता में दूसरा शांतिपूर्ण हस्तांतरण 2008 में हुआ, जब रूढ़िवादी पार्टी के नेता ली माइंग-बाक, प्रगतिशील पार्टी रोह मु-ह्यून प्रशासन के बाद अध्यक्ष चुने गए। 2012 में, रूढ़िवादी पार्टी की नेता पार्क खन-हे पहली महिला राष्ट्रपति के रूप में चुनी गईं। उनके पिता, पार्क चुंग-ही की राजनीतिक विरासत के कारण उन्हें अपने कार्यकाल की शुरुआत में बहुत समर्थन प्राप्त हुआ, लेकिन अक्तूबर 2016 में जब यह बात उठी कि उनके स्थान पर उनके एक नज़दीकी मित्र गुप्त रूप से सरकारी मामलों का प्रबंधन करते थे, तब राष्ट्रव्यापी विरोध एवं प्रदर्शनों के फलस्वरूप, मार्च 2017 में उन पर महाभियोग चला और उन्हें कार्यालय से हटा दिया गया। मई 2017 में, तीसरी बार शांतिपूर्ण हस्तांतरण के द्वारा, मून जे-इन ने राष्ट्रपति पद संभाला।

2016 में नागरिकों के नेतृत्व में किए गए, कैंडललाइट विरोध में देश के लोकतांत्रिक कानून और प्रणालियों की सीमाओं के भीतर राष्ट्रपति के इस्तीफ़े की माँग कर रहे नागरिकों का शांतिपूर्वक प्रदर्शन, कोरियाई लोकतंत्र की परिपक्वता को दर्शाता है। कोरियाई लोकतंत्र आर्थिक विकास का कर्ज़दार है, लेकिन यह देश के गणतंत्रवाद को प्रोत्साहित करने वाले कोरियाई नागरिकों की राजनीतिक जागरूकता ही है, जिसने आज इस देश को आगे बढ़ाने में प्रमुख भूमिका निभाई है।

आधुनिकता के दो मार्ग

औद्योगिक समाजों ने एक-दूसरे के जैसे बनने की बजाए आधुनिकता के अपने-अपने मार्ग बनाए। ताइवान का किस्सा और कोरिया की कहानी के साथ-साथ चीन और जापान का इतिहास दिखाता है कि किस तरह अलग-अलग ऐतिहासिक परिस्थितियों ने आज़ाद और आधुनिक देश बनाने की बिलकुल अलग राहें तैयार कीं। जापान अपनी आज़ादी बनाए रखने में सफल रहा और पारंपरिक हुनर और प्रथाओं को नए तरीके से इस्तेमाल कर पाया। तथापि कुलीन वर्ग के नेतृत्व में हुए आधुनिकीकरण ने एक उग्र राष्ट्रवाद को जन्म दिया और एक शोषणकारी सत्ता को बरकरार रखा जिसने विरोध और लोकतंत्र की माँग का गला घोंट दिया। उसने एक औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना की जिससे उस क्षेत्र में बैर की भावना बनी रही और अंदरूनी विकास भी प्रभावित हुआ।

जापान का आधुनिकीकरण ऐसे वातावरण में हुआ जहाँ पश्चिमी साम्राज्यवादी ताक़तों का प्रभुत्त्व था। हालांकि जापान ने उनकी नकल की, पर साथ ही अपने हल ढूँढ़ने की कोशिश भी की। जापानी राष्ट्रवाद पर इन मज़बूरियों का प्रभाव है-एक ओर जहाँ जापानी एशिया को पश्चिमी आधिपत्य से मुक्त रखने की उम्मीद करते थे, दूसरे लोगों के लिए यही विचार साम्राज्य का निर्माण करने के लिए महत्त्वपूर्ण कारक सिद्ध हुए।

यहाँ यह उल्लेख करना ज़रूरी है कि सामाजिक और राजनीतिक संस्थानों के सुधार और रोज़मर्रा की ज़िंदगी को बदलने के लिए केवल परंपराओं को पुनर्जीवित करने या ज़बरदस्ती उन्हें पकड़े रखने या सँभालने का सवाल नहीं था बल्कि उन्हें नए और अलग रचनात्मक तरीके से इस्तेमाल करने की बात थी। उदाहरण के लिए, मेजी स्कूली पद्धति ने यूरोपीय और अमरीकी प्रथाओं के अनुरूप नये विषयों की शुरुआत की। किंतु पाठ्यचर्या का मुख्य उद्देश्य निष्ठावान नागरिक बनाना था। नैतिकशास्त्र का विषय पढ़ना अनिवार्य था जिसमें सम्राट के प्रति वफ़ादारी पर ज़ोर दिया जाता था। इसी तरह परिवार में और रोज़मर्रा की ज़िंदगी में आए बदलाव विदेशी और देशी विचारों को मिला कर कुछ नया बनाने की कोशिश को दर्शाते हैं।

चीन का आधुनिकीकरण का सफ़र बहुत अलग था। पश्चिमी और जापानी, दोनों ही किस्म के विदेशी साम्राज्यवाद ने सारे नियंत्रण को कमज़ोर बनाया और राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्था तोड़ने के लिए माहौल बना दिया। इसके चलते ज़्यादातर लोगों को बहुत से दुख-दर्द सहने पड़े। युद्ध सामंतवाद, लूटमार और गृह-युद्ध ने बहुत से लोगों की जान ले ली। जापानी हमले की बर्बरता से भी भारी तादाद में लोगों की जानें गईं। प्राकृतिक त्रासदियों ने बोझों को और बढ़ा दिया।

19वीं और 20वीं शताब्दी में परंपराओं को ठुकराया गया और राष्ट्रीय एकता तथा सुदृढ़ता निर्मित करने के रास्तों की तलाश की गई। चीन के साम्यवादी दल और उसके समर्थकों ने परंपरा को खत्म करने की लड़ाई लड़ी। उन्हें लगा कि परंपरा जनसमुदाय को गरीबी में जकड़े हुए है, महिलाओं को अधीन बनाती है और देश को अविकसित रखती है। साम्यवादी दल ने लोगों को अधिकार एवं सत्ता देने की बात की परन्तु वास्तव में उसने बहुत ही केंद्रीकृत राज्य की स्थापना की। साम्यवादी कार्यक्रम की सफलता ने उम्मीद का वादा किया लेकिन दमनकारी राजनीतिक व्यवस्था ने मुक्ति और समानता के आदर्शों को ऐसी नारेबाज़ी में बदल दिया, जो लोगों को चालाकी से प्रभावित कर अपने काबू में लाने में काम आती थी। तथापि इससे शताब्दियों पुरानी असमानताएँ हट गईं, शिक्षा का विस्तार हुआ और जनता के बीच एक जागरूकता पैदा हुई।

पार्टी ने अब बाज़ार संबंधी सुधार किए और चीन को आर्थिक दृष्टि से ताकतवर बनाने में कामयाब हुई, जबकि राजनीतिक व्यवस्था अब भी कड़े नियंत्रण में है। अब समाज बढ़ती असमानताओं का सामना कर रहा है और सदियों से दबी परंपराएँ पुनर्जीवित होने लगी हैं। यह नयी स्थिति एक बार फिर यह सवाल खड़ा करती है कि चीन किस तरह अपनी धरोहर को बरकरार रखते हुए अपना विकास कर सकता है।

अभ्यास

संक्षेप में उत्तर दीजिए

1. मेजी पुनर्स्थापना से पहले की वे अहम घटनाएँ क्या थीं, जिन्होंने जापान के तीव्र आधुनिकीकरण को संभव किया?
2. जापान के विकास के साथ-साथ वहाँ की रोज़मर्रा की ज़िंदगी में किस तरह बदलाव आए? चर्चा कीजिए।

not to be republished © NCERT

3. पश्चिमी ताकतों द्वारा पेश की गई चुनौतियों का सामना छींग राजवंश ने कैसे किया?
4. सन यात-सेन के तीन सिद्धांत क्या थे?
5. कोरिया ने 1997 में विदेशी मुद्रा संकट का सामना किस प्रकार किया?

संक्षेप में निबंध लिखिए

6. क्या पड़ोसियों के साथ जापान के युद्ध और उसके पर्यावरण का विनाश तीव्र औद्योगीकरण की जापानी नीति के चलते हुआ?
7. क्या आप मानते हैं कि माओ त्सेतुंग और चीन के साम्यवादी दल ने चीन को मुक्ति दिलाने और इसकी मौजूदा कामयाबी की बुनियाद डालने में सफलता प्राप्त की?
8. क्या साउथ कोरिया की आर्थिक वृद्धि ने इसके लोकतंत्रीकरण में योगदान दिया?

© NCERT not to be republished

निष्कर्ष

विश्व इतिहास के कुछ विषयों पर इस पुस्तक ने आपका परिचय एक लंबी कालावधि से कराया जिसे प्राचीन, मध्य व आधुनिक युगों में बाँटा जा सकता है। मानव उद्‌भव और विकास के कुछ प्रमुख विषय इस पुस्तक के केंद्र बिंदु रहे हैं। अलग-अलग अनुभागों में निम्नलिखित, क्रमशः लघुतर कालखंडों की चर्चा की गई-

i. 60 लाख वर्ष पूर्व से 400 ई.पू.

ii. 400 ई.पू. - 1300 ई.

iii 800 - 1700 ई.

iv 1700 - 2000 ई.

इतिहासकार प्रायः प्राचीन, मध्यकालीन या आधुनिक युग के विशेषज्ञ होते हैं, किंतु सर्वत्र इतिहासकार के शिल्प की कुछ सामान्य विशेषताएँ और समस्याएँ होती हैं। हमने प्राचीन, मध्य और आधुनिक युगों के बीच के अंतरों को मद्धम करने का प्रयत्न किया है, ताकि इतिहास कैसे लिखा जाता है और उसकी विवेचना कैसे की जाती है, इसका एक समग्र बोध प्राप्त हो। इसका उद्देश्य आपको पूरे मानव इतिहास की सामान्य समझ देना भी है - वह इतिहास, जो हमारी आधुनिक जड़ों के मुक़ाबले कहीं ज़्यादा गहरे जाता है।

इस पुस्तक से आपको अफ़्रीका, पश्चिम तथा मध्य एशिया, पूर्वी एशिया, ऑस्ट्रेलिया, उत्तर तथा दक्षिण अमरीका तथा युनाइटेड किंगडम सहित यूरोप के इतिहास की एक झलक मिली होगी। इसने आपको 'केस स्टडी' पद्धति से परिचित कराया होगा। इन स्थानों के विस्तृत इतिहास के वर्णन का बोझ आप पर लादने की बजाय कुछ परिघटनाओं के मुख्य उदाहरणों का अध्ययन हमें बेहतर लगा।

विश्व इतिहास कई तरह से लिखा जा सकता है। इनमें से एक शायद सबसे पुराना तरीका लोगों के बीच संपर्क पर ध्यान केंद्रित करना है ताकि संस्कृतियों तथा सभ्यताओं के परस्पर संबंधों पर बल दिया जा सके और विश्व ऐतिहासिक परिवर्तन के बहुआयामी पक्षों का अन्वेषण किया जा सके। एक अन्य तरीका सापेक्षतः स्वावलंबी किंतु विस्तृत होते आर्थिक विनिमय के क्षेत्रों की पहचान करना है, जो संस्कृति और सत्ता के कुछ रूपों को बनाए रखते हैं। राष्ट्रों और क्षेत्रों के

© NCERT not to be republished

ऐतिहासिक अनुभवों में अंतर स्पष्ट कर उनकी विशिष्टताओं को उभारना तीसरी विधि है। आपको इन तीनों विधियों के संकेत इस पुस्तक में मिले होंगे। किंतु समाजों (तथा व्यक्तियों) में विभिन्नताओं के साथ-साथ उनमें समानताएँ भी परिलक्षित होती हैं। मानव समुदायों के बीच अंतर्संबंध और समानताएँ हमेशा से रही हैं। वैश्विक तथा स्थानीय ('रेत के कण में विश्व'), 'मुख्यधारा' तथा 'हाशिया', सामान्य तथा विशिष्ट के आपसी संबंधों के बारे में आपने इस पुस्तक से जो कुछ सीखा होगा, वह इतिहास के अध्ययन का एक आकर्षक पहलू है।

हमारा विवरण अफ़्रीका, एशिया तथा यूरोप में बिखरी बस्तियों से शुरू हुआ था। वहाँ से हम मेसोपोटामिया के शहरी जीवन की ओर बढ़े। आरंभिक साम्राज्य मेसोपोटामिया, मिस्र, चीन, फ़ारस तथा भारत में शहरों के ही इर्द-गिर्द बने थे। इसके बाद इनसे अधिक विस्तृत यूनानी (मकदूनियाई), रोमन, अरब तथा (1200 से) मंगोल साम्राज्य बने। इन साम्राज्यों में व्यापार-प्रणालियाँ, प्रौद्योगिकी तथा शासन अक्सर अत्यधिक जटिल होते थे। ज़्यादातर वे एक लिखित भाषा के प्रभावी प्रयोग पर निर्भर थे।

दूसरे सहस्राब्दि के मध्य में (1400 ई. से) पश्चिमी यूरोप में प्रौद्योगिकीय और संगठनात्मक बदलावों के कारण मानव इतिहास में एक नए युग का सूत्रपात हुआ। ये सभ्यता के 'पुनर्जागरण' या 'पुनर्जन्म' से जुड़े थे। इनका शुरुआती असर उत्तरी इटली में हुआ, लेकिन जल्दी ही यह पूरे यूरोप में फैल गया। यह पुनर्जागरण उस क्षेत्र के नगरीय जीवन और भूमध्यसागर की मुस्लिम दुनिया तथा बाइज़ेंटाइन के साथ आदान-प्रदान का नतीजा था। समय के साथ सोलहवीं सदी में विचार तथा खोज अन्वेषकों तथा विजेताओं के साथ अमरीका (उत्तर और दक्षिण) पहुँच गए। इनमें से कुछ विचार बाद में जापान, भारत और दूसरी जगहों तक भी पहुँचे।

विश्व-व्यापार, राजनीति तथा संस्कृति में यूरोप का वर्चस्व अभी क़ायम नहीं हुआ था। यह अठारहवीं तथा उन्नीसवीं सदी की विशेषता बनी, जब ब्रिटेन में औद्योगिक क्रांति हुई और शेष यूरोप में फैल गई। ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी ने अफ्रीका तथा एशिया के कुछ हिस्सों पर औपनिवेशिक सत्ता हासिल कर ली जो पुराने साम्राज्यों से अधिक शक्तिशाली थी। बीसवीं सदी के मध्य तक जिस प्रौद्योगिकी, आर्थिक जीवन और संस्कृति ने कभी यूरोपीय राष्ट्रों को शक्ति प्रदान की थी, वे अलग-अलग रूपों में शेष विश्व में फैल चुके थे और इन्होंने आधुनिक जीवन की नींव रखी।

आपने विभिन्न अध्यायों में उद्धृत अंशों को देखा होगा। इनमें कई ऐसे स्रोतों से लिए गए हैं, जिन्हें इतिहासकार 'प्राथमिक स्रोत' कहते हैं। विद्वान ऐसी ही सामग्रियों से अपने 'तथ्य' हासिल कर इतिहास रचते हैं। वे इनका आलोचनात्मक अध्ययन करते हैं और इन स्रोतों की अस्पष्टता पर विशेष ध्यान देते हैं। एक ही स्रोत का प्रयोग करनेवाले इतिहासकार भिन्न बल्कि विपरीत राय पेश कर सकते हैं। दूसरे मानव विज्ञानों की भांति इतिहास से भी अलग-अलग तरह की बातें कहलवाई जा सकती हैं। यह ऐतिहासिक तथ्यों और इतिहासकार के तर्कों के बीच जटिल संबंध की वजह से है।

विद्यालय के अंतिम वर्ष में आप भारतीय (या दक्षिण एशियाई) इतिहास में हड़प्पा युग से आधुनिक भारत के संविधान बनने तक के इतिहास के कुछ पहलुओं का अध्ययन करेंगे। एक

बार फिर राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास के विवेकपूर्ण मिश्रण पर बल होगा जो आपको केस–स्टडी पद्धति से कुछ चुने हुए विषयों का अध्ययन करने के लिए आमंत्रित करेगा। हमें उम्मीद है कि ये पुस्तकें आपको कई प्रश्नों के उत्तर ढूँढ़ने में मदद करेंगी। इनमें से प्रमुख है, 'इतिहास पढ़ने की ज़रूरत क्या है?' क्या आपको पता है कि प्रतिभाशाली मध्ययुग विशेषज्ञ मार्क ब्लॉक ने दूसरे विश्वयुद्ध में खाई में रहते हुए लिखी गई अपनी पुस्तक द *हिस्टोरियन्स क्राफ्ट* की शुरुआत एक छोटे बच्चे के प्रश्न से की थी, 'डैडी, मुझे बताइए, इतिहास का फ़ायदा क्या है?'

© NCERT not to be republished